MASW-06

समाजिक शोध एवं सांख्यिकी

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

खण्ड– प्रथम : समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति 3–58

इकाई–1 – अनुसंधान का अर्थ एवं प्रकार 07–20
इकाई–2 – समाज कार्य अनुसंधान : अवधारणा एवं प्रकृति 21–30
इकाई–3 – समाज कार्य षोध का विषय क्षेत्र 31–40
इकाई–4 – समाज कार्य अनुसंधान के चरण 41–50
इकाई–5 – समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान 51–58

खण्ड– द्वितीय : समाज कार्य अनुसंधान की प्रक्रिया 59–150

इकाई–6 – समस्या एवं विषय का निर्धारण 61–76
इकाई–7 – शोध प्रारूप–अर्थ एवं प्रकार 77–94
इकाई–8 – उपकलल्पना : अर्थ एवं आश्यकता 95–108
इकाई–9 – उपकल्पना के स्त्रोत 109–116
इकाई–10 –समग्र निदर्शन 117–132
इकाई–11 –निदर्शन की विधियाँ 133–150

खण्ड– तृतीय : तथ्य का एत्रीकरण एवं विश्लेषण 151–252

इकाई–12 – तत्यों के प्रकार 153–162
इकाई–13 – तथ्य संकलन के स्त्रोत 163–182
इकाई–14 – सर्वेक्षण के लक्ष्य एवं विशेषतायें 183–196
इकाई–15 – तथ्य संकलन की प्रविधियां : प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, वैयक्तिक अध्ययन 197–216
इकाई–16 – मापन एवं अनुमापन की विधियाँ 217–234
इकाई–17 – समंकों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण 235–252

खण्ड– चतुर्थ : सांख्यिकी प्रयोग 253–338

इकाई 18 – अर्थ, प्रयोग एवं सीमायें 255–266
इकाई 19 – समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता 267–276
इकाई 20 – माध्य, माध्यिका एवं बहुलक 277–310
इकाई 21 – कम्प्यूटर का प्रयोग 311–320
इकाई 22 – सह सम्बन्ध के माप 321–338

खण्ड– पंचम : शोध प्रतिवेदन 339–380

इकाई 23 – शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा **341–348**
इकाई 24 – शोध प्रतिवेदन के प्रकार **349–358**
इकाई 25 – शोध प्रबंध की विषय वस्तु **359–370**
इकाई 26 – संदर्भ ग्रंथों का प्रयोग एवं प्रस्तुतिकरण **371–380**

खण्ड– षशठम : शोध प्रबन्ध का प्रकाशन 381–420

इकाई 27 – शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन की उपयोगिता एवं महत्ता **383–392**
इकाई 28 – शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन एवं संबंधित समस्यायें **393–402**
इकाई 29 – शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के प्रकार **403–412**
इकाई 30 – शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप **413–420**

MASW-06

समाजिक शोध एवं सांख्यिकी

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

खण्ड–प्रथम

समाज कार्य अनुससंधान की अवधारणा एवं प्रकृति

इकाई–1 05–20

अनुसंधान का अर्थ एवं प्रकार

इकाई–2 21–30

समाज कार्य अनुसंधान : अवधारणा एवं प्रकृति

इकाई–3 31–40

समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र

इकाई–4 41–50

समाज कार्य अनुसंधान के चरण

इकाई–5 51–58

समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश प्रयागराज

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति – प्रो० प्रो० के०एन० सिंह

विशेषज्ञ समिति

(1) प्रो० एस० त्रिपाठी, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु वि०वि० वाराणसी भूतपूर्व निदेशक, सुलभ इण्टरलेशनल, नई दिल्ली।

(2) प्रो० अमरनाथ सिंह विभागाध्यक्ष समाजकार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

(3) प्रो० अरविन्द जोशी, प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(4) ड॑ॅ० एम० एन० सिंह पूर्व निदेशक, समाजवि, वि उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

(5) डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता सामजकार्य विभाग वि० उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

परिमापक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष सामजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

सम्पादक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष समाजकार्य विभाग, लखनऊ।

समन्वयक

डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

लेखक

(1) डॉ० राजेश कुशवाहा, समाजकार्य विभाग, डॉ० भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

(2) डॉ० अलका वर्मा, समाजकार्य विभाग, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

सितम्बर, 2019 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2020

ISBN-

सर्वाधिक सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक – कुलसचिव, डॉ. अरूण कुमार गुप्ता उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 20019

मुद्रक – चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज (इलाहाबाद)

खण्ड–प्रथम
समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति

इकाई : 1 अनुसंधान का अर्थ एवं प्रकार

1.0 इकाई का उद्देश्य

1.1 परिचय

1.2 अनुसंधान की अवधारणा

1.21 अनुसंधान का व्युत्यतीय अर्थ एवं परिभाषा

1.3 अनुसंधान के प्रकार

1.4 सार–संक्षेप

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

1.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय अन्वेषणार्थियों प्रस्तुत इकाई में अनुसंधान के अर्थ एवं प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– अनुसंधान की अवधारणा एवं अर्थ के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2– अनुसंधान के व्युत्यत्तीय अर्थ को समझ सकेंगे।

3– अनुसंधान की परिभाषाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– अनुसंधान के प्रकारों पर अपने विचार–प्रस्तुत कर सकेंगे।

1.1 परिचय

प्रिय ज्ञानार्थियों अनुसंधान वास्तव में अधिक जानने की इच्छा का परिणाम है। विश्व में जो भी घटनायें घटित होती हैं उसके बारे में मानव, जानने का प्रयास करता है। वास्तव में मनुष्य एक जिज्ञासु होने के साथ–साथ खोजमूलक प्राणी भी है।

मनुष्य प्राकृतिक घटनाओं के समझने के बाद सामाजिक घटनाओं को भी समझने का प्रयास करता है। सामाजिक घटनाएं अपने–आप में अधिक जटिल होती हैं, एक ही घटना के पीछे अनेक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक कारण हो सकते हैं, और इन सभी कारणों की खोज करना कोई आसान काम नहीं है। इन्हीं समस्याओं को खोजने के लिए मनुष्य अनुसंधान का सहारा लेता है। देखा जाये तो अनुसंधान एक वैज्ञानिक प्रविधि है जिसके द्वारा मानव समस्याओं के बारे में जानने का प्रयास करता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत इकाई आपके सम्मुख प्रस्तुत है जिससे आप सभी लोग अनुसंधान के बारे में अत्यधिक ज्ञान अर्जित कर सकेंगे। इसी इकाई में अनुसंधान के व्युत्पत्तीय अर्थ प्रस्तुत किये गये हैं जिसमें विभिन्न प्रकार के विद्वानों द्वारा उल्लिखित परिभाषायें प्रस्तुत की गयी हैं। इसी इकाई में अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों की भी चर्चा प्रस्तुत की गयी है जिसमें मौलिक अनुसंधान, व्यावहारिक अनुसंधान, क्रियात्मक अनुसंधान, मूल्यांकनात्मक अनुसंधान और अन्वेषणात्मक अनुसंधान सम्मिलित हैं।

1.2 अनुसंधान की अवधारणा

अनुसंधान मानव की अधिक जानने की इच्छा का परिणाम है। मानव ने जब से पृथ्वी पर जन्म लिया तब से उसके मन में ब्रह्माण्ड में घटित होने वाली घटनाओं के बारे में जानने का प्रयास किया। प्रारम्भ में मानव ने इन घटनाओं को अविकसित बौद्धिक ज्ञान की वजह से इसे ईश्वरीय शक्ति का परिणाम मान लिया। परन्तु मानव एक गहन चिन्तनशील प्राणी है, उसमें सोचने समझने की शक्ति है। उसने सूर्य, चन्द्रमा, आकाश, धरती रात–दिन, मौसम, पहाड़, पेड़, पर्वत, नदी, समुद्र आदि के बारे में अधिक से अधिक जानने, समझने का प्रयास किया। वह इन घटनाओं के पीछे छिपे रहस्य को भी खोज निकालने में सफल हुआ। जैसे–जैसे वह प्रश्नों के उत्तर ढूंढता चला गया प्राकृतिक ज्ञान में वृद्धि होती चली गई। वास्तव में मनुष्य एक जिज्ञासु होने के साथ–साथ खोजमूलक प्राणी भी है। मनुष्य प्राकृतिक घटनाओं को समझने के बाद सामाजिक घटनाओं को भी समझने का प्रयास किया है। सामाजिक घटनायें अपने आप में अधिक जटिल होती हैं, एक ही घटना के पीछे अनेक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक कारण हो सकते हैं और इन सभी कारणों की खोज करना कोई आसान कार्य नहीं है। अतः इन सभी कारणों की खोज करने के लिए मनुष्य ने जीवन के प्रत्येक क्षण किसी न किसी प्रकार की पूँछताछ करता रहता है। यह

पूँछताछ नियंत्रित तथा अनियंत्रित दोनों स्वरुप ग्रहण करती हैं। नियंत्रित तथा अनियंत्रित पूँछताछ से हमारा आशय इस बात से है कि हम इस पूँछताछ को इच्छित दिशा में अपने ढंग से ले जाना चाहते हैं। नियंत्रित पूँछताछ को हम प्रयोग तथा अनियंत्रित पॅूछताछ को हम 'सामान्य ज्ञान पूँछताछ की संज्ञा प्रदान करते हैं। नियंत्रित पूँछताछ को हम सामान्य वर्गीय तथा 'विशिष्ट वर्गीय' को दो श्रेणीयों में विभाजित कर सकते हैं। सामान्य वर्गीय नियंत्रित पूँछताछ को हम अनुसंधान तथा विशिष्ट वर्गीय पूँछताछ को प्रयोग कहते हैं। सम्पूर्ण स्थिति को हम अग्रलिखित चार्ट की सहायता से आसानी से समझ सकते हैंः–

पूँछताछ के विभिन्न प्रकार

↓

पूँछताछ (Enquiry)

↓

नियंत्रित (Controlled) अनियंत्रित (Uncontrolled)

↓

सामान्य वर्गीय विशिष्ट वर्गीय

नियंत्रण के तत्व के आधार पर विभिन्न प्रकार की पॅूछताछ को **'लेजली किश'** (Lesle kish) ने प्रयोग सर्वेक्षण तथा अन्य पड़तालों को तीन भागों में विभाजित किया है; प्रयोगों से हमारा आशय यहां पर 'आदर्श' प्रयोगों से है जिनमें सभी वाह्य चर यादृच्छिक (Randomized) कर दिये जाते हैं। सर्वेक्षणों से मेरा अभिप्राय सम्भाविता प्रतिदर्शों (Probability samples) से है जिनमें एक परिभाषित समग्र के सभी सदस्य प्रतिदर्श में चुने जाने की ज्ञात सम्भाविता (Known probability) रखते हैं। पड़तालों से मेरा अभिप्राय या तो प्रयोगों के यादृच्छिकरण अथवा सर्वेक्षणों के प्रतिदर्शन के बिना शायद सावधानी के साथ और यहां तक कि पर्याप्त नियंत्रण के साथ आंकड़ों के संग्रह से है। प्रयोगों, सर्वेक्षणों एवं अन्य पड़तालों में भिन्नताऐं सांख्यिकीय प्रविधियों के

परिणामस्वरूप नहीं है, वे चरों के समावेश तथा समग्र तथ्यों (उत्तरदाताओं) से चुनाव के विभिन्न ढंगों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होते हैं। प्रयोग यादृच्छीकरण के माध्यम से नियंत्रण में सबल है किन्तु वे प्रतिनिधित्वपूर्णता और कभी–कभी परिमापन की प्राकृतिकता में निर्बल हैं। सर्वेक्षण प्रतिनिधित्वपूर्णता से सबल हैं किन्तु प्रायः वे नियंत्रण में निर्बल हैं। पड़तालें नियंत्रण तथा प्रायः प्रतिनिधित्व पूर्णता में निर्बल हैं, उनका प्रयोग प्रायः सुविधा अथवा कम लागत और कभी–कभी प्राकृतिक विन्यासों (Natural Settings) में परिमापन की आवश्यकता के कारण हैं। इस प्रकार हम कहते हैं कि पूँछताछ का प्रकार विभिन्न घटनाओं पर निर्भर करता है।

1.21 अनुसंधान शब्द का व्युत्यत्तीय अर्थ

अनुसंधान अथवा शोध शब्द अंग्रेजी शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। इस प्रकार यदि यह research का संधि विग्रह करें तो यह Re+search होगा। अर्थात, जिसमें Re का अर्थ पुनः या बार–बार होता है जबकि Search का अर्थ खोज होता है इस प्रकार अनुसंधान का व्युत्यत्तीय अर्थ 'पुनः या बार–बार खोजने से सम्बन्धित हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि रिसर्च का आशय तथ्यों की गहन खोज करना होता है। इसमें दो प्रकार के भौतिक तत्वों की प्राधानता पायी जाती है, 1– अवलोकन करना, 2– निरीक्षण करना। जिसमे अवलोकन द्वारा घटना को उद्देश्यपूर्ण ढंग से देखना अथवा उपलबध तथ्यों के आधार पर घटना को समझना द्वितीय तत्व निरीक्षण द्वारा उन तथ्यों के अर्थ को जानकर घटना के पीछे कारणों को समझना तथा विद्यमान वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर उनका 'परीक्षण' करना। निरीक्षण एवं परीक्षण के आधार पर तथ्यों को एकत्रित करने की सम्पूर्ण वैज्ञानिक प्रक्रिया को ही हम अनुसंधान कहते हैं। इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइन्सेज के अनुसार 'अनुसंधान वस्तुओं, अवधारणाओं एवं प्रतीकों के ज्ञान के विस्तार अथवा सत्यापन के लिए सामान्यीकरण के उद्देश्य से कुशलतापूर्वक किया गया कार्य है, चाहे वह ज्ञान सिद्धान्त के निर्माण के लिए ही हो अथवा किसी कला को व्यवहार में लाने के लिए हो।

स्पार तथा **स्वेन्सन** के अनुसार 'सत्य, तथ्य एवं निश्चितताओं के लिए कोई भी विद्वतापूर्ण अन्वेषण अनुसंधान हैं।'

वेबस्टर शब्दकोष के अनुसार 'तथ्यों एवं सिद्धान्तों या किसी भी घटना को ज्ञात करने हेतु सावधानीपूर्वक एवं विवेचनात्मक खोज या निष्ठापूर्वक किये गये अन्वेषण को अनुसंधान कहते हैं।'

दि न्यू सेंचुरी शब्दकोष के अनुसारः 'किसी वस्तु या व्यक्ति के सम्बन्ध में सावधानीपूर्वक खोज करना एवं तथ्यों या सिद्धान्तों का पता लगाना तथा विषय सामग्री की लगातार सावधानीपूर्वक जांच पड़ताल करना ही अनुसंधान हैं।

संक्षिप्त रूप से हम कह कहते हैं कि किसी वस्तु, अवधारणा, व्यक्ति या घटना के सम्बन्ध में सावधानीपूर्वक एवं लगातार निरीक्षण एवं परीक्षण द्वारा की गई जांच–पड़ताल तथा विवेचनात्मक एवं निष्ठापूर्वक वैज्ञानिक पद्धतियों के माध्यम से किया गया अन्वेषण अनुसंधान है।

1.3 सामाजिक अनुसंधान के प्रकार

सामाजिक अनुसंधान को उसकी प्रकृति, उद्देश्य तथा उनके संगठन को ध्यान में रखते हुए निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1– मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान।

2– व्यावहारिक अनुसंधान।

3– क्रियात्मक अनुसंधान।

4– मूल्यांकनात्मक अनुसंधान।

5– अन्वेषणात्मक अनुसंधान।

1– मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान – सामाजिक शोध का यह वह प्रकार है जिसका सम्बन्ध सामाजिक जीवन एवं घटनाओं के बारे में मौलिक सिद्धान्त तथा मूलभूत नियमों की रचना करना होता है। मौलिक अनुसंधान का संपादन निम्नलिखित दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है–

(अ) पूर्व स्थापित नियमों की जांच या सत्यापन, और

(ब) सामाजिक जीवन और घटनाओं से सम्बन्धित नवीन ज्ञान की खोज करना।

इस प्रकार का शोध मुख्यतः ज्ञान प्राप्ति के लिए होता है और इसकी प्रकृति सैद्धान्तिक होती है।

पी. वी. यंग ने मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''विशुद्ध अथवा मौलिक अनुसंधान

उसे कहा जाता है जिसमें ज्ञान का संचय केवल ज्ञान प्राप्ति के लिये ही हो।''

गुडे तथा **हॉट** ने भी मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान की प्रकृति को इसके प्रकार्यों के सन्दर्भ में स्पष्ट किया है– :

इस आधार पर मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान की प्रकृति तथा उसकी उपयोगिता को निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है :

(अ) विशुद्ध अनुसंधान सामान्य सिद्धान्तों को विकसित करके अनेक व्यावहारिक समस्याओं का समाधान कर देता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब अनुसंधानकर्ता नये सिद्धान्तों अथवा नियमों का प्रतिपादन करता है तो इसकी सहायता से भविष्य में उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बारे में सरलतापूर्वक भविष्यवाणी की जा सकती है।

गुडे तथा **हॉट** ने इसी सम्बन्ध में लिखा है, ''वास्तव में यह कहा जा सकता है कि रोग निदान या रोग के उपचार के लिए कोई प्रयत्न उतना व्यावहारिक नहीं है जितना कि एक सैद्धान्तिक अनुसंधान कार्य।''

(ब) मौलिक अनुसंधान किसी विशेष समस्या से सम्बन्धित मुख्य कारकों को ज्ञात करने में भी सहायक होता है। वास्तव में जो व्यक्ति किसी समस्या को सामान्य अवलोकन के द्वारा ही समझने का प्रयत्न करते हैं वे अक्सर उससे सम्बन्धित मुख्य कारकों को समझने में असफल रह जाते हैं। इस स्थिति को और अधिक स्पष्ट करते हुए **गुडे** तथा **हॉट** ने लिखा है, ''यदि किसी क्षेत्र में प्रजातीय भेदभाव हो तो एक खेल संगठक विभिन्न प्रजातियों में लड़कों को अलग–अलग मैदान में भिन्न–भिन्न समय पर खेल की सुविधा देकर उनके संघर्ष की भावना को अस्थायी रूप से दूर कर सकता है। लेकिन इसे समस्या का अस्थायी समाधान नहीं माना जा सकता।

(स) मौलिक शोध प्रशासकों के लिए एक प्रमाणिक और उपयोगी प्रणाली है। यही कारण है कि आज सामाजिक शोध के सिद्धान्तों का प्रयोग केवल सरकारी संगठनों द्वारा ही नहीं किया जाता बल्कि गैर सरकारी तथा व्यापारिक संगठनों द्वारा भी अनुसंधान करके कार्य के कुशल तरीकों की खोज की जाने लगी है।

(द) मौलिक अनुसंधान किसी भी समस्या के समाधान के लिए एक साथ अनेक विकल्प प्रस्तुत करता है। ऐसा अनुसंधान कार्यान्वित करने में समय एवं धन अधिक तो लेता है लेकिन

इसके द्वारा अंततः कोई ऐसा विकल्प अवश्य ही मिल जाता है जिसके द्वारा सम्बन्धित समस्या का समाधान किया जा सके। अनुसंधान से प्राप्त यदि एक परिणाम उपयोगी सिद्ध नहीं होता तो कुछ समय के बाद कोई दूसरा परिणाम हमारे लिए अवश्य ही उपयोगी सिद्ध होने लगता है। इस दृष्टिकोण से भी मौलिक अनुसंधान अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

2– व्यावहारिक अनुसंधान – व्यावहारिक अनुसंधान का सम्बन्ध सामाजिक समस्याओं के व्यावहारिक पक्ष से होता है। ऐसे अनुसंधान का उद्देश्य किसी सामाजिक समस्या का व्यावहारिक समाधान ढूँढना ही नहीं होता बल्कि सामाजिक नियोजन, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन अथवा न्याय जैसे किसी भी पक्ष से सम्बन्धित एक व्यावहारिक योजना प्रस्तुत कर समाज को व्यावहारिक लाभ प्रदान करना होता है। समाज वैज्ञानिक पी.वी. यंग ने भी लिखा है, 'ज्ञान की खोज का निश्चित सम्बन्ध लोगों की प्राथमिक आवश्यकताओं तथा कल्याण से होता है। विज्ञान की मान्यता यह है कि समस्त ज्ञान सारभूत रूप से इस अर्थ में उपयोगी हैं कि वह एक सिद्धान्त के निर्माण में या एक कला को व्यवहार में लाने में सहायक होता है। सिद्धान्त तथा व्यवहार आगे चल कर बहुधा एक–दूसरे से मिल जाते हैं।'

व्यावहारिक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए **पी.वी. यंग** ने कहा है, 'व्यावहारिक अनुसंधान का तात्पर्य ज्ञान के उस संचय से है जिसे मानवता की भलाई के कार्य में लाया जा सके।'

स्टाऊफर के अनुसार सामाजिक जीवन और घटनाओं को समझने से व्यावहारिक अनुसंधान निम्न प्रकार से अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है–

(अ) समाज के लिए उपयोगी अनेक तथ्यों के बारे में विश्वसनीय प्रमाण प्रस्तुत करना।

(ब) मौलिक अनुसंधान के लिए उपयोगी विधियों का उपयोग और उनका विकास करना, तथा

(स) इस प्रकार के तथ्यों और विचारों को प्रस्तुत करना जो सामान्यीकरण की प्रक्रिया को प्रोत्साहित कर सकें।

वैज्ञानिक **गुडे** तथा **हॉट** ने व्यावहारिक अनुसंधान को अत्यधिक उपयोगी मानते हुए इसके अनेक महत्वपूर्ण पक्षों को स्पष्ट किया है–

(अ) सर्वप्रथम, व्यावहारिक अनुसंधान ज्ञान से सम्बन्धित नवीन तथ्यों को प्रस्तुत करता है। व्यावहारिक अनुसंधान के अन्तर्गत जब तथ्यों का संकलन किया जाता है तो अनेक ऐसे

तथ्य भी प्रकाश में आते हैं जो समस्याओं को हल करने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

(ब) व्यावहारिक अनुसंधान के निष्कर्ष पहले से स्थापित सिद्धान्तों की सत्यता की परीक्षा करने में भी सहायक सिद्ध होते हैं। मौलिक अनुसंधान के द्वारा केवल सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया जाता है, इस बात पर विचार नहीं किया जाता है कि सिद्धान्त वास्तव में उपयोगी हैं या नहीं। इसके विपरीत व्यावहारिक अनुसंधान से यह स्पष्ट हो जाता है कि किन्हीं विशेष दशाओं में जिन सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है वह किस सीमा तक व्यावहारिक हैं।

(स) व्यावहारिक शोध अथवा अनुसंधान अवधारणाओं को स्पष्ट करने में भी सहायता प्रदान करते हैं। आज भी परिवर्तनशील दशाओं में अनेक अवधारणाएं ऐसी हैं जो अधिक स्पष्ट और यथार्थ प्रतीत नहीं होती। सामाजिक संरचना का एकीकरण, प्रकार्य, वर्ग, समायोजन अथवा क्रिया आदि इसी प्रकार की अवधारणाएँ हैं। एक अनुसंधानकर्ता जब किसी व्यावहारिक उद्देश्य के आधार पर अनुसंधान कार्य करता है तो विभिन्न अवधारणाओं की कमियों को समझना और उनको स्पष्ट रूप देना संभव हो जाता है।

(द) व्यावहारिक अनुसंधान का एक महत्वपूर्ण कार्य पहले से ही विद्यमान सिद्धान्तों को एकता के सूत्र में बांधना भी है। साधारणतः समाज विज्ञान की विभिन्न शाखाओं से सम्बन्धित सिद्धान्तों की प्रकृति एक–दूसरे से बहुत भिन्न होती है। इसके बावजूद भी यदि विभिन्न समाज वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री, मानववेत्ता, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ एवं समाज सुधारक मिल–जुलकर कार्य करते हैं तो सभी विशेषज्ञ अपने–अपने क्षेत्र से सम्बन्धित सिद्धान्तों का एकीकरण करके अधिक सफलता अर्जित कर सकते हैं।

मौलिक तथा व्यावहारिक अनुसंधान के इस वर्णन से यह नहीं समझना चाहिए कि अनुसंधान के यह दोनों रूप एक–दूसरे से भिन्न हैं। वास्तविकता तो यह है कि दोनों एक–दूसरे से परस्पर सम्बन्धित हैं। इसी सन्दर्भ में **पी. वी. यंग** ने भी लिखा है, ''वास्तव में, मौलिक और व्यावहारिक अनुसंधान के बीच विभाजन की कोई निश्चित रेखा नहीं खींची जा सकती। शोध के यह दोनों स्वरूप सिद्धान्तों के विकास और सत्यापन के लिए एक–दूसरे पर निर्भर हैं।''

3– क्रियात्मक अनुसंधान– क्रियात्मक अनुसंधान वह है जो किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपने

ध्यान को केन्द्रित करता है, साथ ही अनुसंधान में प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है। **गुडे** तथा **हॉट** ने लिखा है, ' क्रियात्मक अनुसंधान उस कार्यक्रम का भाग होता है, जिसका उद्देश्य समाज में विद्यमान परिस्थितियों में परिवर्तन लाना है, चाहे वे गन्दी बस्तियों की दशाएँ हों या प्रजातीय तनाव तथा पक्षपात हो या एक संगठन की प्रभावशीलता हो।'

गुडे और **हॉट** ने गन्दी बस्तियों का उदाहरण प्रस्तुत किया है। इन विद्वानों के अनुसार गंदी बस्तियों में तथ्यों का संकलन करना, उनकी प्रमाणिकता की जाँच करना और इन गंदी बस्तियों में सुधार के लिए योजना प्रस्तुत करना क्रियात्मक अनुसंधान का उदाहरण है। सामाजिक जीवन में व्याप्त किसी भी समस्या का अध्ययन करके उस समस्या से प्राप्त निष्कर्षों को क्रियात्मक स्वरूप प्रदान करना ही क्रियात्मक शोध कहलाता है। इस दृष्टि से क्रियात्मक और व्यावहारिक अनुसंधान में समानताएं दिखायी देती हैं, किन्तु इन दोनों में स्पष्ट अन्तर भी है। क्रियात्मक अनुसंधान भविष्य की योजनाओं और सुधार से सम्बन्धित होता है जबकि व्यावहारिक अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक समस्याओं के व्यावहारिक पक्ष को प्रस्तुत करना है। क्रियात्मक अनुसंधान को प्रस्तुत करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए –

(अ) अध्ययन के दौरान सामाजिक समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर ध्यान देना।

(ब) समस्या या घटना के सम्बन्ध में ज्ञान।

(स) सहयोग प्राप्त करना।

(द) प्रतिवेदन को एकदम ही अन्तिम रूप न देना।

क्रियात्मक अनुसंधान क्या है? – इसे और अच्छी तरह स्पष्ट करते हुए **स्टीफन एम, कोरी** ने कहा है, 'एक अध्ययनकर्ता अपने निर्णयों तथा क्रियाओं की दिशा निर्धारण करने, उन्हें सही बनाने अथवा उनका मूल्यांकन करने के लिए जिस प्रक्रिया के द्वारा अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करता है, उसी को क्रियात्मक अनुसंधान कहा जाता है।'

जॉन बेस्ट – जॉन बेस्ट ने क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए कहा है, 'क्रियात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध तात्कालिक उपयोग के अध्ययन से है न कि सिद्धान्तों को विकसित करने से। यह स्थानीय पृष्ठभूमि में समस्याओं के अध्ययन पर जोर देता हैं। इसके निष्कर्षों का मूल्यांकन स्थानीय

और तात्कालिक उपयोगिता के सन्दर्भ में किया जाता है, किसी सार्वभौमिक वैधता के सन्दर्भ में नहीं।'

4– मूल्यांकनात्मक अनुसंधान– कतिपय अनुसंधान कार्य एवं विषय या घटना का मूल्यांकन करने के उद्देश्य से भी किए जाते हैं। देश की आजादी के बाद से ही इस बात पर चर्चा चल रही है कि क्या मूल्यरहित समाज विज्ञान संभव है? **प्रो. ग्रे** ने भी अपने लेख, "Value-free sociology : A Doctrine of Hypocrisy and Irresponsibility" में इस बात पर जोर दिया है कि एक मूल्य रहित समाजशास्त्र की कल्पना हमें करनी ही नहीं चाहिए ऐसा होना संभव भी नहीं हैं। ऐसी अनेक सामाजिक घटनाऐं होती हैं जिनकी वास्तविकताएं मूल्यांकनात्मक निर्णयों के बिना प्रकट नहीं होतीं। **मैक्स वेबर** की कृति "The protestant ethic and spirit of capitalism" और **दुर्खीम** की पुस्तक "Suicide" मूल्यांकन अनुसंधान के बेहतर उदाहरण हैं। समाजशास्त्री वेबर ने जहां प्रोटेस्टेण्ट धर्म में अन्तर्निहित आचारों का मूल्यांकन पूंजीवादी पर उनके पड़ने वाले प्रभावों के संदर्भ में किया है, वहीं समाजशास्त्री दुर्खीम ने इस बात का मूल्यांकनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया है कि धर्म, परिवार या समग्र रूप में समूह या समाज का दबाव किस भांति व्यक्ति को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित कर सकता है। अंतर्वस्तु विश्लेषण (content analysis) प्रविधि द्वारा कहानियों, नाटक, उपन्यास आदि के पात्रों का भी मूल्यांकन अनुसंधान हो सकता है। धन आधारित मूल्य, जीवन आधारित मूल्य, रिश्तों पर आधारित मूल्य, प्रेम सम्बन्धी मूल्य आदि के आधार पर भी मूल्यांकनात्मक अनुसंधान हो रहा है।

5– अन्वेषणात्मक शोध– इस प्रकार के अनुसंधान नवीन तथ्यों की कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज से सम्बन्धित होते हैं। अर्थात् जो विषय तथ्यों के कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज से सम्बन्धित होते हैं अर्थात् जिस विषय में हमारा ज्ञान सीमित है और हमें उस विषय में कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित करते हुए आगे की बात जाननी है तो उस कार्य को हम अन्वेषणात्मक अनुसंधान कहते हैं। इस प्रकार के अनुंसधान में हम एक घटना के कार्य कारण सम्बन्धों को ढूंढ निकालते हैं क्योंकि हम यह जानते है कि कोई भी घटना, चाहे वह भौतिक हो या सामाजिक, बिना कारण घटित नहीं होती। अनेक सामाजिक घटनाऐं जैसे– बाल श्रमिक, बाल–अपराध, आत्महत्या, दहेज आदि के पीछे कुछ

न कुछ कारण अवश्य ही होते हैं। इन्ही सब कारणों को हम अन्वेषणात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत खोज निकालते हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. अनुसंधान की अवधारणा लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान एवं व्यावहारिक अनुसंधान पर टिप्पणी लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....

....

....

1.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में अनुसंधान के अर्थ एवं प्रकारों का वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि अनुसंधान पुनः या बार–बार खोजने से सम्बन्धित है वास्तव में हम कह सकते हैं कि अनुसंधान में दो तत्त्वों की प्रधानता पायी जाती है पहला तत्त्व अवलोकन करना होता है तथा दूसरा तत्त्व निरीक्षण करना है। वास्तव में अवलोकन द्वारा घटना को उद्देश्यपूर्ण ढंग से देखा जाता है एवं उपलब्ध तथ्यों के आधार पर घटना को समझा जाता है जबकि निरीक्षण के द्वारा उन तथ्यों के अर्थ को जानकर घटना के पीछे के कारणों को समझा जाता है एवं विद्यमान वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर उनका परीक्षण किया जाता है। वास्तविक रूप से निरीक्षण एवं परीक्षण के आधार पर तथ्यों को एकत्रित करने की सम्पूर्ण वैज्ञानिक प्रक्रिया को ही हम अनुसंधान कहते हैं। इस प्रकार संक्षिप्त रूप से देखा जाये तो अनुसंधान किसी वस्तु, अवधारणा, व्यक्ति या घटना के सम्बन्ध में सावधानीपूर्वक लगातार निरीक्षण एवं परीक्षण के द्वारा की गयी जाँच पड़ताल तथा विवेचनात्मक एवं निष्ठापूर्वक वैज्ञानिक पद्धतियों के माध्यम से किया गया अन्वेषण या खोज ही अनुसंधान है। इसी इकाई में अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों जैसे मौलिक, व्यावहारिक, क्रियात्मक, मूल्यांकनात्मक तथा अन्वेषणात्मक शोधों पर भी प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि मौलिक अनुसंधान वह अनुसंधान है जिसका सम्बन्ध सामाजिक जीवन एवं घटनाओं के बारे में मौलिक सिद्धान्त तथा मूलभूत नियमों की रचना करना होता है। व्यावहारिक अनुसंधान के बारे में प्रकाश डालते हुए बताया गया है कि इसका उद्देश्य किसी सामाजिक समस्या का व्यावहारिक समाधान ढूँढ़ना ही नहीं होता बल्कि सामाजिक नियमों, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन अथवा न्याय जैसे किसी भी पक्ष से सम्बन्धित एक व्यावहारिक योजना प्रस्तुत कर समाज को व्यावहारिक लाभ प्रदान करना होता है। क्रियात्मक अनुसंधान के बारे में व्याख्या करते हुए लिखा गया है कि यह अनुसंधान किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपने ध्यान को केन्द्रित करता है, साथ ही अनुसंधान से प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है। मूल्यांकनात्मक अनुसंधान पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि इस प्रकार के अनुसंधान

किसी घटना या विषय के मूल्यांकन करने के उद्देश्य से किये जाते हैं। इकाई के अन्त में अन्वेषणात्मक अनुसंधान पर चर्चा प्रस्तुत करते हुए लिखा गया है कि ऐसे अनुसंधान नवीन तथ्यों की कार्यकारण सम्बन्धों की खोज से सम्बन्धित होते हैं। अर्थात् जिस विषय में हमारा ज्ञान सीमित है और हमें उस विषय में कार्य कारण सम्बन्ध स्थापित करते हुए आगे की बात ज्ञात करनी है तो उस कार्य को हम अन्वेषणात्मक अनुसंधान के आधार पर करते हैं।

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान के बारे में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिसमें अनुसंधान के अर्थ एवं प्रकारों के बारे में आप अच्छी तरीके से ज्ञान अर्जित कर सकेंगे। आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि यह इकाई आपके जीवन में अनुसंधान से सम्बन्धित तथ्यों के बारे में ज्ञान प्रदान कर सकेगी।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

अनुसंधान– तथ्यों एवं सिद्धान्तों या किसी भी घटना को ज्ञात करने हेतु सावधानिपूर्वक एवं विवेचनात्मक खोज या निष्ठापूर्वक किये गये अन्वेषण को अनुसंधान कहते है।

मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान – सामाजिक शोध का यह वह प्रकार है जिसका सम्बन्ध सामाजिक जीवन एवं घटनाओं के बारे में मौलिक सिद्धान्त तथा मूलभूत नियमों की रचना करना होता है।

व्यावहारिक अनुसंधान– व्यावहारिक अनुसंधान का तात्पर्य ज्ञान के उस संचय से है जिसे मानवता की भलाई के कार्य में लाया जा सके।

क्रियात्मक अनुंसधान– क्रियात्मक अनुसंधान वह है जो किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपने ध्यान को केन्द्रित करता है, साथ ही अनुसंधान में प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है।

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान– कतिपय अनुसंधान कार्य एवं विषय या घटना का मूल्यांकन करने के उद्देश्य से भी किए जाते है, ऐसे **अनुसंधान को मूल्यांकनात्मक अनुसंधान कहा जाता है।**

है।

अन्वेषणात्मक शोध– इस प्रकार के अनुसंधान नवीन तथ्यों की कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज से सम्बन्धित होते हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1. मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान के बारे में लिखिए।
2. व्यावहारिक अनुसंधान पर टिप्पणी कीजिए।
3. क्रियात्मक अनुंसधान की व्याख्या कीजिए।
4. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान से आप क्या समझते हैं।
5. अन्वेषणात्मक शोध पर प्रकाश डालिए।

विस्तृत

1. अनुसंधान की अवधारणा एवं अर्थ के बारे में लिखिए।
2. अनुसंधान के व्युत्यत्तीय अर्थ को समझाइये।
3. अनुसंधान के प्रकारों पर अपने विचार–प्रस्तुत कीजिए।
4. मौलिक अनुसंधान की व्याख्या करते हुए क्रियात्मक अनुसंधान के बारे में भी प्रकाश डालिए।
5. सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा स्पष्ट करते हुए मूल्यांकनात्मक अनुसंधान एवं अन्वेषणात्मक अनुसंधान की व्याख्या कीजिए।
6. क्रियात्मक अनुसंधान एवं मूल्यांकनात्मक अनुसंधान पर एक निबन्ध लिखिए।

1.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सिंह, सुरेन्द्र, ''सामाजिक अनुसंधान भाग–दो'', उ0 प्र0 ग्रंथ अकादमी, लखनऊ, 1975 पेज, 1 व 11

2– लेस्ले किश, ''सम स्टेटिस्टिकल प्रोबलम्स इन रिसर्च डिजाइन, एण्ड स्टेजेज ऑफ सोशल रिसर्च'', कन्टेम्पोरेरी पर्सपेक्टीव, प्रेंटिस हाल, न्यू जर्सी, 1970, पेज 108

3– डोनाल्ड, सिसिंन्गर एण्ड मेरी स्टीफेन्सन, ''इनसाइक्लोपेडिया ऑफ सोशल साइन्सेज, वाल्यूम–XIII", दी मैक्मीलन कम्पनी, 1934, पेज 330

4– इ. स्फर एण्ड जे. स्वेन्सन, ''मैथड एण्ड स्टेटस ऑफ सांइटिफिक रिसर्च विद स्पेशल रिफरेन्स टू दी सोशल साइंस'', पेज–1

5– गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, ''प्रारभिक सामाजिक अनुसंधान (शोध)'', आर. बी. एस. ए पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष–2005, पेज 12–18

6– सिंह, ए.एन. एवं सिंह, वि.के. ''सामाजिक अनुसंधान'', न्यू रायल बुक कं. लखनऊ, वर्ष–2007, एवं 2013 पेंज 1–2

खण्ड–प्रथम
समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति

इकाई : 2 समाज कार्य अनुसंधान : अवधारणा एवं प्रकृति

2.0 इकाई का उद्देश्य

2.1 परिचय

2.2 समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा

2.21 समाज कार्य अनुसंधान का अर्थ

2.22 समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषायें

2.23 समाज कार्य अनुसंधान की विशेषतायें

2.3 समाज कार्य अनुसंधान की प्रकृति

2.4 सार–संक्षेप

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

2.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

2.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय गवेषणार्थियों, प्रस्तुत इकाई आपको समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति से रूबरू करवायेगी। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग निम्नलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगें–

1– समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा को समझ सकेंगे।

2– समाज कार्य अनुसंधान के अर्थ को जान सकेंगे।

3– समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा लिख सकेंगे।

4– समाज कार्य अनुसंधान की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

5– समाज कार्य अनुसंधान की प्रकृति पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

2.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति पर प्रकाश डालती है। इस इकाई में समाज कार्य अनुसंधान के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गयी है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य अनुसंधान के अन्तर्गत समाज के अन्तर्गत बढ़ती हुई जटिलता, प्राथमिक सम्बन्धों का धीरे–धीरे प्रतिस्थापित किया जाना, अनेक प्रकार की पहले से समाज में पायी जाने वाली समस्याओं का अधिक विकराल रूप में उपस्थित होना एवं नयी समस्याओं की उत्पत्ति के बारे में शोध करना समाज कार्य अनुसंधान का उद्देश्य है। वास्तव में समाज कार्य अनुसंधान, समाज कार्य विषय से सम्बन्धित उन सभी प्रकार के क्षेत्रों में शोध करता है जो मानव की समस्याओं से सम्बन्धित होते हैं। अतः स्पष्ट रूप से समाज कार्य अनुसंधान समाज कार्य से सम्बन्धित सभी प्रकार के समस्याओं का अध्ययन करता है। समाज कार्य एक ऐसा व्यवसाय है जिसके द्वारा व्यक्ति एवं समाज की अधिक से अधिक सहायता तथा विकास एवं उन्नति करने का प्रयत्न किया जाता है। समाज के अन्तर्गत बढ़ती हुई जटिलता, प्राथमिक सम्बन्धों का धीरे–धीरे द्वितीयक सम्बन्धों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना, पहले से पाई जाने वाली अनेक समस्याओं का अधिक विकराल रूप में उपस्थित होना तथा नयी समस्याओं की उत्पत्तियों के अनुकूल बनाने के लिए विशेष प्रयासों की आवश्यकता, समाज कार्य की एक व्यवसाय के रूप में मान्यता की अल्पावधि तथा इस रूप में मान्यता का अब भी अपूर्ण होना, समाज कार्य व्यवसाय के प्रामाणिक ज्ञान सम्बन्धी आधार का अपर्याप्त एवं निर्बल होना, इत्यादि अनेक ऐसे कारक हैं जो समाज कार्य व्यवसाय की प्रभावपूर्णता को सृदृढ़ बनाने के लिए अधिक से अधिक समाज कार्य शोध की आवश्यकता पर बल देते हैं। प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य अनुसंधान के बारे में लिखते हुए यह आशा है कि यह इकाई समाज कार्य विद्यार्थियों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण होगी, क्योंकि कोई भी अनुसंधान किसी भी समस्या से सम्बन्धित हो उसमें वैज्ञानिक शोध अवश्य होने चाहिए।

प्रिय विद्यार्थियों यह इकाई समाज कार्य अनुसंधान की प्रकृति के बारे में भी व्याख्या करती है जिसमें कहा गया है कि समाज कार्य शोध एक कला एवं विज्ञान दोनों है। इसकी वैज्ञानिकता का परीक्षण क्रमबद्ध सुव्यवस्थित ढंग से किया जाता है और इसकी कला उत्तरदाताओं से पूँछे जाने वाले प्रश्नों के ढंग से स्पष्ट होती है। समाज कार्य अनुसंधान इन दोनों को

अपने में समाहित किये हुए है। वास्तव में समाज कार्य शोध का क्षेत्र सामाजिक परिस्थितियां, घटनाएं एवं समस्यायें हैं जो वैयक्तिक एवं सम्पूर्ण समाज के विकास में बाधक हैं।

2.2 समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा

समाज कार्य अनुसंधान समाज कार्य की एक सहायक प्रणाली है। समाज कार्य में अनुसंधान की अपनी महत्ता है। किसी भी वैज्ञानिक क्षेत्र में अनुसंधान का उद्देश्य ज्ञान में वृद्धि करना होता है। आरम्भ में समाज कार्य अभ्यास एवं सिद्धान्तों में समाज कार्य अनुसंधान को उतना अधिक महत्व नहीं दिया गया, जितना कि आवश्यक था। धीरे–धीरे महसूस किया गया कि समाज कार्य को अधिक प्रभावशाली और पारदर्शी बनाने के लिए विस्तृत सोच और वैज्ञानिकता की आवश्यकता है।

प्रो0 सुरेन्द्र सिंह (1972) ने कहा है कि 'समाज कार्य एक व्यावसायिक सहायतामूलक कार्य है जो प्रायः एक समाज कल्याण संस्था के अधीन अकेले व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह द्वारा सामाजिक वातावरण के अन्तर्गत व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय के रूप में सहायतार्थ आए हुए सेवार्थियों की आवश्यक एवं अनुभूत आवश्यकताओं की उपयुक्त एवं प्रभावपूर्ण ढंग से संतुष्टि प्रदान करने के लिए मनो–सामाजिक अध्ययन करने, निदानात्मक मूल्यांकन अथवा दोनों में परिवर्तन लाने हेतु मानवीय सम्बन्धों से सम्बन्धित प्रजातांत्रिक, यथार्थवादी तथा मानवतावादी दर्शन, वैज्ञानिक ज्ञान एवं प्राविधिक निपुणताओं का एकीकृत स्वरूप में उपयोग करने वाले वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक संगठन, समाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया तथा समाज कार्य अनुसंधान के ढंगों का प्रयोग करते हुए किया जाता है।'

समाज कार्य अनुसंधान के माध्यम से वैज्ञानिक ढंग से समस्याओं के निदान और उपचार की योजना को फलीभूत करने के लिए इसकी आवश्यकता को बल दिया गया। वर्तमान में समाज कार्य को दृढ़ता प्रदान करने में समाज कार्य अनुसंधान अपना बहुमूल्य योगदान देते हुए सामाजिक घटनाओं एवं परिघटनाओं को वैज्ञानिक ढंग से निदान प्रस्तुत करता है और उपलब्ध तथ्यों का पुनर्परीक्षण करता है इसकी महत्ता को समाज कार्य अभ्यास में अस्वीकृत नहीं किया जा सकता है।

समाज के अन्तर्गत बढ़ती हुई जटिलता प्राथमिक सम्बन्धों का धीरे–धीरे द्वितीयक सम्बन्धों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना, अनेक प्रकार की पहले से पाई जाने वाली समस्याओं का अधिक

विकराल रूप में उपस्थित होना नयी समस्याओं की उत्पत्ति, समाज कार्य की अमरीकी पृष्ठभूमि तथा भारतीय समाजिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाने के लिए विशेष प्रयासों की आवश्यकता, समाज कार्य की एक व्यवसाय के रूप में मान्यता की अल्प अवधि तथा उस मान्यता का अब भी अपूर्ण होना, समाज कार्य व्यवसाय के प्रमाणीकृत ज्ञान सम्बन्धी आधार का अपर्याप्त एवं निर्बल होना इत्यादि ऐसे कारक हैं जो समाज कार्य व्यवसाय की प्रभावपूर्णता को बढ़ाते हुए इसे इस देश में वास्तव में व्यावसायिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने के लिए अधिक से अधिक समाज कार्य अनुसंधान की आवश्यकता पर बल देते हैं।

2.21 समाज कार्य अनुसंधान का अर्थ

समाज कार्य अनुसंधान के अर्थ को स्पष्ट करने से पूर्व सामाजिक अनुसंधान, समाज कार्य अनुसंधान और समाज विज्ञान अनुसंधान के अंतरों को स्पष्ट करना आवश्यक होगा।

समाज कार्य के साहित्य का अध्ययन करने से पता चलता है कि पहले समय में सामाजिक अनुसंधान ही मात्र एक बंटवारा था जो प्रयोग में लाया जाता था। 1922 में **मेरी रिचमण्ड** ने समाज कार्य ईयर बुक में, सामाजिक अनुसंधान, शब्द का प्रयोग किया था। 1933 में प्रकाशित समाज कार्य ईयर बुक में ' समाज कार्य अनुसंधान' शब्दावली का प्रयोग किया गया। इसके बाद लम्बी अवधि तक समाज कार्य अनुसंधान तथा समाज कार्य दोनों अवधारणाएँ बदल–बदल कर प्रयोग में लायी जाती रहीं। परन्तु अब समाज कार्य अनुसंधान को एक अधिक विस्तृत अवधारणा मान लिया गया है। **ईवान क्लेग** के अनुसार ' समाज कार्य में अनुसंधान' तथा ' सामाजिक अनुसंधान' प्रायः एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग में लाये गये हैं, तथा दोनों शब्दों का प्रयोग इतनी असावधानी के साथ किया गया है कि उनकी विषय वस्तु अनिश्चित परिलक्षित हो रही है।'

2.22 समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषायें

समाज कार्य शोध एक ऐसी खोज है जिसके अन्तर्गत वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करते हुए ऐसे उपायों की खोज की जाती है जिससे सेवार्थी व्यक्ति, समूह, तथा समुदाय को अधिक अच्छे ढंग से सेवाएं प्रदान की जा सकें तथा समस्याओं का समाधान अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से किया जा सके।

फ्रीडलैण्डर (1957)— समाज कार्य शोध समाज कार्य ज्ञान, निपुणता, अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों की जाँच, सामान्यीकरण एवं विस्तार करने के लिए समाज कार्य संगठन, कार्य एवं ढंगों की प्रमाणिकता की आलोचनात्मक पूँछताछ एवं वैज्ञानिक परीक्षण है।

नेशनल असोशियेशन ऑफ सोशल वर्कर्स –(1957)– समाज कार्य शोध के अन्तर्गत वे प्रश्न सम्मिलित होते हैं जो समाज कार्य प्रयोग के दौरान अथवा प्रशासन के दौरान उठते हैं जो शोध के माध्यम से सुलझाई जाने योग्य होती हैं, जो समाज कार्य तत्वाधानों के अन्तर्गत अन्वेषण के लिए उपयुक्त होती है।

रिपल (1980) – समाज कार्य शोध व्यावहारिक समस्याओं से प्रारम्भ होती है जिसका उद्देश्य उस ज्ञान का विकास करना है जिसे सामाजिक कार्यक्रमों के नियोजन तथा कार्यान्वयन में प्रयोग में लाया जा सकें।

इन उपरिलिखित परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि समाज कार्य शोध समाज कार्य व्यवसाय द्वारा अपनी क्रिया के दौरान अपनाये गये सहायक ढंगों में से एक ऐसा ढंग है जो अन्य सभी प्राथमिक एवं सहायक ढंगों का प्रभावपूर्णता को बढ़ाने के लिए मान्यताओं से सम्बन्धित ज्ञान को परिकल्पनात्मक ज्ञान में और तत्पश्चात इसे प्रमाणिक ज्ञान के रूप में निरन्तर परिवर्तित करने का प्रयास करता है।

2.23 समाज कार्य अनुसंधान की विशेषतायें

1– समाज कार्य शोध के द्वारा सेवार्थी की अप्रत्यक्ष रूप से सहायता की जाती है।

2– यह अपने कार्यक्रम के अन्तर्गत वैज्ञानिक ढंगों को उपयोग में लाता है। निम्नलिखित चरण होते हैं–

(अ) समस्या के क्षेत्र के विषय का चुनाव– किसी भी अनुसंधान का प्रथम चरण समस्या के क्षेत्र के विषय का चुनाव है। अतः समाज कार्य अनुसंधान भी सर्वप्रथम समस्या के क्षेत्र के विषय का चुनाव करता है।

(ब) समस्या का परिसीमन– समस्या का परिसीमन के अन्तर्गत समाज कार्य अनुसंधान में समस्या की उपयुक्तता एवं सीमांकन किया जाता है।

(स) उपलब्ध सामग्री का अध्ययन– उपलब्ध सामग्री के अध्ययन से तात्पर्य पूर्व में हुए अनुसंधानों के बारे में जानकारी प्राप्त करना एवं उनसे प्राप्त निष्कर्षों का होने वाले अनुसंधान में उपयोग करना।

(द) उपकल्पना का निर्माण– इसके अन्तर्गत कोई भी अनुसंधानकर्ता सर्वप्रथम उपकल्पना का निर्माण करता है जिसमें अनुसंधान करने वाले विषय के बारे में पूर्व ही अनुमान के आधार पर निष्कर्ष के बारे में भविष्यवाणी कर ली जाती है तथा अनुसंधान करने के बाद उपकल्पना को कसौटी पर देखा जाता है। यदि उपकल्पना सही है तो वह अनुसंधान सही दिशा में किया गया है।

(य) उपकरणों का निर्माण– समाज कार्य अनुसंधान हेतु विभिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।

(र) तथ्यों का संकलन– इस चरण में प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्यों का संकलन किया जाता है एवं उनके माध्यम से तथ्यों के बारे में निष्कर्ष निकाला जाता है।

(ल) तथ्यों का सम्पादन– इस चरण में विभिन्न प्रकार के तथ्यों का सम्पादन किया जाता है। जिसमें उपयुक्त तथ्य तो रख लिये जाते हैं बाकि अनुपयुक्त तथ्य हटा दिये जाते हैं।

(व) तथ्यों का वर्गीकरण एवं सारणीकरण– सम्पादन के बाद तथ्यों का वर्गीकरण किया जाता है एवं उनका सारणीकरण कर निष्कर्ष निकाला जाता है।

(श) तथ्यों का विश्लेषण एवं विवेचन– इस चरण में वर्गीकरण एवं सारणीकरण के बाद जो निष्कर्ष निकाला जाता है उनका उपयुक्त विश्लेषण एवं विवेचन किया जाता है।

(ष) प्रतिवेदन– समाज कार्य अनुसंधान का यह अन्तिम चरण है जिसमें प्राप्त निष्कर्षों का लेखन किया जाता है जो भविष्य में होने वाले अनुसंधानों में सहायता प्रदान करता है।

3– सेवार्थी को अधिक वैज्ञानिक ढंग से सेवा प्रदान करने के लिए नये ढंगों की खोज की जाती है।

4– समाज कार्यकर्ता को नवीन ज्ञान, प्रविधि, निपुणता तथा कौशल प्राप्त होता है।

5– नये ज्ञान की खोज की जाती है तथा उपलब्ध ज्ञान को प्रमाणित किया जाता है।

6– समाजिक घटनाओं के कारणों की खोज की जाती है।

7– सामाजिक समस्याओं के कारणों का पता लगाते हुए उनके समाधान के उपाय सुझाए जाते हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं विशेषताएँ लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2.3 समाज कार्य शोध की प्रकृति

समाज कार्य शोध का प्रमुख उद्देश्य सेवार्थियों को उनकी अपनी संस्कृति एवं पर्यावरण से अलग किये बिना उनको अपनी सामाजिक परिस्थितियों में ही समायोजित करने में सहायता प्रदान करना है। समाज कार्य शोध को कला एवं विज्ञान दोनों के रूप में स्वीकार किया जा चुका है। इसकी वैज्ञानिकता का परीक्षण क्रमबद्ध सुव्यवस्थित ढंग से किया जा सकता है और इसकी कला उत्तरदाताओं से पूँछे जाने वाले प्रश्नों के ढंग से स्पष्ट होती है। समाज कार्य शोध मुख्यतः इन दोनों को अपने समाहित किए है।

किसी भी शोध के लिए वैज्ञानिक विधि का उपयोग शोध को अत्यधिक प्रभावशाली स्पष्ट एवं नवीन ज्ञान की खोज के लिए किया जाता है। समाज कार्य शोध विशेषतया मनुष्य एवं उसके सामाजिक पर्यावरण के मध्य अन्तःसम्बन्धों को विकसित करने एवं नवीन जानकारी उपलब्ध कराने का एक प्रयास है, जो कि सेवार्थियों को उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता करता है और एक अच्छे वातावरण का निर्माण करता है, साथ ही शोध कार्यों के माध्यम से सामाजिक समस्याओं के कारण की खोज करते हुए उनका निदान करता है। इस दृष्टि से समाज कार्य के शोध का क्षेत्र हम उन सामाजिक परिस्थितियों, घटनाओं एवं समस्याओं को मान सकते हैं जो कि वैयक्तिक एवं सम्पूर्ण समाज के विकास में बाधक हैं।

ग्रीन वुड ने समाज कार्य शोध को वर्गीकृत करते हुए इसे दो भागों में विभक्त किया है जो कि निम्नलिखित है।

1— मौलिक समाज कार्य शोध तथा

2— परिचालनात्मक समाज कार्य शोध।

ग्रीन वुड के अनुसार, 'समाज कार्य ज्ञान का ऐसा शोध जो तत्कालीन लाभ हेतु कम उपयोगी है, को मौलिक समाज कार्य शोध कह सकते हैं।' सामान्यतः समाज कार्य शोध व्यावहारिक एवं परिचालानात्मक है, इसकी सापेक्ष मौलिकता है।

2.4 सार—संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य अनुसंधान के माध्यम से वैज्ञानिक प्रविधि का उपयोग करते हुए समस्याओं के निदान और उपचार की योजना को फलीभूत करने के लिए एवं उसकी आवश्यकता को समझने के लिए समाज कार्य अनुसंधान किया जाता है। वास्तव में समाज

कार्य एक व्यावसायिक एवं सहायतामूलक कार्य है जो प्रायः एक समाज कल्याण संस्था के अधीन अकेले व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह द्वारा सामाजिक वातावरण के अन्तर्गत व्यक्ति, समूह या समुदाय के रूप में सहायतार्थ आये हुए सेवार्थियों की आवश्यकता एवं अनुभूत आवश्यकताओं की उपयुक्त एवं प्रभावपूर्ण ढंग से सन्तुष्टि करने के लिए मनोसामाजिक अध्ययन करने, निदानात्मक मूल्यांकन करने तथा सामाजिक परिस्थिति, सेवार्थी के व्यक्तित्व अथवा दोनों में परिवर्तन लाने हेतु मानवीय सम्बन्धों से सम्बन्धित प्रजातान्त्रिक, यथार्थवादी तथा मानवतावादी दर्शन, वैज्ञानिक ज्ञान एवं प्राविधिक निपुणताओं का एकीकृत स्वरूप में उपयोग करने वाले वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक संगठन, समाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया तथा समाज कार्य अनुसंधान के ढंगों का प्रयोग करते हुए किया जाता है।

वास्तव में समाज कार्य अनुसंधान तथा सामाजिक अनुसंधान प्रायः एक–दूसरे के स्थान पर प्रयोग में लाये गये हैं तथा दोनों शब्दों का प्रयोग इतनी असावधानी के साथ किया गया है कि उनकी विषय वस्तु अनिश्चित परिलक्षित हो रही है। इसी इकाई में समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी है जिसमें फ्रीडलैण्डर का कथन है कि – समाज कार्य अनुसंधान, निपुणता, अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों की जाँच, सामान्यीकरण एवं विस्तार करने के लिए समाज कार्य संगठन, कार्य एवं ढंगों की प्रमाणिकता की आलोचनात्मक पूँछताछ एवं वैज्ञानिक परीक्षण है।

इकाई के बीच में समाज कार्य अनुसंधान की विभिन्न विशेषताओं की भी व्याख्या प्रस्तुत की गयी है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य अनुसंधान सेवार्थी की अप्रत्यक्ष रूप से सहायता करता है, यह सहायता वैज्ञानिक ढंगों के उपयोग के आधार पर की जाती है। सेवार्थी को विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक ढंग से सेवा प्रदान की जाती है एवं नये ढंगों की खोज की जाती है। समाज कार्यकर्ता को नवीन ज्ञान, प्रविधि, निपुणता तथा कौशल प्राप्त होता है।

इकाई के अन्त में समाज कार्य शोध की प्रकृति के बारे में बताया गया है जिसमें ग्रीन वुड द्वारा उल्लिखित मौलिक समाज कार्य शोध प्रकृति तथा परिचालनात्मक समाज कार्य शोध प्रकृति का उल्लेख किया गया है।

इस प्रकार स्पष्टतः कहा जा सकता है कि समाज कार्य अनुसंधान से सम्बन्धित यह इकाई विद्यार्थियों के लिए बहुत ही लाभप्रद है एवं विभिन्न प्रकार के समाज कार्य अनुसंधानों के बारे में अवगत करायेगी।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

समाज कार्य शोध– समाज कार्य शोध, समाज कार्य ज्ञान, निपुणता, अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों की जाँच, सामान्यीकरण एवं विस्तार करने के लिए समाज कार्य संगठन, कार्य एवं ढंगों की प्रमाणिकता की आलोचनात्मक पूँछताछ एवं वैज्ञानिक परीक्षण है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा को समझाइये।

2– समाज कार्य अनुसंधान के अर्थ पर प्रकाश डालिये।

3– समाज कार्य अनुसंधान की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

विस्तृत

1– समाज कार्य अनुसंधान की प्रकृति पर अपने विचार प्रस्तुत कर कीजिए।

2– समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं अर्थ को समझाते हुए इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

2.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सिंह, सुरेन्द्र, ''सामाजिक अनुसंधान भाग–दो'', हिन्दी ग्रंथ अकादमी लखनऊ, 1975 पेज, 1

2– क्लेग, इवान, ''रिसर्च इन सोशल वर्क, ईयर बुक, ए0एस0डब्ल्यू0ए0'', वर्ष, 1935, पेज 421

3– ''डिकेड ऑफ रिएप्रेजल'', सोशल सर्विस रिव्यू सेप्तेम्बर, 1957, पेज 316–317

4– सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष 1998, पेज – 255–257

5– सिंह, ए.एम. एवं सिंह, वी.के. ''समाजिक अनुसंधान'' न्यू रायल बुक कं., लखनऊ वर्ष, 2007 एवं 2013, पेज–21.42

खण्ड–प्रथम
समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति

इकाई : 3 समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र

3.0 इकाई का उद्देश्य
3.1 परिचय
3.2 समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र
3.3 सार–संक्षेप
3.4 पारिभाषिक शब्दावली
अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत
3.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

3.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय शोधार्थियों प्रस्तुत इकाई, समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र, आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी। वास्तव में प्रस्तुत इकाईं का उद्देश्य समाज कार्य शोध के विषय क्षेत्र के बारे में आपको बताना है चूंकि समाज कार्य एक व्यावसायिक विषय है, अतः समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र बहुत महत्वपूर्ण होते हैं जिसके बारे में प्रस्तुत इकाई आपको अवगत करायेगी।

3.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों किसी भी अनुसंधान को करने से पहले आवश्यक होता है कि इसके विषय क्षेत्रों में बारे में उपयुक्त जानकारी कर ली जाय अन्यथा अनुसंधान गलत दिशा में चला जायेगा। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस इकाई को प्रस्तुत किया जा रहा है। चूंकि समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र उसकी विभिन्न प्रविधियों पर आधारित है। अतः समाज कार्य शोध का विषय भी इन्हीं विधियों से सम्बन्धित है। वास्तव में समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र सामाजिक अनुसंधान जितना व्यापक नहीं हैं। यह समस्याओं एवं कठिनाइयों से सम्बन्धित हैं। प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य के क्षेत्र जैसे, प्रशासकीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए

अनुसंधान, सामुदायिक आवश्यकताओं पर अनुसंधान, वैधीकरण एवं मूल्यांकन सम्बन्धी अनुसंधान ,उपकल्पना एवं नियोजन या निगमनात्मक सम्बन्धी अनुसंधान, समाज कार्य सेवाओं के निष्पादन में सहायता सामग्री के उत्पादन सम्बन्धी अनुसंधान, समाज कार्य की शिक्षा और परीक्षण सम्बन्धी अनुसंधान, सम्मिलित हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद उपरोक्त के बारे में जानकारी प्राप्त कर पायेंगे।

3.2 समाज कार्य शोध का विषय क्षेत्र

समाज कार्य शोध निम्नलिखित प्रमुख क्षेत्रों में किया जाता है:–

1– उन कारकों की खोज तथा परिमापन जो सामाजिक समस्याओं को उत्पन्न करते हैं तथा सामाजिक सेवाओं की आवश्यकताओं को स्पष्ट करते हैं।

2– दान देने वाली संस्थाओं के इतिहास, समाज कार्य कल्याण अधिनियमों, समाज कल्याण कार्यक्रमों तथा समाज की आवश्यकताओं का अध्ययन,

3– समाज कार्यकर्ताओं की भूमिका, प्रत्यक्षीकरण की तथा उनकी स्थितियों के मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन,

4– समाज कार्यकर्ताओं द्वारा लक्ष्यों के निर्धारण तथा उनकी अपनी छवि का अध्ययन,

5– समाज कार्यकर्ताओं की आशाओं, अभिलाषाओं तथा क्रियाओं का अध्ययन।

6– समाज की विधिक प्रक्रियाओं का अध्ययन,

7– उपलब्ध समाज सेवाओं की वैयक्तिक, सामूहिक तथा सामुदायिक आवश्यकता के संदर्भ में उपयोगिता का अध्ययन,

8– समाज कार्य क्रिया के परीक्षण मापन तथा मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन तथा समाज कार्य अभ्यास के लिये वाँछित योग्यताओं के निर्धारण का अध्ययन,

9– समाज कार्य सेवाओं, कार्यकर्ताओं एवं अभिकरणों के सम्बन्ध में सेवार्थी के व्यवहार की प्रतिक्रिया का अध्ययन,

10– सेवार्थी की आशाओं, अभिलाषाओं, अपेक्षाओं, उद्देश्यों, प्रत्यक्षीकरणों का मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन

11– सामाजिक संस्था के अन्तर्गत तथा इनके बाहर कार्यरत तथा व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं की भूमिका की परिभाषा तथा उनके अन्तर्सन्बन्धों में सहयोग की स्थिति का अध्ययन,

12– समुदाय के सामाजिक समूहों के मूल्यों तथा उनकी वरीयताओं का अध्ययन,

13– सामाजिक संस्थाओं की विभिन्न इकाइयों में अन्तर्सम्बन्ध तथा उनके सेवार्थी तथा संस्था के कर्मचारियों पर प्रभाव का अध्ययन,

14– समाज कार्य शोध की पद्धतियों की प्रभावपूर्णता का अध्ययन

सारांश में, यह कहा जा सकता है कि समाज कार्य शोध का उद्देश्य उस नवीन ज्ञान की खोज करना है जो समाज के लिए उपयोगी कार्यक्रमों को नियोजित करने तथा लागू करने में सहायक सिद्ध हो सके।

वर्कशॉप आन रिसर्च इन सोशल वर्क ने 1948 में समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्र के निम्नलिखित वर्ग बनाये हैं।

1– प्रशासनिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनुसंधान इसमें अर्थव्यवस्था, लेखांकन कर्मचारी–गण, व्यवस्था मापन, सार्वजनिक सम्बन्ध, सामाजिक नीति को कार्य रूप में बदलना या उसका निष्पादन आदि के सम्बन्ध में समस्याओं के अध्ययन के लिए अनुसंधान कार्य किया जाता है ।

2– नियोजन के अनुसंधान में साधारण सामग्री का विश्लेषण और अर्थ निरूपण संस्थाओं के परस्पर, सम्बन्धों, आवश्यकताओं और समस्याओं की परिभाषा, उनके मापन आदि के सम्बन्ध में शोध करते हैं।

3– मौलिक अनुसंधान– जो प्रमुख रूप से चार क्षेत्रों से सम्बन्धित होता है। जैसे (क) उन मान्यताओं का परीक्षण जिन पर समाज कार्य सेवाएं आधारित होती है। (ख) विकासवादी प्रक्रिया की प्रकृति की जाँच (ग) अनुसंधान के ढंगों एवं प्रविधियों सम्बन्धी अनुसंधान (घ) निजी एवं सरकारी संस्थाओं के बीच कार्यों के विभाजन या वितरण सम्बन्धी अनुसंधान।

फिलिप क्लीन ने समाज कार्य अनुसंधान के निम्नलिखित वर्ग बताये हैं–

(1) सेवाओं की आवश्यकता को ज्ञात करने और उन्हें मापने के लिए अध्ययन।

(2) दी जा रही सेवाओं को मापने और यह देखने के लिए अध्ययन कि आवश्यकताओं से उनका कहाँ तक सम्बन्ध है।

(3) समाज कार्य की क्रियाओं के परिणामों की जांच, परीक्षण और मूल्यांकन के लिए अध्ययन।

(4) विभिन्न प्रविधियों की क्षमता का परीक्षण अर्थात् समाज कार्य की विभिन्न प्रणालियों एवं विधियों की तुलनात्मक क्षमता की जाँच।

(5) अनुसंधान की प्रणालियों का अध्ययन।

ग्रीन वुड ने समाज कार्य अनुसंधान के चार वर्ग बताये हैं—

(1) नियोजन सम्बन्धी अनुसंधान

(2) प्रशासकीय अनुसंधान

(3) प्रक्रिया सम्बन्धी अनुसंधान

(4) मूल्यांकन सम्बन्धी अनुसंधान

प्रेस्टन एवं मुड के मतानुसार समाज कार्य अनुसंधान के वर्ग हैं :—

(1) प्रशासकीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनुसंधान

(2) सामुदायिक आवश्यकताओं पर अनुसंधान

(3) वैधीकरण एवं मूल्यांकन सम्बन्धी अनुसंधान

(4) उपकल्पना एवं नियोजन या निगमनात्मक सम्बनधी अनुसंधान।

(5) समाज कार्य सेवाओं के निष्पादन में सहायता सामग्री के उत्पादन सम्बन्धी अनुसंधान

(6) समाज कार्य की शिक्षा और परीक्षण सम्बन्धी अनुसंधान

1952 में समाज कार्य अनुसंधान ग्रुप द्वारा नियुक्त की गयी एक समिति 'शोध कार्य एवं अभ्यास' ने समाज कार्य सर्वेक्षण के निम्न वर्गों की व्याख्या की है।

(1) सेवाओं की आवश्यकता का निर्धारण

(2) सेवाओं की प्रभावशीलता और उनकी पर्याप्तता सम्बन्धी मूल्यांकन

(3) समाज कार्य अभ्यास की विषय वस्तु का अन्वेषण।

(4) समाज कार्य की सेवाओं सम्बन्धी क्रियाओं के लिए क्षमता का अन्वेषण।

(5) समाज कार्य के सिद्धान्तों के प्रत्यय की वैधता।

(6) समाज कार्य के अनुसंधान के लिए प्रणालीतंत्र की विधियों और उपकरणों का विकास।

(7) समाज कार्य की सेवाओं, कार्यक्रमों व अवधारणाओं का विकास और उनमें होने वाले पतन की जाँच या अन्वेषण।

(8) दूसरे क्षेत्रों से लिए गये सिद्धान्तों या ज्ञान का अनुदान और परीक्षण।

डॉ० हसन के अनुसार समाज कार्य अनुसंधान के प्रमुख वर्ग निम्नलिखित हैं।

(1) आवश्यकताओं और साधनों पर अनुसंधान।

(2) प्रशासन सम्बन्धी अनुसंधान।

(3) लक्ष्यों एवं प्रत्ययों पर अनुसंधान।

(4) समाज कार्य अभ्यास पर अनुसंधान

(5) परिणामों पर अनुसंधान

(6) समाज कार्य अनुसंधान के प्रणालीतंत्र या कार्यविधियों पर अनुसंधान।

(7) शिक्षा एवं प्रशिक्षण सम्बन्धी अनुसंधान।

फ्रीडलैंडर ने समाज कार्य अनुसंधान के निम्नलिखित वर्ग बताये हैं—

(1) उन कारकों का पता लागना और उन्हें मापने के लिए अध्ययन जो सामाजिक समस्याओं को जन्म देते हैं और सामाजिक सेवाओं को जन्म देते हैं। तथा सामाजिक सेवाओं की आवश्यकता उत्पन्न करते हैं।

(2) पुण्यार्थ संस्थाओं, समाज कल्याण विधानों, समाज कल्याण कार्यक्रमों एवं समाज कार्य प्रत्ययों के इतिहास का अध्ययन।

(3) समाज कार्यकताओं की आकांक्षाओं, उनके संकल्पों एवं क्रियाओं के बीच अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन।

(4) समाज कार्यकर्ताओं की संकल्पों, लक्ष्यों एवं आत्मचित्र का अध्ययन।

(5) समाज कार्यकर्ताओं की आकांक्षाओं, उसके संकल्पों के बीच कार्य कलापों और क्रियाओं के बीच अध्ययन।

(6) समाज कार्य प्रक्रियाओं की विषय—वस्तु का अध्ययन।

(7) अध्ययन जो व्यक्ति, समूहों और समुदायों की आवश्यकताओं के लिये उपलब्ध सामाजिक सेवाओं के पर्याप्त होने की समीक्षा के लिए किये जाते हैं।

(8) अध्ययन जो समाज कार्य क्रियाओं के परिणामों का परीक्षण, मापन और मूल्यांकन करते हैं और समाज कार्य अभ्यास के लिए आवश्यक निपुणताओं की जांच करते हैं।

(9) सेवार्थी के व्यवहार का समाज कार्य अभ्यास के प्रति उनमें प्रतिक्रियाओं के सम्बन्ध के लिये अध्ययन है।

(10) सेवार्थी की आकांक्षाओं लक्ष्यों के प्रत्यक्षीकरण और परिस्थितियों के मूल्यांकन के लिए अध्ययन।

(11) समाज कार्यकताओं की भूमिकाओं की औपचारिक और अनौपचारिक परिभाषाओं, उनके परस्पर सम्बन्धों एवं सामाजिक संस्थाओं के बीच सहयोग, स्वरू᠀ का अध्ययन।

(12) सामाजिक समूहों के मूल्यों एवं प्राथमिकताओं का अध्ययन जिस पर समाज कल्याण, अभ्यास, सहायता एवं विकास के लिए आधारित रहता है।

(13) समाज के विभिन्न अंगभूतों के बीच विभिन्न अन्तःक्रियाओं के स्वरूपों और सेवार्थियों और कर्मचारियों पर उनके प्रभाव का अध्ययन।

(14) समाज कार्य अनुसंधान की प्रणालियों का अध्ययन।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समाज कार्य अनुसंधान के किन्हीं चार विषय क्षेत्रों पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....
....
....

2. समाज कार्य अनुसंधान के विषय क्षेत्र पर निबंध लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

3.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य शोध के विषय क्षेत्र के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य अनुसंधान उन कारकों की खोज तथा परिमापन करता है जो सामाजिक समस्या उत्पन्न करते हैं तथा सामाजिक सेवाओं की आवश्यकताओं को स्पष्ट करते हैं। वास्तव में समाज कार्य अनुसंधान का क्षेत्र दान देने वाली संस्थायें, समाज कार्य कल्याण अधिनियमों, समाज कल्याण कार्यक्रमों तथा समाज की आवश्यकताओं का अध्ययन करना है। समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्रों में समाज कार्यकर्ताओं की भूमिका तथा उनकी स्थितियों का मूल्यांकन करना भी आता है। समाज कार्यकर्ताओं की आशाओं, अभिलाषाओं तथा क्रियाओं का भी समाज कार्य अनुसंधान अध्ययन करता है। समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्रों में वैयक्तिक, सामूहिक तथा सामुदायिक एवं समाज कार्य क्रिया के परीक्षण मापन तथा मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन तथा समाज कार्य अभ्यास के लिए वांछित योग्यताओं का निर्धारण का अध्ययन भी आता है। अन्ततः

समाज कार्य के क्षेत्रों में समुदाय के सामाजिक समूहों के मूल्यों तथा उनकी वरीयताओं का अध्ययन, सामाजिक संस्थाओं की विभिन्न इकाईयों में अन्तर सम्बन्ध तथा उनके सेवार्थी तथा संस्था के कर्मचारियों पर प्रभाव का अध्ययन सम्मिलित है। इसी इकाई में वर्कशाप ऑन रिसर्च इन सोशल वर्क, 1948 द्वारा दिये गये समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्र का भी वर्णन किया गया है। इकाई के अन्त में फिलिप क्लीन, ग्रीन वुड तथा प्रेस्टन एवं मुड द्वारा दिये गये समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्रों का भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई समाज कार्य शोध के विषय क्षेत्र के बारे में विद्यार्थियों को नये ज्ञान से अवगत करायेगी जिसमें समाज कार्य के विद्यार्थी समाज कार्य अनुसंधान कर सकेंगे।

3.4 पारिभाषिक शब्दावली

समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्र – समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्र से तात्पर्य उन क्षेत्रों से है जिन क्षेत्रों में समाज कार्य अनुसंधान किया जाता है, जैसे– वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक संग न कार्य, समाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया इत्यादि आते हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– समाज कार्य अनुसंधान के किन्हीं दस क्षेत्रों के बारे में लिखिये।

2– वर्कशाप ऑन रिसर्च इन सोशल वर्क 1948 द्वारा दिये गये समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

3– फिलीप क्लीन द्वारा उल्लिखित समाज कार्य अनुसंधान के वर्गों की व्याख्या कीजिए।

4– प्रिस्टन एवं मुड द्वारा उल्लिखित समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्रों पर प्रकाश डालिए।

5– डॉ0 हसन द्वारा दिये गये समाज कार्य अनुसंधान के प्रमुख क्षेत्रों पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

विस्तृत

1– समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्रों पर एक निबंध लिखिए।

3.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष 1998, पेज – 267–268

2– फिलिप, क्लीन, ''पास्ट एण्ड फ्यूचर इन सोशल वर्क रिसर्च, सोशल वेलफेयर फोरम्'', नेशनल कान्फ्रेंस ऑन सोशल वर्क, वर्ष 1951, पेज 134

3– ग्रीन वुड, अर्नेस्ट, ''सोशल वर्क रिसर्च : ए डिकेट ऑफ, रिएप्रेजल, सोशल सर्विस रिव्यू'', सिप्तम्बर, 1957 पेज 316–317

4– सिंह, ए.एन. एवं सिंह, वि.के. ''सामाजिक अनुसंधान'', न्यू रॉयल बुक कं. लखनऊ, वर्ष–2007, एवं 2013 पेंज – 21–42

खण्ड–प्रथम
समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति

इकाई : 4 समाज कार्य अनुसंधान के चरण

4.0 इकाई का उद्देश्य

4.1 परिचय

4.2 समाज कार्य अनुसंधान के चरण

4.3 सार–संक्षेप

4.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

4.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

4.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य आप लोगों को समाज कार्य अनुसंधान के विभिन्न चरणों के बारे में जानकारी प्रदान करना है। वास्तव में समाज कार्य अनुसंधान एक समाज कार्य की सहायक प्रणाली है जो समाज कार्य हेतु नये दिशाओं के बारे में कुछ चिन्हित चरणों के अर्न्तगत किया जाता है। उन्हीं चरणों के बारे में इस इकाई में वर्णन किया गया है।

4.1 परिचय

किसी भी अनुसंधान को अनियोजित ढंग से नहीं किया जा सकता। उसमें वैज्ञानिकता लाने के लिए एक योजनाबद्ध तरीके से निश्चित क्रम में अनुसंधान का कार्य करना होता है। अनुसंधान एक ऐसी प्रक्रिया है जो कमबद्धरुप से एक चरण से दूसरे, दूसरे से तीसरे व इसी प्रकार क्रमशः विभिन्न चरणों, स्तरों या सोपानों से होकर गुजरती है। किसी अनुसंधान में कौन–सा चरण किस स्तर पर कब प्रयोग में लाया जाए, यह अनुसंधान की प्रकृति पर निर्भर करता है दूसरे शब्दों में, किसी अनुसंधान में अध्ययन विषय के सम्बन्ध में सत्य की खोज के लिए अनुसंधानकर्ता को कुछ व्यवस्थित स्तरों से अनुसंधान की प्रक्रिया को आगे बढ़ाना

होता है। ये स्तर ही वास्तव में अनुसंधान के चरण होते हैं। प्रस्तुत इकाई में आप लोग अग्रलिखित के बारे में जैसे, क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित समस्या/विषय का चुनाव, समस्या और क्षेत्र का परिसीमन, चयन किये गये विषय पर उपलब्ध सामग्री का प्रारम्भिक अध्ययन, उपकल्पना का निर्माण, अध्ययन की योजना का निर्माण, सूचना के स्त्रोतों का निर्धारण, उत्तरदाताओं का चयन, प्रामाणिक एवं प्रासंगिक शोध उपकरणों का निर्माण, तथ्यों/आंकड़ों का संकलन, संग्रहीत आंकड़ों का संपादन,

संकेतीकरण, वर्गीकरण एवं सारणीकरण, तथ्यों का विश्लेषण एवं उनका निर्वचन, प्रतिवेदन,भावी शोध हेतु समस्याओं एवं परिकल्पनाओं का सुझाव, जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

4.2 समाज कार्य अनुसांधान के चरण

सम्पूर्ण शोध के कार्यक्रम को 14 प्रमुख चरणों में बाँटा जा सकता हैं। दूसरे शब्दों में, शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया में क्षेत्र के चुनाव से लेकर अन्तिम प्रतिवेदन तैयार करने पर किसी भी शोधकर्ता को क्रमशः निम्न प्रमुख 14 चरणों से गुजरना पड़ता है:—

1— क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित समस्या/विषय का चुनाव।

2— समस्या और क्षेत्र का परिसीमन

3— चयन किये गये विषय पर उपलब्ध सामग्री का प्रारम्भिक अध्ययन।

4— उपकल्पना का निर्माण।

5— अध्ययन की योजना का निर्माण।

6— सूचना के स्त्रोतों का निर्धारण।

7— उत्तरदाताओं का चयन।

8— प्रामाणिक एवं प्रासंगिक शोध उपकरणों का निर्माण।

9— तथ्यों/आंकड़ों का संकलन।

10— संग्रहीत आंकड़ों का संपादन।

11— संकेतीकरण, वर्गीकरण एवं सारणीकरण।

12— तथ्यों का विश्लेषण एवं उनका निर्वचन।

13— प्रतिवेदन

14— भावी शोध हेतु समस्याओं एवं परिकल्पनाओं का सुझाव

1– समस्या/विषय का चयन– शोधकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह अपने शोध की समस्या का चयन करे। समाज कार्य के शोध की समस्या कोई भी ऐसी समस्या हो सकती है जो व्यक्ति या समाज के मनो–सामाजिक संगठन से सम्बन्धित हो। व्यक्ति और समाज के संगठन से सम्बन्धित समस्या का क्षेत्र और स्वरूप बहुत विशाल हो सकता है। समाज का निर्माण करने वाली तथा उसकी संरचना पर प्रभाव डालने वाली कोई भी कारक अथवा शक्ति इसमें आ सकती है। वे अनेक परिस्थितियां भी समस्या के रूप में चयनित की जा सकती हैं जो व्यक्ति पर किसी न किसी रूप में प्रभाव डालती हों। समाज का निर्माण करने वाली या उसकी संरचना पर प्रभाव डालने वाली कोई भी शक्ति इसमें सम्मिलित की जा सकती हैं। वे परिस्थितियां भी इसका क्षेत्र हो सकती हैं जो व्यक्ति पर किन्हीं रूपों में प्रभाव डालती हैं। समाज कार्य के शोध की समस्या का क्षेत्र व्यक्तिगत के अतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, इत्यादि पहलुओं से सम्बन्धित हो सकता है।

शोधकर्ता को शुरू में केवल यही नहीं तय करना पड़ता है कि जीवन के विविध पहलुओं में से किस पक्ष का अध्ययन करेगा। यदि शोध की समस्या सामाजिक समस्या है तो उसे प्रारम्भ से ही तय कर लेना होता है कि वह इसमें अस्पृश्यता, नशाबंदी, भ्रष्टाचार अथवा पारिवारिक विघटन की समस्याओं में से किस सामाजिक समस्या विशेष का अध्ययन करेगा। इसी प्रकार आर्थिक समस्याओं को निश्चित करने में उसे प्रारम्भ में ही मांग–पूर्ति की समस्या, मँहगायी–भत्ते की समस्या, मजदूरी की समस्या, कार्य करने की दशाओं की समस्या, आदि में से किसी एक का चयन कर लेना चाहिए। इसी प्रकार धार्मिक, सांस्कृतिक या राजनीतिक समस्याओं से सम्बन्धित अध्ययनों में शोधकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह उनकी किसी एक विशेष समस्या का चयन कर ले। प्रत्येक शोधकर्ता की रूचि, अनुभव, शिक्षण, प्रशिक्षण साधन आदि भिन्न–भिन्न हुआ करते हैं। यहाँ शोधकर्ता का तात्पर्य किसी व्यक्ति मात्र से ही न होकर उन दोनों प्रकार के राजकीय और गैर–राजकीय संगठनों से है जो शोध करते या करवाते हैं। शोधकर्ता को अपनी रूचि के अनुसार शोध की समस्या का चयन और निर्धारण करना चाहिए। ऐसा करने से शोध के अच्छे परिणाम सामने आते हैं।

2– समस्या और क्षेत्र का परिसीमन – शोध का दूसरा चरण चुनी गयी समस्या, उसके विषय और क्षेत्र को परिसीमित करना होता है। व्यक्तिगत अथवा सामाजिक पहलुओं से सम्बन्धित कोई समस्या हो प्रायः उस पर शोध की आवश्यकता इसलिए महसूस होती है क्योंकि समस्या व्यापक होती है। यद्यपि व्यापकता

रखने वाली समस्याओं का ही चयन करने पर शोध की उपादेयता भी व्यापक होती है फिर भी समस्या जितनी अधिक सुपरिभाषित तथा सीमित एवं विशिष्ट होती है, शोध के उतना ही प्रभावपूर्ण होने की संभावना बढ़ जाती है। समाज कार्य के अध्ययन में क्षेत्र का तात्पर्य यह है कि शोधकर्ता यह निश्चित करता है कि वह किस भौगोलिक दायरे में समस्या का अध्ययन करेगा। य़द्यपि मानवीय समस्याओं की प्रकृति सार्वभौमिक हो सकती है परन्तु भौगोलिक भिन्नता से समस्याओं की प्रकृति का वाह्य स्वरूप बदल जाता है। इसलिए शोध को अधिक उपयोगी एवं सही बनाने के लिए आवश्यक हो जाता है कि भौगोलिक क्षेत्र निश्चित कर लिया जाय। प्रत्येक समाज की अपनी एक भौगोलिक विशेषता होती है और उसके आधार पर अनेक प्रकार की भिन्नतायें उत्पन्न होती हैं। अतः शोधकर्ता को अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए समस्या के चुनाव के साथ–साथ यह भी निश्चित कर लेना पड़ता है कि वह समस्या का किस क्षेत्र में अध्ययन करेगा। यदि विस्तृत क्षेत्र को शोध का क्षेत्र बनाकर शोध किया जाता है तो अधिक खर्च, मानव प्रयास तथा समय लगने की सम्भावना होती है तथा साथ ही परिवर्तन की आवश्यकता को नियंत्रित और एकरूपता की दशा में बनाये रखना संभव होता है। विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र के शोधों के लिए या तो शोध को कई भागों में बांटकर भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में एक ही समय पर अथवा भिन्न–भिन्न चरणों में अध्ययन किया जाता है या देश के कुछ भूखण्डों का चयन कर लिया जाता है जिसमें एक ही समय पर अथवा विभिन्न चरणों में शोधकार्य किया जाता है।

3– उपलब्ध सामग्री का प्रारम्भिक अध्ययन – शोध के तीसरे चरण में शोधकर्ता को समस्या, विषय और क्षेत्र के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए ऐसी प्रत्येक सामग्री का अध्ययन करना लाभकारी होता है जो उससे सम्बन्धित हो और जिसे सरलतापूर्वक प्राप्त किया जा सके। सामग्री के अध्ययन के बाद ही वह शोध की दिशा, साधनों आदि का ठीक–ठीक निर्धारण कर सकता है। सामग्री के अध्ययन के आधार पर वह विषय और क्षेत्र की प्रकृति को ठीक से समझ पाता है और उसका एक उचित परिसीमन कर सकता है। अध्ययन के बाद ही वह शोध की रूपरेखा का निर्माण करता है और उसी के अनुसार सम्पूर्ण शोध प्ररचना को तैयार करता है। बिना अध्ययन के उसे एक तो इन कार्यों को करने में बड़ी कठिनाई होती है, दूसरे वह अपने उद्देश्य एवं कर्तव्य से विमुख भी हो सकता है। फलस्वरूप वह इच्छित शोध नहीं कर पाता है। शोध के इस चरण में ऐसी प्रत्येक

सामग्री का अध्ययन सम्मिलित होता है जो सरलतापूर्वक उपलब्ध हो अथवा कर्ता के द्वारा समझी जा सकती हो।

4– उपकल्पना का निर्माण – ये उपकल्पनाऐं शोध के प्रारम्भ में की गयी ऐसी कल्पनायें हैं जो शोध के बाद प्राप्त होने वाले निष्कषों के आधार पर स्वीकार अथवा अस्वीकार की जाती है। ये शोध के बाद स्वीकार, अस्वीकार किए जाने वाले वे कथन है जिनकी कल्पना शोध के पूर्व ही कर ली जाती है। यह शोध समस्या का शोध के पहले का संभावित हल है। शोधकर्ता शोध करने के लिए कुछ ऐसी बातों का निश्चय कर लेता है जो शोध के बाद भली प्रकार स्पष्ट होती है। इस निश्चय से उसे अपने शोध की दिशा, उसकी प्ररचना, उसकी प्रविधि और अन्य सहायक बातों का अनुमान लगाने और निर्धारण करने में सुविधा होती है। उपकल्पना की शोध के दौरान जाँच की जाती है, फिर उसमें सुधार कर अन्तिम सत्य की स्थापना की जाती है। अन्वेषणात्मक शोध में उपकल्पना का निर्माण नहीं किया जाता, विवरणात्मक शोधों में उपकल्पनायें प्रायः बनायी जाती हैं। इन शोधों की उपकल्पनायें सत्य के काफी पास होती हैं। एक समस्या के कई पूर्व उत्तर होने से शोध प्ररचना और प्रविधि के निर्माण में सुविधा होती है। परिकल्पना को बनाते समय इस बात का ध्यान रहना चाहिए कि वह स्पष्ट, सरल तथा संक्षिप्त हो तथा उसकी भाषा ऐसी न हो कि उसके कई अर्थ निकलते हों। जो भी बात कहीं जाये छोटे और सरल वाक्यों में होनी चाहिये।

5– अध्ययन की योजना का निर्माण– अध्ययन की सम्पूर्ण योजना के निर्माण के दौरान प्रासंगिक पुस्तकों की सूची तैयार करके उसके विषय में निर्णय लेने, आवश्यक शोध उपकरण के बारे में निर्णय, अध्ययन के आंकड़ों के संग्रह की उपयुक्त विधि के विषय में निर्णय लेने, उपयुक्त मापकों के बारे में निर्णय लेने, इत्यादि कार्य किये जाते हैं।

6– सूचना के स्त्रोतों का निर्धारण–इस स्तर पर यह निर्णय लिया जाता है कि समग्र क्या होगा अर्थात् एक समय विशेष पर (जब आंकड़े एकत्रित किये जायेंगे) एक क्षेत्र विशेष से सम्बंधित किस श्रेणी के उत्तरदाताओं से सूचना एकत्रित की जायेगी। तदुपरान्त यह निश्चित किया जाता है कि सम्पूर्ण समग्र से सूचना एकत्रित की जायेगी अथवा इसके एक अंश विशेष जिसे प्रतिदर्श कहते हैं, से सूचना एकत्रित की जायेगी तथा प्रतिदर्श का चयन किस प्रकार किया जायेगा।

7– उत्तरदाताओं का चयन – इस चरण के अन्तर्गत उत्तरदाताओं का चयन किया जाता है। वास्तव में कोई भी अनुसंधान पूर्ण नहीं हो सकता जब तक उसमें उपयुक्त

उत्तरदाताओं का चयन न हो। उत्तरदाताओं के चयन के लिए हम समाज कार्य अनुसंधान में वैज्ञानिक प्रविधि का प्रयोग करते हैं जिसमें समग्र का निर्धारण करते हुए इकाईयों का चयन करते हैं। इकाई से तात्पर्य समाज कार्य अनुसंधान में सबसे छोटा इकाई है जो समाज कार्य अनुसंधान में सभी उत्तरदाताओं की विशेषताओं का मानक धारण किये हुए होता है। वास्तव में उत्तरदाताओं के चयन हेतु विभिन्न प्रकार के सूत्रों का भी उपयोग किया जाता है। उत्तरदाताओं का चयन सबसे प्रमुख स्तर समग्र का कम से कम 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं का चयन करना उचित होता है।

8— प्रामाणिक एवं प्रासंगिक शोध उपकरणों का निर्माण— इस स्तर पर चेकलिस्ट, प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार निदर्शनी, पर्यवेक्षण निदर्शनी, परीक्षण, प्रक्षेपण प्रविधि इत्यादि उपकरणों का अध्ययन की आवश्यकतानुसार विकास किया जाता है

9—तथ्यों/आँकड़ों का संकलन — आवश्यक उपकरणों के निर्माण के पश्चात् इनकी सहायता से शोध के विभिन्न स्त्रोतों—प्रलेखीय अथवा क्षेत्रीय से आवश्यक तथ्यों/आँकड़ों को एकत्रित किया जाता है। अध्ययन, एवं अभिलेखन पर्यवेक्षण, प्रश्नावली, साक्षात्कार, इत्यादि विधियों का सहारा लेते हुए इच्छित सामग्री का संकलन किया जाता है। पर्यवेक्षण प्रणाली के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता स्वयं अनुसंधान क्षेत्र में जाकर तथ्यों का अवलोकन कर संकलन करता है जबकि प्रश्नावली के अन्तर्गत प्रश्नों की एक सूची होती है जो उत्तरदाताओं को भेजकर एवं भरवाकर वापस मंगा ली जाती है। साक्षात्कार के अन्तर्गत अनुसंधान कर्ता स्वयं उत्तरदाताओं से मिलकर एवं उनसे प्रश्न पूँछकर तथ्यों का संकलन करता है।

10— संग्रहीत सामग्री का सम्पादन — इस स्तर पर तथ्यों को एकत्रित करते समय या एकत्रित की गयी सूचना का सम्पादन किया जाता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सभी आवश्यक सूचना वास्तव में एकत्रित कर ली गयी है, तथा एकत्रित की गयी निरर्थक सामग्री को निकाल दिया गया है।

11— वर्गीकरण, संकेतीकरण तथा सारिणीकरण— एकत्रित की गयी सामग्री का अध्ययन करने के पश्चात् इसे विभिन्न श्रेणियों में इस प्रकार विभाजित किया जाता है कि ये श्रेणियाँ एकत्रित की गयी सम्पूर्ण सामग्री को अपने में समाहित करती हो, ये एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित किन्तु पृथक हो ताकि पुनरावृत्ति न हो सके। तदुपरान्त, आवश्यकतानुसार इन श्रेणियों को संकेत भी निर्धारित किए जा सकते हैं ताकि सारिणीकरण के स्तर पर अनावश्यक श्रम तथा समय एवं धन के अपव्यय से बचा जा सके।

इसके बाद सारिणियों का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि ये अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक सिद्ध हो सकें। सारिणियों का निर्माण करते समय इस बात को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाना चाहिये कि सारिणियां अनावश्यक रूप से जटिल न हों, इनमें स्तम्भों तथा पंक्तियों की संख्या इतनी अधिक न हो कि प्रथम दृश्य इनको देखकर समझ पाना कठिन हो जाए तथा इतनी कम भी न हो कि ऐसा लगे कि श्रेणियों का निर्माण करते हुए सारणी को केवल सारणी बनाने के लिए तैयार किया गया है। स्वतंन्त्र चर को स्तम्भों तथा आश्रित चर को पंक्तियों में दिखाया जाना चाहिए।

12– तथ्यों का विश्लेषण तथा निर्वचन – सारणीबद्ध तथ्यों का तार्किक एवं सांख्यिकीय दोनों प्रकार के ढंगों का प्रयोग करते हुये विश्लेषण किया जाता है और विश्लेषण से प्राप्त परिणामों को अन्य अध्ययन से प्राप्त परिणामों के परिवेक्ष्य में प्रस्तुत किया जाता है और सापेक्ष गुणों एवं सीमाओं को उजाकर करते हुए निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

13– प्रतिवेदन तैयार करना –उपरिलिखित सभी स्तरों पर किये गये कार्यों को शोध उपभोक्ताओं के समक्ष प्रभावपूर्ण रूप से प्रस्तुत करने हेतु उनकी अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुय प्रतिवेदन तैयार किया जाता है।

14– भावी शोध हेतु समस्याओं एवं परिकल्पनाओं का सुझाव– इस चरण में समाज कार्य अनुसंधान के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की समस्याओं का उल्लेख किया जाता है जिसके अन्तर्गत अनुसंधान में आये हुए समस्यायें उल्लिखित होती हैं। वास्तव में समाज कार्य अनुसंधान करने में विभिन्न प्रकार की समस्यायें समाज कार्य अनुसंधान कर्ता के सामने उपस्थित होती हैं जिनको कि वह हल करते हुए आगे बढ़ता है। अतः इन समस्याओं का वह अपने प्रतिवेदन में उल्लेख करता है जिससे भविष्य में होने वाले अनुसंधानों की समस्याओं से बचा जा सके। परिकल्पनाओं के बारे में भी सुझाव प्रस्तुत किया जाता है जिससे कि परिकल्पना निर्माण में सहायता प्राप्त हो सके। किसी भी समाज कार्य अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य समाज में व्याप्त समस्याओं का व्यावहारिक निदान प्रस्तुत करना है। अतः यदि अनुसंधान के अंत में वास्तविक परिकल्पनाओं के निर्माण हेतु सुझाव प्रस्तुत किये जायें तो भविष्य में होने वाले अनुसंधानों की परिकल्पनाओं के निर्माण में सहायता प्राप्त हो सकती है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समाज कार्य अनुसंधान के चरणों के बारे में प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. वर्गीकरण, संकेतीकरण तथा सारिणीकरण पर टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

4.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य अनुसंधान के विभिन्न चरणों के बारे में व्याख्या प्रस्तुत की गयी है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य अनुसंधान के 14 चरण होते हैं जिसमें क्षेत्र विषय से सम्बन्धित समस्या का चुनाव, समस्या और क्षेत्र का परिसीमन, चयन किये गये विषय पर उपलब्ध सामग्री का प्रारम्भिक अध्ययन, उपकल्पना का निर्माण, अध्ययन की योजना का निर्माण, सूचना के स्रोतों का निर्धारण, उत्तरदाताओं का चयन, प्रामाणिक एवं प्रासंगिक शोध उपकरणों का ही निर्माण, तथ्यों का संकलन, संग्रहित आंकड़ों का संपादन, संकेतन, वर्गीकरण एवं सारणीकरण, तथ्यों का विश्लेषण एवं उनका विवेचन प्रतिवेदन लेखन तथा भावी शोध हेतु समस्याएं एवं परिकल्पनाओं का सुझाव सम्मिलित होते हैं। प्रस्तुत इकाई में उपरोक्त सभी प्रकार के चरणों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में वृद्धि करायेगी तथा समाज कार्य अनुसंधान के विभिन्न चरणों के बारे में अवगत करायेगी।

4.4 पारिभाषिक शब्दावली

समाज कार्य अनुसंधान के चरण– समाज कार्य अनुसंधान के चरण से तात्पर्य उन चरणों से है जो समाज कार्य अनुसंधान करते समय अपनाये जाते हैं।

उपकल्पना – उपकल्पना एक प्रारम्भिक सामान्यीकरण है जिसकी सत्यता की जाँच अभी बाकी है। अपने बिल्कुल प्रारम्भिक स्तरों पर उपकल्पना एक अनुमान, कल्पनात्मक विचार अथवा पूर्वानुमान आदि कुछ भी हो सकती है जो बाद में किसी भी क्रिया अथवा अनुसंधान का आधार बन सकती है।

अभ्यास प्रश्न

लघु –

1– समस्या के चुनाव से आप क्या समझते हैं?

2– समस्या और क्षेत्र के परिसीमन पर प्रकाश डालिए।

3– अध्ययन की योजना के निर्माण से आप क्या समझते हैं?

4— आंकड़ों के संकलन पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

5— प्रतिवेदन लेखन क्या है?

6— सूचना के स्रोतों के निर्धारण पर प्रकाश डालिए।

7— उपकल्पना निर्माण पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

विस्तृत –

1— समाज कार्य अनुसंधान के चरणों पर एक निबंध लिखिए।

4.5 संदर्भ—ग्रन्थ सूची

1— सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष 1998, पेज – 260—266

2— गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, ''प्रारिम्भक सामाजिक अनुसंधान (शोध)'', आर. बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष—2005 पेज—28

3— सिंह, ए.एन. एवं सिंह, वि.के. ''सामाजिक अनुसंधान'', न्यू रॉयल बुक कं. लखनऊ, वर्ष—2007, एवं 2013 पेंज – 21—42

खण्ड–प्रथम
समाज कार्य अनुसंधान की अवधारणा एवं प्रकृति

इकाई : 5 समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान

5.0 इकाई का उद्देश्य

5.1 परिचय

5.2 समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा

5.3 सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा

5.4 समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान में अन्तर

5.5 सार–संक्षेप

5.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

5.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

5.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान से सम्बन्धित है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1– समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा के बारे में लिख सकेंगे।

2– सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा के बारे में जान सकेंगे।

3– समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।

5.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान के बारे में है जिसमें समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान के अर्थ एवं परिभाषाओं पर प्रकाश डाला

गया है। इसी इकाई में समाज कार्य अनुसंधान तथा सामाजिक अनुसंधान के मध्य अन्तरों पर भी चर्चा प्रस्तुत की गयी है। इसमें बताया गया है कि सामाजिक अनुसंधान वह अनुसंधान है जिसका उद्देश्य तार्किक तथा क्रमबद्ध पद्धतियों द्वारा नवीन तथ्यों का अन्वेषण या पुराने तथ्यों का पुनः परीक्षण करना है, उसमें पाये जाने वाले अनुक्रमों, अन्तर्सम्बन्धों कारण सहित व्याख्याओं तथा उनको संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना है। समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा करते हुए बताया गया है कि समाज कार्य अनुसंधान – ज्ञान का संग्रह जो समाज कार्य में चेतन प्रयोग के लिए और अभ्यास कर्ताओं में निपुणता के विकास के लिए उपलब्ध है वह कुछ तो सामाजिक एवं प्राणीशास्त्रीय विज्ञानों से लिया गया है और कुछ कार्य क्रियाओं की वास्तविक सम्पादन से, इस प्रकार किये हुए तथ्यों को जब संगठित एवं नियमबद्ध किया जाता है तो समाज कार्य के विज्ञान का निर्माण होता है। जब यह तथ्य ज्ञात किये जाते हैं तो संकेत एवं ज्ञान इन नियमों द्वारा नियमबद्ध किये जाते हैं और उन्हें सामान्य सिद्धान्तों का रूप दिया जाता है तब समाज कार्य अनुसंधान की उत्पत्ति होती है। अमेरिका में एक 'वर्कशॉप ऑन रिसर्च इन सोशल वर्क' आयोजित की गई जिसमें जनवरी–1948 में कहा गया है कि समाज कार्य अनुसंधान और सामाजिक अनुसंधान 'मौलिक सामाजिक विज्ञानों में से किसी गति की ओर निर्देशित होता है जबकि समाज कार्य अनुसंधान व्यावसायिक कार्यकर्ताओं एवं समुदाय द्वारा कार्य करते समय अनुभव की जाने वाली समस्याओं से सम्बन्धित है।'

वर्कशॉप प्रतिवेदन में 'सामाजिक अनुसंधान' और 'समाज विज्ञान अनुसंधान' अवधारणाओं को समानार्थक समझा गया है जो उपयुक्त नहीं है। इस बात को और भी स्पष्ट किया जा सकता है– (1) अनुसंधान में अर्थपूर्ण प्रश्नों और समस्याओं का उत्तर या समाधान ढूढ़ने के लिए वैज्ञानिक प्रणालियों और कार्यविधियों का प्रयोग किया जाता है; (2) सामाजिक अनुसंधान शब्द का अभिप्राय ज्ञान की वृद्धि सुधार अथवा जांच करने के लिये सामान्यीकरण के उद्देश्य से सामाजिक घटनाओं पर 'अनुसंधान' अर्थात् वैज्ञानिक प्रणालियों एवं कार्यविधियों के प्रयोग से है, चाहे वह ज्ञान सिद्धान्त के निर्माण या कला के प्रयोग में सहायता दे। इस प्रकार

सामाजिक शोध शब्द को अधिक विस्तृत मानना चाहिये, क्योंकि समाज विज्ञान शोध और समाज कार्य शोध दोनों ही इसमें सम्मिलित हैं।

5.2 समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा

फ्लेचर ने समाज कार्य में अनुसंधान को 'समाज कार्य के कार्यों एंव प्रणालियों की वैधता की वैज्ञानिक जांच' कहकर परिभाषित किया है।'

क्लीन के अनुसार, ज्ञान का संग्रह जो समाज कार्य में चेतन प्रयोग के लिए और अभ्यासकर्ताओं में निपुणता के विकास के लिए उपलब्ध है वह कुछ तो सामाजिक एवं प्राणिशास्त्रीय विज्ञानों से लिया गया है और कुछ कार्य क्रियाओं की वास्तविक सम्पादन से, इस प्रकार किये हुए तथ्यों को जब संगठित एवं नियमबद्ध किया जाता है तो समाज कार्य के विज्ञान का निर्माण होता है। जब यह तथ्य ज्ञात किये जाते हैं तो संकेत एवं ज्ञान इन नियमों द्वारा नियमबद्ध किये जाते हैं और उन्हें सामान्य सिद्धान्तों का रूप दिया जाता है तब समाज कार्य अनुसंधान की उत्पत्ति होती है'।

मैक्डोनाल्ड के अनुसार 'समाज कार्य अनुसंधान के अन्तर्गत वे प्रश्न सम्मिलित होते हैं जो समाज कार्य सेवाओं के नियोजन या प्रशासन के बीच उठते है जो समाज कार्य तत्वावधानों के अन्तर्गत अन्वेषण के लिए उपयुक्त होते हैं।'

5.3 सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा

समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा प्रस्तुत करने के पहले सामाजिक शोध, सामाजिक सर्वेक्षण तथा समाज विज्ञान की परिभाषाओं का उल्लेख किया जाता है। जिससे इनके आपसी अंतरों को और अधिक स्पष्ट किया जा सके।

सामाजिक अनुसंधान **वैब्सटर शब्द कोश** के अनुसार, 'एक अध्ययन परायण अन्वेषण जो सामान्यता आलोचनात्मक एवं विस्तृत जाँच या परीक्षण होता है जिसका उद्देश्य स्वीकृति प्राप्त परिणामों के विषय में सूचनाओं के आधार पर पुनः विचार करना है।'

यंग के अनुसार, 'सामाजिक अनुसधान एक वैज्ञानिक योजना है जिसका उद्देश्य तार्किक तथा क्रमबद्ध पद्धतियों द्वारा नवीन तथ्यों का अन्वेषण अथवा पुराने तथ्यों का पुनः परीक्षण करना है, उसमें पाये जाने वाले अनुक्रमों, अन्तः सम्बधों कारण

सहित व्याख्याओं तथा उनको संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना है'।

मोजर के अनुसार, 'सामजिक घटनाओं व समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति के लिए किये गये व्यवस्थित अन्वेषण को हम सामाजिक अनुसंधान कहते हैं'।

बोगार्डस के अनुसार, 'एक साथ रहने वाले व्यक्तियों के जीवन में क्रियाशील अन्तर्निहित प्रक्रियाओं का अन्वेषण ही सामाजिक अनुसंधान है।'

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....
....
....
....
....
....
....
....
....

5.4 समाज कार्य अनुसंधान तथा सामाजिक शोध में अन्तर

समाज कार्य शोध के अर्थ को स्पष्ट करने के बाद सामाजिक शोध तथा समाज समाज कार्य शोध में अन्तर स्पष्ट करना उचित प्रतीत होता है। **ईवान क्लेग** ने यह लिखा है कि समाज कार्य शोध तथा सामाजिक शोध का प्रायः एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग इतनी ढिलाई के साथ किया जाता है कि इनकी विषय वस्तु अनिश्चित है। फ्रैन्च के मत में समाज कार्य के अन्तर्गत शोध का एक उपयोगितावादी आधार होता है। इसका विशिष्ट लक्ष्य अभिमुखीकरण होता है।

क्लीन ने तीन आधारभूत मान्यताओं को ध्यान में रखते हुये समाज कार्य शोध तथा समाज विज्ञानों के अन्तर्गत किये गये शोध में अन्तर स्पष्ट किया है।

1– समाज कार्य शोध अन्य क्रियाओं को सम्पादित करने के अतिरिक्त निरोधात्मक एवं सुधारात्मक कार्यों को करने के लिए स्थापित किए गये संगठनों द्वारा अपनी क्रिया के दौरान आवश्यक सिद्धान्तों के अपनाये जाने से सम्बन्धित है।

2– सेवाओं को प्रदान करने की आवश्यकता का मूल्यांकन करने अथवा इन आवश्यकताओं एवं सेवाओं को जन्म देने वाली परिस्थितियों एवं समस्याओं का अध्ययन करने की आवश्यकता का अनुभव होने पर समाज कार्य शोध एवं सामाजिक शोध दोनों की सामान्य अभिरूचि उत्पन्न होती है।

3– सामाजिक सेवाओं का प्रदान किया जाना उन प्रायोजक संस्थाओं के मूल्यों पर आधारित निर्णयों पर निर्भर करता है जो इन सेवाओं को आयोजित करती है।

सन् 1947 में वेस्टर्न रिजर्व युनिवर्सिटी, अमरीका के स्कूल ऑफ साइन्सेज द्वारा आयोजित वर्कशॉप ऑन रिर्सर्च इन सोशल

वर्क के प्रतिवेदन में समाज कार्य शोध एवं सामाजिक शोध में इस प्रकार भेद स्थापित किया गया है।

सामाजिक शोध मौलिक समाज विज्ञानों में से किसी की प्रगति की ओर निर्देशित होता है जबकि समाज कार्य के अन्तर्गत शोध व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं द्वारा समाज कार्य कार्यों से समुदाय द्वारा अपने सम्बन्ध में अनुभव की गयी समस्याओं से सम्बन्धित है। समाज कार्य शोध के अन्तर्गत सदैव अन्वेषित की जाने वाली समस्या का समाज कार्य करने अथवा इसे करने की योजना बनाने के दौरान पता लगाया जाता है। समाज विज्ञान के ढंगों एवं सिद्धान्तों दोनों का प्रयोग किया जा सकता है किन्तु वे समाज कार्यकर्ताओं को इसीलिए लाभकारी हैं क्योंकि वे समाज कार्य के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुये प्रश्नों का उत्तर देने में सहायता पहुंचाते हैं।

इस प्रकार जबकि सामाजिक शोध अपने अभिगम में सामान्य है तथा प्रमुख रूप से मानव मात्र में अभिरूचि रखता है, समाज कार्य शोध अधिक समस्योन्मुख एवं अपने अभिगम में विशिष्ट है तथा यह अपना ध्यान मनुष्य एवं उसकी समीपवर्ती समस्याओं पर केन्द्रित करता है। इसके अतिरिक्त, जबकि सामाजिक शोध के परिणाम सिद्धान्तों एवं नियमों के विकास की ओर योगदान देने की प्रवृत्ति रखते हैं, समाज कार्य शोध के परिणामों का उद्देश्य ऐसे सामान्यीकरणों की स्थापना करना होता है जिनका उपयोग व्यक्तियों, समूहों एवं समुदायों को समाज सेवा प्रदान करने में व्यावसायिक समाज कार्यकताओं के मार्गदर्शन के लिए किया जाता है।

5.5 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि सामाजिक अनुसंधान एक अध्ययन परायण अन्वेषण है जो सामान्यतः आलोचनात्मक एवं विस्तृत जाँच या परीक्षण होता है। जिसका उद्देश्य स्वीकृति प्राप्त परिणामों के विषय में सूचनाओं के आधार पर पुनः विचार करना है। इसी इकाई में बोगार्डस ने सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा करते हुए कहा है कि – एक साथ रहने वाले व्यक्तियों के जीवन क्रियाशील प्रक्रियाओं का अन्वेषण या खोज ही सामाजिक अनुसंधान है। समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए लिखा गया है कि समाज कार्य अनुसंधान वह अनुसंधान है जिसके अन्तर्गत प्रश्न सम्मिलित होते हैं जो समाज कार्य सेवाओं के नियोजन या

प्रशासन के बीच प्रस्तुत होते हैं जो समाज कार्य तत्त्वावधानों के अन्तर्गत अन्वेषण के लिए उपयुक्त होते हैं।

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान के मध्य अन्तर के बारे में भी चर्चा की गयी है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य शोध अन्य क्रियाओं को सम्पादित करने के अलावा निरोधात्मक एवं सुधारात्मक कार्यों को करने के लिए स्थापित किये गये संगठनों द्वारा अपनी क्रिया के दौरान आवश्यक सिद्धान्तों के अपनाये जाने से सम्बन्धित है तथा सेवाओं को प्रदान करने की आवश्यकता मूल्यांकन करने अथवा इन आवश्यकताओं एवं सेवाओं को जन्म देने वाली परिस्थितियों एवं समस्याओं का अध्ययन करने की आवश्यकताओं का अनुभव होने पर समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान दोनों की सामान्य अभिरूचि उत्पन्न होती है। अन्ततः कहा जा सकता है कि सामाजिक शोध अपने अभिगम में सामान्य है तथा प्रमुख रूप से मानव मात्र में अभिरूचि रखता है, समाज कार्य अनुसंधान अधिक समस्योन्मुख एवं अपने अभिगम में विशिष्ट है तथा यह अपना ध्यान मनुष्य एवं उसकी समीपवर्ती समस्याओं पर केन्द्रित करता है। इसके अतिरिक्त जबकि सामाजिक शोध के परिणाम सिद्धान्तों एवं नियमों के विकास की ओर योगदान देने की प्रवृत्ति रखते हैं, समाज कार्य शोध के परिणामों का उद्देश्य ऐसे सामान्यीकरणों की स्थापना करना होता है जिनका उपयोग व्यक्तियों, समूहों एवं समुदायों को समाज सेवा प्रदान करने में व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता के मार्गदर्शन के लिए किया जाता है।

प्रस्तुत इकाई आज लोगों के ज्ञान संवर्धन में सहायक सिद्ध होगी जोकि आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी। आशा है कि यह इकाई समाज कार्य अनुसंधान एवं सामाजिक अनुसंधान के मध्य विभेदों से आपको अवगत करायेगी।

5.6 पारिभाषिक शब्दावली

समाज कार्य अनुसंधान – समाज कार्य अनुसंधान अन्य क्रियाओं को सम्पादित करने के अतिरिक्त निरोधात्मक एवं सुधारात्मक कार्यों को करने के लिए स्थापित किये गये संगठनों द्वारा अपनी क्रिया के दौरान आवश्यक सिद्धान्तों के अपनाये जाने से सम्बन्धित है।

सामाजिक अनुसंधान – सामाजिक अनुसंधान से तात्पर्य सामाजिक घटनाओं व समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति के लिए किये गये व्यवस्थित अन्वेषण को हम सामाजिक अनुसंधान कहते हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा प्रस्तुत कीजिए।

2– समाज कार्य अनुसंधान का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

विस्तृत

1– समाज कार्य अनुसंधान को परिभाषित करते हुए सामाजिक अनुसंधान एवं समाज कार्य अनुसंधान के मध्य विभेदों को स्पष्ट कीजिए।

2– सामाजिक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए समाज कार्य एवं सामाजिक अनुसंधान के मध्य अन्तर स्पष्ट कीजिए।

5.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– वेब्सटर डिक्शनरी, गोयल द्वारा संदर्भित, एलिमेन्टरी, सोशल रिसर्च, 2005, पेज –3

2– यंग, पी0 वी0, ''सांइंटिफिक सोशल सर्वे एवं रिसर्च'', वर्ष 1960, पेज 127

3– मोजर, ''सर्वे मेथड इन सोशल इंवेस्टिगेशन्स'', वर्ष, 1961 पेज–3

4– बोगार्डस, सोशियोलोजी, पेज–543

5– फिलिप, क्लेन, ''पास्ट एण्ड फ्यूचर इन सोशल वर्क रिसर्च, सोशल वेलफेयर फोरम'', नेशनल कान्फ्रेस ऑन सोशल वर्क, वर्ष – 1951, पेज–133

6– मेरी, ई0 मैक्डोनाल्ड, ''सोशल वर्क रिसर्च'', वर्ष–1962, पेज–5

7– सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0 डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष–1998, पेज –253–255

8– सिंह, ए.एन. एवं सिंह, वि.के. ''सामाजिक अनुसंधान'', न्यू रॉयल बुक कं. लखनऊ, वर्ष–2007, एवं 2013 पेंज – 21–42

MASW-06

समाजिक शोध एवं सांख्यिकी

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

खण्ड–द्वितीय

समाज एवं विषय का निर्धारण

इकाई–6 61–76
समस्या एवं विषय का निर्धारण

इकाई–7 77–94
शोध प्रारूप–अर्थ एवं प्रकार

इकाई–8 95–108
उपकलल्पना : अर्थ एवं आश्यकता

इकाई–9 109–116
उपकल्पना के स्त्रोत

इकाई–10 117–132
समग्र निदर्शन

इकाई–11 133–150
निदर्शन की विधियाँ

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश प्रयागराज

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति – प्रो० प्रो० के०एन० सिंह

विशेषज्ञ समिति

(1) प्रो० एस० त्रिपाठी, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु वि०वि० वाराणसी भूतपूर्व निदेशक, सुलभ इण्टरलेशनल, नई दिल्ली।

(2) प्रो० अमरनाथ सिंह विभागाध्यक्ष समाजकार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

(3) प्रो० अरविन्द जोशी, प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(4) डॅा० एम० एन० सिंह पूर्व निदेशक, समाजवि, वि उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

(5) डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता सामजकार्य विभाग वि० उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

परिमापक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष सामजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

सम्पादक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष समाजकार्य विभाग, लखनऊ।

समन्वयक

डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

लेखक

(1) डॉ० राजेश कुशवाहा, समाजकार्य विभाग, डॉ० भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

(2) डॉ० अलका वर्मा, समाजकार्य विभाग, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

सितम्बर, 2019 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2020

ISBN-

सर्वाधिक सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक – कुलसचिव, डॉ. अरूण कुमार गुप्ता उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 20019

मुद्रक – चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज (इलाहाबाद)

खण्ड–द्वितीय
समाज कार्य अनुसंधान की प्रक्रिया

इकाई : 6 समस्या एवं विषय का निर्धारण

6.0 इकाई का उद्देश्य

6.1 परिचय

6.2 समस्या का चुनाव

6.3 विषय का निर्धारण

6.31 विषय निर्धारण के विभिन्न चरण

6.32 विषय निर्धारण के पूर्व कुछ आवश्यक प्रश्न

6.33 विषय निर्धारण की कसौटियां

6.34 वैज्ञानिक शब्दावली में विषय का निर्धारण

6.4 विषय निर्धारण में अवधारणायें

6.5 विषय निर्धारण मे वाक्य विन्यास

6.6 विषय निर्धारण में चर

6.7 विषय निर्धारण में परिभाषायें

6.8 विषय निर्धारण में परिकल्पनायें

6.9 सार–संक्षेप

6.10 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

6.11 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

6.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को आपके सम्मुख इसलिए प्रस्तुत किया जा रहा है कि आप लोगों को समस्या एवं विषय के निर्धारण के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त हो सके। वास्तव में हम जानते हैं कि समस्या एवं विषय का निर्धारण शोध के लिए महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसी के संदर्भ में प्रस्तुत इकाई आपके सम्मुख प्रस्तुत की जा रही है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1. समस्या का चुनाव के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. विषय के निर्धारण के बारे में लिख सकेंगे।
3. विषय निर्धारण के विभिन्न चरणों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
4. विषय निर्धारण के पूर्व कुछ आवश्यक प्रश्नों को स्पष्ट कर सकेंगे।
5. विषय निर्धारण की कसौटियां को जान सकेंगे।
6. वैज्ञानिक शब्दावली में विषय का निर्धारण कर सकेंगे ।
7. विषय निर्धारण में अवधारणाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।
8. विषय निर्धारण मे वाक्य विन्यास को जान सकेंगे।
9. विषय निर्धारण में चरों की जानकारी कर सकेंगे।
10. विषय निर्धारण में परिभाषाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।
11. विषय निर्धारण में परिकल्पनाओं को स्पष्ट कर सकेगे।

6.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में समस्या एवं विषय के निर्धारण के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि समस्या एवं विषय का निर्धारण सामाजिक अनुसंधान के सफल संचालन हेतु नितान्त आवश्यक है। यह मुहाविरा सामाजिक अनुसंधान पर अक्षरशः लागू होता है कि जिस कार्य का आरम्भ अच्छा होता है उसे आधा समाप्त हुआ समझा जाना चाहिए। अनुसंधान समस्या का उपयुक्त विवरण अनुसंधान का एक आवश्यक अंग है। वैज्ञानिक ढंग की परिभाषा करने वाले चरणों की श्रृंखला में अनुसंधान समस्या का प्रथम स्थान है। यदि कोई भी समस्या को सुलझाना चाहता है तो यह जानना आवश्यक है कि समस्या क्या है? सामाजिक अनुसंधान समस्याएं विवरणात्मक लेखा से लेकर परिकल्पनाओं की प्रामाणिकता के परीक्षण तक पाई जाती हैं। समस्या वास्तव में एक प्रश्नवाची वाक्य अथवा कथन है जो यह पूँछता है कि दो अथवा दो से अधिक चरों के बीच क्या सम्बन्ध है, समस्या एवं विषय के निर्धारण का वर्णन प्रस्तुत करने हेतु निम्न रूपरेखा को प्रयोग में लाया जा रहा है–

1– समस्या का चुनाव

2– समस्या का निर्धारण– अवधारणाओं, वाक्य विन्यासों, चरों, परिभाषाओं एवं परिकल्पनाओं का विशिष्ट विवरण।

6.2 समस्या का चुनाव

सामाजिक अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण शीर्षकों का क्षेत्र उतना ही विस्तृत एवं व्यापक है जितना कि सामाजिक व्यवहार का। यह आवश्यक नहीं कि अनुसंधान के लिए चुना गया शीर्षक पूर्णरूपेण तर्कसंगत ही हो। अनुसंधान के विचारों के अनेक स्त्रोत हैं यथा अनुभव अनुमात, लिखित सामग्री, व्यक्तिगत बातचीत, अनुसंधान के तथ्य, मूल्य, सिद्धान्त इत्यादि। शीर्षक के चुनाव में अनुसंधानकर्ता के व्यक्तित्व एवं पर्यावरण दोनों से ही सम्बन्धित कारक महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। अनुसंधानकर्ता भी आखिरकार एक व्यक्ति है और उसका भी अपने प्रकार का अकेला व्यक्तित्व होता है। उसके अपने निजी विश्वास, मूल्य, विचार, मनोवृत्तियां, अभिरूचियां, व्यवहार इत्यादि होते हैं। अनुसंधान कार्य के लिए लगन, दृढ़ता, तारतम्यता इत्यादि की आवश्यकता होने के कारण अनुसंधान के लिए चुना गया शीर्षक यदि अनुसंधानकर्ता की व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताओं के अनुकूल हो तो अधिक अच्छा रहता है। वैज्ञानिक ढंग के सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में प्रयोग को अनुसंधानकर्ता की उत्सुकता, प्रायोगिकता तथा वास्तविक क्रमबद्धता की इच्छा द्वारा प्रेरणा प्रदान की जाती है। विविध क्षेत्रों में नाना प्रकार की अध्ययन योग्य समस्याओं के विद्यमान होने के बावजूद भी अनुसंधान शीर्षक के चुनाव में अनुसंधानकर्ता के वैयक्तिक मूल्य महत्वपूर्ण भूमिका प्रतिपादित करते हैं। वाह्इटहेड ने ठीक ही लिखा है।

'गुण सम्बन्धी निर्णय भौतिक विज्ञानों की विषयवस्तु के अंग नहीं हैं किन्तु वे इसकी उत्पत्ति की प्रेरणा के अंग है ..... अन्वेषण के लिए वैज्ञानिक क्षेत्रों के अंशों का चेतन चुनाव किया जाता है और इस चेतन चुनाव में मूल्यों के निर्णय सम्मिलित हैं।'

वस्तु स्थिति यह है कि अनुसंधान के शीर्षक का चुनाव पर्यावरण सम्बन्धी कारकों द्वारा भी प्रभावित होता है और यह अतिशयोक्ति पूर्ण न होगा कि इन कारकों का योगदान वैयक्तिक कारकों की तुलना में कहीं अधिक है क्योंकि यह सत्य है कि सामाजिक अनुसंधान में व्यक्तित्व की संरचना का निर्माण भी वंशानुक्रम से प्राप्त जैविक तथा वातावरण से प्राप्त सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत का योग है और उसे शोध करने योग्य परिस्थिति भी वातावरण द्वारा ही प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त अनुसंधान की उपादेयता प्रमुख रूप से इसी बात पर निर्भर करती है कि यह अनुसंधान कार्य किस सीमा तक वातावरण को मानव कल्याण हेतु परिवर्तित करने में सहायक सिद्ध होगा। सामाजिक अनुसंधानकर्ता को समाज के लिए उपयोगी समस्या पर

कार्य करने के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के लाभ जैसे धन, यश आदि कहीं अधिक मात्रा में प्राप्त हो सकते हैं।

अनुसंधान शीर्षक के चुनाव के समय निम्न प्रश्न पूछे जाने चाहिए।

1– क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिस पर कोई कार्य पहले भी किया जा चुका है? यदि हां, तो क्या इस कार्य का कोई लिखित स्वरूप उपलब्ध हैं? यदि हां, तो क्या यह अनुसंधानकर्ता की पंहुच के अन्तर्गत हैं?

2– क्या अनुसंधान शीर्षक अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिगत अभिरूचियों इच्छाओं, मूल्यों एवं मान्यताओं के अनुकूल है?

3– क्या अनुसंधान शीर्षक समाज के लिए उपयोगी है? क्या इसके परिणामों से अनुसंधानकर्ता को स्वयं भी आय, यश इत्यादि के रूप में कुछ लाभ प्राप्त हो सकते हैं?

4– क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिसके प्रति समाज द्वारा विरोध व्यक्त किया जा सकता है।

5– क्या अनुसंधान शीर्षक प्रकार के तथ्यों की आवश्यकता है? क्या वे तथ्य उपलब्ध हो सकेंगे?

6.3 विषय का निर्धारण

विषय के निर्धारण में सर्वप्रथम इसके विभिन्न अंगभूतों को पहचानना आवश्यक होता है। यह अंगभूत इस प्रकार है :–

1– अनुसंधान उपभोक्ता एवं अन्य सम्मिलनकर्ता।

2– अनुसंधान के उद्देश्य।

3– उद्देश्यों की प्राप्ति के विकल्पीय साधन।

4– विकल्पों की दक्षता के विषय में संदेह।

5– पर्यावरण जिससे समस्या सम्बन्धित है।

अनुसंधान उपभोक्ता – इस श्रेणी में उन व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता है जो प्रत्यक्ष रूप से अथवा अप्रत्यक्ष रूप के अनुसंधान से प्रभावित होंगे अथवा वे व्यक्ति जो अनुसंधानकर्ता के रूप में अनुसंधान कार्य संचालित करेंगे।

अनुसंधान के उद्देश्य – उद्देश्यों के आधार पर समस्या को विशुद्ध, व्यावहारिक अथवा क्रिया शोध की समस्या के रूप में देखा जा सकता

है। स्पष्ट उद्देश्यों की स्थापना से प्राथमिकताओं को स्थापित करने तथा समस्या का समाधान खोजने में सहायता प्राप्त होती है। ये उद्देष्य अनुसंधानकर्ताओं, अनुसंधान, उपभोक्ताओं अथवा अनुसंधान से प्रभावित होने वाले अन्य व्यक्तियों से सम्बन्धित हो सकते हैं। उद्देश्यों की स्थापना हेतु प्रश्नावली, गहराई पूर्ण साक्षात्कार गोष्ठी, व्यवहार सम्बन्धी ढंग तथा सूचना प्रदान करने वाले व्यक्तियों का प्रयोग किया जाता है।

विकल्पीय साधन – किसी भी समस्या के समाधान के लिए एक से अधिक साधनों का प्रयोग किया जा सकता है। अनुसंधानकर्ता इन सभी साधनों का उपयोग न कर समस्या समाधान के लिए सबसे अधिक प्रभावपूर्ण साधन को प्रयोग में लाना चाहता है। ऐसा करने के लिए वह विकल्पीय साधनों की सूची तैयार करता है तथा इन सबकी कुशलता के आधार पर तुलना करते हुए सबसे अधिक कुशल साधन का चुनाव करता है।

विकल्पीय साधन की कुशलता – कुशलता के परिमापन हेतु प्रायः निम्न कसौटियां प्रयोग में लाई जाती हैं :–

1– समय को स्थिर रखते हुए पूर्ण किए गए कार्य का प्रतिशत ज्ञात किया जाए।

2– लागत को स्थिर रखते हुए पूर्ण किए गए कार्य का प्रतिशत निकाला जाऐ।

3– प्रयासों को स्थिर रखते हुए किए गए कार्य के प्रतिशत की जानकारी प्राप्त की जाऐ।

4– पूर्ण किये जाने वाले कार्य का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हुए पूर्ति में लगने वाले समय को निकाला जाए।

5– पूर्ण किए जाने वाले कार्य का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हुए इसकी पूर्ति में होने वाली लागत की गणना की जाए।

6– पूर्ण किए जाने वाले का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हुए इसकी पूर्ति में लगने वाले प्रयासों का अनुमान लगाया जाये।

एक विशिष्ट परिस्थिति के अन्तर्गत एक दिए गए उद्देश्य की प्राप्ति की दृष्टि से एक साधन की कुशलता, वह संभाविता जिसके आधार पर हम उद्देश्य की प्राप्ति की आशा कर सकते हैं।

पर्यावरण – पर्यावरण से हमारा अभिप्राय उस परिस्थिति से है जिसके अन्तर्गत हम समस्या का अध्ययन करना चाहते हैं। पर्यावरणों में होने वाले परिवर्तन अनुसंधान समस्या की प्रकृति तथा इसके स्वरूप को परिवर्तित करते हैं, उदाहरण के लिए यह भाग लेने वाले व्यक्तियों, उद्देश्यों इसकी प्राप्ति के साधनों आदि में परिवर्तन ला सकते हैं।

6.31 विषय निर्धारण

इस सम्बन्ध में प्रायः प्रयोग में लाए जाने वाले चरण निम्न हैं :–

1– चुने गए शीर्षक के क्षेत्र के अन्तर्गत समस्या का उचित प्रत्यक्षीकरण एवं इसकी स्पष्ट पहचान।

2– समस्या की अन्वेषणीय प्रकृति की जानकारी तथा इसका स्पष्टीकरण।

3– अनुसंधान संमस्या के क्षेत्र का परिसीमन ताकि समस्या सरलतापूर्वक संभाले जाने योग्य आकार वाली रह सके।

4– समस्या से सम्बन्धित विभिन्न मान्यताओं एवं परिकल्पनाओं का विस्तृत विवरण।

5– समस्या के बाद में आने वाले सभी पहलुओं का स्पष्ट विवरण।

जहोडा तथा अन्य ने यह लिखा है, "प्रतिपादन क्रिया के दौरान अनुसंधान कार्यरीति में बाद में आने वाले चरणों की आशा किये जाने की आवश्यकता है जिससे यह आश्वासन प्रदान किया जा सके कि समस्या का प्रतिपादन ऐसे ढंग से किया गया है जिसके साथ कार्य उपलब्ध प्रविधियों के साथ किया जा सकता है। यह आशा वैज्ञानिक तथा प्रायोगिक चरणों से सम्बन्धित है। सर्वप्रमुख बात यह है कि समाज वैज्ञानिकों को अपने मस्तिष्क में यह बात हमेशा रखनी चाहिए कि प्रतिपादन कभी भी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया है जो पूँछताछ के सभी चरणों में व्याप्त होती है।

6.32 विषय निर्धारण के पूर्व कुछ आवश्यक प्रश्न

समस्या का स्पष्ट रूप से निर्धारण करने के पूर्व अनुसंधानकर्ता को कुछ प्रश्न अपने आप से पूंछने चाहिए–

1– अनुंसधान समस्या के विषय में उसकी जानकारी कितनी है?

2– इस जानकारी के विभिन्न स्त्रोत क्या हैं तथा उनकी विश्वनीयता एवं प्रामाणिकता की सीमा क्या है?

3– हम इस उपलब्ध जानकारी की पृष्ठभूमि में, यदि कोई हो, क्या जानकारी और प्राप्त करना चाहते हैं तथा क्यों यह जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं।

4– जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इसकी प्राप्ति किन–किन स्त्रोंतों, साधनों एवं ढंगों का प्रयोग करते हुए हो सकती है।

5– जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इस पर कितने समय, धन एवं प्रयासों के व्यय की आवश्यकता होगी तथा क्या इस व्यय के अनुरूप हमें परिणाम प्राप्त हो सकेगें?

6– जो जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं उसकी प्राप्ति के लिए किये जाने वाले प्रयासों का मार्गदर्शन किस प्रकार की मान्यताओं एवं परिकल्पनाअें द्वारा किया जाएगा।

7– क्या इन परिकल्पनाओं के अन्तर्गत प्रयुक्त किए जाने वाले चरों, अवधारणाओं, वाक्य–विन्यासों इत्यादि की स्पष्ट परिभाषाऐं उपलब्ध हो सकेंगी तथा क्या ये प्रायोगिक दृष्टिकोण से उपयुक्त होंगी?

8– इस अतिरिक्त जानकारी से, जिसकी हम प्राप्ति करना चाहते हैं, कितने लोग लाभान्वित हो सकते हैं? क्या यह जानकारी प्राप्त करना इसकी प्राप्ति पर होने वाले व्यय की दृष्टि से उचित है? कहीं ऐसा तो नहीं कि पहाड़ खोदने पर चुहिया निकलने वाली कहावत चरितार्थ हो?

6.33 विषय निर्धारण की कसौटियाँ

विषय निर्धारण की तीन कसौटियाँ हैं–

1– समस्या को दो या दो से अधिक चरों के बीच को स्पष्ट करना चाहिए।

2– समस्या का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए तथा इसे प्रश्नों के रूप में व्यक्त किया जाना चाहिए क्योंकि प्रश्न समस्या को अधिक प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत करते हैं।

3– समस्या का प्रतिपादन ऐसे प्रश्नों के रूप में किया जाना चाहिए जिनकी आनुभाविक जाँच सम्भव हो सके।

6.34 वैज्ञानिक शब्दावली में विषय का निर्धारण

अनुसंधान समस्या का निर्धारण चाहे वह परिकल्पनाओं के रूप में हो अथवा विवरणात्मक अथवा अन्वेषणात्मक, वैज्ञानिक शब्दावली में किया जाना चाहिए। विशेष रूप से समाज विज्ञानों के क्षेत्र में ऐसे अनेक शब्द हैं जिनका समाज वैज्ञानिक मन चाहे ढंग से प्रयोग करते हैं। इसलिए एक सामान्य अर्थ का बोध कराने हेतु वैज्ञानिक शब्दावली का विकास तथा प्रयोग किया जाना चाहिए।

1– शब्दों की उपयुक्त सूक्ष्मता तथा इनकी सही एवं स्पष्ट अर्थ प्रकट करने की क्षमता।

2– शब्दों द्वारा केवल एक ही विचार का व्यक्त किया जाना।

3– शब्द का विभिन्न स्थानों पर एक ही अर्थ का बोध कराने हेतु प्रयोग में लाया जाना।

4– शब्द का एक विशिष्ट क्षेत्र के वर्णन हेतु मौलिक होना अर्थात् विवेचन हेतु इसका आवश्यक होना।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समस्या चुनाव पर प्रकाश डालिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. विषय निर्धारण के विभिन्न चरणों की व्याख्या कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....

....

6.4 विषय निर्धारण में अवधारणाएँ

अवधारणा एक ऐसा शब्द है जो विवरणों से सामान्यीकरण के आधार पर निर्मित भाववाचकता को व्यक्त करता है। अवधारणाएँ तथ्यों द्वारा व्यक्त की जाने वाली घटनाओं का सांकेतिकीकरण करती हैं। लैबोविज तथा हेजडार्न के अनुसार ' एक अवधारणा ऐसा शब्द अथवा संकेत है जो अन्यथा विभिन्न प्रकार की घटनाओं में समानता का प्रतिनिधित्व करता है। जैसे, यद्यपि मनुष्य अपने अनेक वैयक्तिक लक्षणों से भिन्न होते हैं किन्तु सभी को कुछ जैविक विशेषताओं में समानता के आधार पर स्तनधारी की श्रेणी में वर्गीकृत किया जा सकता है। अवधारणाओं के निर्माण की प्रक्रिया इन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभवों के भाववाची बनाये जाने तथा सामान्यीकरण किये जाने की एक प्रक्रिया है। अवधारणाएं न केवल वैज्ञानिक ढंग के प्रयोग के लिए आवश्यक है बल्कि प्रत्येक मानवीय क्रिया के क्षेत्र में संचार तथा विचारों के आदान–प्रदान के लिए आवश्यक है। भाववाचक स्तर पर पाई जाने वाली इन अवधारणाओं को अनुसंधान में प्रयोग योग्य बनाने हेतु स्पष्टीकरण आवश्यक है। स्पष्टीकरण हेतु अर्थ विश्लेषण का प्रयोग किया जाता है। हेम्पेल के शब्दों में ''शब्दों के विशिष्ट समूहों का स्पष्टीकरण .... अर्थ विश्लेषण एवं आनुभाविक विश्लेषण के आवश्यक पहलुओं को सम्मिलित करता है। शब्दों के परम्परात्मक अर्थों से आरम्भ करते हुए स्पष्टीकरण सीमाओं, अस्पष्टताओं एवं उनके सामान्य प्रयोग में विरोधात्मकताओं को उनके अर्थों की स्पष्टीकरण एवं भविष्यवाणी करने वाली शक्ति के साथ परिकल्पनाओं एवं सिद्धान्तों में उनकी कार्य करने की योग्यता को बढ़ाने का उद्देश्य रखने वाले पुनर्विवेचन द्वारा कम करने का उद्देश्य रखता है।

अर्थ विश्लेषण के दौरान निम्न चरण अपनाए जाते हैं :–

1– इस अवधारणा को अब तक प्रदान किए गए विभिन्न अर्थों में अन्तर्निहित स्पष्ट अथवा अस्पष्ट मान्यताओं का पता लगाने के लिए साहित्य का सर्वेक्षण।

2– अवधारणा को परिभाषित करने वाले वाक्यांशों की संश्लेषणात्मक स्थिति से सम्बन्धित विशिष्ट निर्णय।

एक अवधारणा का अनुभाविक विश्लेषण उस प्रक्रिया का बोध कराता है जिसके द्वारा उन मौलिक मान्यताओं को प्रत्यक्ष

आनुभविक परीक्षण किया जाता है जो अर्थ विश्लेषण के दौरान प्रकाश में आयी हैं।

स्पष्टीकरण के लिए पुनर्वेचारिकता के दौरान निम्न बातों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए –

1– अवधारणा का सावधानीपूर्वक चुनाव।

2– अवधारणा के प्रतीत होने वाले अर्थ का विश्लेषण।

3– प्रकाशित साहित्य का सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण जिससे कि इस अवधारणा के विभिन्न प्रयोगों की जानकारी प्राप्त हो सके।

4– घटना को अन्य शब्दों द्वारा वर्णित समान घटनाओं, विशेष रूप से अन्य क्षेत्रों की घटनाओं से सम्बन्धित करते हुए यह देखना कि घटना का सर्वोपयुक्त वर्णन अवधारणा द्वारा किया जा रहा है या नहीं।

5– इस अवधारणा द्वारा व्यक्त की जाने वाली घटना का बोध कराने वाली अन्य पर्यायवाची अवधारणाओं का अध्ययन तथा इनकी तुलना करते हुए यह निश्चित करना कि जिस घटना को यह व्यक्त करना चाहते हैं उसे व्यक्त करने के लिए सर्वोपयुक्त अवधारणा कौन सी है।

6.5 विषय निर्धारण में वाक्यविन्यास

वैज्ञानिक दो स्तरों पर कार्य करते हैं:–

1– सिद्धान्त परिकल्पनाओं एवं वाक्य विन्यास के स्तर पर

2– पर्यवेक्षण के स्तर पर

वाक्य विन्यास एक अवधारणा है। विशिष्ट वैज्ञानिक उद्देश्य के लिए जानबूझकर एवं चेतना ढंग से आविष्कृत किए जाने अथवा अपनाए जाने का अतिरिक्त अर्थ इसमें पाया जाता है जो इसे अवधारणा से विभेद की स्थिति में रखता है। शब्द अथवा वाक्य विन्यास की परिभाषा दो सामान्य ढंगों से की जा सकती हैं : (1) एक शब्द की परिभाषा अन्य शब्द का प्रयोग करते हुए की जा सकती है, (2) एक शब्द की परिभाषा यह बताते हुए की जा सकती है कि शब्द किन क्रियाओं अथवा व्यवहारों को व्यक्त अथवा सूचित कर सकता है। पहली प्रकार की परिभाषा को संघटनात्मक तथा दूसरी प्रकार की परिभाषा को परिचालनात्मक कह सकते हैं। वाक्य विन्यास की संघटनात्मक परिभाषा वह है जो अन्य वाक्य विन्यासों का प्रयोग करती हुई पारिभाषित करने का प्रयास करती है। वाक्य विन्यास की परिचालनात्मक परिभाषा

वह है जो वाक्य विन्यास के परिमापन के लिए आवश्यक गतिविधियों एवं क्रियायों का विशिष्ट विवरण प्रस्तुत करते हुए वाक्य विन्यास को अर्थ प्रदान करती है। एक परिचालनात्मक परिभाषा अनुसंधानाकर्ता के लिए निर्देशों की एक नियमावली है। वाक्य विन्यास आवश्यक रूप से अपर्यवेक्षणीय है। वाक्य विन्यास को मध्यवर्ती चर के नाम से सम्बोधित किया जाता है। वास्तव में मध्यवर्ती चर वे शब्द हैं जिनका विकास आंतरिक एवं प्रत्यक्ष रूप से उन अपर्यवेक्षणीय प्रक्रियाओं का विवरण प्रस्तुत करने के लिए किया जाता है जो स्वयं व्यवहार के लिए उत्तदायी होती हैं। टोलमैन ने विलियम जेम्स के सुन्दर वर्णन का आश्रय लेते हुए यह कहा है, 'मानसिक प्रक्रियाओं का सम्पूर्ण नकद मूल्य उनकी इस प्रकृति में निहित है कि वे मध्यवर्ती कार्यात्मक प्रक्रियाओं की एक व्यवस्था के रूप में कार्य करती हैं जो एक ओर व्यवहार के आरम्भिक कारणों तथा दूसरी ओर परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाले व्यवहार के बीच अन्तःसम्बन्ध स्थापित करता हैं।' एक वाक्य विन्यास अथवा मध्यवर्ती चर मस्तिष्क में पाया जाने वाला चर है जिसे न तो देखा और सुना जा सकता है और न ही अनुभव किया जा सकता है। इसके विषय में जो भी परिणाम निकाले जाने है वे व्यवहार को ही देखकर निकाले जाते हैं।

6.6 विषय निर्धारण में चर

एक चर एक संकेत है जिसे अनेक अंश अथवा मान निर्धारित किए जा सकते हैं।

एक चर एक अवधारणा का परिमापन योग्य पहलू है (उदाहरणार्थ पुरुषों की लम्बाई) अथवा एक परिमापन योग्य अवधारणा (पुरुषों एवं स्त्रियों के बीच जैविक भिन्नताएं) हैं जो या तो एक इकाई (व्यक्ति अथवा समूह) से दूसरी इकाई के लिए अथवा एक इकाई के लिए विभिन्न समयों पर दो अथवा दो से अधिक मान ग्रहण करता है, उदाहरणार्थ लम्बाई और भार के दृष्टिकोण से व्यक्ति भिन्न है और एक समय से दूसरे समय पर व्यक्ति बढ़ सकता है अथवा अधिक भारी हो सकता है।

एक बार उपयुक्त चरों की परिभाषा हो जाने के पश्चात् यह निर्णय लेना आवश्यक होता है कि चरों को स्थिर रखते हुए अथवा इन्हें परिवर्तित करते हुए कार्य किया जाना है तथा यदि चरों के मूल्यों को परिवर्तित करते हुए कार्य किया जाना है तो यह परिवर्तन किस सीमा तक किया जाना है। इन दोनों प्रश्नों का उत्तर परीक्षित की जाने वाली परिकल्पना एवं अनुसंधान के उद्देश्यों तथा उस परिस्थिति पर निर्भर करता है जिनके संदर्भ में समस्या का प्रतिपादन किया जा रहा है। यदि समस्याओं का

समाधान किसी एक विशिष्ट एवं अपरिवर्तनशील परिस्थिति के लिए खोजा जाना है तो एक विशिष्ट मूल्य पर सभी चरों को स्थिर रखा जाएगा। किन्तु समस्या जितनी ही अधिक सामान्य होती है, उतने ही अधिक चरों में तथा उतनी ही अधिक सीमा में परिवर्तन करने पड़ते हैं।

6.7 विषय निर्धारण में परिभाषाएँ

संचार अपने इस अर्थ में कि एक व्यक्ति को समझ सके, इस बात पर निर्भर करता है कि प्रयोग में लाये गये संकेतों एवं अवधारणाओं का समान अर्थ निकले। हमारे संकेतों के अर्थ उनकी परिभाषाओं से निकलते हैं। परिभाषा एक संकेत को एक विशिष्ट ढंग से प्रयोग करने के इरादे का विवरण है, अर्थात् एक परिभाषा यह बताती है कि शब्द का अर्थ क्या है। उदाहरणार्थ आत्महत्या की एक परिभाषा स्वयं अपने आपको मार डालने अथवा अपने आपको बचा पाने में असमर्थ होने के बावजूद भी असमर्थ होने की है। परिभाषाएँ वैज्ञानिक कानून नहीं हैं। परिभाषा किसी भी प्रकार के मौलिक सत्य से पूर्ण नहीं होती, शब्दों का वही अर्थ होता है जो इनकी परिभाषा से हम निकलना चाहते हैं अर्थात् शब्दों अथवा अवधारणाओं को प्रदान किये गये अर्थ बहुत कुछ सीमा तक स्वेच्छाचारी हैं। यह कहना कि कोई परिभाषा झूठी है केवल यह कहना है कि यह परम्परात्मक नहीं है। परिभाषा से हमारा तात्पर्य यह है कि वस्तु वास्तव में क्या है? किसी भी परिभाषा के अन्तर्गत, चाहे वह अवधारणा की हो, अथवा वाक्यांश की, अथवा चर की, सदैव जीनस (Genus) तथा अवच्छेदक (Differentia) की दो विशेषतायें पायी जाती हैं। किसी भी परिभाषा का कार्य उन परिस्थितियों का स्पष्ट करना है तथा उन क्रियाओं का बोध कराना है जिनका उपयोग करते हुए हम अनुसंधान से सम्बन्धित विविध प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। वैज्ञानिक परिभाषाओं को निर्देशक होना चाहिए। उन्हें यह स्पष्ट रूप से बताना चाहिए कि अवधारणाबद्ध किये गये विचार के विषय में अनुसंधान कार्य किस प्रकार किया जाये। अनुसंधान के अन्तर्गत प्रयुक्त परिभाषाओं को अनुसंधान सन्दर्भ का निर्देशन करना चाहिए। उन्हें इस बात की ओर इशारा करना चाहिए कि अवधारणाओं, वाक्य विन्यासों तथा चरों से सम्बन्धित प्रश्नों के विषय में हम किस प्रकार अधिक से अधिक नियन्त्रित ढंग से अनुसंधान कार्य कर सकते हैं।

परिभाषाओं को स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्न कार्यरीतियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

1– अतीत एवं वर्तमान में विभिन्न अवधारणाओं, वाक्य विन्यासों एवं चरों की की गयी परिभाषाओं की जाँच की जानी चाहिए। इनका पता लगाते समय इस विषय में जानकारी रखने वाले व्यक्तियों से सहायता ली जानी चाहिए तथा विभिन्न परिभाषाओं की समय सम्बन्धी पृष्ठभूमि को आवश्यक ध्यान में रखना चाहिए।

2– विभिन्न परिभाषाओं में से अधिकतर परिभाषाओं के अन्तर्गत पाए जाने वाले अर्थ के महत्वपूर्ण अंश को निकाल लिया जाना चाहिए।

3– विभिन्न महत्वपूर्ण अंश के आधार पर एक कामचलाऊ परिभाषा का निर्माण किया जाना चाहिए।

4– इस बात को देखने का प्रयोग किया जाना चाहिए कि क्या यह काम चलाऊ परिभाषा अनुसंधान उद्देश्यों की पृष्ठभूमि में सभी इकाइयों पर लागू होती है अथवा नहीं।

5– इस परिभाषा का आलोचनात्क मूल्यांकन अधिक से अधिक इस विषय के विशेषज्ञों तथा अन्य क्षेत्रों में व्यक्तियों से कराया जाना चाहिए।

6– की गयी आलोचनात्मक के आधार पर काम चलाऊ परिभाषा में आवश्यक संशोधन किये जाने चाहिये।

6.8 विषय निर्धारण में परिकल्पनाएं

एक परिकल्पना दो अथवा दो से अधिक चरों के बीच सम्बन्ध का अनुमानित विवरण है। एक परिकल्पना बोध बढ़ाने के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए तथ्यों एवं अनुभवों से परे प्रक्षेपण करने वाले वास्तविक एवं अवधारणात्मक तत्वों तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों के विषय में एक पूर्वकल्पना है। यह सर्वोत्तम अनुमान है जो कुछ ऐसी शर्ते रखता है जो प्रदर्शित नहीं की जा सकतीं तथा जिसके परीक्षण की आवश्यकता होती है।

सिद्धान्त के क्षेत्र में पाये जाने वाले ऐसे कथन जिन्हें परीक्षण की कसौटी पर कसा जा सकता है, परिकल्पना के नाम से पुकारे जाते हैं। एक परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्ध का अनुभवात्मक रूप से परीक्षण करने योग्य कथन है। अनुभवात्मक बनाने हेतु अर्थात् पर्यवेक्षणीय बनाने हेतु चरों की परिचालनात्मक परिभाषा अवश्य होती है। वेब्स्टर्स इंटरनेशनल डिक्शनरी के अनुसार एक परिकल्पना एक मान्यता, शर्त अथवा सिद्धान्त है जिसे शायद विश्वास के बिना भी मान लिया जाता है जिससे इसके तार्किक परिणाम ज्ञात हो सकें

तथा इस ढंग के द्वारा इसकी उन तथ्यों से समानता का परीक्षण किया जा सके जो ज्ञात हैं अथवा निर्धारित किये जा सकते हैं।

परिकल्पना वास्तव में एक ऐसी मान्यता है जिसे निष्कर्षों के निकालने की दृष्टि से वास्तविक समझकर हम आगे बढ़ते हैं। हमारी इस प्रकार की मान्यता का आधार या तो वास्तविक प्रमाणों की अनुपस्थिति इनकी अपर्याप्तता होती है। परिकल्पना कभी भी निराधार नहीं होती है। यह स्पष्टीकरण की आवश्यकता रखने वाले तथ्यों पर आधारित होती है। यदि स्पष्टीकरण के लिए किए गए प्रयासों के दौरान एकत्रित किए गए तथ्य परिकल्पना में उल्लिखित सम्बन्ध की पुष्टि नहीं करते हैं तो इसका अर्थ यह नहीं समझा जाना चाहिए कि वह सैद्धान्तिक माडल गलत है जिससे परिकल्पना का विकास किया गया था तथा इसी प्रकार यदि ये तथ्य परिकल्पना में उल्लिखित सम्बन्ध की पुष्टि करते हैं तो भी इसका अर्थ यह नहीं समझा जाना चाहिए कि उस सैद्धान्तिक मॉडल की पुष्टि हो रही है जिससे परिकल्पना विकसित की गयी थी। एक परिकल्पना के अन्तर्गत दो विशेषताएं पाई जाती है–

1– परिकल्पना चरों के बीच सम्बन्ध को प्रतिपादित करती है।

2– कथित सम्बन्ध के परीक्षण हेतु इसके अन्तर्गत स्पष्ट निर्देश पाए जाते हैं।

6.9 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समस्या एवं विषय के निर्धारण के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि समस्या का चुनाव किसी भी अनुसंधान के सफल संचालन हेतु अत्यन्त आवश्यक है। वास्तव में किसी भी अनुसंधान को करने के लिए सर्वप्रथम समस्या का होना आवश्यक है। इसी के सन्दर्भ में समस्या के चुनाव में विभिन्न प्रकार के प्रश्नों को पूछने के लिए प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिस पर पहले कोई कार्य किया जा चुका है या क्या वह अनुसंधान शीर्षक अनुसंधानकर्ता के अभिरूचियों, इच्छाओं, मूल्यों एवं मान्यताओं के अनुकूल है, क्या अनुसंधान शीर्षक समाज के लिए उपयोगी है तथा क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिसके प्रति समाज द्वारा विरोध व्यक्त किया जा सकता है तथा क्या अनुसंधान शीर्षक प्रायोगिक है। इस प्रकार के प्रश्न समस्या चुनाव में अवश्य पूछे जाने चाहिए। इसी इकाई में विषय के निर्धारण हेतु तथ्य प्रस्तुत किये गये हैं जिसमें बताया गया है कि विषय निर्धारण हेतु अनुसंधान उपभोक्ता, अनुसंधान के उद्देश्य,

उद्देश्यों की प्राप्ति के विकल्पीय साधन, विकल्पों की दक्षता के विषय में संदेह तथा पर्यावरण जिससे समस्या सम्बन्धित है, का वास्तव में निर्धारण कर लेना चाहिए।

प्रस्तुत इकाई में विषय निर्धारण के विभिन्न चरणों की भी व्याख्या की गयी है जिसमें विषय निर्धारण के पूर्व कुछ आवश्यक प्रश्नों को भी इकाई में प्रस्तुत किया गया है। इसी इकाई में विषय निर्धारण की कसौटियाँ तथा वैज्ञानिक शब्दावली में विषय का निर्धारण कैसे होना चाहिए, इत्यादि के बारे में प्रकाश डाला गया है। इकाई के अन्त में विषय निर्धारण में अवधारणाएं, विषय निर्धारण में वाक्य विन्यास, विषय निर्धारण में चर, विषय निर्धारण में परिभाषाएं एवं विषय निर्धारण में परिकल्पनाएं इत्यादि के बारे में भी विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है।

6.10 पारिभाषिक शब्दावली

अनुसंधान उपभोक्ता – इस श्रेणी में उन व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता है जो प्रयत्क्ष रूप से अथवा अप्रत्यक्ष रूप के अनुसंधान से प्रभावित होंगे अथवा वे व्यक्ति जो अनुसंधानकर्ता के रूप में अनुसंधान कार्य संचालित करेंगे।

विकल्पीय साधन – किसी भी समस्या के समाधान के लिए एक से अधिक साधनों का प्रयोग किया जा सकता है। अनुसंधानकर्ता इन सभी साधनों का उपयोग न कर समस्या–समाधान के लिए सबसे अधिक प्रभावपूर्ण साधन को प्रयोग में लाना चाहता है। ऐसा करने के लिए वह विकल्पीय साधनों की सूची तैयार करता है तथा इन सबकी कुशलता के आधार पर तुलना करते हुए सबसे अधिक कुशल साधन का चुनाव करता है।

वाक्य विन्यास – वाक्य विन्यास एक अवधारणा है। विशिष्ट वैज्ञानिक उद्देश्य के लिए जानबूझकर एवं चेतन ढंग से आविष्कृत किये जाने अथवा अपनाये जाने का अतिरिक्त अर्थ इसमें पाया जाता है जो इसे अवधारणा के विभेद की स्थिति में रखता है।

चर – चर एक अवधारणा का परिमापन योग्य पहलू है या एक परिमापन योग्य अवधारणा है जो या तो एक इकाई से दूसरी इकाई के लिए अथवा एक इकाई के लिए विभिन्न समयों पर दो अथवा दो से अधिक मान ग्रहण करता है।

परिकल्पना – परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच सम्बन्ध का अनुमानित विवरण है। एक परिकल्पना बोध बढ़ाने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तथ्यों, अनुभवों से परे प्रेक्षण करने वाले वास्तविक एवं अवधारणात्मक तत्त्वों तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों के विष्ज्ञय मे ंएक पूर्वकल्पना है। यह सर्वोत्तम अनुमान है जो कुछ ऐसी शर्तें रखता है जो

प्रदर्शित नहीं की जा सकती तथा जिसके परीक्षण की आवश्यकता होती है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1. वैज्ञानिक शब्दावली के बारे में लिखिए ।
2. विषय निर्धारण में अवधारणाओं पर प्रकाश डालिए।
3. विषय निर्धारण मे वाक्य विन्यास को स्पष्ट किजिए।
4. विषय निर्धारण में चरों की जानकारी पर प्रकाश डालिए।
5. विषय निर्धारण में परिभाषाओं पर प्रकाश डालिए।
6. विषय निर्धारण में परिकल्पनाओं को स्पष्ट किजिए।

विस्तृत

1. समस्या का चुनाव के बारे में प्रकाश डालिए ।
2. विषय का निर्धारण के बारे में लिखिए।
3. विषय निर्धारण के विभिन्न चरणों पर प्रकाश डालिए।
4. विषय निर्धारण के पूर्व कुछ आवश्यक प्रश्नों को स्पष्ट किजिए।
5. विषय निर्धारण की कसौटियां पर प्रकाश डालिए।

6.11 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष–1998, पेज – 253–255

2– ई.ई. यूवान्क, ''दि कान्सेप्ट ऑफ सोशियोलाजी'', हीथ, वर्ष–1933, पेज–398

3– सेनफोर्ड, लैबोजिल एण्ड राबर्ट, हैजडार्न, ''इन्ट्रोडक्शन टू सोशल रिसर्च'', पेज–118

4– ई, टोलमैन, ''बिहैवियर एण्ड साइकोलाजिकल मैन'', यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, कैलिफोर्निया, वर्ष–1958, पेज–115–129

खण्ड–द्वितीय
समाज कार्य अनुसंधान की प्रक्रिया

इकाई : 7 शोध प्रारूप– अर्थ एवं प्रकार

7.0 इकाई का उद्देश्य

7.1 परिचय

7.2 शोध प्रारूप का अर्थ

7.3 शोध प्रारूप के प्रकार

  7.31 अन्वेषणात्मक या निरूपणात्मक शोध प्रारूप

  7.32 वर्णनात्मक शोध प्रारूप

  7.33 निदानात्मक शोध प्रारूप

  7.34 प्रयोगात्मक शोध प्रारूप

7.4 सार–संक्षेप

7.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

7.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

7.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को आपके सम्मुख इसलिए प्रस्तुत किया जा रहा है कि आप लोगों को शोध प्रारूप के अर्थ एवं प्रकार के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त हो सके। वास्तव में हम जानते हैं कि शोध प्रारूप शोध के लिए महत्वपूर्ण अवयव है। इसी के संदर्भ में प्रस्तुत इकाई आपके सम्मुख प्रस्तुत की जा रही है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1. शोध प्रारूप का अर्थ के बारे में लिख सकेंगे।
2. शोध प्रारूप के प्रकारों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
3. अन्वेषणात्मक या निरूपणात्मक शोध प्रारूप के बारे में लिख सकेंगे।

4. वर्णनात्मक शोध प्रारूप को जान सकेंगे।
5. निदानात्मक शोध प्रारूप को स्पष्ट कर सकेंगे।
6. प्रयोगात्मक शोध प्रारूप के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

7.1 परिचय

शोध प्रारूप सामाजिक अनुसंधान का एक ऐसा प्रारूप है, जो सामाजिक अनुसंधानकर्ता को दिशा प्रदान करता है और इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान की जटिलता को सरलता में परिवर्तित करता है। अभिकल्पों अथवा प्रारूपों का चुनाव सामाजिक अनुसंधान की समस्या और परिकल्पना की प्रकृति के आधार पर किया जाता है। इसलिए अनुसंधानकर्ता ही अभिकल्प या प्रारूप का चयन करता है। सामाजिक अनुसंधान करते समय जिस प्रकार की सामग्री का संग्रह करना होता है, सामाजिक अनुसंधानकर्ता उसी प्रकार का अभिकल्प या प्रारूप चुनता है। अभिकल्प या प्रारूप वह साधन है जो मानव परिश्रम को कम करता ही है, इसके साथ ही सामाजिक अनुसंधान में आने वाली कठिनाईयों को भी दूर करता है। यह भी सत्य है कि अनुसंधानकर्ता के लिए अनुसंधान के दौरान पूर्णतया अनुसंधान अभिकल्प या प्रारूप पर निर्भर रहना नहीं होता क्योंकि अनुसंधान के दौरान प्राप्त होने वाले नवीन तथ्यों तथा कठिनाइयों के अनुसार अभिकल्प या प्रारूप में कुछ परिवर्तन करना पड़ सकता है, फिर भी अनुसंधान अभिकल्प या प्रारूप अनुसंधान को एक निश्चित दिशा देने में बहुत अधिक सहायक सिद्ध होते हैं।

7.2 शोध प्रारूप का अर्थ

विभिन्न सामाजिक विद्वानों द्वारा दिये गये कुछ परिभाषायें अग्रलिखित हैं–

1– **पी0 वी0 यंग** 'एक अनुसंधान प्रारूप अनुसंधान का तार्किक तथा व्यवस्थित आयोजन तथा निर्देशन है।

2– **एकॉफ –**

(अ) 'अभिकल्प निर्णय करने की वह प्रक्रिया है, जो उन परिस्थितियों के पूर्व किये जाते हैं, जिनमें वे निर्णय कार्य रूप में लाये जाते हैं।

(ब) यह एक संभावित स्थिति को नियंत्रित करने की दिशा में जान–बूझकर पूर्व योजना की प्रक्रिया है।'

3– **विमल शाह** 'अनुसंधान प्रारूप किसी भी अध्ययन की एक योजना है। अतः इसका आयोजन प्रत्येक अध्ययन में किया जाता है, चाहे वह अध्ययन नियंत्रित हो या अनियंत्रित, भावना प्रधान हो अथवा वस्तुनिष्ठ।'

4– **करलिंगर** 'अनुसंधान प्रारूप अनुसंधान की एक योजना, संरचना तथा नीति है जिसका उपयोग अनुसंधान से सम्बद्ध प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने एवं विवाद पर नियंत्रण रखने के लिए किया जाता है।'

उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट है कि शोध प्रारूप पर अभिकल्प शोध कार्य प्रारम्भ करने से पहले निर्मित एक ऐसी व्यवस्थित रूपरेखा है जो कुछ विशेष उद्देश्यों के सन्दर्भ में अध्ययन विषय के विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करती हैं अनुसंधान प्रारूप का निर्माण करते समय अनुसंधानकर्ता केवल इसी तथ्य को ध्यान में नहीं रखता कि उसके अध्ययन की प्रकृति वर्णनात्मक है अथवा अन्वेषणात्मक, बल्कि उसे यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि एक निर्धारित समय एवं सीमित साधनों के अन्तर्गत वह किन पद्धतियों का उपयोग करके अधिक से अधिक वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष प्राप्त कर सकता है। सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में अनुसंधान प्रारूप इसलिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि सामाजिक जीवन की असीम व्यापकता में से उपयोगी, तार्किक तथा तर्कसंगत तथ्य तब तक प्राप्त नहीं किये जा सकते जब तक अनुसंधानकर्ता एक निर्धारित क्षेत्र से आबद्ध रहते हुए कार्य न करें। इस प्रकार जो अनुसंधान अभिकल्प केवल सामाजिक घटनाओं के अध्ययन से ही सम्बद्ध होता है, उसे हम 'सामाजिक अनुसंधान का प्रारूप' कहते हैं।

7.3 शोध प्रारूप के प्रकार

सामाजिक घटनाओं की विविधता को देखते हुए किसी एक सर्वमान्य अनुसंधान प्रारूप की कल्पना नहीं की जा सकती। अनुसंधान विषय की प्रकृति, उद्देश्यों एवं परिकल्पना का प्रारूप का भी एक–दूसरे से भिन्न होना आवश्यक हो जाता है। वास्तव में, अनुसंधान अभिकल्प तभी उपयोगी होता है जब वह अध्ययन विषय के अनुरूप हो। इस दृष्टिकोण से विभिन्न प्रकार की सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में प्रयुक्त होने वाले अनुंसधान प्रारूपों के निम्नांकित चार मुख्य प्रकारों को स्पष्ट किया जा सकता।

7.31 अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध प्रारूप

जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, यह अभिकल्प अन्वेषण से सम्बन्धित है। इसका भौतिक उद्देश्य अज्ञान या अज्ञात तत्वों को खोजकर मानव के ज्ञान में वृद्धि करना है। जब किसी सामाजिक समस्या के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्ष की पर्याप्त जानकारी नहीं होती एवं अनुसंधानकर्ता का उद्देश्य किसी विशेष सामाजिक घटना के लिए उत्तरदायी कारणों को खोज निकालना होता है, तब अध्ययन के लिए जिस अनुसंधान प्रारूप का प्रयोग किया जाता है, उसे हम अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक अनुसंधान प्रारूप कहते हैं। ऐसे अनुसंधान प्रारूप का सम्बन्ध प्राथमिक अनुसंधान से है जिसके अन्तर्गत समस्या के विषय में प्राथमिक जानकारी प्राप्त करके भावी अध्ययन की आधारशिला तैयार की जाती है। समाजशास्त्री **हंसराज** ने भी इस सम्बन्ध में लिखा है, 'अन्वेषणात्मक अनुसंधान किसी भी विशिष्ट अध्ययन के लिए परिकल्पना का निर्माण करने एवं उससे सम्बद्ध अनुभव प्राप्त करने के लिए आवश्यक हैं।

समाज वैज्ञानिकों की यह मान्यता है कि प्रत्येक घटना का कोई न कोई कारण अवश्य ही होता है, इसलिए अन्वेषणात्मक या निरूपणात्मक अनुसंधान प्रारूप ही एक ऐसा मध्यम है जिसके द्वारा सामाजिक घटनाओं में व्याप्त नियमितता और क्रमबद्धता को स्पष्ट कर कार्य कारण सम्बन्धों को ज्ञात किया जा सकता है। इसकी सहायता से परिकल्पना के निर्माण में मदद मिलती है तथा कभी–कभी अनुसंधान–विषय के चुनाव तथा इसकी उपयुक्तता को ज्ञात करने में भी सहायता मिलती है।

अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप की अनिवार्य दशायें – अन्वेषणात्मक अनुसंधान को संचालित करने के लिए कुछ मौलिक अनिवार्यता का पालन करना पड़ता है। इनमें से कुछ अग्रलिखित है–

1– साहित्य का अध्ययन – इस प्रकार के अनुसंधान प्रारूप की पहली अनिवार्यता समस्या से सम्बन्धित उपलब्ध समस्त साहित्य का अध्ययन करना है। यह साहित्य निम्न प्रकार के होते है–

(अ) प्रकाशित साहित्य

(ब) अप्रकाशित साहित्य

समस्या से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन अग्रलिखित स्त्रोतों से किया जा सकता है–

1– अनुसंधान प्रतिवेदन

2– मूल पुस्तकें

3– सन्दर्भ पुस्तकें

4– लेख

इसकी सहायता से अध्ययन की समस्या का स्पष्टीकरण होगा और उपकल्पना अधिक सुदृढ़ होगी।

2– अनुभव सर्वेक्षण – इस अध्ययन प्रारूप की दूसरी अनिवार्यता अनुभव सर्वेक्षण से सम्बन्धित है। समाज कार्य की प्रयोगशाला सम्पूर्ण मानव समाज है तथा अनुभव की सहायता से इन समस्याओं का कारण खोज कर उनका निदान किया जा सकता है। इस प्रकार के ज्ञान को सम्पादित करने के लिए ही अनुभव सर्वेक्षण किये जाते हैं। अनुभव सर्वेक्षण को सम्पादित करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है–

(i) सूचनादाताओं का चुनाव करना

(ii) समस्या से सम्बन्धित ज्ञान व अनुभव प्राप्त सूचनादाताओं का ही चयन करना, अन्य का नहीं।

(iii) व्यक्तियों का चुनाव करते समय क्षेत्र का विशेष महत्व प्रदान नहीं करना चाहिए, व्यक्ति किसी भी क्षेत्र के हो सकते हैं।

(iv) सूचनादाताओं से प्रश्न करके समस्या के बारे में जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।

(v) समस्या के समस्त पहलुओं को समान महत्व प्रदान किया जाना चाहिए।

(vi) विविध पक्षों से सम्बन्धित जानकारी रखने वाले व्यक्तियों से भी सम्पर्क स्थापित करके ज्ञान की प्राप्ति की जानी चाहिए।

3– अंतर्दृष्टि प्रेरक घटनाओं का विश्लेषण – इस प्रकार के प्रारूप की तीसरी अनिवार्यता अंतर्दृष्टि प्रेरक घटनाओं के विश्लेषण से सम्बन्धित है। इस प्रक्रिया में ऐसी घटनाओं का विश्लेषण किया जाता है, जो अनुसंधानकर्ता को अंतर्दृष्टि की प्रेरणा प्रदान करे। इसकी सहायता के लिए व्यक्तिगत जीवन अध्ययन पद्धति को महत्व प्रदान किया जाता है। इसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता द्वारा प्रेरित करने वाली घटनाओं का विश्लेषण किया जाता है। अनुसंधानकर्ता को सामाजिक अनुसंधान के लिए प्रेरणा प्रदान करने वाली घटनाओं में से कुछ निम्नलिखित है–

(i) अपरिचितों की प्रतिक्रियायें।

(ii) सीमान्त व्यक्तियों से प्राप्त विवरण।

(iii) संक्रमण कालीन घटनायें।

(iv) व्याधिशास्त्रीय समस्याएँ।

(v) सामाजिक संरचना की विभिन्न स्थितियाँ

(vi) व्यक्तियों की विशेषताएँ।

(vii) स्पष्ट समस्यायें।

अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप के कार्य या महत्व

अन्वेषणात्मक अनुसंधान अभिकल्प के प्रमुख कार्यों, उद्देश्यों तथा महत्व को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1– अन्वेषणात्मक अनुसंधान का कार्य तत्कालीन परिस्थितियों के बारे में सूचनाएँ प्रदान करना है इससे सम्बन्धित समस्या के सम्बन्ध में पूर्व ज्ञान प्राप्त होता है, और परिकल्पना के परीक्षण में मदद मिलती है।

2– अन्वेषणात्मक अनुसंधान वह आधारशिला है, जिससे सामाजिक अनुसंधान आगे बढ़ता है। इसका कारण यह है कि अनुसंधान को प्रारम्भ करना एक जटिल समस्या है। इस सम्बन्ध में वैज्ञानिक जहोदा ने लिखा है– 'व्यवहार में, किसी भी अनुसंधान का सबसे अधिक जटिल भाग उसका प्रारम्भ है। अध्ययन के अनुवर्ती स्तरों पर अत्यधिक सतर्क पद्धतियों का कोई मूल्य नहीं रहता, यदि उनका प्रारम्भ गलत एवं असंगत हुआ है।'

3– इससे नवीन समस्याओं के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है और उनको सामाजिक महत्व के बारे में जानकारी भी मिलती हैं।

4– इसकी सहायता से अनिश्चित समस्याओं को निश्चितता प्राप्त होती है। समस्या के निश्चित और स्पष्ट हो जाने से अध्ययन में सहायता मिलती है। इससे यह भी निश्चित होता है कि समस्या के किस पहलू पर अनुसंधान को केन्द्रित करना चाहिए और उसे कौन सी दिशा प्रदान की जानी चाहिएं

5– इससे नवीन तथ्य सामने आते हैं और मानव की जानकारी में वृद्धि होती है। इससे सामाजिक जीवन से सम्बन्धित नवीन उपकल्पनाएँ प्राप्त होती हैं।

6– ज्ञान विज्ञान की सीमाओं को विस्तृत करना और उसके क्षेत्र का विकास।

7– समस्याओं की प्रकृति पर प्रकाश डालना और अनंसुधानकर्ता के लिए अनुसधान की प्रणाली निश्चित करना।

7.32 वर्णनात्मक शोध प्रारूप

इस अनुसंधान अभिकल्प का मौलिक उद्देश्य समस्या से सम्बन्धित वास्तविक तथ्यों के आधार पर वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करना है। इस अध्ययन की मौलिक विशेषता पूर्ण तथा यथार्थ सूचनाएँ प्राप्त करना है। इस प्रकार का अध्ययन किसी समूह या समुदाय के सम्पूर्ण जीवन से सम्बन्धित होता है। सामाजिक जीवन अनेक समस्याओं से भरा पड़ा है। इन समस्याओं में आवास, जाति–संरचना, सामाजिक संघर्ष, शिक्षा आदि सम्मिलित हैं। इन समस्याओं में से किसी एक का वर्णानात्मक विवरण प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक है कि इनका अध्ययन किसी एक वैज्ञानिक विधि की सहायता से किया जाए। इसके लिए सामाजिक समस्या को सामने रखना और उसके अनुरूप अनुसंधान अभिकल्प को विकसित किया जाता है। निम्नलिखित वैज्ञानिक विधियों की सहायता से सामाजिक समस्या का वर्णनात्मक अध्ययन किया जा सकता है–

1– साक्षात्कार

2– प्रश्नावाली

3– व्यवस्थित प्रत्यक्ष अवलोकन

4– सामुदायिक रिकार्ड का विश्लेषण

5– सहभागी अवलोकन

वर्णानात्मक अनुसंधान प्रारूप के महत्वपूर्ण तथ्य– वर्णनात्मक अनुसंधान प्रारूप के महत्वपूर्ण तथ्य अग्रलिखित है–

(i) प्रणाली का चुनाव– इस प्रकार के प्रारूप में प्रणाली के चुनाव में अत्यधिक सतर्कता बरतनी पड़ती है। इसकी पहली शर्त है, आवश्यक तथ्यों का संग्रह करना। यह तभी सम्भव है, जब सतर्कता के साथ ऐसी विधि का चुनाव किया जाये जो तथ्य संग्रह में सहायता करें।

(ii) अभिनति से बचाए– वर्णनात्मक अनुसंधान अत्यन्त ही विस्तृत होते हैं। इसलिए ऐसे तथ्यों की खोज में ही समय और धन को लगाया जा सकता है जो समस्या की दृष्टि से आवश्यक हों।

(iii) मितव्ययिता – वर्णनात्मक अनुसंधान अत्यन्त ही विस्तृत होते हैं। इसलिये ऐसे तथ्यों की खोज में ही समय और धन को लगाया जा सकता है जो समस्या की दृष्टि से आवश्यक हों।

वर्णनात्मक अनुसंधान के चरण – वर्णनात्मक अनुसंधान में जिन प्रमुख चरणों को अपनाया जाता है, वे निम्नलिखित है–

(i) उद्देश्यों का निर्धारण – वर्णनात्मक अनुसंधान का पहला चरण अनुसंधान के उद्देश्यों का निर्धारण करना है। इसमें अध्ययन की

जाने वाली समस्या के उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से परिभाषित कर दिया जाता है। उद्देश्यों की स्पष्ट परिभाषा से निम्नलिखित दो लाभ है–

(अ) सम्बन्धित तथ्यों का क्रमबद्ध संकलन, और

(ब) अभिनति से बचाव

(ii) पद्धति का चुनाव – वर्णनात्मक अनुसंधान का दूसरा चरण इस अनुसंधान को सम्पादित करने के लिए अपनायी जाने वाली विधि से है। पद्धति को चुनते समय निम्न दो तथ्यों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

(अ) अध्ययन की जाने वाली समस्या की प्रकृति और

(ब) अध्ययन का उद्देश्य

(iii) निदर्शन का चुनाव – समस्या से सम्बन्धित सम्पूर्ण समूह या सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन करना अत्यन्त ही कठिन कार्य है। इस समस्या का समाधान करने के लिए प्रतिनिधि इकाईयों का चुनाव किया जाता है। ऐसा चुनाव करते समय निम्न बातें महत्वपूर्ण हैं।

(अ) निदर्शन के उस प्रकार का चुनाव करना, जो समस्या के अधिक अनुरूप हों।

(ब) ऐसी इकाइयों का चुनाव करना, जो सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व कर सकें।

(स) निदर्शन का चुनाव करते समय अभिनति से बचाव का पूर्ण प्रयास किया जाना चाहिए।

(iv) सामग्री संकलन – विवरणात्मक अध्ययन का अगला चरण सामाजिक अनुसंधान से सम्बन्धित सामग्री का संकलन करना है। इस कार्य में अनुसंधानकर्ता की ईमानदारी और परिश्रम से वास्तविक सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं। ऐसा करना नियमित अवलोकन और साक्षात्कार के द्वारा ही सम्भव है।

(v) सामग्री की जाँच – विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप के द्वारा जो सामग्री एकत्रित की गयी है, उसकी जाँच पड़ताल करना भी आवश्यक है। ऐसा न करने से अनुसंधान में वैज्ञानिकता का होना संभव नहीं है जो सामग्री प्राप्त की जाये, उसकी जाँच पड़ताल निम्न आधारों पर की जानी चाहिए –

(अ) विश्वसनीयता,

(ब) स्पष्टता,

(स) पूर्णता

(vi) परिणामों का विश्लेषण – परिणामों के विश्लेषण में निम्न तत्त्व सम्मिलित रहते हैं –

(अ) वर्गीकरण

(ब) सारणीयन

(स) सांख्यिकीय विश्लेषण

(द) सामान्यीकरण

(vii) प्रतिवेदन – विवरणात्मक अनुसंधान प्रारूप का अंतिम चरण अनुसंधान से प्राप्त तथ्यों का प्रतिवेदन है। सामाजिक अनुसंधान में जो निष्कर्ष प्राप्त किये जाते हैं उनको लिखकर प्रकाशित कर देना होता है।

7.33 निदानात्मक शोध प्रारूप

सामाजिक समस्याओं के अध्ययन से सम्बन्धित तीसरा प्रारूप निदानात्मक है। सामाजिक अनुसंधान निम्न दो प्रकार की समस्याओं को ध्यान में रखकर किया जाता है।

(अ) सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित नवीन ज्ञान की प्राप्ति।

(ब) सामाजिक समस्याओं के समाधान से सम्बन्धित उपायों की खोज

इस प्रकार के अध्ययन में समस्या के निदान से सम्बन्धित ब्यौरा प्रस्तुत किया जाता है। इस अनुसंधान में निम्न विशेषताएं निहित होती हैं–

(अ) इस प्रकार के अध्ययन का मूल उद्देश्य किसी विशिष्ट समस्या का निदान करना होता है।

(ब) निदानात्मक अनुसंधान में समस्या को जन्म देने वाले कारकों का पता लगाया जाता है ।

(स) निदानात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध तत्कालीन समाज की सामाजिक संरचना और सामाजिक सम्बन्धों से होता है।

(द) इसका संचालन परिकल्पना की सहायता से किया जाता है पर परिकल्पना निश्चित और स्पष्ट होनी चाहिए।

(ज) निदानात्मक अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता का कार्य सामाजिक समस्या के समाधान का रास्ता बनाना है न कि उस समस्या का समाधान करनां

वर्णानात्मक और निदानात्मक शोध प्रारूप में अन्तर

क्र.सं.	वर्णानात्मक शोध प्रारूप	निदानात्मक शोध प्रारूप
1	इसमें केवल समस्या के स्वरूप को प्रस्तुत किया जाता है।	इसके अन्तर्गत समाज के स्वरूप के साथ ही समाज की संरचना को भी प्रस्तुत किया जाता है।
2	इसमें समस्या के कारणों का पता लगाया जाता है।	निदानात्मक अनुसंधान में समस्या के कारणों के अतिरिक्त, उस समस्या के निदान का भी प्रयास किया जाता है।
3	विवरणात्मक अनुसंधान का उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करना होता है।	निदानात्मक अनुसंधान का उद्देश्य समस्या का समाधान करना होता है।
4	इसमें सामाजिक समस्या के कारकों का उनके वर्तमान स्वरूप में अध्ययन किया जाता है। इन्हें परिवर्तित करने का प्रयास नहीं किया जाता है।	इसमें समस्या के कारणों का तात्कालिक उपचार का प्रयास किया जाता है।
5	इस प्रकार का अनुसंधान ऐसे क्षेत्रों में उपयोगी सिद्ध होता है, जहाँ पर समस्या से सम्बन्धित ज्ञान का समुचित विकास नहीं हुआ होता है।	इस प्रकार का अनुसंधान ऐसे क्षेत्रों के लिए उपयोगी है, जहाँ पर समस्या से सम्बन्धित ज्ञान का विकास हो चुका है।
6	वर्णानात्मक अनुसंधान प्रायः प्रारम्भिक स्तर पर किया जाता है।	निदानात्मक अनुसंधान उच्च स्तर पर होता है।

7.34 प्रयोगात्मक शोध प्रारूप

सामाजशास्त्रीय अनुसंधान की वैज्ञानिकता के विरुद्ध अक्सर यह आरोप लगाया जाता है कि इसमें प्रयोगीकीकरण का अभाव होने के कारण इसे वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। भौतिक वैज्ञानिकों के इसी भ्रम को दूर करने के लिए समाज वैज्ञानिकों ने सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करने के लिए अब प्रयोगात्मक शोध प्रारूप को व्यवहार में लाना आरम्भ कर दिया है। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों में अध्ययन–विषय को कुछ नियन्त्रित अवस्थाओं में रखकर विभिन्न दशाओं का अध्ययन किया गया जाता है, उसी प्रकार जब सामाजिक घटनाओं को भी कुछ

नियन्त्रित दशाओं में रखकर परीक्षण के आधार पर अध्ययन की रूपरेखा तैयार की जाती है तब ऐसे प्रारूप को हम परीक्षणात्मक अथवा प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप या अभिकल्प कहते हैं। इस अनुसंधान प्रारूप में सामाजिक घटनाओं में विभिन्न पक्षों अथवा चरों में से कुछ को नियन्त्रित करके अन्य चरों पर नवीन परिस्थितियों के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार प्रयोगात्मक अनुसंधान में अभिकल्प की सहायता से यह जानना संभव हो जाता है कि किसी नवीन परिस्थिति का एक विशेष सामाजिक तथ्य पर कैसा और कितना प्रभाव पड़ा? प्रयोग की विभिन्न विद्वानों ने निम्न परिभाषाएं दी हैं।–

1– **एकोफ**–'प्रयोग एक क्रिया है, जिसके माध्यम से हम पूँछताछ करते हैं'।

2– **चैपिन**–'सामाजिक अनुसंधान में प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प की धारणा नियन्त्रण की दशाओं में अवलोकन के द्वारा मानव सम्बन्धों के व्यवस्थित अध्ययन की ओर संकेत करती है।'

3– **जहोदा** – सामान्य अर्थ में एक प्रयोग को प्रमाण के संकलन को व्यवस्थित करने की पद्धति माना जा सकता है जिसमें कि किसी परिकल्पना की सार्थकता के विषय में निष्कर्ष निकाले जा सकें।

4– **विमल शाह** – प्रयोग शब्द अनुसंधान के उस भाग की ओर संकेत करता है जिसमें कुछ चरों को नियन्त्रित कर लिया जाता है जबकि अन्य चरों में इस प्रकार परिवर्तन लाया जाता है जिससे नियन्त्रित चरों पर उनके प्रभाव को देखा जा सके।

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप भौतिक विज्ञानों में प्रयुक्त प्रयोगशाला पद्धति का ही एक उपयोगी विकल्प है तथा अनेक महत्वपूर्ण सामाजिक अनुसंधानों में इसका उपयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप तीन तरह के होते हैं।

1. केवल प्रश्चात् परीक्षण – पश्चात् परीक्षण वह विधि है जिसके अन्तर्गत सर्वप्रथम लगभग समान विशेषताओं वाले दो समूहों का चयन कर लिया जाता है। इसमें से किसी एक को नियन्त्रित समूह तथा दूसरे को प्रयोगात्मक समूह कहा जाता है। इसके पश्चात् प्रयोगात्मक समूह में किसी एक कारक अथवा नयी परिस्थिति द्वारा परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया जाता है जबकि नियन्त्रित समूह को उस परिस्थिति से दूर रखा जाता है। तीसरे स्तर पर इन दोनों समूहों में परिवर्तन की माप की जाती है। यदि दोनों समूहों में परिवर्तन बहुत कुछ समान होता है तो यह मान लिया जाता है कि प्रयोगात्मक समूह पर नई दशाओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसके विपरीत, यदि प्रयोगात्मक समूह में नियन्त्रित समूह की अपेक्षा परिवर्तन अधिक होता है तो इसे नई दशाओं के प्रभाव का परिणाम माना जाता है। प्रयोगात्मक अनुसंधान की यह मान्यता है

कि यदि अनुसंधानकर्ता नियोजित ढंग से किसी एक चर या कारक द्वारा प्रयोगात्मक समूह में परिवर्तन लाना चाहेगा तो प्रयोगात्मक समूह में नियन्त्रित समूह की तुलना में निश्चय ही कुछ अधिक परिवर्तन होगा। इस अनुसंधान प्रारूप का प्रयोग चैपिन स्टाऊफर तथा लेजार्सफील्ड ने जिस प्रकार इस प्रारूप को प्रयुक्त किया है, उसे निम्न प्रकार समझा जा सकता है।

	परीक्षण से पूर्व	परीक्षण के पश्चात्	वास्तविक परिवर्तन
प्रयोगात्मक समूह से पूर्व			
अ– प्रयोगात्मक समूह	X	Y	$G_1 = Y - X$
ब– नियन्त्रित समूह	X_1	Y_2	$G = Y_2 - X_1$

इस प्रकार G, – G = वास्तविक परिवर्तन जो परीक्षणात्मक उपचार का प्रभाव है। उपर्युक्त चित्र में (अ) और (ब) लगभग समान विशेषताओं वाले दो सामाजिक समूह हैं। समूह (अ) में प्रयोगात्मक विधि द्वारा परिवर्तन लाने का कार्य किया जा रहा है इसलिए इसे हम प्रयोगात्मक समूह कहेंगे। समूह (ब) नियन्त्रित समूह हैं क्योंकि इसमें परिवर्तन लाने का कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। अब हम यह मान लें कि समूह (अ) और समूह (ब) दो अलग–अलग गाँव हैं जहां ग्रामीणों में पंचायती राज के प्रति उनके ज्ञान और अभिवृत्तियों का अध्ययन किया जाना है। इस स्थिति में सर्व प्रथम पंचायती राज के प्रति ग्रामीणों के ज्ञान और अभिवृत्तियों का माप करने वाली अनुसूची का निर्माण करके दोनों ग्रामों में समान स्तर के ग्रामीण उत्तरदाताओं (सूचनादाताओं) से तथ्यों का संकलन किया जाएगा। इसे हम, प्रयोगात्मक और नियन्त्रित गाँवों में किया गया 'पूर्व अध्ययन' कहेंगे। पूर्व अध्ययन के आधार पर दोनों गांवों से प्राप्त तथ्य (क्रमशः X एवं X_1) लगभग समान होंगे। इसके पश्चात् प्रयोगात्मक समूह (अ) में पंचायती राज से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रमों का सम्प्रेषण और प्रसार किया जाएगा जबकि नियन्त्रित समूह (ब) में किसी भी ऐसे कार्यक्रम का सम्प्रेषण नहीं किया जाएगा। कुछ समय बाद पूर्व निर्मित अनुसूची द्वारा प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित समूह में पंचायती राज के प्रति ग्रामीणों के ज्ञान एवं अभिवृत्तियों का पुनः माप किया जायेगा। यह स्थिति Y तथा Y_2 होगी। इसके बाद प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित समूह में पूर्व तथा पश्चात् के अन्तर को देखा जाएगा। उपरोक्त चित्र में (अ) प्रयोगात्मक समूह में यह अन्तर Y – X =

G_1 के रूप में प्रदर्शित है जबकि नियन्त्रित समूह में उत्पन्न परिवर्तन $Y_2 - X_1 = G$ है। इससे स्पष्ट होता है कि प्रयोगात्मक समूह में परिवर्तन की स्थिति G_1 है जबकि नियन्त्रित समूह में परिवर्तन केवल G है। अन्त में नियन्त्रित समूह (ब) में होने वाला परिवर्तन (G) प्रयोगात्मक समूह (अ) में हुए परिवर्तन G_1 में से घटाने के बाद जो शेष रहेगा, वही प्रयोगात्मक विधि द्वारा उत्पन्न वास्तविक परिवर्तन होगा।

2. **पूर्व–पश्चात् परीक्षण** – पश्चात् परीक्षण से सम्बन्धित सीमाओं तथा कठिनाइयों का समाधान करने के लिए प्रयोगात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत पूर्व–पश्चात् परीक्षण विधि को विकसित किया गया। इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधान के लिए केवल ऐसे ही समूह का चयन किया जाता है अथवा यह कहा जा सकता है कि किन्ही ऐसे दो समूहों का चयन नहीं किया जाता जिनमें से एक को अध्ययन के लिए नियन्त्रित रखने की आवश्यकता हो। ऐसे अनुसंधान के लिए चयनित समूह का दो विभिन्न अवधियों में अध्ययन करके पूर्व और पश्चात् के अन्तर को देखा जाता है। यही अन्तर परीक्षण अथवा उपचार का परिणाम मान लिया जाता है। उदाहरण के लिए, हमें किसी गांव में ग्रामीणों पर दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों से दिखाए जा रहे कार्यक्रमों के प्रभाव का अध्ययन करना है तो सर्वप्रथम हम किसी समूह अथवा गांव में एक अनुसूची के माध्यम से यह जानने का प्रयत्न करेंगे कि वर्तमान दूरदर्शन के कार्यक्रम वहाँ के ग्रामीणों को किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं। ऐसी जानकारी परीक्षण के पूर्व की जानकारी होगी। इसके पश्चात् हम एक निश्चित समय तक नियमित रूप से ग्रामीणों को दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों से प्रसारित कार्यक्रम दिखाएंगे। निश्चित समय समाप्त हो जाने पर पूर्व निर्मित अनुसूची द्वारा पुनः यह देखा जाएगा कि दूरदर्शन के कार्यक्रमों ने ग्रामीणों को किस सीमा तक प्रभावित किया, यह परीक्षण के पश्चात् की जानकारी होगी। पूर्व और पश्चात् की जानकारी के बीच जो अन्तर प्राप्त होगा उसी को परीक्षण का परिणाम माना जाएगा। इस परीक्षण को वैज्ञानिक जी0 जी0 हर्ष ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है ।

प्रथम स्तर	द्वितीय स्तर	तृतीय स्तर
पूर्व की माप	उपचार–काल	पश्चात् की माप
A		XA

प्रयोग का परिणाम $= XA - A = X$

उपर्युक्त रेखाचित्र में प्रथम स्तर पर ग्रामीणों में दूरदर्शन से वर्तमान में प्रसारित कार्यक्रमों के ज्ञान का पूर्व–मापन किया है जो 'A' के रूप में प्रदर्शित है। द्वितीय स्तर पर एक निश्चित समय तक दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों से प्रसारित कार्यक्रमों को दिखाया गया, जिसे हम उचार–काल कहते हैं। तृतीय स्तर पर उपचार अथवा परीक्षण के पश्चात्

ग्रामीण विशेषताओं का पुनः मापन किया गया। यदि हम तृतीय स्तर पर किये गये मान द्वारा प्राप्त विशेषताओं अथवा प्राप्तांकों में से प्रथम–स्तर की विशेषताओं अथवा प्राप्ताकों को घटा दें तो जो कुछ शेष रहेगा उसी के परीक्षण के पश्चात् दृष्टिगत होने वाले वास्तविक परिवर्तन को समझा जा सकता है। उपर्युक्त चित्र में XA-A = X को वास्तविक परिवर्तन के बतौर प्रदर्शित किया गया है।

3. ऐतिहासिक तथ्य परीक्षण अथवा कार्यान्तर प्रयोग – प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप केवल वर्तमान तथ्यों के अध्ययन में ही उपयोगी नहीं हैं, बल्कि ऐसा अनुसंधान प्रारूप उन तथ्यों के अध्ययन में भी उपयोगी प्रमाणित हुआ है जिनका सम्बन्ध अतीत से है एवं जिनकी वर्तमान में पुनरावृत्ति नहीं की जा सकती। ऐतिहासिक तथ्यों को हम न तो नियन्त्रित कर सकते हैं और न ही उनमें कोई परिवर्तन ला सकते हैं। ऐसी स्थिति में ऐतिहासिक तथ्य परीक्षण वह विधि है जिसमें हम विभिन्न आधारों पर प्राचीन अभिलेखों के विभिन्न पक्षों की तुलना करके एक उपयोगी निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं। अभिलेखों की तुलना से विभिन्न अनेक महत्वपूर्ण परिणामों की माप करना भी संभव हो जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हमें अपने किसानों के लिए भारत सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न कल्याण कार्यक्रमों का अध्ययन करना है तो इस कार्य में अनेक ऐतिहासिक तथ्य भी प्रयोग का महत्वपूर्ण आधार बन सकते हैं। इसमें हम सर्वप्रथम उन किसानों की एक सूची तैयार करेंगे जिन्हें इनके कल्याण कार्यक्रमों का व्यावहारिक अनुभव हो अथवा जिन्हें इन कार्यक्रमों में लाभ प्राप्त हुआ हो। इसके पश्चात् यह देखा जायेगा कि ऐसे व्यक्तियों की आयु, शिक्षा, योग्यता, विशेष जाति, स्वास्थ्य, क्षेत्रीयता आदि क्या हैं। ऐसी तुलना से यह सरलता से ज्ञात किया जा सकता है कि विभिन्न कल्याण कार्यक्रमों में लाभ प्राप्त करने में किसानों की जमीन का आकार आर्थिक स्तर, सामाजिक शैक्षणिक स्तर की क्या भूमिका है। दूसरे स्तर पर कुछ अवधि का अंतराल देकर इन्हीं कारकों के प्रभाव का पुनः मापन करके हम एक निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं। वैज्ञानिक चैपिन ने स्काउटिंग तथा बाल–अपराध के सम्बन्ध का अध्ययन करने के लिए इसी तरह के अनुसंधान प्रारूप का उपयोग करके इसकी प्रामाणिकता को सिद्ध किया है।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विवेचन से स्पष्ट है कि समुचित अनुसंधान–प्रारूप का निर्माण सामाजिक अनुसंधान की सफलता का सबसे महत्वपूर्ण आधार है। सामाजिक घटनाओं में इतनी अधिक विविधता है कि सभी के अध्ययन के लिए एक सामान्य अनुसंधान प्रारूप उपयोगी नहीं हो सकता। अनुसंधान प्रारूप का निर्माण सदैव अध्ययन विषय की प्रकृति, उद्देश्यों एवं परिकल्पना के अनुरूप किया जाना चाहिए। अनुसंधान का मूल्य सम्बन्ध अध्ययन विषय से सम्बद्ध विभिन्न चरों का तार्किक प्रभाव देखना एवं घटनाओं के कार्य–कारण सम्बन्ध को

स्पष्ट करना है। अनुसंधान प्रारूप इसी लक्ष्य का साधन है, इसे स्वयं में लक्ष्य नहीं माना जा सकता है। इसके पश्चात् भी अनुसंधान प्रारूप इस दृष्टिकोण से आवश्यक है कि यह समस्या को स्पष्ट रूप प्रदान करता है, सम्बन्धित चरों पर नियन्त्रण रखता है तथा तथ्यों की विवेचना को एक ऐसा तार्किक आधार प्रदान करता है कि जो किसी भी अनुसंधान की सफलता के लिए आवश्यक है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. शोध प्रारुप के प्रकारों के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. अन्वेषणात्मक शोध प्रारुप के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

7.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में शोध प्रारूप के अर्थ एवं प्रकारों के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि शोध प्रारूप एक अनुसंधान प्रारूप का तार्किक तथा व्यवस्थित आयोजन तथा निर्देशन है। वास्तव में शोध प्रारूप शोध कार्य शुरू करने से पहले निर्मित एक ऐसी व्यवस्थित रूपरेखा है जो कुछ विशेष उद्देश्यों के सन्दर्भ में अध्ययन विषय के विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करती है। अनुसंधान प्रारूप का निर्माण करते समय अनुसंधानकर्ता केवल इसी तथ्य को ध्यान में नहीं रखता कि उसके अध्ययन की प्रकृति वर्णनात्मक है अथवा अन्वेषणात्मक है, बल्कि उसे यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि एक निर्धारित समय एवं सीमित साधनों के अन्तर्गत वह किन पद्धतियों का उपयोग करके अधिक से अधिक वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष प्राप्त कर सकता है। वास्तव में सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में शोध प्रारूप इसलिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि सामाजिक जीवन की असीम व्यापकता में से उपयोगी, तार्किक तथा तर्क संगत तथ्य तब तक प्राप्त नहीं किये जा सकते जब तक अनुसंधानकर्ता एक निर्धारित क्षेत्र से जुड़े रहते हुए कार्य न करे। इस प्रकार जो अनुसंधान अभिकल्प केवल सामाजिक घटनाओं के अध्ययन से ही सम्बद्ध होता है, उसे हम सामाजिक अनुसंधान का प्रारूप कहते हैं।

इसी इकाई में शोध प्रारूप के विभिन्न प्रकारों का वर्णन किया गया है जिसमें अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप, वर्णनात्मक शोध

प्रारूप, निदानात्मक शोध प्रारूप तथा प्रयोगात्मक शोध प्रारूप का भी विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है जिसमें बताया गया है कि अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप का उद्देश्य अज्ञान या अज्ञात तत्त्वों को खोजकर मानव के ज्ञान में वृद्धि करता है। अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्रारूप की अन्य दशाएं तथा इसके कार्य के बारे में भी बताया गया है। वर्णनात्मक शोध प्रारूप का प्रमुख उद्देश्य समस्या से सम्बन्धित वास्तविक तथ्यों के आधार पर वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करना है जबकि निदानात्मक शोध प्रारूप दो प्रकार की समस्याओं को ध्यान में रखकर किया जाता है – (1) सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित नवीन ज्ञान की प्राप्ति, (2) सामाजिक समस्याओं के सम्बन्धित उपायों की खोज। प्रयोगात्मक शोध प्रारूप का प्रमुख उद्देश्य भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला प्रविधि के समान ही है जिसमें समूहों को नियन्त्रित करके अध्ययन किया जाता है। प्रयोगात्मक शोध प्रारूप के विभिन्न प्रकारों जैसे–केवल प्रश्चात् परीक्षण, पूर्व पश्चात् परीक्षण एवं ऐतिहासिक तथ्य परीक्षण के बारे में भी प्रकाश डाला गया है।

आशा ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिससे आप लोग शोध प्रारूप के अर्थ एवं प्रकार के बारे में वृहद् जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

7.5 पारिभाषिक शब्दावली

अनुसंधान प्रारूप– एक अनुसंधान प्रारूप, अनुसंधान का तार्किक तथा व्यवस्थित आयोजन तथा निर्देशन है।'

अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध प्रारूप– जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, यह अभिकल्प अन्वेषण से सम्बन्धित है। इसका भौतिक उद्देश्य अज्ञान या अज्ञात तत्वों को खोजकर मानव के ज्ञान में वृद्धि करना है।

वर्णनात्मक शोध प्रारूप– इस अनुसंधान अभिकल्प का मौलिक उद्देश्य समस्या से सम्बन्धित वास्तविक तथ्यों के आधार पर वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करना है। इस अध्ययन की मौलिक विशेषता पूर्ण तथा यथार्थ सूचनाएँ प्राप्त करना है।

निदानात्मक अनुसंधान **प्रारूप–** निदानात्मक अनुसंधान में समस्या के कारणों के अतिरिक्त, उस समस्या के निदान का भी प्रयास किया जाता है।

परीक्षणात्मक अथवा प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप– जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों में अध्ययन–विषय को कुछ नियन्त्रित अवस्थाओं में रखकर विभिन्न दशाओं का अध्ययन किया गया जाता है, उसी प्रकार

जब सामाजिक घटनाओं को भी कुछ नियन्त्रित दशाओं में रखकर परीक्षण के आधार पर अध्ययन की रूपरेखा तैयार की जाती है तब ऐसे प्रारूप को हम परीक्षणात्मक अथवा प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप या अभिकल्प कहते हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1. शोध प्रारूप का अर्थ के बारे में लिखिए।
2. शोध प्रारूप के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।
3. अन्वेषणात्मक या निरूपणात्मक शोध प्रारूप के बारे में लिखिए।

विस्तृत

1. वर्णनात्मक शोध प्रारूप पर प्रकाश डालिए।
2. निदानात्मक शोध प्रारूप को स्पष्ट किजिए।
3. प्रयोगात्मक शोध प्रारूप के बारे में लिखिए ।

7.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, ''प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान (शोध)'', आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष–2005, पेज–78–80, 82, 83, 85, 86–91

2– सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष–1998, पेज – 158–165

3– मुखर्जी, आर0 एन0, ''सामाजिक शोध व सांख्यिकी'', विवेक प्रकाशन, दिल्ली, वर्ष–2000, पेज – 128–129

4– यंग, पी0 वी0 ''सांइंटिफिक सोशल सर्वे एवं रिसर्च'', वर्ष–1960, पेज 127।

5– एकॉफ, रसेल, एल; ''सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च'', वर्ष–1586, पेज–131

6– शाह, विमल, ''रिसर्च डिजाइन एण्ड स्ट्रेटेजिज'', पेज–3

खण्ड–द्वितीय
समाज कार्य अनुसंधान की प्रक्रिया

इकाई : 8 उपकल्पना : अर्थ एवं आवश्यकता

8.0 इकाई का उद्देश्य

8.1 परिचय

8.2 उपकल्पना का अर्थ

8.3 उपकल्पना के प्रकार

8.4 उपकल्पना की आवश्यकता

8.5 सार–संक्षेप

8.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

8.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

8.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को आपके सम्मुख इसलिए प्रस्तुत किया जा रहा है कि आप लोगों को उपकल्पना का अर्थ, प्रकार और आवश्यकता के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त हो सके। वास्तव में हम जानते हैं कि उपकल्पना शोध के लिए महत्वपूर्ण तत्व है। इसी के संदर्भ में प्रस्तुत इकाई आपके सम्मुख प्रस्तुत की जा रही है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1. उपकल्पना का अर्थ के बारे में लिख सकेंगे।
2. उपकल्पना के प्रकारों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
3. उपकल्पना की आवश्यकता के बारे में लिख सकेंगे।
4. उपयोगी उपकल्पना की निर्माण में कठिनाइयों के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।
5. उपकल्पना की सीमाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

8.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में उपकल्पना के अर्थ एवं आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है जिसमें उपकल्पना की अवधारणा को समझने के लिए विभिन्न सामाजिक वैज्ञानिकों के द्वारा उल्लिखित परिभाषाओं का समावेश किया गया है। वास्तव में सामाजिक शोध साामजिक घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है और कोई भी अध्ययन तब तक वैज्ञानिक नहीं हो सकता जब तक उसमें वैज्ञानिक पद्धति को काम में न लाया जाए। इस वैज्ञानिक पद्धति का सदुपयोग तब तक नहीं हो सकता जब तब हमें अपने अध्ययन–विषय के सम्बन्ध में कुछ–न–कुछ आरम्भिक ज्ञान एवं सामान्य अनुभव न हो। इस आरम्भिक ज्ञान व अनुभव के आधार पर हम अपने अध्ययन–विषय के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में एक सामान्य अनुमान पहले से ही लगा सकते हैं। यह सामान्य अनुमान शोधकर्ता के लिए एक मार्ग–निर्देशक बन जाता है और शोधकर्ता का ध्यान कुछ निश्चित व आवश्यक तथ्यों पर ही केन्द्रित करके अनुसन्धान की दिशा को निर्धारित करता है और उसे अनिश्चितता के अन्धकार में भटकने से बचा लेता है। उदाहरणार्थ, यदि हमारा अध्ययन–विषय 'बाल–अपराध' है तो हम अपने आरम्भिक ज्ञान व सामान्य अनुभव के आधार पर एक कामचलाऊ अनुमान यह कर सकते हैं कि निर्धनता व टूटे परिवार ही बाल–अपराध को जन्म देने के सबसे प्रभावशाली कारक हैं। उस अवस्था में हमारा यह अनुमान हमारे अध्ययन कार्य में अत्यन्त सहायक सिद्ध होगा। क्योंकि हमें यह निश्चित रूप में पता होगा कि हमें आर्थिक तथा पारिवारिक कारकों पर ध्यान केन्द्रित करना है, उन्हीं से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करना है और फिर देखना है कि जो 'अनुमान' हमने आरम्भ में लगाया था वह सही है अथवा गलत। इसी आरिम्भक सामान्य तथा कामचलाऊ अनुमान को जो कि आगे के अध्ययन–कार्य का आधार और वैज्ञानिक के लिए एक सहारा बन जाता है, कार्यनिर्वाही अथवा कामचलाऊ उपलकल्पना कहते हैं। प्रो0 यंग के अनुसार कार्यनिर्वाही अथवा कामचलाऊ प्राक्कल्पना का निर्माण वैज्ञानिक पद्धति का प्रथम चरण है।

8.2 उपकल्पना का अर्थ

चिन्तन और जिज्ञासा मानव की मूल प्रवृत्तियां हैं और यही उसके वैज्ञानिक आधार के केन्द्र बिन्दु भी हैं। चिन्तन को इसकी प्रवृति और विशेषताओं के आधार पर दो भागों में विभाजित करते हैं–

(अ) अनुसंधान से पूर्व का चिन्तन,

(ब) अनुसंधान के बाद का चिन्तन

वह चिन्तन जो अनुसंधान–पूर्व किया जाता है, परिकल्पना या उपकल्पना के नाम से जाना जाता है। अनुसंधान प्रारम्भ करने से पहले अनुंसधान के कारणों और परिणामों के बारे में जो एक निश्चित अवधारणा बना लेते हैं, उसे ही उपकल्पना कहते हैं। उपकल्पना की सहायता से हम जीवन के अपरिचित क्षेत्र में प्रवेश करते हैं और उस क्षेत्र से सम्बन्धित वास्तविक तथ्यों को प्रकाश में लाते हैं। उपकल्पना के द्वारा हमें समस्या की प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त होती है, जिसकी सहायता से हम अपने अनुसंधान कार्यक्रम की रूपरेखा का निर्धारण करते हैं। अनुसंधान एक लम्बी यात्रा होती है, जिस बिन्दु से हम इस कार्य को प्रारम्भ करते हैं, उसी बिन्दु को उपकल्पना के नाम से सम्बोधित किया जाता है तथा उसके आधार से सम्बन्धित होती है, अतः इसमें निरीक्षण और परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है। सामाजिक जीवन से सम्बन्धित जो अनुसंधान कार्य किये जाते हैं, उनकी कल्पना एक भी हो सकती है और अनेक भी। यदि समस्या जटिल हो, तो एक ही उपकल्पना को आधार बनाकर अनुसंधान कार्य को आगे बढ़ाया जाना चाहिए, किन्तु यदि समस्या का स्वरूप सरल हो तो एक से अधिक उपकल्पनाओं को आधार बनाया जा सकता है।

प्राकल्पना = प्रा + कल्पना

प्रा अर्थात् प्रारम्भिक

कल्पना अर्थात् विचार

इस प्रकार प्राकल्पना अथवा उपकल्पना या परिकल्पना अनुसंधान विषय के सम्बन्ध में प्रारिम्भक विचार है।

अतः हम कह सकते हैं कि ''उपकल्पना का निर्माण वैज्ञानिक अनुसंधान का अंतिम लक्ष्य नहीं है।'' अर्थात् अपने उपकल्पना को सच प्रमाणित करने के उद्देश्य से वैज्ञानिक अनुसंधान कार्य में उपकल्पना का कार्य नहीं किया जाता है। वैज्ञानिक अनुसंधान का अंतिम लक्ष्य तो सच को ढूँढ़ निकालना है और सत्य की खोज वास्तविक तथ्यों के आधार पर ही सम्भव है, न कि उपकल्पना के आधार पर। उपकल्पना का निर्माण तो हम केवल इसलिए करते हैं कि अध्ययन कार्य में हमें निश्चित रूप से क्या करना है उसके सम्बंध में हमें एक अनुमान लग जाये और हम एक ही समय में एक ही विषय से सम्बन्धित सभी पहलुओं पर अपने ध्यान को बाँट देने की गलती न करके अपने अनुसंधान क्षेत्र को सीमित करके अपने उपकल्पना या प्राकल्पना के अनुसार अध्ययन विषय के एक विशिष्ट पहलू पर अपना ध्यान केन्द्रित करें

और उसी से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करें। इस प्रकार उपकल्पना हमें अपने अध्ययन कार्य के दौरान यत्रतत्र भटकने से बचाता है और हम एक निश्चित दिशा में सत्य की खोज में आगे बढ़ सकते हैं। हो सकता है कि वास्तविक तथ्यों को एकत्रित कर लेने के बाद हम यह पायें कि अपने अध्ययन विषय के सम्बन्ध में जिस उपकल्पना का निर्माण हमने किया था, वह गलत है और वास्तविक तथ्यों के सन्दर्भ में उसे बदलने की आवश्यकता है। वास्तव में उपकल्पना के निर्माण के बाद हम अपने अध्ययन कार्य के दौरान विषय से सम्बन्धित कुछ वास्तविक तथ्यों को एकत्रित करते हैं और फिर उन तथ्यों के आधार पर उपकल्पना का परीक्षण करते हैं कि वह सही है अथवा गलत। अन्य अर्थों में वास्तविक तथ्यों के आधार पर उपकल्पना को सही या गलत प्रमाणित करना वैज्ञानिक अनुसंधान का अंतिम लक्ष्य है, न कि केवल उपकल्पना का निर्माण। वास्तविकता यह है कि उपकल्पना का निर्माण कुछ वैज्ञानिक उद्देश्यों की पूर्ति करने में मदद करता है अर्थात् अनुसंधान कार्य में सहायक सिद्ध होता है। उपकल्पना के इस महत्व या लक्ष्यों की विवेचना इस इकाई में करेंगे। अब उपकल्पना के वास्तविक अर्थ व परिभाषाओं को समझने के लिए कुछ परिभाषायें अग्रलिखित प्रस्तुत की जा रही हैं –

परिभाषाएँ– उपकल्पना की परिभाषायें अग्रलिखित प्रस्तुत की जा रही हैं–

1– **लुण्डबर्ग** : उपकल्पना एक प्रारम्भिक सामान्यीकरण है जिसकी सत्यता की जांच अभी बाकी है। अपने बिल्कुल प्रारम्भिक स्तरों पर उपकल्पना एक अनुमान, कल्पनात्मक विचार अथवा पूर्वानुमान आदि कुछ भी हो सकती है जो बाद में किसी भी क्रिया अथवा अनुसंधान का आधार बन जाती है।'

2– **बोगार्डस** – उपकल्पना परीक्षण के लिए प्रस्तुत की गई एक मान्यता है।'

3– गुडे तथा हॉट – उपकल्पना एक ऐसी मान्यता है जिसकी सत्यता को सिद्ध करने के लिए उसकी परीक्षा की जा सकती है।

4– **पी0वी0 यंग**– एक अस्थायी लेकिन केन्द्रीय महत्व का विचार जो उपयोगी अनुसंधान का आधार बन जाता है, उसे हम एक कार्यकारी उपकल्पना कहते हैं।

5– **बार तथा स्टेट्स** के अनुसार, ''उपकल्पना एक अस्थायी रूप से माना गया सत्य कथन है, जिसका आधार उस

समय तक उस विषय अथवा घटना के बारे में ज्ञान है और इसे नये सत्य की खोज के लिए आधार बनाया जाता है।''

6– **गुडे तथा हाट** – उपकल्पना एक अनुमान है, जिसे अंतिम अथवा अस्थायी रूप में किसी निरीक्षित तथ्य अथवा दशाओं की व्याख्या हेतु स्वीकार किया गया हो एवं जिससे अनुसंधान को आगे पथ प्रदर्शन प्राप्त होता हो।

7– **मैकगुईगन** के अनुसार, ''उपकल्पना दो या दो से अधिक चरों के कार्यक्षम सम्बंधों का परीक्षण योग्य कथन है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि उपकल्पना किसी विषय से सम्बन्धित एक सामान्य अनुमान या विचार जिसके सन्दर्भ में ही सम्पूर्ण अध्ययन किया जाता है। प्रारम्भिक स्तर पर एक उपकल्पना अनुसंधान का मार्ग निर्देशन करती है, अध्ययन के बीच में यह अनुसंधानकर्ता को इधर–उधर भटकने से रोकती हैं तथा अध्ययन के अन्त में यह उपयोगी निष्कर्ष प्रस्तुत करने तथा पूर्व निष्कर्षों का सत्यापन करने में सहायता देती है। अनुसंधान के द्वारा एकत्रित तथ्यों के आधार पर यदि कोई उपकल्पना सत्य प्रमाणित होती है तो उसे एक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है और यदि वह सत्य प्रमाणित नहीं होती तो उसे अस्वीकार कर दिया जाता है।

8.3 उपकल्पना के प्रकार

विभिन्न सामाजिक विद्वानों ने प्राक्कल्पना के जो वर्गीकरण प्रस्तुत किये हैं वे अग्रलिखित हैं –

(1) **मैकगुइगन** ने अनुभव के आधार पर उपकल्पना को दो भागों में विभाजित किया है –

(अ) सार्वभौमिक प्राक्कल्पनाएँ – सार्वभौमिक प्राक्कल्पनाएँ वे हैं जिनका अध्ययन किया जाने वाला चर सभी समय और सभी स्थान पर उपस्थित रहता है।

(ब) अस्तित्ववादी प्राक्कल्पनाएँ – ये प्राक्कल्पनाएँ वे प्राक्कल्पनाएँ हैं जो एक मामले में चरों के अस्तित्व का निर्धारण कर सकें।

(2) **हेज** ने उपकल्पनाओं के दो प्रकार बतायें हैं –

(अ) सरल उपकल्पना – इस प्रकार की उपकल्पना में सामान्य उपकल्पना आती है तथा किन्हीं दो चरों के बीच सहसम्बंध की स्थापना की जाती है।

(ब) मिश्रित उपकल्पना – मिश्रित उपकल्पना वह है, जिसमें चरों की संख्या एक से अधिक न हो। इनमें सहसम्बंध सांख्यिकी की सहायता से ज्ञात किये जाते हैं।

(3) **श्री एम0 एच0 गोपाल** के अनुसार, उपकल्पना दो तरह की होती हैं–

(अ) अशुद्ध, मिली जुली तथा मौलिक – ये वे उपकल्पनाएँ होती हैं जिनकी निम्न स्तरीय विचारधाराएँ होती हैं, जो अधिकांशतः केवल संकलन की जानी वाली सामग्री को बताती हैं। ये वर्णनात्मक मानी जाती हैं। इनमें किसी नियम या सिद्धान्त की स्थापना नहीं होती। ये पिछले निष्कर्षों, नियमों या सिद्धान्तों को दृढ़ता प्रदान करती है।

(ब) विशुद्ध तथा पुनर्परीक्षित उपकल्पनाएँ – उपकल्पनाएँ अनेक अध्ययनों द्वारा निकाले गये विभिन्न निष्कर्षों पर आधारित होती हैं इसके तीन भाग हैं –

(i) सामान्य स्तरीय

(ii) जटिल आदर्श

(iii) जटिलतम अनेक सम्बन्धित चर को उपकल्पनाओं के रूप में देखा जा सकता है।

(4) **गुडे तथा हॉट** ने उपकल्पना के तीन प्रकारों का उल्लेख किया है–

(अ) अनुभव सिद्ध समरूपताओं से सम्बन्धित उपकल्पनाएँ – इस श्रेणी की उपकल्पनाएँ व्यक्ति के सामान्य जीवन में प्रचलित विचारों, मान्यताओं, विश्वासों, कहावतों और मुहावरों पर आधारित होती हैं। ऐसी उपकल्पनाओं का परीक्षण केवल सामान्य अवलोकन के आधार पर नहीं किया जा सकता बल्कि इसके लिए अनुभव सिद्ध सर्वेक्षण करना आवश्यक होता है। इस प्रकार की उपकल्पनाएँ केवल सामाजिक जीवन से सम्बन्धित नहीं होती बल्कि प्राकृतिक विज्ञानों में भी प्रकृति से सम्बन्धित अनेक विश्वासों के आधार पर अक्सर अनेक उपकल्पनाओं के निर्माण में सहायता प्रदान करती हैं।

(ब) आदर्श प्रारूपों से सम्बन्धित उपकल्पनाएँ – इस श्रेणी के अन्तर्गत वे उपकल्पनाएँ आती हैं जिनका उद्देश्य तर्कपूर्ण ढंग से विभिन्न कारकों के बीच पाये जाने वाले सहसम्बंध को बताना होता है। ऐसी उपकल्पना की परीक्षा करने के लिए

सर्वप्रथम सम्बंधित तथ्यों को एकत्रित किया जाता है और बाद में तथ्यों के तर्कपूर्ण क्रम को आदर्श मानकर सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं।

(स) विश्लेषणात्मक चरों से सम्बन्धित उपकल्पनाएँ – इस प्रकार की उपकल्पनाओं का उद्देश्य विभिन्न प्रकार के चरों का विश्लेषण कर तथ्यों को प्रस्तुत करना होता है। वास्तव में किसी भी समस्या का विश्लेषणात्मक निदान प्रस्तुत करना इन उपकल्पनाओं का प्राथमिक उद्देश्य है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. उपकल्पना का अर्थ लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. उपकल्पना के प्रकारों पर प्रकाश डालिये।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....

....

8.4 उपकल्पना की आवश्यकता–

किसी भी अनुसंधान को वैज्ञानिक बनाने में उपकल्पना की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। समाज वैज्ञानिक जहोदा एवं कुक के अनुसार, उपकल्पनाओं का निर्माण तथा प्रमाणिकता, वैज्ञानिक अध्ययन का उद्देश्य है।' एम.एच. गोपाल के अनुसार, 'उपकल्पना के बिना अनुसंधानकर्ता, अनावश्यक यहाँ तक कि व्यर्थ सामग्री भी एकत्रित कर सकता है और वास्तव में महत्वपूर्ण तथा लाभकारी तथ्य उसकी दृष्टि से छूट सकते हैं। ।

समाजशास्त्री **पी0 वी0 यंग** के अनुसार, 'उपकल्पना के प्रयोग में उन तथ्यों की अच्छी तरह खोज तथा संकलन पर नियन्त्रण होता है जो बाद में अध्ययन किये जाने वाली समस्या के लिए अप्रासंगिक या बेकार सिद्ध हो।'

पी0 वी0 यंग ने आगे कहा है, उपकल्पना का प्रयोग एक दृष्टिहीन खोज से रक्षा करता है।' इसी प्रकार गुडे तथा हॉट का कथन है कि अच्छे अनुसंधान में उपकल्पना का निर्माण करना सर्वप्रमुख चरण है।' वास्तविकता यह है कि कोई भी सामाजिक अनुसंधान उपकल्पना के अभाव में व्यवस्थित नहीं किया जा सकता। उपकल्पना एक प्रकार का प्रकाश स्तम्भ है जो अनुसंधानकर्ता को दिशा निर्देश देता है तथा उसे व्यर्थ की सूचनाओं के संग्रेह से रोकता है। इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में उपकल्पना के महत्व अथवा आवश्यकता को निम्नांकित बिन्दुओं के आधार पर समझा जा सकता है–

1– अध्ययन की दिशा का निर्धारण – प्रत्येक सर्वेक्षण और अनुसंधान के लिए बहुत अधिक समय और धन की आवश्यकता होती है। उपकल्पना की सहायता से जब अध्ययन को एक उचित दिशा मिल जाती है तो अनुसंधानकर्ता भी व्यर्थ के परिश्रम, समय और व्यय से बच जाता है।

2– अध्ययन क्षेत्र को सीमित करने में सहायक – उपकल्पना द्वारा अध्ययन क्षेत्र को इस प्रकार सीमित करना संभव हो जाता है कि अनुसंधानकर्ता अपना ध्यान अध्ययन के एक विशेष पहलू अथवा कुछ विशेष तथ्यों पर ही केन्द्रित कर सके। वास्तव में, प्रत्येक अध्ययन विषय के बहुत से पहलू हो सकते हैं। यदि अध्ययनकर्ता सभी पहलुओं को एक साथ लेकर अध्ययन करना आरम्भ कर दे तो किसी भी पहलू की गहराई में जाकर तथ्यों को एकत्रित नहीं किया जा सकता। अनुसंधान की वैज्ञानिकता के लिए अध्ययन क्षेत्र का सीमित होना आवश्यक है

जो उपकल्पना की सहायता से ही संभव हो सकता है। लुण्डबर्ग के शब्दों में, 'उपकल्पना के प्रयोग से अनुसंधान क्षेत्र सीमित हो जाता है और अध्ययनकर्ता गहराई में जाकर विषय का अध्ययन करने में सफल हो जाता है।'

3– उपयोगी तथ्यों के संकलन में सहायक – किसी भी सामाजिक घटना या समस्या का अध्ययन करते समय अनुसंधानाकर्ता के सामने अनेक प्रकार के तथ्य आते हैं। कभी–कभी उन तथ्यों की उपयोगिता अथवा अनुपयोगिता को न समझ पाने के कारण अनुसंधानकर्ता उपयोगी तथ्यों को छोड़कर व्यर्थ के तथ्यों के संकलन में लग जाता है। इसके फलस्वरूप सम्पूर्ण अध्ययन अव्यवस्थित और अवैज्ञानिक बन सकता है। इस स्थिति में, 'परिकल्पना की सहायता से यह निश्चित करना आसान हो जाता है कि तथ्यों को एकत्रित किया जाए और किन्हें सरलता से छोडा जा सकता है।' इसका तात्पर्य यह है कि उपकल्पना ही वह महत्वपूर्ण आधार है जो अनुसंधानकर्ता पर नियन्त्रण बनाये रखकर अनुसंधान को वैज्ञानिक बनाने में सहायता देता है।

4– तर्कसंगत निष्कर्षों में सहायक– आरम्भ में ही यह स्पष्ट किया जा चुका है कि उपकल्पना वह मान्यता है जिसके द्वारा अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने से पहले ही एक कामचलाऊ निष्कर्ष प्रस्तुत कर दिया जाता है। यह निष्कर्ष सत्य है अथवा गलत, इसका परीक्षण बाद में एकत्रित तथ्यों के आधार पर किया जाता है। तथ्यों के आधार पर यदि उपकल्पना से सम्बन्धित निष्कर्ष सही प्रमाणित होता है तो उसे एक सामान्य नियम के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि यदि उपकल्पना का सावधानी से निर्माण किया जाए तो यह उपयुक्त और तर्क–संगत निष्कर्ष निकालने में अत्यधिक सहायक होती है।

5– सिद्धान्तों के निर्माण में योगदान– सामाजिक अनुसंधान का अन्तिम उद्देश्य सिद्धान्तों का निर्माण करना होता है। इस कार्य में उपकल्पना की भूमिका सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रमाणित हुई है। जैसा कि स्पष्ट किया जा चुका है, उपकल्पना का निर्माण साधारणतया किसी पूर्व स्थापित सिद्धान्त के आधार पर होता है। एक अनुसंधानकर्ता जब नई परिस्थितियों के सन्दर्भ में किसी पुराने सिद्धान्त की सार्थकता को देखने का प्रयत्न करता है तो उपकल्पना की सहायता से जो सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं वे नये सिद्धान्तों का निर्माण करने में भी अत्यधिक सहायक होते हैं।

अतः स्पष्ट है कि अनुसंधान में उपकल्पना की एक केन्द्रीय भूमिका होती है। यही कारण है कि सामाजिक घटनाओं से

सम्बन्धित कोई भी अनुसंधान कार्य ऐसा नहीं होता जिसमें किसी न किसी उपकल्पना को आधार मानकर तथ्यों को एकत्रित न किया जाए।

उपयोगी उपकल्पना के निर्माण में कठिनाइयाँ – वास्तव में उपकल्पना का निर्माण सरल कार्य नहीं है। उपकल्पना के निर्माण में अत्यधिक सावधानी रखने के बाद भी कुछ कठिनाइयाँ सामने आती हैं। ये कठिनाइयाँ प्रायः दो तरह की होती हैं –

(अ) सैद्धान्तिक ढांचे से सम्बन्धित

(ब) अध्ययन प्रविधियों से सम्बन्धित

उपयोगी उपकल्पना के निर्माण में आने वाली प्रमुख कठिनाइयाँ अग्रलिखित हैं–

(1) अनुसंधानकर्ता को पूर्व स्थिति के ज्ञान हेतु आवश्यक सैद्धान्तिक ढाँचा उपलब्ध नहीं हो पाता, इससे विषय के सम्बंध में अनुमान लगाना कठिन होता है।

(2) यदि अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान क्षेत्र को सैद्धान्तिक ज्ञान का अभाव होता है, तो वह एक उपयोगी उपकल्पना का निर्माण नहीं कर सकता।

(3) उस अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान क्षेत्र का भी स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए, यदि उससे अनुसंधान क्षेत्र का स्पष्ट ज्ञान नहीं है तो वह एक उपयोगी उपकल्पना का निर्माण नहीं कर सकता।

(4) यदि अनुसंधानकर्ता ऐसे विषय पर कार्य कर रहा है, जिस पर इससे पहले कभी कार्य नहीं हुआ है तो भी उसे उपकल्पना के निर्माण में कठिनाई होगी।

(5) यदि अनुसंधानकर्ता को यंत्रों का अभाव है अथवा यंत्रों की जानकारी नहीं है तो ऐसी स्थिति में भी वह एक उपयोगी उपकल्पना का निर्माण नहीं कर सकता।

(6) सामाजिक घटनाओं में तेजी से परिवर्तन होने के कारण अनुसंधान विषय के सम्बंध में पूर्व अनुमान लगाना अत्यन्त कठिन कार्य होता है।

(7) उपकल्पना का निर्माण समाज की कुछ सामान्य विशेषताओं के आधार पर किया जा सकता है, किन्तु सांस्कृतिक आदान–प्रदान के फलस्वरूप सांस्कृतिक विशेषताओं में स्थिरता नहीं है। अतः अस्थिर आधारों पर उपकल्पना के निर्माण में हमें कठिनाई होती है।

(8) अनुसंधानकर्ता के पूर्व आदर्श, पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण, उचित–अनुचित की भावना, जातिवाद वैज्ञानिक प्रयोग के योग्य उपकल्पना के निर्माण में कठिनाई पैदा करते हैं।

(9) अध्ययन प्रणालियों, मशीनों एवं यंत्रों के निरन्तर विकास के कारण इनमें इतनी विविधता आ जाती है कि एक अध्ययन के लिए कई प्रणालियों का विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रयोग किया जाने लगा है। अतः उपकल्पना का निर्माण करते समय उपयुक्त प्रणालियों का चयन भी कठिन होता है।

उपकल्पना की सीमाएँ – सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना के महत्व को देखते हुए यह नहीं समझ लेना चाहिए कि यह एक दोषरहित विधि है तथा कोई भी उपकल्पना वैज्ञानिक अध्ययन का आधार बन सकती है। सावधानीपूर्वक बनायी गयी उपकल्पना जहाँ एक ओर वैज्ञानिक अध्ययन का मार्ग निर्देशित करती है, वहीं एक दोषपूर्ण उपकल्पना अध्ययन के रास्ते में अनेक बाधाएँ उत्पन्न कर सकती हैं। इसका तात्पर्य यह है कि उपकल्पना निर्माण की भी अपनी कुछ सीमाएँ हैं जिनको ध्यान में रखकर ही इसके दोषों से बचा जा सकता है –

(1) उपकल्पना की सबसे बड़ी सीमा स्वयं अनुसंधानकर्ता की असावधानी है। एक ओर अनुसंधानकर्ता अक्सर अपनी भावनाओं या पूर्वाग्रहों के आधार पर उपकल्पना का निर्माण कर लेता है। वहीं दूसरी ओर अपनी उपकल्पना उसका विश्वास इतना अटूट होता है कि वह उससे हटकर तथ्यों को देखना या समझना नहीं चाहता।

(2) उपकल्पना की दूसरी सीमा स्वयं सामाजिक अध्ययनों से सम्बन्धित है। सामाजिक घटनाएँ अत्यधिक जटिल और परिवर्तनशील होती हैं। इस स्थिति में विषय से सम्बन्धित विस्तृत सूचनाएँ एकत्रित करने से पहले ही अपने मन में कोई सामान्य अनुमान लगा लेना बहुत कठिन होता है। प्रारम्भिक अनुमान अक्सर गलत उपकल्पनाओं के लिए उत्तरदायी होते हैं।

(3) उपकल्पनाओं के निर्माण में सांस्कृतिक विशेषताओं का भी बहुत महत्व होता है। वर्तमान स्थिति यह है कि आज विभिन्न संस्कृतियों के बीच आज इतना अधिक आदान–प्रदान हो रहा है कि किसी भी समाज की संस्कृति का रूप विशुद्ध नहीं रहा है। इसके फलस्वरूप यदि किसी सांस्कृतिक विशेषता को ही उपकल्पना का स्रोत मान लिया जाता है तो अक्सर इसके दोषपूर्ण होने की सम्भावना हो जाती है।

(4) उपकल्पना के निर्माण का दूसरा प्रमुख स्रोत प्रचलित सिद्धान्त होते हैं। साधारणतः किसी सिद्धान्त के आधार पर एक उपकल्पना का निर्माण तो कर लिया जाता है लेकिन अक्सर यह नहीं देखा जाता है कि सम्बन्धित अध्ययन के लिए वह सिद्धान्त कितना अत्यधिक व्यावहारिक है। इसके फलस्वरूप उपकल्पना अनुसंधानकर्ता को दिशा–निर्देश देने के स्थान पर उसे अनेक भ्रमपूर्ण परिस्थिति में डाल लेती है।

(5) उपकल्पना की एक महत्वपूर्ण सीमा पूर्वगामी सर्वेक्षण की प्रकृति से सम्बन्धित है। साधारणतः उपकल्पना का निर्माण किसी पूर्वगामी सर्वेक्षण अथवा सामान्य अवलोकन की सहायता से किया जाता है। कठिनाई यह है कि शीघ्रता में किये गये पूर्वगामी सर्वेक्षण के द्वारा अनुसंधानकर्ता को उत्तरदाताओं से अक्सर सही सूचनाएँ प्राप्त नहीं हो पातीं। इस स्तर पर सूचनाओं की सत्यता को देख सकता भी बहुत कठिन होता है। इसके फलस्वरूप उन सूचनाओं के आधार पर बनायी गयी उपकल्पना भी दोषपूर्ण हो जाती है।

कार्यकारी उपकल्पना के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना के महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। यह सत्य है कि एक दोषपूर्ण उपकल्पना सम्पूर्ण अनुसंधान को अवैज्ञानिक बना सकती है लेकिन इसका आशय यह नहीं है कि सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना के निर्माण से ही बचने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। उपकल्पना की सीमाएँ केवल इस तथ्य को स्पष्ट करती हैं कि उपकल्पना का निर्माण अत्यधिक सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। वास्तविकता यह है कि सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना वह महत्वपूर्ण आधार पर जो अनुसंधानकर्ता पर नियन्त्रण रखकर उसे एक अन्तर्दृष्टि प्रदान करती है।

8.5 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में उपकल्पना के अर्थ एवं आवश्यकताओं के बारे में बताया गया है जिसमें स्पष्ट किया गया है कि उपकल्पना अपने तथ्यों के विषय में सामान्य ज्ञान के आधार पर एक वैज्ञानिक प्रयत्न व भूलचूक की अथवा परीक्षण द्वारा भूल सुधार की पद्धति के द्वारा उन विशिष्ट कारकों को छाँट लेता है जो कि अध्ययन किये जाने वाली समस्याओं पर रोशनी डाल सके। धूर्त

कल्पना द्वारा वह तथ्यों की विभिन्न श्रेणियों के बीच कारणात्मक सम्बन्धों को प्रतिस्थापित करता है। वह सूक्षम कल्पना, सामयिक केन्द्रीय महत्वपूर्ण विचार जो कि फलप्रद अनुसंधान का आधार बनता है, एक कार्यवाही प्राक्कल्पना कहलाता है। वास्तव में देखा जाये तो उपकल्पना किसी विषय से सम्बन्धित एक सामान्य अनुमान या विचार है जिसके सन्दर्भ में ही सम्पूर्ण अध्ययन किया जाता है। प्रस्तुत इकाई में ही उपकल्पना के विभिन्न प्रकारों का वर्णन किया गया है जिसमें मैकगुइगन, हेज, श्री एम0 एच0 गोपाल एवं गुडे तथा हॉट द्वारा प्रतिपादित विभिन्न प्रकार की उपकल्पनाओं का उल्लेख किया गया है। इकाई के अंत में उपकल्पना की आवश्यकता जैसे अध्ययन की दिशा का निर्धारण, अध्ययन क्षेत्र को सीमित करने में सहायक, उपयोगी तथ्यों के संकलन में सहायक, तर्कसंगत निष्कर्षों में सहायक तथा सिद्धान्तों के निर्माण में योगदान पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। उपयोगी कल्पना के निर्माण में कठिनाईयों के बारे में बताया गया है जिसमें सैद्धान्तिक ढांचे से सम्बन्धित कठिनाईयाँ एवं अध्ययन प्रविधियों से सम्बन्धित कठिनाईयों का उल्लेख किया गया है। अन्ततः उपकल्पना की सीमाओं के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की सीमाओं का उल्लेख किया गया है जिसको ध्यान में रखते हुए एक उचित उपकल्पना का निर्माण किया जा सकता है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोगों को उपकल्पना या परिकल्पना के अर्थ उसकी आवश्यकता एवं प्रकारों के बारे में ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

8.6 पारिभाषिक शब्दावली

उपकल्पना– उपकल्पना एक प्रारम्भिक सामान्यीकरण है जिसकी सत्यता की जांच अभी बाकी है। अपने बिल्कुल प्रारम्भिक स्तरों पर उपकल्पना एक अनुमान, कल्पनात्मक विचार अथवा पूर्वानुमान आदि कुछ भी हो सकती है जो बाद में किसी भी क्रिया अथवा अनुसंधान का आधार बन जाती है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– उपकल्पना के अर्थ और परिभाषा के बारे में लिखिए।

2– उपकल्पना की आवश्यकता के बारे में प्रकाश डालिए।

3– गुडे तथा हॉट द्वारा उल्लिखित उपकल्पना के प्रकारों का वर्णन

कीजिए।

4— एम0 एच0 गोपाल द्वारा वर्णित उपकल्पना का वर्णन कीजिए।

5— उपकल्पना की आवश्यकता पर टिप्पणी कीजिए।

6— उपकल्पना की सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

विस्तृत

1— उपकल्पना के प्रकारों के बारे में लिखिए।

2— उपकल्पना की परिभाषा देते हुए विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

3— उपकल्पना का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसकी आवश्यकता का रेखांकन कीजिए।

4— उपकल्पना के प्रकारों एवं सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

8.7 संदर्भ—ग्रन्थ सूची

1— मुखर्जी, आर0 एन0, ''सामाजिक शोध व सांख्यिकी'', विवेक प्रकाशन, दिल्ली, वर्ष—2000, पेज — 142—145

2— गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, ''प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान (शोध)'', आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष—2005, पेज—78—80, 82, 83, 85, 86—91

3— सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0 डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष—1998, पेज — 158—165

4— लुण्डबर्ग, जार्ज, ए0, ''सोशल रिसर्च, लागमैन्स एण्ड कम्पनी'', न्यूयार्क, वर्ष—1942, पेज—9

5— बोगार्डस, ई0 एस0, ''सोशियोलाजी'', पेज—551

6— गुडे एण्ड हॉट, ''मैथड्स इन सोशल रिसर्च'', पेज—56

7— यंग, पी0 वी0, ''साइंटिफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च'', वर्ष—1956, पेज—96

खण्ड–द्वितीय
समाज कार्य अनुसंधान की प्रक्रिया

इकाई : 9 उपकल्पना के स्त्रोत

9.0 इकाई का उद्देश्य

9.1 परिचय

9.2 उपकल्पना के स्त्रोत

9.3 सार–संक्षेप

9.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

9.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

9.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में उपकल्पना के स्रोतों के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें उपकल्पना के विभिन्न स्रोतों पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य आप लोगों को उपकल्पना के स्रोतों से अवगत कराना है जिससे अनुसंधान करते समय आप लोग उन स्रोतों का उपयोग कर सकते हैं। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे –

1– उपकल्पना के सामान्य संस्कृति स्रोत के बारे में जान सकेंगे।

2– वैज्ञानिक सिद्धान्तों के स्रोतों के बारे में जान सकेंगे।

3– समरूपताएँ स्रोतों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– वैयक्तिक अनुभव के आधार पर उपकल्पनाओं का निर्माण कर सकेंगे।

5– सूझ के आधार पर उपकल्पनाओं का निर्माण कैसे किया जाता है, के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

6– उपकल्पना निर्माण में रचनात्मक दृष्टिकोण का क्या योगदान होता है, के बारे में वृहद् ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

7— गुडे तथा हॉट द्वारा प्रतिपादित उपकल्पना के स्रोतों पर वृहद् ज्ञान अर्जित कर सकेंगे।

9.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में उपकल्पना के विभिन्न स्रोतों का वर्णन किया गया है। वास्तव में उपकल्पना के कई स्रोत होते हैं जिनका वर्णन इस इकाई में प्रस्तुत किया जा रहा है। एक अनुसंधानकर्ता को प्राक्कल्पना कहाँ से प्राप्त होती है, यह भी जान लेना हमारे लिए आवश्यक होगा। प्राक्कल्पना का स्त्रोत अनुसंधानकर्ता की अपनी अन्तर्दृष्टि, कोरी कल्पना, विचार या अनुभव हो सकता है। इस दृष्टिकोण से उपकल्पना का स्त्रोत अनुसंधानकर्ता स्वयं ही हो सकता है। स्वयं अनुसंधानकर्ता के अतिरिक्त इसका बाहरी स्त्रोत भी हो सकता है। श्री लुण्डबर्ग ने लिखा है कि एक फलप्रद प्राक्कल्पना की खोज में हम कविता, साहित्य, दर्शन, समाजशास्त्र के विस्तृत वर्णनात्मक साहित्य, मानव–जातिशास्त्र कलाकारों के काल्पनिक सिद्धान्तों या उन गम्भीर विचारकों के सिद्धान्तों की सम्पूर्ण दुनिया में विचरण कर सकते हैं, जिन्होंने कि मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों के गहन अध्ययन–कार्य में अपने को नियोजित किया है।'

9.2 उपकल्पना के स्त्रोत

उपकल्पना के स्त्रोत वैयक्तिक भी हो सकते हैं तथा बाह्य भी। वैयक्तिक आधार पर उपकल्पना का सबसे बड़ा स्त्रोत स्वयं–अनुसंधानकर्ता की प्रतिभा और सूझ–बूझ है। एक अनुसंधानकर्ता अक्सर अपनी दूरदर्शिता, विचारों की मौलिकता तथा अनुभवों के आधार पर उपयोगी उपकल्पना का निर्माण कर सकता है। इतिहास में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जब संसार के अनेक वैज्ञानिकों ने केवल वैयक्तिक अनुभवों के आधार पर इतनी उपयोगी उपकल्पनाओं का निर्माण किया जिनकी सहायता से विश्व विख्यात् वैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन करना संभव हो सका। इसके अतिरिक्त, उपकल्पना का बाह्य स्त्रोत कोई भी सिद्धान्त, विचार, उपन्यास, नाटक अथवा प्रतिवेदन हो सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब कभी भी अनुसंधानकर्ता किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा प्रतिपादित एक सामान्य विचार के आधार पर अपनी उपकल्पना का निर्माण करता है तो उसे उपकल्पना का बाह्य स्त्रोत कहा जाता है।'

समाजशास्त्री **लुण्डबर्ग** के अनुसार, 'एक फलप्रद उपकल्पना की खोज में हम कविता, साहित्य, दर्शन, समाजशास्त्र के विस्तृत वर्णनात्मक साहित्य, मानव–जाति शास्त्र, कलाकारों के काल्पनिक सिद्धान्तों या उन

गंभीर विचारकों के सिद्धान्तों की सम्पूर्ण दुनिया में विचार कर सकते हैं, जिन्होंने मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों के गहन अध्ययन कार्य में अपने को नियोजित किया है।'

समाज वैज्ञानिक एम. एच. गोपाल ने उपकल्पना के प्रोत्साहन एवं निर्माण के प्रमुख स्त्रोत इस प्रकार बताये हैं–

1– सांस्कृतिक पर्यावरण

2– लोक बुद्धि अथवा प्रचलित विश्वास एवं प्रथाएँ।

3– विशेष विज्ञान

4– समरूपता

5– स्वीकृत सिद्धान्तों के अपवाद तथा

6– वैयक्तिक अनुभव एवं व्यक्तिगत प्रतिक्रयाएँ

समाजशास्त्री गुडे तथा हॉट ने उपकल्पना के प्रमुख स्त्रोतों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया है–

1– सामान्य संस्कृति – गुडे तथा हॉट का मत है कि सामान्य संस्कृति, जिसमें एक विज्ञान पनपता है, विज्ञान की अनेक उपकल्पनाओं का एक आधार बन जाती है। दो विपरीत उदाहरण द्वारा इस बात को सरलता से समझाया जा सकता है। अमेरिकन संस्कृति में व्यक्तिगत सुख, गतिशीलता तथा प्रतिस्पर्द्धा पर अत्यधिक बल दिया जाता है और ये सभी, अमेरिकन समाज व उसके सामाजिक सम्बंधों के अभिन्न अंग व उल्लेखनीय विशेषतायें बन गयी हैं। इसके विपरीत, भारतीय संस्कृति में सामाजिक जीवन व सम्बंधों पर परार्थवाद, अध्यात्मिक उन्नति, गाँधीवाद आदर्श, जातिप्रथा, संयुक्त प्रभाव आदि का गहरा प्रभाव देखने को मिलता है। इन्हीं के आधार पर अमेरिका या भारतवर्ष के समाजशास्त्री के मस्तिष्क में कुछ उपकल्पनाओं का आविर्भाव हो सकता है या उनका ध्यान सामाजिक जीवन के कुछ विशिष्ट पक्षों के प्रति आकर्षित हो सकता है जो कि उपकल्पना के निर्माण में सहायक सिद्ध हो सके।

मानव की गतिविधियों को प्रभावित करने में संस्कृति का योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि व्यक्ति के व्यवहार और उसका अन्तर बहुत कुछ अपनी संस्कृति के अनुरूप ही देखा जाता है। ऐसी स्थिति में किसी अनुसंधान कार्य के लिए बनाई जाने वाली उपकल्पनाओं पर भी एक समाज विशेष की संस्कृति का स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, यदि एक ही समस्या को लेकर नगरीय और ग्रामीण समुदाय का कोई अध्ययन किया जाए तो भी इन दोनों समुदायों के लिए उपकल्पनाओं का स्वरूप एक–दूसरे से भिन्न होगा, क्योंकि नगरीय और ग्रामीण संस्कृति एक–दूसरे से अत्यधिक भिन्न होती है। इसी सन्दर्भ में **गुडे तथा हॉट** ने लिखा है, 'अधिकांश सांस्कृतिक मूल्य न केवल

अनुसंधान के प्रति रूचि को बढ़ाने में सहायक होते हैं, बल्कि लोक–प्रथा उपकल्पनाओं के निर्माण में एक स्त्रोत के रूप में भी सहायक होती हैं।'

2– **वैज्ञानिक सिद्धान्त –** सामाजिक वैज्ञानिक गुडे तथा हॉट के अनुसार उपकल्पनाओं का जन्म स्वयं विज्ञान में होता है। प्रत्येक विज्ञान में विभिन्न विषयों से सम्बंध अनेक सिद्धान्त होते हैं। इन सिद्धान्तों से एक विषय के विभिन्न पहलुओं के सम्बंध में हमें जानकारी प्राप्त होती है। यह जानकारी हमारे वर्तमान शोध कार्य का आधार बन सकती है। यद्यपि यह हो सकता है कि वास्तविक अनुसंधान से आगे चलकर हमें यह पता चले कि उस विषय के सम्बंध में अब तक हम जो भी कुछ जानते थे, वह गलत था, फिर भी सामयिक रूप में सिद्धान्त एक विषय के सम्बंध में जो कुछ बताता है वह बताकर शोध कार्य को दिशा प्रदान करता है। जैसे, जातिप्रथा के व्यावसायिक सिद्धान्त से यह उपकल्पना बनायी जा सकी कि 'पेशा और केवल पेशा ही भारतीय जातिप्रथा की उत्पत्ति का कारण था।' यह उपकल्पना जातिप्रथा की उत्पत्ति व पेशे में पाये जाने वाले सम्बंध के विषय में हुए अनेक महत्वपूर्ण अध्ययनों का आधार बनी तथापि उन अध्ययनों से यही प्रमाणित हुआ है यदि पेशों की ऊँचाई–नीचाई ही जाति व्यवस्था में पाये जाने वाले ऊँच–नीच के संस्करण का आधार होती तो जाति प्रथा उन सभी समाजों में देखने को मिलती, जहाँ भी पेशों के आधार पर सामाजिक स्तरीकरण पाया जाता है। समय–समय पर प्रस्तुत किये जाने वाले वैज्ञानिक सिद्धान्त भी उपकल्पनाओं के निर्माण का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। वास्तव में, एक अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधान द्वारा नये सिद्धान्तों का निर्माण ही नहीं करता बल्कि नई परिस्थितियों में पहले से स्थापित सिद्धान्तों का परीक्षण भी करता है। इस दृष्टिकोण से जब कभी भी किसी कार्यकारी उपकल्पना का निर्माण किया जाता है तो पूर्व–सिद्धान्तों के निष्कर्षों का भी उसमें कुछ न कुछ सीमा तक समावेश होता है। विभिन्न विषयों से सम्बन्धित सिद्धान्त ही अनुसंधानकर्ता को वह ज्ञान प्रदान करते हैं जिनकी सहायता से वह यह विशेष उपकल्पना का निर्माण कर पाता है। अधिकांश नई उपकल्पनाएँ किसी न किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त के आधार पर ही बनायी जाती हैं।

3– **समरूपताएँ –** जब कभी दो दशाओं के बीच कुछ समानताएँ दिखायी देती हैं तो अक्सर उनके आधार पर कुछ नई उपकल्पनाओं का निर्माण हो जाता है। उदाहरण के लिए, पेड़–पौधों पर एक विशेष परिस्थिति के प्रभाव को देखकर सरलतापूर्वक यह उपकल्पना बनायी जा सकती है कि मनुष्य के व्यवहार, चिन्तन तथा व्यक्तित्व का विकास उसके चारों ओर की सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होती हैं।

4– **व्यक्तिगत अनुभव–** अनुसंधानकर्ता का व्यक्तिगत अनुभव ही उपकल्पनाओं का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। श्री लोम्ब्रोसो की 'जन्मजात्

अपराधी प्रारूप' की उपकल्पना सैनिक शिविर के सर्जन के रूप में श्री लोम्ब्रोसो के अपने अनुभवों की ही उपज थी। उसी प्रकार सन् 1901 में होने वाले जनगणना के अधीक्षक के रूप में सर हर्वर्ट रिजले ने जिस विशेष ढंग से भारतीय जनता को देखा और उसके बारे में अनुभव को प्राप्त किया, वह उनके द्वारा प्रस्तुत प्रजातीय सिद्धान्तों की आधारशिला बनी। जब कभी भी कोई व्यक्ति कुछ परिस्थितियों में घटनाओं का एक विशेष रूप में घटित होते हुए देखता है तो उसके मन में कार्य–कलाप सम्बन्ध की एक विशेष धारणा बन जाती है, यही धारणा उपकल्पना निर्माण का महत्वपूर्ण स्त्रोत बनती हैं।

5– सूझ – कभी–कभी सामाजिक अनुसंधानकर्ता अपनी सूझ–बूझ के आधार पर भी उपकल्पना का निर्माण करता है क्योंकि सामाजिक अनुसंधानकर्ता जानता है कि वर्तमान समस्या का स्वरूप एवं दिशा क्या है? अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिगत समझ भी नई उपकल्पना को जन्म देने में सहायक होती है। व्यक्तियों की समझ में भिन्नता होना नितान्त स्वाभाविक है। जिस व्यक्ति में अच्छी समझ होगी, वह उपयोगी उपकल्पना का निर्माण कर सकेगा।

6– रचनात्मक दृष्टिकोण – रचनात्मक विचार और दृष्टिकोण भी उपकल्पना के निर्माण में सहायक होते हैं, रचनात्मक दृष्टिकोण के चार पद बताये गये हैं–

1– तैयारी

2– विकास

3– प्रेरणा

4– परीक्षण

पहले मस्तिष्क में विचारों का जन्म होता है, विचार विकसित होते हैं, उन पर कार्य करने की प्रेरणा मिलती है तो उपकल्पना का जन्म होता है।

7– प्राप्त उपकल्पनाओं की व्याख्याएँ – कभी–कभी कुछ ऐसी उपकल्पनाएँ होती हैं जो पूर्व में लोगों द्वारा निर्माण की हुई होती हैं, उनका उपयोग कर सामाजिक अनुसंधानकर्ता व्याख्या प्रस्तुत करता है जिसके आधार पर वह नये उपकल्पनाओं का निर्माण करने में सहायता लेता है। हमारे जीवन में सामाजिक घटनाओं से सम्बन्धित अनेक उपकल्पनायें विद्यमान रहती हैं। इन सभी की सत्यता की जाँच की जा सकती है ।

8– उस क्षेत्र में हुए अनुसंधान – जिस क्षेत्र में अनुसंधान कार्य किया जाता है यदि उसी क्षेत्र में पूर्व में यदि कोई अनुसंधान कार्य हुआ है तो उसमें निर्मित उपकल्पनाओं को ध्यान में रखते हुए वर्तमान में होने वाले अनुसंधानों में उपकल्पनाओं का निर्माण किया जा सकता है। उस

विशिष्ट क्षेत्र में जो कार्य हो चुके हैं, उनका अवलोकन करके भविष्य के कार्य करने के लिए उपकल्पना का निर्माण किया जा सकता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. उपकल्पना के स्त्रोतों के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. उपकल्पना के किन्हीं चार स्त्रोतों का वर्णन कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....

....

9.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में उपकल्पना के स्त्रोतों के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें समाज वैज्ञानिक एम0 एच0 गोपाल द्वारा उल्लिखित स्त्रोत जैसे, सांस्कृतिक पर्यावरण, लोकबुद्धि, विशेष विज्ञान, समरूपता, स्वीकृति सिद्धान्तों के अपवाद तथा वैयक्तिक अनुभव एवं व्यक्तिगत प्रतिक्रियाएँ जैसे स्त्रोतों पर प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में समाजशास्त्री गुडे तथा हॉट द्वारा वर्णित उपकल्पना के विभिन्न स्त्रोतों जैसे सामान्य संस्कृति, वैज्ञानिक सिद्धान्त, समरूपताएँ, व्यक्तिगत अनुभव, सूझ, रचनात्मक दृष्टिकोण, प्राप्त उपकल्पनाओं की व्याख्याएँ एवं उस क्षेत्र में हुए अनुसंधान स्त्रोतों का वर्णन किया गया है। सामान्य संस्कृति स्त्रोतों में बताया गया है कि सामान्य की संस्कृतियों के आधार पर भी उपकल्पनाओं का निर्माण किया जा सकता है। वैज्ञानिक सिद्धान्त भी उपकल्पनाओं के निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करते हैं।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग उपकल्पना के विभिन्न स्त्रोतों के बारे में वृहद् ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे तथा अनुसंधान में उपकल्पना निर्माण के लिए इस ज्ञान का प्रयोग कर सकेंगे।

9.4 पारिभाषिक शब्दावली

उपकल्पना की सामान्य संस्कृति स्त्रोत – इसके अन्तर्गत समाज की सामान्य संस्कृति आती है जिसमें किसी अनुसंधान कार्य के लिए बनायी जाने वाली उपकल्पनाओं पर भी एक समाज विशेष की संस्कृति का स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– उपकल्पना के सामान्य संस्कृति स्त्रोत पर प्रकाश डालिए।

2– उपकल्पना के वैज्ञानिक सिद्धान्त स्त्रोत के बारे में लिखिए।

3– उपकल्पना के व्यक्तिगत अनुभव स्त्रोत पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

4– समरूपता स्त्रोत का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

विस्तृत

1– उपकल्पना के स्त्रोतों पर एक निबन्ध लिखिए।

9.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– मुखर्जी, आर0 एन0, ''सामाजिक शोध व सांख्यिकी'', विवेक प्रकाशन, दिल्ली, वर्ष–2000, पेज – 144–145

2– सिंह, डॉ0 सुरेन्द्र एवं मिश्र, डॉ0 पी0 डी0, ''समाज कार्य इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियां'', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष–1998, पेज – 222–225

3– गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, ''प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान (शोध)'', आर.बी. एस. ए.

खण्ड–द्वितीय
समाज कार्य अनुसंधान की प्रक्रिया

इकाई : 10 समग्र निदर्शन

10.0 इकाई का उद्देश्य

10.1 परिचय

10.2 निदर्शन से सम्बन्धित कुछ प्रमुख अवधारणायें

10.3 समग्र निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा

10.4 समग्र निदर्शन की विशेषतायें।

10.5 सार–संक्षेप

10.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

10.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

10.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य समग्र निर्दशन के बारे में आप लोगों को जानकारी प्रदान करना है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे –

1– इकाई के बारे में जान सकेंगे।

2– समग्र के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

3– प्रतिदर्शन इकाई के बारे में ज्ञान अर्जित कर सकेंगे।

4– प्रतिदर्शन ढाँचा पर प्रकाश डाल सकेंगे।

5– प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श पर लिख सकेंगे।

6– समग्र निदर्शन के अर्थ के बारे में जान सकेंगे।

7– समग्र निदर्शन की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

10.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में समग्र निदर्शन के बारे में प्रकाश डाला गया है। वास्तव में कुछ को देखकर या परीक्षण कर सब के बारे

में अनुमान लगा लेने की विधि को निदर्शन कहते हैं। इस प्रविधि की आधारभूत मान्यता यह है कि इन ''कुछ'' की विशेषताएँ ''सब'' की आधारभूत विशेषताओं का उचित प्रतिनिधित्व करती हैं यदि ''कुछ'' का चुनाव ठीक से किया जाए तो ''सब को देखना या सबकी परीक्षा करना असुविधाजनक, धन–सापेक्ष और समय–सापेक्ष हो सकता है। इसलिए इसका व्यर्थ अपव्यय अनुचित है। इसीलिए सबका प्रतिनिधित्व करने वाले कुछ का अध्ययन ही श्रेष्ठ है। निदर्शन–प्रविधि का प्रयोग अत्यन्त लोकप्रिय है और वह इस अर्थ में कि रोज के जीवन में एक अनाड़ी आदमी भी इसका डटकर प्रयोग करता है। बाजार से गेहूँ, चावल या दाल खरीदते समय उनकी बोरियों को खुलवाकर उनका एक–एक दाना कोई नहीं परखता बल्कि बोरी या ढेर में से मुट्ठी–भर दाने निकालकर उनकी जाँच कर लेते हैं और फिर उसे मुट्ठी–भर दाने का जो मूल्यांकन होता है वही सम्पूर्ण गेहूँ, चावल या दाल की बोरी अथवा ढेर के लिए होता है। पर इस एक मुट्ठी–भर दाने को लेने में हम सावधानी बरतते हैं, ढेर या बोरी के ऊपर से हिलोरकर मुट्ठी नहीं भरते बल्कि बोरी या ढेर के भीतर हाथ डालकर मुट्ठी भर लेते हैं, ताकि दुकानदार द्वारा ऊपर ही ऊपर सजाया हुआ माल ही केवल हमारे हाथ न लगे, क्योंकि वह माल सम्पूर्ण ढेर या बोरे में रखे हुए माल का उचित प्रतिनिधित्व नहीं करेगा। अतः सावधानी की आवश्यकता है और इस कार्य में हम जितना सफल होंगे उतना ही माल खरीदने में हमें कम धोखा होगा। हलवाई अपनी मिठाई का सैम्पल चखाकर हमें मिठाइयों की उत्कृष्टता के सम्बन्ध में विश्वास दिलाता है, चाय का दुकानदार चाय की कुछ पत्ती सैम्पल के रूप में देकर उससे घर पर चाय बनाकर पीने का अनुरोध करता है, रेलगाड़ी के डिब्बो में कितने ही हॉकर (hawker) ''माल खरीदिए या न खरीदिए, नमूना मुफ्त लीजिए'' का नारा लगाते हैं, घर की गृहिणी खीर पकाकर उसमें मीठा ठीक है या नहीं इसके सम्बन्ध में निश्चिन्त होने के लिए सम्पूर्ण खीर में से एक–आधा चम्मच निकालकर अपने प्रियतम को चखने का अनुरोध करती है। यही व्यावहारिक जीवन की निदर्शन–प्रविधि है जिसका कि प्रयोग परिशुद्ध रूप में वैज्ञानिक शोध या अनुसन्धान रूप में किया जाता है। यह इकाई उसी के विषय में है।

10.2 निदर्शन से सम्बन्धित कुछ प्रमुख अवधारणाएं

1. **इकाई**–एक प्रारम्भिक इकाई अथवा केवल एक इकाई एक ऐसा तत्व अथवा तत्वों का समूह है जिस पर पर्यवेक्षण किए जा सकते हैं अथवा एक सुपरिभाषित सांख्यिकीय कार्यरीति के

अनुसार अपेक्षित सांख्यिकीय सूचना प्राप्त की जा सकती है। इकाईयों के उदाहरण, व्यक्ति, परिवार, समूह, संस्था, फर्म कारखाने इत्यादि हैं। एक सूचना प्रदान करने वाली इकाई वह इकाई है जो वास्तव में आवश्यक सांख्यिकीय सूचना प्रदान करती है अथवा जिससे सूचना सरलतापूर्वक प्राप्त की जा सकती है। सूचना प्रदान करने वाली यह इकाई एक अकेली प्रारम्भिक इकाई अथवा अनेक प्रारम्भिक इकाइयों का समूह हो सकती है। उदाहरण के लिए, परिवार का मुखिया। एक विश्लेषण की इकाई वह इकाई है जिसका प्रयोग सारिणीकरण के स्तर पर किया जाता है। यह ध्यान रहे कि सूचना प्रदान करने वाली इकाई तथा विश्लेषण की इकाई भिन्न–भिन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए, सूचना प्रदान करने वाली इकाई के रूप में परिवार का मुखिया हो सकता है तथा विश्लेषण की इकाई के रूप में परिवार अथवा परिवार का कोई व्यक्ति हो सकता है।

2. **समग्र**–समग्र शब्द का अर्थ व्यक्तियों, घटनाओं अथवा वस्तुओं के सुपरिभाषित वर्ग के सभी सदस्यों से है। काल के एक विशिष्ट बिन्दु अथवा अवधि पर एक दिए हुए क्षेत्र में एक विशिष्ट प्रकार की सभी इकाइयों के संग्रह को समग्र कहा जाता है। समग्र शब्द का प्रयोग समय के विभिन्न बिन्दुओं पर एक विशिष्ट क्षेत्र में एक इकाई अथवा इकाईयों के समूह से सम्बन्धित पर्यवेक्षणों के संग्रह के लिए भी किया जा सकता है। समग्र सम्मिलित इकाइयों की सीमित अथवा असीमित प्रकृति के अनुसार सीमित अथवा असीमित हो सकता है ऐसा समग्र जिसके अन्तर्गत सरलतापूर्वक पहचानी जाने योग्य तथा प्राकृतिक रूप से निर्मित प्रारम्भिक इकाइयां नहीं पायी जाती, सतत समग्र कहा जाता है। इस प्रकार के समग्राहें को अध्ययन योग्य बनाने हेतु उपयुक्त प्रारम्भिक इकाइयों के रूप में विभाजित किया जाता है।

एक समग्र के उन अंशों अथवा भागों को अध्ययन के प्रान्तों अथवा उप–समग्रों के नाम से सम्बोधित किया जाता है जिनमें से प्रत्येक के लिए एक विशिष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अलग–अलग सांख्यिकीय सूचना प्राप्त करना आवश्यक होता है। अध्ययन के प्रान्तों अथवा उप–समग्रों को टार्गेट समग्र के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है ।

3. **प्रतिदर्शन इकाई** –ऐसी प्रारम्भिक इकाइयों अथवा इन इकाइयों के समूह जो स्पष्ट रूप से पारिभाषित, पहचाने जाने योग्य एवं पर्यवेक्षणीय होने के अतिरिक्त प्रतिदर्शन की दृष्टि से सुविधाजनक होती हैं, प्रतिदर्शन इकाइयां कहलाती हैं। उदाहरणार्थ, एक पारिवारिक बजट के अध्ययन में प्रायः परिवार

की अत्यधिक सुविधापूर्ण मानते हुए प्रतिदर्शन इकाई के रूप में स्वीकार किया जाता है।

4. प्रतिदर्शन ढांचा – आकंड़ों के संग्रह के दौरान किये जाने वाले समग्र की सभी प्रतिदर्शन इकाइयों का एक ऐसा ढांचा आवश्यक होता है जो उनकी समुचित परिचयात्मक विशेषताओं को प्रदान कर सके और इस प्रकार के ढ़ांचे को प्रतिदर्शन ढांचा कहा जाता है।

प्रदिदर्शन ढांचों को दो प्रमुख समूहों में विभाजित किया जा सकता हैः 1– प्रतिदर्शन इकाइयों की सूची; तथा 2– क्षेत्रीय इकाइयों की सीमाओं को प्रदर्शित करने वाले मानचित्र। सूची ढांचे के अन्तर्गत इकाइयों के पहचाने जाने के लिये उपयुक्त सूचना सहित प्रतिदर्शन इकाइयों की एक सूची पायी जाती है। प्रायः इस ढ़ांचे के अन्तर्गत प्रतिदर्शन इकाइयों से सम्बन्धित अतिरिक्त सूचना भी पायी जाती है। क्षेत्रीय अथवा मानचित्रीय ढ़ांचे के अन्तर्गत प्रतिदर्शन इकाइयों अथवा इनके समूहों की जो प्रायः क्षेत्रीय इकाइयों के रूप में पायी जाती हैं, भौगोलिक सीमायें प्रदर्शित की गयी होती हैं, जिन्हें स्पष्ट रूप से पहचाना जा सकता है।

5– प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श– कोई भी प्रतिदर्श उस सीमा तक प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है जिस तक यह समग्र से सम्बन्धित अध्ययन की जाने वाली विशेषताओं का परावर्तन करता है। कोई भी प्रतिदर्श प्रतिनिधित्वपूर्ण है अथवा नहीं, इस बात की जाँच करना अत्यधिक कठिन है। प्रायः एक प्रतिदर्श का चुनाव सूक्ष्मता के साथ किया जाता है, क्योंकि हम इस प्रतिदर्श के आधार पर सम्पूर्ण समग्र की समष्टियों के विषय में अनुमान लगाते हैं। अनुसंधानकर्ता प्रायः प्रतिनिधित्वपूर्ण की सीमा का प्रत्यक्ष रूप से अनुमान लगाने के बजाय प्रतिदर्शन कार्यरीति को ही एक विशेष ढंग से नियोजित करने का प्रयास करते हैं और यादृच्छिक कार्यरीतियों को प्रायः सर्वोत्तम समझा जाता है। परिणामस्वरूप, अंतिम विश्लेषण के दौरान इस बात को प्रमाणित करने का प्रयास नहीं किया जाता है कि प्रतिदर्श प्रतिनिधित्वपूर्ण है अथवा नहीं, बल्कि इसे प्रतिनिधित्वपूर्ण मान लिया जाता है। ऐसा सम्भव है कि प्रतिदर्श की प्रतिनिधित्वपूर्णता सूक्ष्मता की उस सीमा पर निर्भर करे जिसके साथ समग्र का ब्यौरा दिया जाए। इसके अतिरिक्त प्रतिनिधित्वपूर्णता प्रतिदर्श की उपयुक्तता तथा समग्र के अन्तर्गत पाई जाने वाली विषमता पर भी निर्भर करती है। प्रतिदर्श की प्रतिनिधित्वपूर्णता में हमारा विश्वास उस समय बढ़ जाता है जबकि समग्र सुपरिभाषित होता है। प्रतिदर्श की उपयुक्तता से हमारा अभिप्राय प्रतिदर्श के आकार के इतने बड़े

होने से है कि अनुसंधानकर्ता इसके आधार पर निकाले गये परिणामों में सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग करते हुए अपने विश्वास की सीमा को व्यक्त कर सके। विषमता से हमारा अभिप्राय समग्र की इकाइयों में अध्ययन किये जाने वाले चर के संदर्भ में पाई जाने वाली अत्यधिक भिन्नता से है।

सारांश में, एक प्रतिदर्श गणना किये गये सभी प्रतिदर्शनों में प्रतिनिधित्वपूर्ण उस समय होता है जबकि ये प्रतिदर्शन तदनुरूपी समग्र समष्टियों के साथ तादात्मय की स्थिति में हों।

10.3 समग्र निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा

सामान्य रूप से यह समझा जाता है कि निदर्शन का तात्पर्य समस्त इकाइयों में से कुछ इकाइयों का चयन करना है। ऐसी धारणा बहुत सामान्यीकृत और अपूर्ण है। वास्तव में, निदर्शन एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा हम समस्त इकाइयों में से कुछ इकाइयों का चयन अनेक स्वीकृत कार्य विधियों की सहायता से इस प्रकार करते हैं जिससे चुनी गई इकाईयों में सम्पूर्ण समग्र को कितने भागों में विभाजित, करेंगे, प्रत्येक भाग में कितनी इकाइयों का चयन करेंगे तथा चयन का यह कार्य किस प्रणाली के द्वारा किया जाएगा, यह सब कुछ अध्ययनकर्ता की इच्छा पर आधारित नहीं होता बल्कि प्रत्येक स्तर पर किये जाने वाले कार्य के सम्बन्ध में कुछ निश्चित और पूर्व निर्धारित नियम होते हैं। इस दृष्टिकोण को लेकर विद्वानों ने निदर्शन को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है।

गुडे तथा हॉट ने निदर्शन की अत्यधिक संक्षिप्त परिभाषा देते हुए कहा है 'निदर्शन किसी विशाल समग्र का एक छोटा प्रतिनिधि है।' इस परिभाषा से स्पष्ट होता है कि निदर्शन का तात्पर्य एक बड़े क्षेत्र में से कुछ इकाइयों का चयन कर लेना ही नहीं होता बल्कि इसका तात्पर्य इकाइयों का इस प्रकार चयन करना होता है जो सम्पूर्ण अध्ययन के क्षेत्र की विशेषताओं का वास्तविक प्रतिनिधित्व करती हो।

बोगार्ड्स के अनुसार, 'निदर्शन किसी पूर्व–निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के समूह में से एक निश्चित प्रतिशत का चयन करना है।'

सिन पाओं येंग के शब्दों में, 'एक सांख्यिकीय निदर्शन सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधि अंश है।' इस परिभाषा में येंग ने निदर्शन को 'सांख्यिकीय निदर्शन' शब्द द्वारा इसलिए स्पष्ट किया है जिससे इसका प्रयोग करते समय प्रत्येक समय यह ध्यान रखा

जा सके कि निदर्शन अनेक सांख्यिकीय कार्य–प्रणालियों पर आधारित हैं।

पी0वी0 यंग का कथन है कि 'सांख्यिकीय निदर्शन उस सम्पूर्ण समूह अथवा योग का एक लघु चित्र अथवा प्रतिनिधि अंश है जिसमें से वह निदर्शन लिया गया है।' इस कथन से भी स्पष्ट होता है कि निदर्शन द्वारा प्राप्त इकाइयां तब तक अपने से सम्बन्धित सम्पूर्ण समूह का वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं करती जब तक इन चुनी गयी इकाइयों को एक सांख्यिकीय निदर्शन के रूप में मान्यता नहीं दी जा सकती है।

निदर्शन की प्रकृति को समझते समय एक प्रमुख जिज्ञासा यह उत्पन्न होती है कि सम्पूर्ण जनसंख्या अथवा समूह में से कुछ इकाइयों का चयन करके ही उन्हें सम्पूर्ण समग्र का प्रतिनिधि किस प्रकार माना जा सकता है? वास्तव में इस समस्या का समाधान निदर्शन से सम्बन्धित आधारभूत मान्यताओं की सहायता से किया जा सकता है। निदर्शन की सर्वप्रमुख मान्यता यह है कि समान विशेषता प्रदर्शित करने वाली इकाइयों में से यदि कुछ इकाई का चयन करके उसका समुचित अध्ययन कर लिया जाए तो ऐसा अध्ययन अपने वर्ग की सभी इकाइयों की विशेषताओं को स्पष्ट करेगा। यही कारण है कि एक व्यावहारिक निदर्शन को प्राप्त करने के लिए केवल सब इकाइयों में से कुछ इकाइयों का ही चयन नहीं करते बल्कि सबसे पहले सम्पूर्ण समान विशेषताओं वाली इकाइयों को रखा जाए। निदर्शन की दूसरी मान्यता यह है समााजिक घटनाओं की परिवर्तनशीलता के कारण सम्पूर्ण समग्र के अध्ययन में इतना समय लग सकता है कि उससे सम्बन्धित निष्कर्ष प्रस्तुत करने के लिए समय तक समग्र की विशेषताएँ बदल चुकी हों। इसका तात्पर्य यह है कि सामाजिक घटनाओं से सम्बन्धित अध्ययन कम समय में ही पूरे किये जाने चाहिए। यह कार्य केवल निदर्शन पद्धति के द्वारा ही संभव है। निदर्शन की तीसरी मान्यता यह है कि सजातीय में से प्रत्येक इकाई दूसरी की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करती है।

लुण्डबर्ग ने लिखा है कि 'यदि तथ्यों में अत्यधिक सजातीयता हो अर्थात् समस्त तथ्यों की विभिन्न इकाइयों में अन्तर बहुत कम हो तो सम्पूर्ण में से एक या कुछ इकाइयाँ समस्त इकाइयों का प्रतिनिधित्व करेंगी।' इन मान्यताओं के आधार पर स्पष्ट होता है कि निदर्शन एक वैज्ञानिक विधि है तथा निदर्शन के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष उतने ही प्रामाणिक और सही हो सकते हैं जितने कि समस्त इकाइयों के अध्ययन पर आधारित निष्कर्ष सही होते हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समग्र निदर्शन का अर्थ लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. समग्र निदर्शन की विशषतायें लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

10.4 समग्र निदर्शन की विशेषतायें

समग्र निदर्शन के सम्बंध में की गयी विवेचना एवं विभिन्न विद्वानों द्वारा निदर्शन पर दिये गये विचारों को सूक्ष्मता से समझने पर प्रतिनिधित्वपूर्ण या श्रेष्ठ निदर्शन की कुछ महत्वपूर्ण विशेषतायें स्पष्ट होती हैं जो अग्रलिखित हैं –

1– समग्र निदर्शन समय का प्रतिनिधित्वपूर्ण हो– प्रतिनिधित्वपूर्ण या श्रेष्ठ निदर्शन को सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं सर्वश्रेष्ठ विशेषता के रूप में कहा जा सकता है कि अनुसंधानकर्ता को ऐसे निदर्शन को अपने अध्ययन की इकाई बनाना चाहिए जो समय का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हो। वास्तव में ऐसे निदर्शन का चयन करने पर ही अध्ययन में सत्यता एवं वास्तविकता आ पाती है और अध्ययन का वैज्ञानिक उद्देश्य प्राप्त हो पाता है और इसके अभाव में किया गया अध्ययन सत्यता एवं वास्तविकता के परे एक दिखावा बनकर संकुचित उद्देश्यों की पूर्ति का माध्यम ही बनकर रह जाता है। अतः अध्ययन समग्र का प्रतिनिधित्व कर सके। इसके लिए अति आवश्यक है कि समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में शामिल किया जाना चाहिए तथा निदर्शन चयन करते समय पूर्ण रूप से ईमानदारी से कार्य करना चाहिए।

2– समग्र निदर्शन का समुचित आकार होना चाहिए – समग्र निदर्शन के लिए आवश्यक है कि चयनित की जाने वाली इकाईयों का समुचित आकार में प्रदर्शन की क्षमता हो अर्थात् समग्र निदर्शन इकाईयों का चयन करते समय न तो सम्पूर्ण इकाईयों का चयन किसी स्थान विशेष से करना चाहिए और न ही मात्र इकाईयों की संख्या को बढ़ाने में ही ध्यान देना चाहिए। बल्कि निदर्शित इकाईयों का चयन इतनी इकाईयों का चयन तथा ऐसी इकाईयों का चयन करना चाहिए जो समग्र का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हो सके।

3– समग्र निदर्शन वैयक्तिक पक्षपात से स्वतन्त्र हो – समग्र निदर्शन का चयन करते समय अनुसंधानकर्ता का मुख्य लक्ष्य वैज्ञानिक अध्ययन करना होना चाहिए तथा इसके लिए पूर्णतः निष्पक्ष रूप में एवं पूर्ण ईमानदारी से व्यक्तिगत इच्छा व पसन्द को दरकिनार करके अर्थात् वैयक्तिक पक्षपात से स्वतन्त्र रहते हुए अध्ययन की इकाइयों का चयन वैज्ञानिक पद्धतियों से करना चाहिए अर्थात् निदर्शन के रूप में प्रत्येक इकाई को चयन होने की पूर्ण स्वतन्त्रता रहनी चाहिए। वास्तविकता यह है कि निदर्शन का चयन जितना अधिक वैयक्तिक पक्षपात से स्वतन्त्र होगा अध्ययन में उतनी ही अधिक वैज्ञानिकता आने की सम्भावना रहती है। अतः श्रेष्ठ निदर्शन वही होता है जो वैयक्तिक पक्षपात से पूर्ण स्वतन्त्र हो।

4– श्रेष्ठ निदर्शन : साधनों तथा उद्देश्यों के अनुरूप – श्रेष्ठ एवं प्रतिनिधित्व पूर्ण निदर्शन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह

साधनों एवं उद्देश्यों के अनुरूप होना चाहिए। अनुसंधानकर्ता को निदर्शन चयन करते समय मुख्यतः अध्ययन के मूल उद्देश्यों तथा स्वयं के पास उपलब्ध साधन सुविधाओं को ध्यान रखकर ही निदर्शित इकाइयों का चयन करना चाहिए। उदाहरण के लिए हमारे पास जिले की इकाइयों से ही सम्पर्क करने के साधन–सुविधा नहीं है और हम अध्ययन के लिए संभाग या प्रदेश की इकाइयों का चयन कर लें तो कुछ समय पश्चात् ही अध्ययन की रूचि समाप्त होने लगेगी तथा हमारा पूरा ध्यान अध्ययन से हटकर साधन–सुविधाएँ प्राप्त करने में लग जाएगा और अन्ततः अध्ययन में पक्षपात की संभावनाएँ बढ़ जाएंगी। इसी प्रकार निदर्शन का चयन करते समय यदि अनुसंधानकर्ता अध्ययन के उद्देश्यों के स्थान पर मात्र इकाइयों को चयन करता है तो भी अध्ययन प्रभावित होता है। उदाहरण के लिए यदि आपका अध्ययन आपराधिक कृत्यों में संलग्न व्यक्तियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना है तो निदर्श के रूप में ऐसे ही व्यक्तियों का चयन करना उद्देश्य होना चाहिए जो आपराधिक कृत्यों में संलग्न हों, न कि ऐसी इकाइयों का भी चयन कर लेना, जिसने परिस्थितिवश अपराध किया हो। ऐसा करने से अध्ययन के लिए चयनित निदर्श व्यर्थ हो जाता है तथा अध्ययन प्रभावित होता है तथा साधनों एवं उद्देश्यों के अनुरूप ही निदर्शन का चयन करना चाहिए।

5– श्रेष्ठ निदर्शन : सामान्य ज्ञान व तर्क पर आधारित – श्रेष्ठ एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन की एक महत्वपूर्ण विशेषता के रूप में यह कहा जा सकता है कि यह सामान्य ज्ञान व तर्क पर आधारित होना चाहिए न कि किसी अन्धे व्यक्ति की तरह नियमों, कायदा, कानूनों का पालन करना चाहिए। बल्कि अपनी बौद्धिक क्षमता एवं सामान्य ज्ञान का पूर्ण उपयोग करते हुए नियमानुसार निदर्शन का चयन अनुसंधानकर्ता को करना चाहिए। वास्तविकता तो यह है कि अनुसंधान से सम्बन्धित विधियाँ चाहे कितनी भी विकसित एवं आधुनिक क्यों न हों, तर्क तथा सामान्य ज्ञान के उपयोग के बिना प्रतिनिधित्व पूर्ण निदर्शन प्राप्त करना असम्भव है। अतः श्रेष्ठ निदर्शन की यह एक विशेषता कही जा सकती है कि निदर्शन को तर्क तथा सामान्य ज्ञान पर आधारित होना चाहिए।

6– श्रेष्ठ निदर्शन : व्यावहारिक अनुभवों पर आधारित – व्यावहारिक अनुभवों का पूर्णरूपेण उपयोग करते हुए अनुसंधानकर्ता को श्रेष्ठ निदर्शन को चयनित करने का प्रयास करना चाहिए। दूसरे शब्दों में अपने व्यावहारिक अनुभवों को श्रेष्ठ निदर्शन के चयन करते समय अनुसंधानकर्ता को उपयोग में लाना चाहिए। जिस प्रकार कोई भी नौसिखिया व्यक्ति से सामान का मात्र नमूना देखकर अच्छे स्तर के समान का चयन कर लेने की आशा नहीं की जा सकती। ठीक इसी प्रकार कोई भी अनुसंधानकर्ता बिना व्यावहारिक अनुभवों के श्रेष्ठ निदर्शन का चुनाव नहीं कर सकता। वास्तविकता यह है कि श्रेष्ठ एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन के लिए मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ–साथ

ज्ञान या अनुभवों का होना भी आवश्यक है। संक्षेप, में श्रेष्ठ निदर्शन व्यावहारिक अनुभवों पर आधारित होना चाहिए।

श्रेष्ठ निदर्शन : महत्व या गुण

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में श्रेष्ठ निदर्शन की अपनी एक विशिष्ट उपयोगिता स्वीकार की जाती रही है। इसका प्रमुख कारण तत्त्व यह है कि श्रेष्ठ निदर्शन एक बहुत बड़ी सीमा तक समय, धन तथा श्रम की बचत करके विशाल अध्ययन क्षेत्र के अध्ययनों में भी सर्वश्रेष्ठ प्रविधि साबित हुआ है। श्रेष्ठ निदर्शन का महत्व बताते हुए रोजण्डर में लिखा है कि ''निदर्शन को यदि सावधानीपूर्वक चयन किया जाए तो यह पर्याप्त सत्ता ही नहीं बल्कि ऐसे परिणाम देता है जो अत्यधिक यथार्थ होते हैं तथा कभी–कभी संगणना की तुलना में भी अधिक परिशुद्ध होते हैं। अतः सावधानीपूर्वक चयन किया गया निदर्शन अधिक श्रेष्ठ होता है। रोजेण्डर के उक्त कथन से ही स्पष्ट है कि श्रेष्ठ निदर्शन न केवल अन्य पद्धतियों की तुलना में सस्ती पद्धति है। वरन, इससे यथार्थ व वैज्ञानिक परिणाम प्राप्त होते हैं। संक्षेप में श्रेष्ठ निदर्शन के महत्व को निम्न बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं –

1– समय, श्रम एवं धन की बचत – निदर्शन की सर्वप्रथम उपयोगिता या महत्व के रूप में कहा जा सकता है कि इस पद्धति के द्वारा समय, श्रम तथा धन की बचत होती है। चूँकि इस प्रविधि के कारण विषय–समस्या से सम्बन्धित सभी इकाइयों में से निदर्शित इकाइयों को चयनित करके उनका अध्ययन किया जा सकता है जिसके कारण समय, श्रम तथा धन की एक बहुत बड़ी सीमा तक बचत होती है।

2– गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन – गहन तथा सूक्ष्म अध्ययन श्रेष्ठ निदर्शन का एक महत्वपूर्ण अंग है। इस पद्धति का प्रयोग करके अध्ययनकर्ता चूँकि इस सत्य की वास्तविकता से अवगत रहता है कि उसे समग्र में से कुछ इकाइयों का ही अध्ययन करना है। अतः कुछ इकाइयों को वह गहन एवं सूक्ष्म रूप में अध्ययन करके तथा प्राप्त सूचनाओं की यथार्थता की जाँच करके अध्ययन को अधिक से अधिक वैज्ञानिकता प्राप्त करने का प्रयास करता है, जो संगणना विधि में संभव नहीं होता है।

3– निष्कर्षों में यथार्थता – निदर्शन पद्धति की एक महत्वपूर्ण उपयोगिता के रूप में कहा जा सकता है कि इसके निष्कर्षों में यथार्थता पाई जाने की संभावना अधिक रहती है। इसका प्रमुख कारण यह है कि इस प्रविधि के प्रयोग के कारण अध्ययनकर्ता का मनोमस्तिष्क पूर्ण रू॰ से चयनित की गई इकाइयों पर ही केन्द्रित रहता है और वह इनका गहनता एवं सूक्ष्मता से जाँच–परख करके, अर्थात् तथ्यों को संकलित करके जो निष्कर्ष देता है, वह यथार्थता के समीप रहता है या यथार्थता

लिए होता है। अतः निदर्शन पद्धति निष्कर्षों में यथार्थता प्रदान करने में सहयोगी होती है।

4– तथ्यों की पुनर्परीक्षा – तथ्यों की पुनर्परीक्षा गुण है चूँकि अध्ययनकर्ता निदर्शन पद्धति का उपयोग करके समग्र मे से कुछ इकाइयों को अध्ययन हेतु चुनाव करता है। इस कारण इन इकाइयों से प्राप्त विषय–समस्या के तथ्यों या सूचनाओं की यथार्थता को जाँच करने या उनकी सत्यता को ज्ञात करने का उसे पर्याप्त समय मिल जाता है, जो कि संगणना पद्धति में नहीं मिल पाता।

5– प्रशासनिक सुविधा – निदर्शन पद्धति के माध्यम से होने वाला अध्ययन प्रशासनिक योजनाओं के क्रियान्वयन एवं उनकी जाँच में भी सहयोगी होता है। इस पद्धति के कारण समस्त में से कुछ इकाइयों का अध्ययन करने हेतु कम फील्ड वर्कर के लिए नियुक्त करना पड़ता है तथा सीमित समय एवं सीमित धन का व्यय करके जानकारियाँ संग्रहीत कर लेते हैं। इसके साथ–साथ इन पर नियन्त्रण रखने में भी अधिक कठिनाई नहीं होती है। शीघ्र तथ्यों को एकत्रित करके तथा शीघ्र निष्कर्ष प्राप्त करके प्रशासन योजनाओं को उचित रूप में क्रियान्वित करने में सक्षम होता है। अतः प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से भी निदर्शन का महत्व स्वीकारा जा सकता है।

6– निदर्शन की अनिवार्यता – सामाजिक अनुसंधान के अनेक विषय एवं क्षेत्र इस प्रकृति के होते हैं जिनके अध्ययन के लिए निदर्शन पद्धति का उपयोग ऐच्छिक न होकर अनिवार्य हो जाता है। उदाहरणार्थ भौगोलिक दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र विशालता लिये हो तथा अध्ययन की इकाइयों की संख्या भी अत्यधिक हो व सभी इकाइयों से प्राथमिक सम्पर्क स्थापित करना भी कठिन हो, ऐसी परिस्थिति में निदर्शन पद्धति की अनिवार्यता स्वतः सिद्ध होती है।

7– लोच का गुण – निदर्शन प्रविधि की प्रकृति कठोर न होकर लोचयुक्त होती है, जिसका प्रत्यक्ष लाभ अनुसंधानकर्ता को प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए यदि चयनित की गई कुछ इकाइयाँ अध्ययन की दृष्टि से अव्यावहारिक होती हैं तो उनके स्थान पर दूसरी इकाइयों का चयन अध्ययनकर्ता द्वारा किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि चयन की गई इकाइयाँ किन्हीं भी कारण से अप्राप्त रहती हैं या कम हो जाती हैं तो अध्ययन की आवश्यकता के अनुसार निदर्शन को कम या अधिक किया जा सकता है। इस प्रकार लोच के गुण को निदर्शन का एक गुण माना जाता है।

निदर्शन के दोष

सामाजिक अध्ययनों के लिए निदर्शन का उपयोग एक औषधि के समान है जिसके लाभ इसके अत्यधिक सावधानीपूर्वक उपयोग के द्वारा ही प्राप्त किये जा सकते हैं। जिस प्रकार औषधि का दोषपूर्ण उपयोग

कभी–कभी अत्यधिक घातक सिद्ध होता है उसी प्रकार निदर्शन के उपयोग में की जाने वाली असावधानी सम्पूर्ण अध्ययन को दोषपूर्ण बना सकती है। इस दृष्टिकोण से निदर्शन से सम्बन्धित उन दोषों तथा सीमाओं को समझना आवश्यक है जो अक्सर अध्ययन में वैयक्तिक पक्षपात तथा अपूर्णता की समस्या उत्पन्न कर देते हैं।

1– प्रतिनिधि निदर्शन में कठिनाई – निदर्शन के आधार पर केवल तभी यथार्थ निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं, जबकि निदर्शन समय का वास्तविक प्रतिनिधित्व करता हो। इसके विपरीत अध्ययन विषय से सम्बन्धित सामाजिक इकाइयों में इतनी अधिक विविधता होती है कि सभी विशेषताओं वाली इकाइयों का निदर्शन में समावेश हो सकना कभी–कभी बहुत कठिन हो जाता है। ऐसा निदर्शन किसी भी प्रकार विश्वसनीय निष्कर्ष देने में सफल नहीं हो पाता।

2– अभिनति की संभावना – निदर्शन के चुनाव में अध्ययनकर्ता का सदैव तटस्थ होना तथा स्वीकृत नियमों का पालन करना आवश्यक नहीं होता। अध्ययनकर्ता साधारणतया अपनी सुविधा के अनुसार ही निदर्शन में आने वाली इकाइयों का चुनाव कर लेता है। कभी–कभी वह इकाइयों का चयन इस प्रकार करने का प्रयत्न करता है जिससे उसके व्यक्तिगत विचारों अथवा पूर्व–धारणाओं को ही प्रमाणित किया जा सके। ऐसी सभी दशाओं में निदर्शन दोषपूर्ण अध्ययन का स्त्रोत बन जाता है।

3– पर्याप्त ज्ञान का अभाव – एक प्रतिनिधि निदर्शन चुनाव के लिए अध्ययन विषय के गहरे ज्ञान और वैयक्तिक सूझबूझ की आवश्यकता होती है। प्रायः यह देखने को मिलता है कि निदर्शन का चुनाव करने वाले अध्ययनकर्ता में विषय का इतना ज्ञान और अन्तर्दृष्टि नहीं होती कि वह एक प्रतिनिधि निदर्शन प्राप्त कर सकें। इस सम्बन्ध में एक प्रमुख कठिनाई यह है कि व्यावहारिक रूप से निदर्शन का चुनाव अध्ययन के आरम्भिक स्तर पर ही कर लिया जाता है। इस स्तर पर अध्ययनकर्ता स्वयं विषय के अनेक पक्षों से परिचित नहीं होता। बाद में जब उसे निदर्शन की कमियों का अनुभव होता है तब तक वह इसमें कोई परिवर्तन कर सकने में स्वयं को पूर्णतया असहाय पाता है।

4– निदर्शन पर स्थिर रहना कठिन – निदर्शन के आधार पर किये जाने वाले अध्ययन में यह आवश्यक होता है कि सम्पूर्ण अध्ययन केवल निदर्शन से सम्बन्धित इकाइयों तक ही सीमित हो परन्तु व्यवहार में यह एक कठिन कार्य है। इसका कारण यह है कि निदर्शन में अक्सर ऐसे व्यक्तियों का समावेश हो जाता है जिनके स्थानान्तरण, बीमारी, असहयोग अथवा भौगोलिक पृथकता आदि के कारण उनसे सम्पर्क स्थापित करना कठिन हो जाता है। इस स्थिति में अध्ययनकर्ता के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह निदर्शन से सम्बन्धित इकाइयों की संख्या को बनाये रखने के लिए कुछ नये व्यक्तियों का चुनाव कर ले।

निदर्शन के उपयोग से सम्बन्धित नियमों में भी अध्ययनकर्ता को यह सुझाव दिया जाता है कि यदि किन्हीं कारणों से कोई व्यक्ति सम्पर्क के लिए सुलभ न हो सकें तो एक पूरक सूची में से किसी अन्य व्यक्ति का चुनाव कर लिया जाए। वास्तव में ऐसी किसी भी व्यवस्था से वैयक्तिक पक्षपात की संभावना को पूर्णतया दूर कर सकना संभव नहीं हो पाता। यह स्थिति स्वयं निदर्शन विधि की प्रक्रिया से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण दोष को स्पष्ट करती है।

5– निदर्शन सार्वभौमिक विधि नहीं है – जिस प्रकार कुछ विशेष परिस्थितियों में संगणना विधि उपयुक्त नहीं होती है, उसी प्रकार कुछ परिस्थितियाँ ऐसी भी होती हैं कि जिनमें निदर्शन विधि अनुपयुक्त और अपर्याप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए यदि अध्ययन क्षेत्र की जनसंख्या बहुत सीमित हो अथवा एक–दूसरे से बिल्कुल भिन्न अनेक प्रकार की विशेषताओं को प्रदर्शित करती हो, तो एक प्रतिनिधि पूर्ण निदर्शन का चुनाव बहुत कठिन हो जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि सभी प्रकार के अध्ययन–विषयों तथा क्षेत्रों में निदर्शन का उपयोग एक सार्वभौमिक विधि के रूप में नहीं किया जा सकता।

6– निदर्शन सम्बन्धी जटिलताएँ – निदर्शन का चुनाव एक अत्यधिक जटिल प्रक्रिया है। यह निर्धारित करना बहुत कठिन कार्य है कि निदर्शन का आकार क्या हो, निदर्शन के अन्तर्गत किन–किन विशेषताओं वाली इकाइयों का समावेश किया जाए तथा प्रत्येक श्रेणी की इकाइयों का चयन किस आधार पर किया जाये यह पहले से सुनिश्चित कर लेना चाहिए।

10.5 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समग्र निदर्शन से सम्बन्धित तथ्यों के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है जिसमें निदर्शन से सम्बन्धित कुछ प्रमुख अवधारणाओं के बारे में भी बताया गया है। इकाई के बारे में कहा गया है कि एक प्रारम्भिक इकाई अथवा केवल एक इकाई एक ऐसा तत्व या तत्वों का समूह जिस पर पर्यवेक्षण किये जा सकते हैं या एक सुपरिभाषित सांख्यिकीय कार्यरीति के अनुसार अपेक्षित सांख्यिकीय सूचना प्राप्त की जा सकती है। समग्र शब्द का अर्थ व्यक्तियों, घटनाओं या वस्तुओं के सुपरिभाषित वर्ग के सभी सदस्यों से है। समग्र सम्मिलित इकाईयों की सीमित या असीमित प्रकृति के अनुसार सीमित या असीमित हो सकता है। प्रतिदर्शन इकाई ऐसी प्रारम्भिक इकाईयों या इन इकाईयों के समूह जो स्पष्ट रूप से पारिभाषित, पहचाने जाने योग्य एवं पर्यवेक्षणीय होने के अलावा प्रतिदर्शन की दृष्टि से सुविधाजनक होती है, प्रतिदर्शन इकाईयाँ कहलाती है।

प्रस्तुत इकाई में समग्र निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा का भी वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि निदर्शन किसी विशाल समग्र का एक छोटा प्रतिनिधि है। वास्तव में एक सांख्यिकीय निदर्शन सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधि अंश होता है जिसमें अन्य समूह की सभी विशेषतायें विद्यमान होती हैं। समग्र निदर्शन की विशेषताओं का वर्णन करते हुए अग्रलिखित, श्रेष्ठ निदर्शन समय का प्रतिनिधित्वपूर्ण, समुचित आकार, वैयक्तिक पक्षपात से स्वतन्त्र, साधनों तथा उद्देश्यों के अनुरूप, सामान्य ज्ञान व तर्क पर आधारित तथा व्यावहारिक अनुभवों पर आधारित होता है। समग्र निदर्शन के महत्व या गुण के बारे में बताया गया है जिसमें अग्रलिखित बिन्दु सम्मिलित हैं— समय, श्रम एवं धन की बचत, गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन, निष्कर्षों में यथार्थता, तथ्यों की पुनः परीक्षा, प्रशासनिक सुविधा, निदर्शन की अनिवार्यता, एवं लोच का गुण होते हैं। इसी इकाई में निदर्शन के दोषों के बारे में भी चर्चा प्रस्तुत की गई है जिसमें, प्रतिनिधि पूर्ण निदर्शन में कठिनाई, अभिनति की सम्भावना, पर्याप्त ज्ञान का अभाव, निदर्शन पर स्थिर रहना कठिन, निदर्शन सार्वभौमिक विधि नहीं है तथा निदर्शन सम्बन्धित जटिलताएँ सम्मिलित हैं।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आशा है कि आप लोग समग्र निदर्शन के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

10.6 पारिभाषिक शब्दावली

इकाई— एक प्रारम्भिक इकाई अथवा केवल एक इकाई ऐसा तत्व अथवा तत्वों का समूह है जिस पर पर्यवेक्षण किये जा सकते हैं या एक सुपरिभाषित सांख्यिकीय कार्यरीति के अनुसार अपेक्षित सांख्यिकीय सूचना प्राप्त की जा सकती है।

समग्र— समग्र शब्द का अर्थ व्यक्तियों, घटनाओं अथवा वस्तुओं के सुपरिभाषित वर्ग के सभी सदस्यों से है। काल के एक विशिष्ट बिन्दु या अवधि पर एक दिये हुए क्षेत्र में एक विशिष्ट प्रकार की सभी इकाईयों संग्रह को समग्र कहा जाता है।

प्रतिदर्शन इकाई— ऐसी प्रारम्भिक इकाईयों या इन इकाईयों के समूह जो स्पष्ट रूप से परिभाषित, पहचाने जाने योग्य एवं पर्यवेक्षणीय होने के अतिरिक्त प्रतिदर्शन की दृष्टि से सुविधाजनक होती है, प्रतिदर्शन इकाईयाँ कहलाती है।

प्रतिदर्शन ढ़ाँचा— आँकड़ों के संग्रह के दौरान किये जाने वाले समग्र की सभी प्रतिदर्शन इकाईयों का एक ऐसा ढ़ाँचा आवश्यक होता है, जो उनकी समुचित परिचयात्मक विशेषताओं

को प्रदान कर सके और इस प्रकार के ढ़ाँचे को प्रतिदर्शन ढ़ाँचा कहते है।

समग्र निदर्शन– समग्र निदर्शन किसी पूर्वनिर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के समूह में से एक निश्चित प्रतिशत का चयन करना हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1. इकाई को परिभाषित कीजिए।
2. समग्र का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
3. प्रतिदर्शन इकाई के बारे में अपने विचार लिखिए।
4. प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
5. समग्र निदर्शन को परिभाषित कीजिए।

विस्तृत

1. समग्र निदर्शन को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।
2. समग्र निदर्शन का अर्थ लिखते हुए इसके महत्व को स्पष्ट कीजिए।
3. समग्र निदर्शन के गुण एवं दोषों पर एक निबन्ध लिखिए।

10.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– मुखर्जी, आर0 एन0, “सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन”, दिल्ली, वर्ष–2000, पेज– 205

2– गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, “प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान (शोध)”, आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष–2005, पेज–68–70

3– लुण्डबर्ग, जार्ज, ए0, सोशल रिसर्च, लागमैन्स एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, वर्ष–1942, पेज–9

4– सिंह, डॉ० सुरेन्द्र, सामाजिक अनुसंधान भाग–2, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकेडमी, लखनऊ, वर्ष– , पेज–222–225

खण्ड–द्वितीय
समाज कार्य अनुसंधान की प्रक्रिया

इकाई : 11 उपकल्पना : अर्थ एवं आवश्यकता

11.0 इकाई का उद्देश्य

11.1 परिचय

11.2 निदर्शन की विधियाँ

11.21 दैव निदर्शन

11.22 उद्देश्यपूर्ण निदर्शन

11.23 स्तरित निदर्शन

11.24 बहु स्तरीय निदर्शन

11.25 कोटा निदर्शन

11.26 स्वयं चयनित निदर्शन

11.3 सार–संक्षेप

11.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

11.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

11.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्‌देश्य निदर्शन विधियों के बारे में आपको ज्ञान प्रदान करना है। वास्तव में किसी भी अनुसंधान को करने से पहले निदर्शन विधियों में से उपयुक्त निदर्शन विधि का चुनाव कर लेना आवश्यक होता है। अतः इसी परिप्रेक्षय में प्रस्तुत इकाई आपके सम्मुख प्रस्तुत है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– निदर्शन की विधियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2– दैव निदर्शन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

3– उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के बारे में लिख सकेंगे।

4– स्तरित निदर्शन के बारे में प्रकाश डाल सकेंगे।

5– वहुस्तरीय निदर्शन के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

6– कोटा निदर्शन के बारे में प्रकाश डाल सकेंगे।

7– स्वयं चयनित निदर्शन के बारे में लिख सकेंगे।

11.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में निदर्शन की प्रविधियों के बारे में चर्चा की गई है। वास्तव में कोई भी अनुसन्धान करने से पहले उसके निदर्शन को चयन करना आवश्यक होता है जिससे निदर्शन के आधार पर अनुसंधान को एक उचित दिशा मिलती है। इस इकाई में निदर्शन विधियों में दैव निदर्शन विधि, उद्देश्यपूर्ण निदर्शन, स्तरित निदर्शन, बहुस्तरीय निदर्शन, कोटा निदर्शन एवं स्वयं चयनित निदर्शन के बारे में बताया गया है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोगों को विभिन्न प्रकार की निदर्शन प्रविधियों कि जानकारी हो सकेगी जिसके आधार पर भविष्य में होने वाले अनुसंधानों में इसका प्रयोग आसानी से कर सकेंगे। आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर विधि कराएगी एवं अनुसंधान में इन विधियों के प्रयोग करने के लिए आपका मार्गदर्शन कराएगी।

11.2 निदर्शन की विधियाँ

अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न समूह एक–दूसरे से इतने भिन्न प्रकृति के होते हैं कि केवल किसी एक विधि के द्वारा ही सभी प्रकार के समग्रों में से एक प्रतिनिधिपूर्ण निदर्शन को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। अध्ययन क्षेत्र तथा इकाइयों की प्रकृति को देखते हुए निदर्शन की अनेक विधियों में से किसी भी उपयुक्त विधि के द्वारा निदर्शन प्राप्त करना आवश्यक होता है। निदर्शन की विभिन्न प्रविधियों की सहायता से जिन अनेक प्रकार के निदर्शनों को प्राप्त किया जा सकता है, उन्हीं को हम निदर्शन के विभिन्न प्रकार कहते हैं। इन सभी प्रकारों को संक्षेप में निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है।

11.21 दैव निदर्शन

निदर्शन के सभी प्रकारों में दैव निदर्शन सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा सर्वाधिक प्रचलित प्रविधि है। इसके अन्तर्गत अध्ययनकर्ता को समूह में से कुछ व्यक्तियों अथवा इकाइयों को

चयन करने की कोई व्यक्तिगत स्वतन्त्रता नहीं होती बल्कि इकाइयों के चयन का कार्य कुछ विशेष प्रविधियों की सहायता से पूर्णतया संयोग पर छोड़ दिया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि दैव निदर्शन के अन्तर्गत एक प्रतिनिधिपूर्ण चुनाव के लिए समग्र की सभी इकाइयों का चयन बहुत कुछ संयोग अथवा दैव पर आधारित होता है। इसलिए इस निदर्शन को दैव निदर्शन कहा जाता है। इस निदर्शन की प्रकृति को स्पष्ट करते हुये फ्रेकयेट्स का कथन है कि 'दैव निदर्शन वह है जिसमें समग्र अथवा जनसंख्या की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में सम्मिलित होने का समान अवसर प्राप्त होता है' **गुडे तथा हॉट** के अनुसार, 'दैव निदर्शन के लिए समग्र की सभी इकाइयों को इस प्रकार क्रमबद्ध किया जाता है कि चयन प्रक्रिया की प्रत्येक इकाई को चुनाव की समान संभावना प्रदान कर सकें।' सुविधा के दृष्टिकोण से दैव निदर्शन को भी दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। साधारण दैव निदर्शन तथा सीमित दैव निदर्शन। साधारण दैव निदर्शन वह है जिसमें सम्पूर्ण समग्र में से अव्यवस्थित रूप से कुछ इकाइयों का चयन कर लिया जाता है। इसके विपरीत सीमित दैव निदर्शन के लिए इकाइयों का चयन करने से पहले समग्र की सभी इकाइयों को कुछ वर्गों अथवा श्रेणियों में विभाजित किया जाता है और तत्पश्चात् प्रत्येक श्रेणी में से कुछ इकाइयों का चुनाव किया जाता है। इसके बाद भी दैव निदर्शन का तात्पर्य यह नहीं है कि अध्ययनकर्ता किन्हीं भी इकाइयों का मनमाने रूप से चुनाव कर ले। निदर्शन की इस विधि का उद्देश्य सभी इकाइयों को चुने जाने का समान अवसर देना है। इस दृष्टिकोण से दैव निदर्शन प्राप्त करने के लिए अनेक प्रविधियों अथवा प्रणालियों का उपयोग किया जाता है।

दैव निदर्शन के चुनाव की प्रविधियाँ—

1— लाटरी प्रणाली — दैव निदर्शन की यह सबसे सरल प्रणाली है इसके अन्तर्गत समग्र की समस्त इकाइयों अथवा व्यक्तियों की क्रम संख्या अथवा नाम, कागज की बहुत—सी पर्चियों पर लिखकर उन्हें किसी बड़े बर्तन अथवा बॉक्स में डालकर अच्छी तरह हिला लिया जाता है। इसके पश्चात् निदर्शन के अन्तर्गत जितनी इकाइयों का चयन करना होता है उतने ही कागज के टुकड़े अथवा कार्ड बिना देखे निकाल लिये जाते हैं। इन पर्चियों अथवा कार्डों पर जिन इकाइयों की संख्या अथवा नाम लिखा होता है उन्हीं को अध्ययन के लिए चुन लिया जाता है। दैव निदर्शन के लिए यद्यपि इस प्रणाली का उपयोग बहुत अधिक किया जाता है लेकिन यदि समग्र की इकाइयों की संख्या बहुत बड़ी हो तो इस प्रणाली का उपयोग करना अधिक उपयुक्त नहीं होता।

2– कार्ड प्रणाली– यह प्रणाली लाटरी प्रणाली का ही संशोधित रूप है जिसे ड्रम प्रणाली अथवा टिकट प्रणाली भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत समान आकार और रंग के बहुत से कार्डों पर समग्र की सभी इकाइयों के नाम लिखकर एक बड़े ड्रम में डालकर उन्हें जोर से हिलाया जाता है। इसके पश्चात् ड्रम में से किसी एक कार्ड को उठा लिया जाता है। निदर्शन के अन्तर्गत जितनी इकाइयों को समावेश होता है उतनी ही बार ड्रम को हिलाकर प्रत्येक बार एक–एक कार्ड को निकाला जाता है। कार्ड उठाने का कार्य भी अध्ययनकर्ता द्वारा न किया जाकर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किया जाता है।

3– क्रमांक सूची प्रणाली – इस प्रविधि के द्वारा निदर्शन प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम समग्र की सभी इकाइयों को वर्ण क्रमानुसार अथवा किसी अन्य आधार पर सूचीबद्ध कर लिया जाता है। इसके पश्चात् कुल इकाइयों में से जितनी इकाइयों का चयन करना होता है, उसके अनुपात के अनुसार अध्ययन के लिए इकाइयों का चयन कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए यदि समग्र में कुल इकाइयाँ दो हजार हैं तथा अध्ययन के लिए दो सौ इकाइयों का चयन करना है तो सम्पूर्ण सूची में से प्रत्येक दस संख्या के बाद आने वाली इकाई का इस प्रणाली के अनुसार चयन कर लिया जाएगा। इस प्रकार सूची में क्रमांक के 10, 20, 30, 40, 50, 60 तथा इसी प्रकार आने वाली इकाइयाँ निदर्शन के अन्तर्गत सम्मिलित की जाएंगी। इस प्रणाली से इकाइयों का चुनाव नियमित क्रम के आधार पर किया जाता है। इसलिए इसे नियमित अंकन प्रणाली भी कहा जाता है ।

4– टिपेट प्रणाली – यह विधि **प्रो. टिपेट** द्वारा प्रस्तुत चार–चार अंकों वाली 10,400 संख्याओं की एक लम्बी और अव्यवस्थित सूची से सम्बन्धित है। संख्याओं की यह सूची यद्यपि बहुत लम्बी है लेकिन टिपेट द्वारा प्रस्तुत एक पृष्ठ पर दी गई कुछ संख्याओं से इसकी प्रकृति को समझा जा सकता है ।

2952	6641	3992	9792	7979	5911	3170	5624
4167	9224	1554	1396	7203	5356	1300	2693
2370	7483	3408	2762	3563	1089	6913	7691
0560	5546	1112	6107	6008	8126	4433	8776
2754	9443	1405	9025	7002	6111	8816	6446

दैव निदर्शन के लिए टिपेट प्रणाली का उपयोग करने के लिए सर्वप्रथम समग्र की सभी इकाइयों को क्रम संख्या के अनुसार व्यवस्थित कर लिया जाता है। इसके पश्चात् निदर्शन के लिए जितनी इकाइयों का

चयन करना हो उनका निर्धारण करने के लिए टिपेट द्वारा प्रस्तुत सूची के किसी भी एक पृष्ठ को खोलकर उसमें अंकित संख्याओं की सहायता से इनका चयन कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए यदि समग्र में कुछ इकाइयाँ 100 हों तथा उनमें से 25 इकाइयों का चयन हो तो उपर्युक्त पृष्ठ की संख्याओं में से निम्नांकित क्रम संख्या पर आने वाली प्रत्येक इकाई का निदर्शन के लिए चुनाव किया जाएगा।

29	66	39	97	79	59	31	56	41	92	15	13	72
53	26	23	74	34	27	35	10	69	76		5	52

इस प्रणाली का उपयोग करने के लिए तीन प्रमुख सावधानियों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

1– यदि कोई संख्या पुनः आ जाती है तो उसे छोड़ दिया जाता है जैसे उपर्युक्त उदाहरण में 13 संख्या की पुनरावृत्ति होने के कारण उसे पुनः सम्मिलित नहीं किया गया।

2– निदर्शन में 99 तक की इकाइयों का चयन करने के लिए सूची में दी गयी संख्याओं के प्रथम दो अंकों को आधार माना जाता है, जबकि तीन अंकों वाली संख्या (100 से 999 तक) में इकाइयों का चयन करने के लिए प्रथम तीनों अंकों का आधार माना जाता है ।

3– निदर्शन के लिए इकाइयों का चयन किसी भी एक क्रम से सम्बन्धित संख्याओं के आधार पर ही किया जाना चाहिए। दैव निदर्शन के लिए टिपेट प्रणाली को आज इसलिए अधिक वैज्ञानिक माना जाता है क्योंकि इसके द्वारा इकाइयों के चुनाव में अध्ययनकर्ता के पक्षपात की कोई संभावना नहीं रह जाती। इसके अतिरिक्त समग्र का आकार बहुत बड़ा होने पर भी टिपेट प्रणाली के द्वारा एक सीमित निदर्शन प्राप्त किया जा सकता है।

5– ग्रिड प्रणाली– निदर्शन के लिए केवल अधिक इकाइयों में से सीमित इकाइयों का चयन करना भी आवश्यक नहीं होता है बल्कि अनेक अध्ययन इस प्रकार के होते हैं कि, जिनके लिए एक बहुत बड़े भौगोलिक क्षेत्र में से एक छोटे का भी चुनाव करना आवश्यक होता है। ग्रिड प्रणाली वह तरीका है जिसके द्वारा यह निर्धारित किया जाता है कि कोई विशेष अध्ययन किस क्षेत्र अथवा किन क्षेत्रों के अन्तर्गत किया जाएगा। इस प्रणाली के उपयोग के लिए सर्वप्रथम यह तय कर लिया जाता है कि समग्र के सम्पूर्ण क्षेत्र में से अध्ययन कार्य कितने उपक्षेत्रों में करना है। उदाहरण के लिए यदि सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश में केवल 50 गांवों का अध्ययन करना हो तो उत्तर प्रदेश के मानचित्र के आकार का

एक ग्रिड अथवा किसी पारदर्शी धातु जैसे काँच आदि का साँचा तैयार कर लिया जाता है। इसमें समान दूरी का ध्यान रखते हुए 1 से 50 तक की संख्या अंकित कर दी जाती हैं। इसके पश्चात् यह साँचा पुनः मानचित्र पर रखा जाता है, साँचे पर अंकित संख्याएँ मानचित्र में जिस स्थान पर आती है उन्हीं स्थानों को अध्ययन के लिए चुन लिया जाता है।

दैव निदर्शन का महत्त्व– दैव निदर्शन के महत्त्व अग्रलिखित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट हो सकते हैं–

1– दैव निदर्शन में इकाईयों का चयन अनुसंधानकर्ता की इच्छा, पसन्द अथवा पक्षपात से प्रभावित नहीं होता है।

2– इस प्रविधि में समय की सभी इकाईयों को निदर्शन में सम्मिलित होने का समान अवसर प्राप्त होता है।

3– दैव निदर्शन एक अत्यधिक सरल प्रणाली है क्योंकि इसमें अध्ययनकर्ता को किसी जटिल अथवा कठिन नियम का पालन नहीं करना पड़ता है।

4– इस प्रविधि के द्वारा चुनी गई इकाईयाँ सम्पूर्ण समग्र का प्रतिनिधित्व करती हैं क्योंकि किसी एक इकाई के चयन का अन्य इकाइयों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

5– यह प्रविधि अत्यधिक मितव्ययी है क्योंकि इसके द्वारा बहुत कम समय और धन में ही निदर्शन का चयन किया जा सकता है।

6– अन्त में, सांख्यिकीय रूप से यह प्रविधि इसलिए अधिक उपयुक्त है कि निदर्शन में इकाइयों के चयन सम्बन्धी दोष की किसी भी समय पुनःपरीक्षा की जा सकती है।

दैव निदर्शन की सीमाएँ

अनेक गुणों के पश्चात् भी दैव निदर्शन में अनेक ऐसे दोष हैं जिनके कारण कभी–कभी अध्ययन के प्रतिनिधिपूर्ण होने की सम्भावना कम हो जाती है–

1– सर्वप्रथम इस प्रविधि का उपयोग केवल तभी किया जा सकता है जब अध्ययनकर्ता द्वारा समग्र की सभी इकाइयों की एक क्रमवार सूची तैयार कर ली जाए। व्यावहारिक रूप से यह कार्य बहुत कठिन होता है।

2– यदि समय की सभी इकाइयों की प्रकृति समान नहीं होती तो इस प्रविधि द्वारा चुनी गयी इकाइयाँ सम्पूर्ण समग्र की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाती।

3— दैव निदर्शन के अन्तर्गत अक्सर ऐसी इकाइयों का चयन हो जाता है जिनसे सम्पर्क कर सकना कभी—कभी बहुत कठिन अथवा असंभव होता है। इसके बाद भी अध्ययनकर्ता को चुनी गई इकाइयों में से किसी प्रकार का परिवर्तन करने की स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं होती।

4— इस प्रविधि द्वारा किसी विशेष इकाई का चुना जाना अथवा असका छूट जाना पूर्णतया संयोग पर निर्भर होता है।

इसके फलस्वरूप अक्सर कुछ ऐसी इकाइयों का निदर्शन में समावेश नहीं हो पाता जो अध्ययन के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं।

11.22 उद्देश्यपूर्ण निदर्शन

अध्ययन से सम्बन्धित अनेक विषय इस प्रकार के होते हैं कि उनसे सम्बन्धित वैज्ञानिक निष्कर्ष के लिए कुछ विशेष इकाइयों का अध्ययन किया जाना आवश्यक समझा जाता है। इस स्थिति में दैव निदर्शन अधिक उपयुक्त नहीं होता बल्कि अध्ययनकर्ता के लिए यह आवश्यक होता है कि वह समग्र की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए आवश्यकतानुसार कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का चयन कर ले। इसका तात्पर्य यह है कि जब अध्ययनकर्ता किसी विशेष उद्देश्य को सामने रखते हुए अपनी इच्छानुसार समग्र में से कुछ इकाइयों का चयन करता है तो ऐसे निदर्शन को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन कहा जाता है। ऐसे निदर्शन को अध्ययनकर्ता के विवेक पर आधारित होने के कारण 'सविचार निदर्शन' भी कहा जाता है। उद्देश्यपूर्ण निदर्शन की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए जेन्सन का कथन है कि उद्देश्यपूर्ण निदर्शन कुछ इकाइयों को चुनने की यह विधि है जिसके अन्तर्गत चुनी गयी इकाइयाँ सम्पूर्ण समग्र की विशेषताओं के सम्बन्ध में लगभग सही औसत प्रदान करती हैं जिनकी कुछ सांख्यिकीय जानकारी पहले से ही होती हैं। वास्तव में उद्देश्यपूर्ण निदर्शन प्रणाली भी किसी अनुसंधानकर्ता को पूरी स्वतन्त्रता प्रदान नहीं करती बल्कि इसके अन्तर्गत अध्ययनकर्ता के लिए यह आवश्यक होता है कि सर्वप्रथम वह समग्र की सभी इकाइयों के बारे में व्यापक ज्ञान प्राप्त करें और इसके पश्चात् जो इकाइयाँ समग्र की विशेषताओं का सही प्रतिनिधित्व करती हों उनका निदर्शन के लिए चुनाव कर ले।

अनेक सामाजिक अध्ययनों में उद्देश्यपूर्ण निदर्शन का प्रयोग करना अत्यधिक आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए यदि कुछ गंभीर अपराधियों की पारिवारिक पृष्ठभूमि अथवा मनोवृत्तियों का अध्ययन करना हो तो निदर्शन के अन्तर्गत कुछ ऐसे कैदियों का

समावेश करना आवश्यक होता है जो अत्यधिक गम्भीर अपराधों के लिए कारागार में लम्बी सजाए काट रहे हों। वास्तव में उद्देश्यपूर्ण निदर्शन एक सरल और मितव्ययी प्रणाली है। अध्ययनकर्ता यदि पूर्णतया पक्षपातरहित हो तो उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के द्वारा वह कहीं अधिक प्रतिनिधि इकाइयों का चयन कर सकता है। साथ ही यह प्रणाली बहुत लोचपूर्ण भी है, क्योंकि आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार निदर्शन में सम्मिलित इकाइयों में अल्प परिवर्तन भी किया जा सकता है। इन लाभों के पश्चात् भी उद्देश्यपूर्ण निदर्शन को साधारणतया एक दोषपूर्ण प्रणाली समझा जाता है। इसका कारण यह है कि व्यवहार में किसी अध्ययनकर्ता का इतना ईमानदार हो कठिन होता है कि निदर्शन के चुनाव की पूरी स्वतन्त्रता होने के बाद भी वह अपने श्रम और कठिनाइयों की चिन्ता न करें। इसके फलस्वरूप अध्ययनकर्ता अक्सर ऐसी इकाइयों का चयन कर लेता है जो उसके लिए सुविधाजनक होती हैं। यही कारण है कि सामाजिक अनुसंधान में उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के प्रयोग को तब तक अच्छा नहीं समझा जाता जब तक अध्ययन विषय की प्रकृति को देखते हुये ऐसा निदर्शन प्राप्त करना पूर्णतया आवश्यक ही न हों।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. दैव निदर्शन का अर्थ लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के बारे में लिखिए।

....
....

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

11.23 स्तरित निदर्शन

स्तरित निदर्शन प्रणाली निदर्शन चयन करने की वह विशिष्ट प्रणाली है, जिसमें समग्र को उनकी प्रकृति एवं मूलभूत विशेषताओं के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत करके वर्गीकृत श्रेणियों में से निदर्शन का चयन दैव निदर्शन प्रणाली का सहयोग लेकर किया जाता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि स्तरित निदर्शन पद्धति ऐसे अध्ययनों के लिए अधिक उपयोगी साबित होती है जिनमें सम्बन्धित समग्र में भिन्न–भिन्न विशेषताओं एवं प्रकृति वाले समूह पाये जाते हैं। स्तरित निदर्शन की प्रकृति स्पष्ट करते हुए प्रोफेसर सिन पाओं येंग ने लिखा है कि स्तरित निदर्शन का आशय है 'समग्र में से उप–निदर्शनों को लेना' जिनकी समान विशेषताएँ हैं, जैसे –खेतों के प्रकार, खेतों का आकार, भूमि का स्वामित्व, शिक्षा का स्तर, आय, लिंग, सामाजिक वर्ग आदि। उप निदर्शनों के अन्तर्गत आने वाले इन तत्वों को एक साथ लेकर प्रारूप या श्रेणी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।' **प्रो0 यंग** के उक्त कथन के आधार पर कहा जा सकता है कि विषय समस्या से सम्बन्धित समग्र को उनकी प्रकृति एवं विशेषताओं के आधार पर अनेक भागों तथा उपभागों में वर्गीकृत करते हुए समग्र में एकरूपता लाने के साथ ही दैव निदर्शन की किसी पद्धति के सहयोग से वर्गीकृत भागों एवं उपभागों से निदर्शन करने की प्रक्रिया को स्तरित निदर्शन कहा जाता है। अतः स्पष्ट है कि स्तरित निदर्शन पद्धति द्वारा निदर्शन

का चयन करने में अध्ययनकर्ता को निम्न तीन प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है–

1– विषय समस्या से सम्बन्धित समग्र इकाइयों के बारे में जानकारियों को एकत्र करना पड़ता है।

2– विषय–समस्या से सम्बन्धित समग्र की इकाइयों को उनकी प्रकृति एवं मूलभूत विशेषताओं के आधार पर विभिन्न श्रेणियों या वर्गों में विभक्त करना पड़ता है।

3– विभक्त वर्गों या श्रेणियों में से प्रत्येक श्रेणी में से एक निश्चित मात्रा में निदर्शन का चयन दैव निदर्शन की किसी भी प्रणाली द्वारा करना पड़ता है।

स्तरित निदर्शन पद्धति द्वारा निदर्शन चयन करते समय अध्ययनकर्ता को याद रखना चाहिए कि जहाँ तक संभव हो सके प्रत्येक श्रेणी या वर्ग से उतनी ही इकाइयों का चयन किया जाय, जिस अनुपात से श्रेणी या वर्ग की कुल इकाइयाँ समग्र में हैं। उदाहरण के लिए मान लिजिए कि आगरा में कार्यरत शिक्षकों की धार्मिक आस्था का अध्ययन करना है और यहाँ 600 शिक्षक कार्यरत है, जो कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हैं अर्थात् ये 6 श्रेणियों या वर्गों के हैं तथा इनकी संख्या क्रमशः 320, 60, 40, 130, 20, 30 है और हमें कुल समग्र से 10 प्रतिशत निदर्शन लेना है, अर्थात् इन 600 शिक्षकों में से 60 शिक्षक को निदर्श बनाना है, तो निदर्श में 32 ब्राह्मण, 6 क्षत्रिय, 4 वैश्य, 13 पिछड़ा वर्ग, 2 अनुसूचित जाति तथा 3 अनुसूचित जनजाति के शिक्षकों को दैव निदर्शन पद्धति द्वारा चयन करना चाहिए।

इस प्रकार स्तरित निदर्शन में चूंकि उद्देश्यपूर्ण निदर्शन, वर्गीकृत निदर्शन व दैव निदर्शन प्रविधियों का उपयोग किया जाता है अतः इसे मिश्रित निदर्शन पद्धति भी कहा जाता है।

स्तरित निदर्शन के प्रकार

1– समानुपातिक स्तरित निदर्शन– समानुपातिक स्तरित निदर्शन, स्तरित निदर्शन का प्रथम प्रकार है। इसमें अध्ययनकर्ता को प्रत्येक वर्ग या श्रेणी में से इकाइयों का चयन उसी अनुपात में करना पड़ता है जिस अनुपात में वर्ग या श्रेणी की कुल इकाइयाँ समग्र में होती हैं।

2– असमानुपातिक स्तरित निदर्शन– स्तरित निदर्शन का दूसरा प्रकार असमानुपातिक स्तरित निदर्शन है, जैसा कि नाम से प्रकट है कि इसमें अध्ययनकर्ता को इकाइयाँ चयन करने की स्वतन्त्रता रहती है और उसे इकाइयों के चयन करते समय उस

अनुपात को ध्यान में रखना आवश्यक नहीं होता, जैसा कि समानुपातिक में रहता है, वरन् वह तो कुल निदर्शन को ध्यान में रखकर सभी वर्ग या श्रेणी से बराबर इकाइयों का चयन कर सकता है।

3— भारयुक्त स्तरित निदर्शन — स्तरित निदर्शन का यह तृतीय प्रकार प्रथम एवं द्वितीय दोनों प्रकारों का मिश्रित रूप है। इसमें प्रथम तो प्रत्येक वर्ग या श्रेणियों से इकाइयों का चयन अनुपात के आधार पर करने पर बल दिया जाता है किन्तु बाद में अधिक संख्या वाले वर्गों का श्रेणी की इकाइयों का अधिक भार प्रदान करके उनका प्रभाव बढ़ा दिया जाता है। यह भार ठीक उसी अनुपात में बढ़ाया जाना चाहिए, जिस अनुपात में वर्ग या श्रेणी की इकाइयाँ समग्र में हों।

स्तरित निदर्शन के गुण

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में स्तरित निदर्शन के उपयोग का महत्त्व बढ़ता जा रहा है, जिसका केन्द्रीयकरण इनमें समाहित गुण है जिन्हें हम इस प्रकार बतला सकते हैं—

1— स्तरित निदर्शन में सभी इकाइयों का महत्त्व होता है— स्तरित निदर्शन का सबसे महत्त्वपूर्ण गुण यह है कि इस प्रविधि के उपयोग में समग्र की सभी इकाइयों को एक नजर से देखा जा सकता है तथा निदर्शन के चयन में सभी इकाइयों को समान महत्त्व का मानते हुए स्थान प्राप्त होता है तथा किसी भी इकाई को इनके गुण—दोषों के आधार पर एक—दूसरे से श्रेष्ठ नहीं माना जाता।

2— स्तरित निदर्शन में सभी वर्गों का समान महत्त्व होता है— इसमें समग्र की न केवल प्रत्येक इकाई को महत्वपूर्ण माना जाता है बल्कि प्रत्येक इकाई के उस वर्ग या श्रेणी को जिसका कि वह इकाई प्रतिनिधित्व करती है, को भी अध्ययन में शमिल करके सभी वर्गों को एक समान मानते हुए अध्ययन पर बल दिया जाता है।

3— स्तरित निदर्शन में समग्र का प्रतिनिधित्व संभव होता है— इसमें निदर्श चयन में समग्र का वास्तविक प्रतिनिधित्व करने वाली इकाइयों का चयन संभव होता है।

4— स्तरित निदर्शन में इकाई परिवर्तन की स्वतन्त्रता होती है— इसके अन्तर्गत इकाई परिवर्तन करने की स्वतन्त्रता अनुसंधानकर्ता को रहती है। इसलिए चयन की गई इकाई से यदि किसी कारणवश सम्पर्क नहीं हो पाता है तो ऐसी परिस्थिति में अध्ययनकर्ता को उसी वर्ग या श्रेणी की दूसरी इकाई को चुनने की स्वतन्त्रता स्तरित निदर्शन प्रविधि प्रदान करती है।

5– स्तरित निदर्शन सरल व सस्ती प्रवधी है– इस प्रविधि में समग्र की इकाइयों की विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करके निदर्शन का चयन इस प्रकार किया जाता है कि निदर्शन की अधिकांशतः इकाइयाँ भौगोलिक दृष्टि से एक स्थान से प्राप्त हो सकती हैं। इस प्रकार अन्य पद्धतियों की तुलना में यह पद्धति सरल एवं सस्ती हैं।

स्तरित निदर्शन के दोष– स्तरित निदर्शन के अग्रलिखित दोष होते हैं–

1– स्तरित निदर्शन में समग्र की इकाइयों का संग्रह कठिन होता है– इसमें समग्र की इकाइयों को संग्रहीत करने पर बल दिया जाता है, जिनका व्यावहारिक रूप में संग्रह करना अत्यन्त कठिन कार्य है।

2– स्तरित निदर्शन में वर्गों या श्रेणी निर्माण की समस्या होती है– इसमें समग्र की इकाइयों को उनकी प्रकृति एवं विशेषताओं के आधार पर अनेक वर्गों या श्रेणियों में बाँटने की सलाह दी जाती है जो वास्तव में एक कठिन समस्या होती है।

3– स्तरित निदर्शन में निदर्शन का समानुपातिक होना जरूरी नहीं है– इसका दोष यह है कि इसके लिए निदर्शन का समानुपातिक होना आवश्यक है, तभी प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन के चयन की आशा की जा सकती है। जबकी समानुपातिक निदर्शन नहीं होगा तो प्रतिनिधित्वपूर्ण अध्ययन की सम्भावना नहीं की जा सकती।

4– स्तरित निदर्शन में पक्षपात की सम्भावना होती है– इसमें यदि समानुपातिक नहीं होता है तो इस पद्धति में अध्ययनकर्ता समान अनुपात करने के लिए इकाइयों को भार प्रदान करता है जिससे पक्षपात एवं मिथ्या झुकाव की सम्भावना में वृद्धि हो जाती है।

11.24 बहु स्तरीय निदर्शन

बहु स्तरीय निदर्शन कुछ सीमा तक स्तरित निदर्शन के ही समान होता है। लेकिन इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसका प्रयोग किसी बहुत बड़े अध्ययन–क्षेत्र से एक निदर्शन चुनने के लिए किया जाता है जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है। बहुस्तरीय निदर्शन के अन्तर्गत इकाइयों के चुनाव की प्रक्रिया अनेक स्तरों से होकर गुजरती है। परन्तु प्रत्येक स्तर पर इकाइयों के चुनाव का कार्य दैव निदर्शन की प्रणाली के द्वारा ही किया जाता है। उदाहरण के लिए 'भारत में छात्रों की समस्याएँ' जैसा विषय

इतने बड़े समग्र से सम्बन्धित है कि इसका अध्ययन करने के लिए अनेक स्तरों पर निदर्शन का चुनाव करना आवश्यक होगा। इसका तात्पर्य यह है कि पहले स्तर पर राज्यों का चुनाव, दूसरे स्तर पर चुने गये राज्यों में विभिन्न जिलों का चुनाव, तीसरे स्तर पर विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों का चुनाव, चौथे स्तर पर संकायों का चुनाव से ही एक प्रतिनिधि निदर्शन प्राप्त किया जा सकता है। ऐसे निदर्शन में इकाइयों का चुनाव अनेक स्तरों के द्वारा किया जाता है इसलिए ऐसे निदर्शन को बहुस्तरीय निदर्शन कहा जाता है। वे अध्ययन–विषय जो एक छोटे भौगोलिक क्षेत्र से सम्बन्धित होते हैं अथवा जिनसे सम्बन्धित विभिन्न वर्गों के बीच कोई स्प्ष्ट विभाजन नहीं होता, वहाँ इस प्रकार के निदर्शन की कोई आवश्यकता नहीं होती। वर्तमान समय में सामान्य अध्ययनों के लिए बहुतस्तरीय निदर्शन की प्रविधि का प्रयोग करने का प्रचलन निरन्तर बढ़ता जा रहा है।

11.25 कोटा निदर्शन

कोटा निदर्शन स्तरित तथा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन का एक मिश्रित स्वरूप है। इस प्रविधि के अन्तर्गत सर्वप्रथम समग्र की सभी इकाइयों का विभिन्न श्रेणियों में विभाजन कर लिया जाता है। इसके पश्चात् विभिन्न वर्गों अथवा श्रेणियों के तुलनात्मक महत्व को देखते हुए प्रत्येक वर्ग में से चुनी जाने वाली इकाइयों की संख्या निर्धारित की जाती है। विभिन्न वर्गों में से चुनी जाने वाले इकाइयों की संख्या निर्धारित करते समय अनुसंधानकर्ता के लिए यह आवश्यक नहीं होता है कि उनका निर्धारण विभिन्न श्रेणियों की संख्या के अनुपात में ही किया जाए। किसी वर्ग में इकाइयों की संख्या अधिक होने पर भी यदि उसका कार्यात्मक महत्व तुलनात्मक रूप से कम होता है तो उसमें से कम इकाइयों का चुनाव किया जा सकता है। इसक तात्पर्य यह है कि अध्ययनकर्ता को प्रत्येक वर्ग अथवा श्रेणी में से उद्देश्यपूर्ण रूप से इकाइयों को चुनने की स्वतन्त्रता होती है। इसके पश्चात् भी प्रत्येक वर्ग में से इच्छित संख्या में इकाइयों का चयन करने के लिए दैव निदर्शन की विभिन्न प्रणालियों में से ही किसी एक का उपयोग किया जाता है। ऐसे निदर्शन का चुनाव करने में अनुसंधानकर्ता की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। विभिन्न श्रेणियों में से इकाइयों की संख्या का निर्धारण अनुसंधानकर्ता के द्वारा करने के कारण ऐसे निदर्शन में वैयक्तिक पक्षपात की संभावना भी बनी रहती है। यही कारण है कि कोटा निदर्शन के आधार पर कोई अध्ययन करना केवल तभी उपयोगी समझ जाता है, जब स्तरित निदर्शन के द्वारा प्रतिनिधि इकाइयों का चयन करना सम्भव न होता हो।

11.26 स्वयं चयनित निदर्शन

कभी–कभी अनुसंधानकर्ता को निदर्शन का चुनाव करने की आवश्यकता नहीं होती बल्कि कुछ व्यक्ति स्वयं अपनी रूचि अथवा जागरूकता के आधार पर निदर्शन का अंग बन जाते हैं। ऐसा निदर्शन साधारणतया संचार के विभिन्न साधनों द्वारा प्राप्त किया जाता है। उदाहरण के लिए रेडियो, दूरदर्शन, समाचार–पत्रों तथा विभिन्न पत्रिकाओं के माध्यम से अक्सर ऐसी सूचनाऐं प्रसारित अथवा प्रकाशित की जाती हैं जिनसे एक विशेष विषय पर लोगों की प्रतिक्रियाओं और विचारों को समझा जा सकें। इस स्थिति में जो व्यक्ति अपने विचार अध्ययनकर्ता के पास लिखकर भेज देते हैं, उन्हीं व्यक्तियों को निदर्शन की इकाइयाँ मान लिया जाता है। स्पष्ट है कि ऐसे निदर्शन का न तो किसी व्यवस्थित प्रणाली के द्वारा चुनाव किया जाता है। वास्तव में, स्वयं–चयनित निदर्शन एक अत्यधिक सामान्य प्रकृति का निदर्शन है तथा इसका उपयोग बहुत सामान्य प्रकार के अध्ययनों के लिए ही किया जाता है और न ही यह निदर्शन विभिन्न वर्गों का वास्तविक प्रतिनिधित्व कर पाता है। वास्तव में स्वयं चयनित निदर्शन एक अत्यधिक सामान्य प्रकृति का निदर्शन है तथा इसका उपयोग बहुत सामान्य प्रकार के अध्ययनों के लिये ही किया जाता है। ऐसे निदर्शन का उद्देश्य बहुत कम समय में कुछ व्यक्तियों के विचारों को समझकर किसी विषय से सम्बन्धित सामान्य प्रवृत्ति को स्पष्ट करना होता है, कोई वैज्ञानिक निष्कर्ष प्रस्तुत करना नहीं।

निदर्शन के उपर्युक्त सभी प्रकारों से स्पष्ट होता है कि अध्ययन विषय की प्रकृति, अध्ययन से सम्बन्धित क्षेत्र तथा समग्र की इकाइयों के आधार पर अध्ययनकर्ता को एक विशेष विधि से निदर्शन का चुनाव करना आवश्यक होता है। अनेक अध्ययन–विषय इस प्रकार के होते है कि उनसे सम्बन्धित निष्कर्ष निकालने के लिए एक से अधिक तरह के निदर्शनों का साथ–साथ भी उपयोग किया जा सकता है। अध्ययन चाहे किसी भी प्रकार के निदर्शन को आधार मानकर किया जाए, प्रत्येक निदर्शन के अपने कुछ गुण तथा दोष हैं। वास्तव में निदर्शन का एक 'विशेष प्रकार' ही स्वयं में उपयोगी अथवा हानिकारक नहीं होता बल्कि अध्ययन की यथार्थता बहुत कुछ इस तथ्य पर निर्भर करती है कि निदर्शन को कितनी सावधानी के साथ प्राप्त किया

गया है। इस दृष्टिकोण से निदर्शन के उपयुक्त सभी प्रकार अपने–अपने क्षेत्र में उपयोगी हैं।

11.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में निदर्शन की विधियों के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है जिसमें बताया गया है कि निदर्शन की कितनी विधियाँ है। वास्तव में निदर्शन की विधियों में, दैव निदर्शन, उद्देश्यपूर्ण निदर्शन, स्तरित निदर्शन, बहुस्तरीय निदर्शन, कोटा निदर्शन एवं स्वयं चयनित निदर्शन प्रमुख हैं। दैव निदर्शन में सभी इकाइयों को इस प्रकार क्रमबद्ध किया जाता है कि चयन प्रक्रिया की प्रत्येक इकाई को चुनाव की समान सम्भावना प्रदान कर सके। दैव निदर्शन की प्रविधियाँ जैसे लाटरी प्रणाली, कार्ड प्रणाली, क्रमांक सूची प्रणाली, टिपेट प्रणाली एवं ग्रिड प्रणाली का भी इस इकाई में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि जब अध्ययनकर्ता किसी विशेष उद्देश्य को सामने रखते हुए अपनी इच्छानुसार समग्र में से कुछ इकाइयों का चयनकर्ता है तो ऐसे निदर्शन को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन कहा जाता है। स्तरित निदर्शन पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि स्तरित निदर्शन का तात्पर्य समग्र में से उपनिदर्शनों को चयन करना है। इकाई के अन्त में बहुस्तरीय निदर्शन, कोटा निदर्शन, स्वयं चयनित निदर्शन, के बारे में वृहद चर्चा प्रस्तुत की गई है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोगों से आशा की जाती है कि निदर्शन प्रविधियों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर उनका उचित उपयोग करेंगे।

11.4 पारिभाषिक शब्दावली

दैव निदर्शन– इसका तात्पर्य यह है कि दैव निदर्शन के अन्तर्गत प्रतिनिधिपूर्ण चुनाव के लिए समग्र की सभी इकाइयों को चुने जाने का समान अवसर प्रदान किया जाता है। ऐसे निदर्शन में इकाइयों का चयन बहुत कुछ संयोग अथवा दैव पर आधारित होता है इसलिए इसे दैव निदर्शन कहते हैं।

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन– इसका आशय यह है कि जब शोधकर्ता किसी विशेष उद्देश्य को सामने रखते हुए अपनी इच्छानुसार समग्र में से कुछ इकाइयों का चयन करता है तो ऐसे निदर्शन को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन कहा जाता है।

स्तरित निदर्शन– स्तरित निदर्शन से तात्पर्य समग्र में से उपनिदर्शनों का चुनाव करना है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– दैव निदर्शन का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

2– दैव निदर्शन के चुनाव की किन्हीं दो प्रविधियों का उल्लेख कीजिए।

3– दैव निदर्शन के महत्त्व पर टिप्पणी लिखिए।

4– दैव निदर्शन की सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

5– उद्देश्यपूर्ण निदर्शन को परिभाषित कीजिए।

6– स्तरित निदर्शन से आप क्या समझते हैं?

7– स्तरित निदर्शन के प्रकारों पर प्रकाश डालिये।

8– स्तरित निदर्शन के गुणो की व्याख्या कीजिए।

9– स्तरित निदर्शन के दोषों के बारे में चर्चा कीजिए।

10– बहुस्तरीय निदर्शन से आप क्या समझते हैं?

11– कोटा निदर्शन से आप क्या समझते हैं?

12– स्वयं चयनित निदर्शन पर अपने विचार दीजिए।

विस्तृत

1– दैव निदर्शन विधि की व्याख्या करते हुए इसके चुनाव प्रविधियों को समझाइये।

2– दैव निदर्शन विधि से आप क्या समझते हैं? तथा इसके महत्त्व व सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

3– उद्देश्यपूर्ण एवं स्तरित निदर्शन पर एक निबन्ध लिखिए।

4– स्तरित निदर्शन की व्याख्या करते हुए इसके प्रकारों, गुणों एवं दोषों के बारे में प्रकाश डालिए।

5– बहुस्तरीय, कोटा, स्वयं चयनित निदर्शन पर एक लेख लिखिए।

11.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– गुडे एण्ड हॉट, “मैथड्स इन सोशल रिसर्च”, पेज–209

2– बोगार्डस, ई0 एस0, “सोशियोलाजी“, पेज–548

3– गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, “प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान (शोध)”, आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष–2005, पेज–130–133, 135–137, 140–141

MASW-06

समाजिक शोध एवं सांख्यिकी

॥ सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

खण्ड–तृतीय

तथ्य का एकत्रीकरण एवं विश्लेषण

इकाई–12 153–162
तथ्यों के प्रकार

इकाई–13 163–182
तथ्य संकलन के स्त्रोत

इकाई–14 183–196
सर्वेक्षण के लक्ष्य एवं विशेषतायें

इकाई–15 197–216
तथ्य संकलन की प्रविधियां : प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, वैयक्तिक अध्ययन

इकाई–16 217–234
मापन एवं अनुमापन की विधियाँ

इकाई–17 235–252
समंकों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश प्रयागराज

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति – प्रो० प्रो० के०एन० सिंह

विशेषज्ञ समिति

(1) प्रो० एस० त्रिपाठी, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु वि०वि० वाराणसी भूतपूर्व निदेशक, सुलभ इण्टरलेशनल, नई दिल्ली।

(2) प्रो० अमरनाथ सिंह विभागाध्यक्ष समाजकार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

(3) प्रो० अरविन्द जोशी, प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(4) डॅा० एम० एन० सिंह पूर्व निदेशक, समाजवि, वि उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

(5) डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता सामजकार्य विभाग वि० उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

परिमापक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष सामजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

सम्पादक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष समाजकार्य विभाग, लखनऊ।

समन्वयक

डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

लेखक

(1) डॉ० राजेश कुशवाहा, समाजकार्य विभाग, डॉ० भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

(2) डॉ० अलका वर्मा, समाजकार्य विभाग, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

सितम्बर, 2019 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2020

ISBN-

सर्वाधिक सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक – कुलसचिव, डॉ. अरूण कुमार गुप्ता उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 20019

मुद्रक – चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज (इलाहाबाद)

खण्ड–तृतीय
तथ्य का एकत्रीकरण एवं विश्लेषण

इकाई : 12 तथ्यों के प्रकार

12.0 इकाई का उद्देश्य

12.1 परिचय

12.2 तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा

12.3 तथ्य की विशेषतायें।

12.4 तथ्यों के प्रकार

12.5 सार–संक्षेप

12.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

12.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

12.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में तथ्यों के प्रकारों का वर्णन किया गया है जिसमें दो तरह के तथ्यों के बारे में बताया गया है कि ये प्राथमिक एवं द्वितीयक होते हैं। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– प्राथमिक तथ्यों के बारे में जान सकेंगे।

2– द्वितीयक तथ्यों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

3– तथ्य का अर्थ एवं परिभाष लिख सकेंगे।

4– तथ्य की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

5– तथ्यों के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।

12.1 परिचय

वास्तविक सूचना या तथ्यों के बिना सामाजिक अनुसंधान या शोध वास्तव में एक अपंग प्राणी की भांति है। अनुसंधान या शोध की सफलता इसी बात पर निर्भर रहती है कि अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन–विषय के सम्बन्ध में कितने वास्तविक निर्भरयोग्य सूचनाओं और तथ्यों को एकत्रित करने में सफल होता है। यह

सफलता सूचना प्राप्त करने के स्त्रोतों की विश्वसनीयता पर निर्भर करती है। अतः सूचना या तथ्यों के स्त्रोत के महत्व को सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में कम नहीं किया जा सकता। साथ ही, ये सूचनाएँ या तथ्य एक ही प्रकार के नहीं होते हैं। इनमें भी भेद हैं, और इन प्रकारों के विषय में भी स्पष्ट ज्ञान का होना एक सफल अनुसंधानकर्ता के लिए आवश्यक है। किस स्त्रोत से किस प्रकार की सूचना उसे प्राप्त हो सकती है, इस बात की स्पष्ट जानकारी न होने पर अनुसंधानकर्ता केवल इधर–उधर भटकता ही रहेगा और उसका काफी समय तथा श्रम व्यर्थ चला जाएगा। अतः सूचना या तथ्यों के प्रकार तथा स्त्रोतों के बारे में ज्ञान आवश्यक है। यह इकाई उसी के बारे में है।

12.2 तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा

एक विज्ञानवेता अपने अनुसंधान में तथ्यों को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करता है। वह अपने तथ्यों का तात्पर्य जनसामान्य धारणाओं के प्रतिकूल लेता है। वह अवलोकन तथा परीक्षण द्वारा तथ्यों का संकलन करता है। प्रश्न उठता है कि वास्तव में तथ्य हैं क्या?

तथ्य को परिभाषित करने से पूर्व यहाँ यह उल्लेखनीय है कि तथ्य तथा दत्त एक दूसरे के पर्याय नहीं हैं। कुछ अंग्रेजी शब्दकोशों में यद्यपि न दोनों शब्दों का प्रयोग समान अर्थ में किया गया है। किन्तु एक अनुसंधानकर्ता के लिए यह अर्थ बहुत अधिक सहायक नहीं है। अंग्रेजी शब्दकोशों में दत्त को तथ्यों, आँकड़ों, सूचनाओं, घटनाओं या अनुभवों अथवा जीवन इतिहासों की स्मृतियों को बताने वाले की अपेक्षा कुछ और ही हैं। दत्त भूत तथा वर्तमान की प्रासंगिक सामग्री है जो अध्ययन एवं विश्लेषण के लिए आधार रूप कार्य करती हैं। वे भावात्मक (तथा मानसिक) संकेतों से सम्बद्ध जीवंत उपादान हैं।

यद्यपि तथ्य को परिभाषित करना एक अत्यन्त कठिन कार्य है तथापि विवेचनात्मक अध्ययन की सुगमता हेतु निम्नलिखित परिभाषाएँ दृष्टव्य हैं–

अमेरिकन कालेज डिक्शनरी के अनुसार, 'जो वास्तव में घटित हो चुके हैं, तथ्य कहलाते हैं। परन्तु तथ्य मूर्त रूप में सीमित नहीं होते हैं। सामाजिक विज्ञान मे चिंतन तथा अनुभव तथा मनोभावनाएँ तथ्य हैं।

फेयरचाइल्ड द्वारा सम्पादित 'डिक्शनरी ऑफ सोशियालॉजी' में तथ्य को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया गया है।

'तथ्य कोई प्रदर्शित की गई या प्रकाशित की जा सकने योग्य वास्तविकता का मद, पद या विषय है।'

थामस तथा जनानीकि के अनुसार, 'तथ्य स्वयं में एक आमूर्तिकरण है।'

विलियम जे, गुडे तथा पाल के0 हॉट के अनुसार, ' एक तथ्य एक आनुभाविकीय सत्यापनीय के रूप में समझा जाता है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह कहते हैं कि तथ्य एक आनुभाविक सत्यापनीय अर्थपूर्ण प्रेषण है।

12.3 तथ्य की विशेषतायें

उपर्युक्त परिभाषाओं के प्रकाश में हम तथ्य की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कर सकते हैं–

1– तथ्य वास्तव में अस्तित्व में रहने वाली प्रघटना है ।

2– इसमें सत्यता विद्ममान होती है।

3– इसकी सत्यता की पुनर्परीक्षा की जा सकती है।

4– इसको किसी न किसी प्रकार से देखना, समझना, अनुभव करना अथवा जानना सम्भव होता है।

5– एक ओर जहाँ यह अनुभव द्वारा प्राप्त किया जा सकता है, वहाँ दूसरी ओर अनुभव के निर्माण अथवा वृद्धि में सहायक भी होता है ।

6– तथ्य प्रघटना के सम्पूर्ण पक्षों का रहस्योद्‌घाटन नहीं करता, प्रत्युत किसी एक निश्चित व सीमित पक्ष का ज्ञान प्रकट करता है।

7– कुछ तथ्य ऐसे होते हैं जिनका प्रत्यक्ष प्रेषण नहीं हो सकता, परन्तु उसके अस्तित्व के बारे में अनुभव किया जा सकता है।

8– तथ्यों की प्रकृति के बारे में वैज्ञानिक एक मत होते हैं।

9– वैज्ञानिक अध्ययनों में काम में लिये जाने वाले तथ्य अर्थपूर्ण अथवा सैद्धान्तिक रूप से महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि उनका चयन बहुत ही सतर्कता एवं सावधानीपूर्वक निश्चित उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है।

10– मानव–जगत में व्यक्ति को प्रभावित करने वाले विभिन्न प्रकार के तथ्य हो सकते हैं, परन्तु समाजशास्त्र के अन्तर्गत मानव समाज को समझने के लिये हमें समस्त तथ्यों का अध्ययन नहीं करना होता है, प्रत्युत केवल सामाजिक तथ्यों का ही अध्ययन करना होता है।

फ्रेंच समाजशास्त्री इमाइल दुर्खीम के अनुसार समाज की रचना सामाजिक तथ्यों से होती है। दुर्खीम के ही शब्दों में, 'एक सामाजिक तथ्य कार्य करने का वह प्रत्येक ढंग है जो चाहे निर्धारित हो अथवा अनिर्धारित, जो व्यक्ति पर बाहरी दबाव डालने के योग्य हो अथवा जो एक निर्दिष्ट समाज में सर्वत्र सामान्य है ंतथा जिसका व्यक्तिगत अभिव्यक्तियों के होते हुए भी उनसे पृथक अपना एक स्वतन्त्र अस्तित्व बना रहता है।'

बहुधा विचारों के सामाजिक प्रघटनाओं तथा तथ्यों का आधार बताया जाता है। परन्तु दुर्खीम के अनुसार यह दृष्टिकोण त्रुटिपूर्ण है। उसने यह स्वीकार किया है कि सामाजिक प्रघटनाएँ व्यक्तिगत अथवा किसी व्यक्ति विशेष से सम्बन्ध नहीं रखती हैं। इसलिये वे व्यक्ति के मन के दायरे से बाहर हैं। इसी अर्थ में दुर्खीम ने यह मान्यता दी है कि 'सामाजिक तथ्यों को वस्तु मानों'। दुर्खीम के अनुसार, 'हमें साामजिक प्रघटनाओं को उनका प्रतिनिधित्व करने वाले सचेत रूप से बने मानसिक स्वरूपों से भिन्न समझना चाहिए, हमें सामाजिक प्रघटनाओं को वाह्य वस्तुओं के रूप से भिन्न समझना चाहिए।

तथ्यों का महत्व– तथ्य व्यक्ति और समाज के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन करते हैं, उनमें कुछ इस प्रकार हैं–

1– सिद्धान्त का निर्माण –तथ्य सिद्धान्तों की आधारशिला होते हैं। तथ्यों के अभाव में सिद्धान्तों का निर्माण करना अत्यन्त ही कठिन कार्य होता है। सिद्धान्त तथ्यों की सहायता से बनते हैं। सम्पूर्ण मानव जीवन अनेक तथ्यों से भरा हुआ है। इनत तथ्यों का तब तक कोई महत्व नहीं है, जब तक कि कोई वैज्ञानिक इन्हें देख न लें और उसके आधार पर सिद्धान्तों का निर्माण न कर दें। जब वैज्ञानिक तथ्यों को देखकर उसके अनुरूप अपने विचारों को परिपक्वता प्रदान करता है, तो इसे ही सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है।

2– सैद्धान्तिक पुननिर्माण – तथ्य का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य किसी विद्यामन तथ्य को अस्वीकार करना और उसका पुनर्निर्माण करना है। जब नवीन तथ्य सामने आते हैं, तो वैज्ञानिक प्राचीन तथ्यों पर आधारित सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा

करते हैं। उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि इससे पहले उन्होंने जिस सिद्धान्त का निर्माण किया था, वह अपना प्रभाव खो चुका है।

3– सिद्धान्त की पुनः व्याख्या– पुनः निर्मित सिद्धान्तों की नये सिरे से व्याख्या करना और उसे एक नई परिभाषा देना तथ्यों का महत्वपूर्ण कार्य है। नवीन तथ्यों के आ जाने से पुनः निश्रित सिद्धान्त स्पष्ट हो जाते हैं और वे सम्बन्धित घटना की अवधारणा को स्पष्ट नहीं कर पाते हैं। इसके लिए पुराने सिद्धान्तों का नवीनीकरण करके उसको पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता होती है।

12.4 तथ्यों के प्रकार

समाजिक अनुसंधान या शोध में विभिन्न प्रकार की सूचनाओं या तथ्यों की आवश्यकता होती है। इन्हें मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है– (1) प्राथमिक तथ्य या सूचनाएँ तथा (2) द्वितीयक तथ्य या सूचनाएँ। यहाँ हम इन दोनों के विषय में कुछ विस्तार में विवेचना करेंगे–

प्राथमिक तथ्य या सूचनाएँ–

प्राथमिक तथ्य वे मौलिक सूचनाएँ या आँकड़े होते हैं जो कि एक अनुसंधानकर्ता वास्तविक अध्ययन–स्थल में जाकर विषय या समस्या से सम्बन्धित जीवित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अथवा अनुसूची या और प्रश्नावली की सहायता से एकत्रित करता है अथवा प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा प्राप्त करता है। प्राथमिक तथ्य प्राथमिक इस अर्थ में होते हैं कि उन्हें अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन–उपकरणों की सहायता से प्रथम बार एकत्रित करता है अथवा निरीक्षण करता है। इस अर्थ में हम कह सकते हैं कि प्राथमिक तथ्यों को एकत्रित करने के दो प्रमुख स्त्रोत हो सकते हैं–एक तो जीवित व्यक्तियों से और दूसरा प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा। प्रथम स्त्रोत के अन्तर्गत वे व्यक्ति आते हैं जो कि अध्ययन–विषय या समस्या के सम्बन्ध में ज्ञान रखते हैं अथवा दीर्घ समय से उसके घनिष्ठ सम्पर्क में हैं। श्री पामर के अनुसार ऐसे व्यक्ति न केवल एक विषय की विद्यमान अवस्थाओं को बताने की योग्यता रखते हैं अपितु एक सामाजिक प्रक्रिया में हैं। अन्तर्निहित महत्वपूर्ण चरण व निरीक्षण योग्य झुकावों के सम्बन्ध में भी संकेत कर सकते हैं। यदि इन व्यक्तियों के चुनाव में सावधानी बरती जाए और विभिन्न पेशों व व्यापारों में लगे व्यक्तियों, उस क्षेत्र के पुराने निवासियों, सामुदायिक नेताओं आदि से सूचनाएँ एकत्रित की जाएँ तो वे अध्ययन कार्य के महत्वपूर्ण अंग बन सकते हैं।

प्राथमिक तथ्यों का दूसरा स्त्रोत प्रत्यक्ष निरीक्षण है। इस प्रकार के निरीक्षणों के द्वारा एक समुदाय या समूह के जीवन सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों को एकत्रित किया जा सकता है यदि निरीक्षण के दौरान अनुसंधानकर्ता ने पक्षपात या मिथ्याझुकाव का कोई चश्मा न पहन रखा हो। व्यक्ति के व्यवहार सम्बन्धी तथ्यों को एकत्रित करने के लिए प्रत्यक्ष निरीक्षण एक अति उत्तम स्त्रोत है। सहभागी निरीक्षण के द्वारा तो सामुदायिक जीवन से सम्बन्धित अति आन्तरिक व गुप्त बातों को भी जाना जा सकता है। इन स्त्रोतों के विषय में हम आगे की इकाई में विस्तारपूर्वक विवेचना करेंगे।

द्वितीयक तथ्य– द्वितीयक तथ्य वे सूचनाएँ अथवा आँकड़े हैं जो कि अनुसंधानकर्ता को प्रकाशित व अप्रकाशित प्रलेखों, रिपोर्ट, सांख्यिकी पाण्डुलिपि, पत्र, डायरी आदि से प्राप्त होते हैं। द्वितीयक तथ्यों की उल्लेखनीय विशेषता यह होती है कि ये तथ्य, सूचनाएं या आँकड़े स्वयं अनुसंधानकर्ता अपने कार्य में उपयोग करने के लिए एकत्रित कर लेता है। द्वितीयक तथ्यों के भी दो प्रमुख स्त्रोत होते हैं– एक तो व्यक्तिगत प्रलेख जैसे आत्मकथा, डायरी, पत्र आदि और दूसरा सार्वजनिक प्रलेख जैसे रिकार्ड, पुस्तकें, जनगणना रिपोर्ट विशिष्ट कमेटियों की रिपोर्ट, समाचारपत्र व पत्रिकाओं में प्रकाशित सूचनाएं आदि। द्वितीयक या प्रलेखनीय स्त्रोत वे होते हैं जो कि प्रकाशित या अप्रकाशित समस्त लिखित सामग्री का प्रतिनिधित्व करते हैं और जिसके माध्यम से अनुसन्धानकर्ता को अपने विषय से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं, आँकड़ें आदि प्राप्त हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, जनगणना–रिपोर्ट से हमें देश की जनसंख्या आदि विषयों के सम्बन्ध में जो गणनात्मक तथा वैषयिक आँकड़े व सूचनाएँ प्राप्त हो जाती हैं, उन्हें एकत्रित करना किसी भी व्यक्तिगत या सामूहिक अनुसंन्धानकर्ता के लिए सम्भव नहीं हैं। उसी प्रकार एक विषय से सम्बन्धित एक व्यक्ति के पत्रों तथा डायरी से उस व्यक्ति के आन्तरिक जीवन, मनोभाव तथा अन्य अनेक बातों का जिस रूप में हमें पता लगता है। वह अन्य किसी भी प्राथमिक स्त्रोत से हमें कदापि नहीं मिल सकता। साथ ही द्वितीयक स्त्रोतों से प्राप्त सूचनाएँ अध्ययन–विषय के सम्बन्ध में अनेक ऐसी प्राथमिकी व गहन जानकारी को प्रस्तुत करती हैं तथा उस विषय की एक ऐसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का निर्माण करती हैं कि उसे जाने बिना नवीन शोधकर्ता को सफलतापूर्वक उसके लक्ष्य तक पहुँचाना अत्यधिक कठिन होता है। इसीलिए श्री लुण्डबर्ग का सुझाव है कि प्रस्ताविक अनुसंधान को आरम्भ करने से पूर्व उसमें सम्बन्धित समस्त प्रलेखीय स्त्रोतों का सदैव सावधानीपूर्वक

सर्वेक्षण कर लेना चाहिए। एक ही कार्य को दोबारा करने की गलती करने, अध्ययन–पद्धति के सम्बन्ध में सुझाव प्राप्त करने, त्रुटियों से बचने, कठिनाइयों से अवगत होने आदि के लिए यह काम महत्वपूर्ण है। साथ ही, यदि हम अपने परिणामों की तुलना अन्य अनुसंधानकर्ताओं के परिणामों के साथ करना चाहते हैं तो भी हमें प्रलेखीय स्त्रोतों के माध्यम से उनके द्वारा अपनाई गई पद्धतियों से परिचित होना आवश्यक होगा। श्री लुण्डवर्ग के अनुसार, शिलालेख, स्तूप विभिन्न खुदाइयों से प्राप्त अस्थिपिंजर, भौतिक वस्तु आदि ऐतिहासिक स्त्रोत से प्राप्त तथ्य या सूचनाएँ भी द्वितीयक तथ्यों के अन्तर्गत आते हैं। इन समस्त स्त्रोतों का स्पष्टीकरण आगे की इकाई में किया जायेगा।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. तथ्यों के प्रकारों के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....
....
....
....
....
....
....
....

12.5 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में तथ्यों के प्रकारों के बारे में प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा भी प्रस्तुत की गयी है, जिसमें बताया गया है कि तथ्य वास्तव में घटित हो चुके घटनाओं को ही कहते हैं परन्तु तथ्य मूर्त रूप में सीमित नहीं होते हैं। सामाजिक विज्ञान में चिन्तन तथा अनुभव व मनोभावनाएँ तथ्य हैं। तथ्यों की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए यह बताया गया है कि तथ्य अस्थित्व में रहने वाली प्रघटनायें जिसमें सत्यता विद्यमान रहती है एवं जिनकी पुनर्परीक्षा की जा सकती है एवं जिनको देखना, समझना, अनुभव करना या जानना सम्भव होता है। वास्तव में तथ्य अनुभव के निर्माण में भी सहायक होते है। और जिनका प्रत्यक्ष प्रेषण नहीं हो सकता। इनकी प्रकृति के बारे में सभी वैज्ञानिक एक मत होते हैं। तथ्यों के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि ये सिद्धान्त के निर्माण, सैद्धान्तिक पुनर्निर्माण एवं सिद्धान्त की पुनः व्याख्या करने में सहायक होते हैं।

इसी इकाई में तथ्यों के प्रकारों के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें दो तरह के तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि प्राथमिक तथ्य वे मौलिक सूचनाएँ या आँकड़े होते हैं जो कि एक अनुसंधानकर्ता वास्तविक अध्ययन–स्थल में जाकर विषय या समस्या से सम्बन्धित जीवित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अथवा अनुसूची या और प्रश्नावली की सहायता से एकत्रित करता है अथवा प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा प्राप्त करता है। प्राथमिक तथ्य प्राथमिक इस अर्थ में होते हैं कि उन्हें अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन–उपकरणों की सहायता से प्रथम बार एकत्रित करता है अथवा निरीक्षण करता है। द्वितीयक तथ्यों के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि द्वितीयक तथ्य वे सूचनाएँ अथवा आँकड़े हैं जो कि अनुसंधानकर्ता को प्रकाशित व अप्रकाशित प्रलेखों, रिपोर्ट, सांख्यिकी पाण्डुलिपि, पत्र, डायरी आदि से प्राप्त होते हैं। द्वितीयक तथ्यों की

उल्लेखनीय विशेषता यह होती है कि ये तथ्य, सूचनाएं या आँकड़े स्वयं अनुसंधानकर्ता अपने कार्य में उपयोग करने के लिए एकत्रित कर लेता है। द्वितीयक तथ्यों के भी दो प्रमुख स्त्रोत होते हैं– एक तो व्यक्तिगत प्रलेख जैसे आत्मकथा, डायरी, पत्र संस्मरण आदि और दूसरा सार्वजनिक प्रलेख जैसे रिकार्ड, पुस्तकें, जनगणना रिपोर्ट विशिष्ट कमेटियों की रिपोर्ट, समाचारपत्र व पत्रिकाओं में प्रकाशित सूचनाएं आदि।

12.6 पारिभाषिक शब्दावली

तथ्य– स्वयं में एक अमूर्तिकरण है तथा इसे आनुभाविकीय सत्यापनीय रूप में समझा जाता है।

प्राथमिक तथ्य– प्राथमिक उन तथ्यों को कहा जाता है जो किसी अनुसंधान में शुरू से अन्त तक नये सिरे से संगहीत किये जाते है। इन तथ्यों को प्रथम बार ही संकलित किया जाता है अतः प्राथमिक तथ्य कहते हैं।

द्वितीयक तथ्य– द्वितीयक तथ्य उन तथ्यों को कहते हैं, जो सम्बन्धित अनुसंधान के पहले ही किसी अन्य अनुसंधान के लिए संग्रहीत कर लिये गये हैं एवं प्रकाशित कर दिये गये है तथा वर्तमान अनुसंधान में उनका प्रयोग किया जा रहा है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा लिखिये।

2– तथ्यों की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3– तथ्यों के महत्व पर प्रकाश डालिये।

4– प्राथमिक तथ्यों से आप क्या समझते है?

5– द्वितीयक तथ्यों से आप क्या समझते है?

विस्तृत

1– तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा लिखते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

2– तथ्य की परिभाष लिखते हुए इसके महत्व की विवेचना कीजिए।

3– तथ्यों के प्रकारों पर एक निबन्ध लिखिये।

12.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– यंग, पी0 वी0, "सांइंटिफिक सोशल सर्वे एवं रिसर्च", प्रेटिंस हॉल ऑफ इडिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली, वर्ष–1975, पेज 10

2– होलार्ड जान एण्ड फ्रैक, "स्कोरिंग ह्युमन मोटिब्ज", येल यूनिवर्सिटी प्रेस, वर्ष–1959, पेज–1

3– डिक्शनरी ऑफ सोशियोलोजी, न्यूयार्क, वर्ष–1944, पेज–113

4– थामस एण्ड जनानीकि, "दि पोलिस पीजेन्ट इन यूरोप एण्ड अमेरिका", न्यूयार्क, वर्ष–1927,

5– विलियम जे0 गुड तथा पाल के0 हाट, "मेथड्स इन सोशल रिसर्च", मैक्ग्रा–हील, कोगाकुशा लि0, न्यूयार्क, वर्ष–1952

6– सिंह डा. एस0 डी0, "वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूलतत्व", कमल प्रकाशन, इन्दौर वर्ष–1995, पेज–146–147

7– पाल्मर, बी.एम., "फिल्ड स्टडीज इन सोशियोलोजी", यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो, वर्ष–1928 पेज–57

8– लुण्डवर्ग, जार्ज, ए0, "सोशल रिसर्च", लांगमैन्स, ग्रीन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, वर्ष–1951, पेज–122

9– मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, "समााजिक शोध व सांख्यिकी", विवेक प्रकाशन, दिल्ली वर्ष–2000, पेज –159–160

खण्ड–तृतीय
तथ्य का एकत्रीकरण एवं विश्लेषण

इकाई : 13 तथ्य संकलन के स्त्रोत

13.0 इकाई का उद्देश्य

13.1 परिचय

13.2 तथ्य संकलन के स्त्रोत

  13.21 प्राथमिक या क्षेत्रीय स्त्रोत

  13.22 द्वितीयक या प्रलेखीय स्त्रोत

    13.22.1 व्यक्तिगत प्रलेख

    13.22.2 सार्वजनिक प्रलेख

13.3 सार–संक्षेप

13.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

13.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

13.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में तथ्य संकलन के स्त्रोतों के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें तथ्यों के स्त्रोत – प्राथमिक एवं द्वितीयक पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य तथ्यों के संकलन के स्त्रोतों से आप लोगों को परिचित करवाना है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे –

1– प्राथमिक स्त्रोत के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2– प्रत्यक्ष निरीक्षण स्त्रोत पर प्रकाश डाल सकेंगे।

3– प्रश्नावली के बारे में जान सकेंगे।

4– अनुसूची एवं साक्षात्कार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

5– द्वितीयक स्त्रोतों के बारे में लिख सकेंगे।

6– व्यक्तिगत प्रलेखों के बारे में जान सकेंगे।

7– जीवन इतिहास पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

8– डायरी के बारे में जान सकेंगे।

9– सार्वजनिक प्रलेख पर प्रकाश डाल सकेंगे।

10– पत्र के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

13.1 परिचय

किसी भी अनुसंधान को करने में सर्वप्रथम हमें तथ्यों की आवश्यकता होती है। ये तथ्य क्या होते हैं तथा कहाँ से प्राप्त किये जाते हैं इसका उल्लेख और जानकारी होना अति आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई में इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए तथ्यों के संकलन के स्त्रोत के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि तथ्य संकलन के दो स्त्रोत होते हैं जिसमें प्रलेखीय स्त्रोत और क्षेत्रीय स्त्रोत आते हैं। वास्तव में वृहद् रूप से देखा जाये तो प्राथमिक या क्षेत्रीय स्त्रोतों में प्रत्यक्ष निरीक्षण, प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार इत्यादि सम्मिलित होते हैं जबकि द्वितीयक या प्रलेखीय स्त्रोतों में जीवन इतिहास, डायरी, पत्र, संस्मरण इत्यादि एवं सार्वजनिक प्रलेखों में रिकार्ड, प्रकाशित आंकड़े, पत्र–पत्रिकाओं की रिपोर्ट इत्यादि सम्मिलित होते हैं।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग उपरोक्त के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

13.2 तथ्य संकलन के स्त्रोत

पूर्व इकाई से यह स्पष्ट है कि सूचनाएँ तथा तथ्य दो प्रकार के होते हैं, एक तो प्राथमिक और दूसरा द्वितीयक। दोनों प्रकार के तथ्यों को अलग–अलग स्त्रोतों से प्राप्त किया जाता है क्योंकि दोनों की प्रकृति अलग–अलग होती है। इन स्त्रोतों के विषय में अब कुछ विस्तार में विवेचना करेंगे।

श्रीमती यंग के अनुसार सूचनाओं के स्त्रोतों को दो मोटे भागों में विभाजित किया जाता है (1) प्रलेखीय स्त्रोत और (2) क्षेत्रीय स्त्रोत। प्रलेखीय स्त्रोत के अन्तर्गत, पुस्तक, रिकार्ड, पण्डुलिपि, पत्र आदि को सम्मलित किया जाता है, जबकि क्षेत्रीय स्त्रोत के एक विषय के सम्बन्ध में वास्तविक जानकारी रखने वाले अथवा अध्ययन–विषय से सम्बन्धित व्यक्तियों को सम्मिलित किया है।

प्रोफेसर बेगले के अनुसार सूचनाओं के दो प्रमुख स्त्रोत हैं।

(अ) प्राथमिक स्त्रोत और (ब) द्वितीयक स्त्रोत। प्राथमिक स्त्रोत के अन्तर्गत अध्ययन–विषय से सम्बन्धित वास्तविक व्यक्ति व प्रत्यक्ष निरीक्षण आता है, जबकि द्वितीयक स्त्रोत के अन्तर्गत सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं या व्यक्तियों द्वारा प्रकाशित या अप्रकाशित अथवा लिखित प्रलेख सम्मिलित हैं।

श्री लुण्डवर्ग ने सूचनाओं के स्त्रोतों को निम्नलिखित ढंग से प्रस्तुत किया है–

1– ऐतिहासिक स्त्रोत

(अ) प्रलेख, कागजात, शिलालेख आदि।

(ब) भूतत्वीय स्तरें, खुदाई से प्राप्त वस्तुएँ।

2– क्षेत्रीय स्त्रोत

(अ) जीवित व्यक्तियों से प्राप्त विशिष्ट सूचनाएँ।

(ब) क्रियाशील व्यवहारों का प्रत्यक्ष निरीक्षण।

श्री लुण्डबर्ग के अनुसार ऐतिहासिक स्त्रोत उन रिकार्ड़ों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो कि भूतकाल की घटनाएँ अपने पीछे छोड़ गई हैं जिनको कि उन साधनों द्वारा सुरक्षित रक्खा गया है जो कि मानव से परे हैं। उदाहरणार्थ, मोहन जोदड़ों, हड़प्पा आदि की खुदाई से जो विविध अवशेष प्राप्त हुए हैं उनको प्रकृति ने ही सुरक्षित रखा था उससे सिन्धु–घाटी की सभ्यता के सम्बन्ध में कितने ही अद्‌भुत रहस्य उद्‌घाटित हुए हैं। ऐतिहासिक स्त्रोतों का वास्तविक महत्व इसी में अन्तर्निहित हैं। इसी महत्व को दर्शाते हुए प्रोफेसर मैज ने लिखा है कि 'इतिहासवेत्ता को समाजशात्रियों की श्रेणी से बहिस्कृत कर देना कोई बुद्धिमत्ता का काम नहीं है, तथा केवल मूर्ख समाजशास्त्री ही प्रलेखों के उपयोग का त्याग करते हैं, चाहे वे समकालीन हो अथवा प्राचीन। श्री मैज ने यह भी लिखा है कि 'किसी संस्था का उसके पिछले इतिहास से सम्बन्धित एकान्तिक अध्ययन इतना ही अवास्तविक है जितना कि उसे सामाजिक परिस्थिति, जिसमें कि घटना घटित हुई है, के बाहर अध्ययन करना है।

ऐतिहासिक स्त्रोतों के अतिरिक्त उपरोक्त विद्वानों के विचारों के आधार पर सूचनाओं के दो प्रमुख स्त्रोतों का उल्लेख किया जा सकता है – (1) प्राथमिक या क्षेत्रीय स्त्रोत, तथा (2)

द्वितीयक अथवा प्रलेखीय स्त्रोत। इन स्त्रोतों की अलग–अलग कुछ विस्तारपूर्वक विवेचना यहाँ आवश्यक होगी।

13.21 प्राथमिक या क्षेत्रीय स्त्रोत

प्राथमिक या क्षेत्रीय स्त्रोत उन स्त्रोतों को कहते हैं जिनसे कि सर्वेक्षण या शोधकर्ता प्रथम बार स्वयं मूल तथ्यों या सूचनाओं को प्राप्त करता है। इस प्रकार एक विषय से सम्बन्धित जीवित व्यक्ति व घटनाएँ ही प्राथमिक स्त्रोत होते हैं जिनसे कि अनुसंधानकर्ता अपनी आवश्यकतानुसार तथ्यों को एकत्रित कर लेता है।

श्रीमती यंग के अनुसार प्राथमिक या क्षेत्रीय सूचना स्त्रोत निम्नलिखित हैं–प्रत्यक्ष निरीक्षण साक्षात्कार, प्रश्नावली तथा अन्य व्यक्ति। इनके विषय में हम संक्षेप में इस प्रकार विवेचना कर सकते हैं–

1– प्रत्यक्ष निरीक्षण– तथ्यों को एकत्रित करने का एक प्राथमिक स्त्रोत प्रत्यक्ष निरीक्षण है। अर्थात् अनुसंधानकर्ता स्वयं अध्ययन–स्थल पर जाकर अपने विषय से सम्बन्धित घटनाओं, वस्तुओं तथा व्यवहारों का स्वयं निरीक्षण करके सूचना एकत्रित करता है। समुदाय के रहन–सहन, रीति–रिवाज, तीज–त्यौहार भाषा, व्यवहार तथा समस्याओं से सम्बन्धित प्राथमिक तथ्यों या सूचनाओं को प्राप्त करने का एक निर्भरयोग्य स्त्रोत प्रत्यक्ष निरीक्षण ही है; यदि निरीक्षण के दौरान अनुसंधानकर्ता अपने को पक्षपात की भावना तथा मिथ्या–झुकाव से दूर रखने में समर्थ होता है। यह निरीक्षण सहभाग अर्थात् सामूहिक जीवन में स्वयं एक इकाई बनकर और प्रत्यक्षतः भाग लेकर निरीक्षण करना हो सकता है और असहभागी (अर्थात् कभी–कभी जाकर सामुदायिक जीवन व व्यवहार को देखना) भी।

2– प्रश्नावली– जब अध्ययन–क्षेत्र इतना विस्तृत होता है कि अनुसंधानकर्ता के लिए यह सम्भव नहीं होता कि वह विषय से सम्बन्धित अपने प्रश्नों का उत्तर सूचनादाताओं से स्वयं सम्बन्ध स्थापित करके प्राप्त कर सकता है, तो वह प्रश्नों की एक सूची डाक द्वारा सूचनादाताओं के पास इस अनुरोध के साथ भेज देता है कि उन प्रश्नों का उत्तर भरकर उसे लौटा दिया जाए। इसी को प्रश्नावली कहते हैं और प्राथमिक तथ्यों को एकत्रित करने का यह एक महत्वपूर्ण स्त्रोत होता है। प्रश्नावली एक ऐसा साधन है जिसकी सहायता से बड़े से बड़े क्षेत्र में फैले हए सूचनादाताओं से अप्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करना और महत्वपूर्ण सूचनाओं को एकत्रित करना सम्भव होता है, पर यह स्त्रोत तभी

सफलतापूर्वक कार्य करता है जबकि सूचनादाता पढ़े–लिखे हों और उनमें अनुसंधान कार्यों के प्रति सहयोग की भावना हो। भारत में इसी का अभाव होने के कारण यह स्त्रोत अधिक प्रभावपूर्ण प्रमाणित नहीं होता है।

3– अनुसूची– यह भी एक प्रकार का प्रपत्र ही है, पर इसे डाक द्वारा न भेजकर सूचनादाताओं के पास स्वयं जाकर इसे भरवा लिया जाता है, अथवा अनुसंधानकर्ता सूचनादाता से प्रश्न–पूँछकर उत्तर भर लेता है। यह स्त्रोत तभी लाभप्रद सिद्ध होता है जब कि अध्ययन–क्षेत्र बहुत विस्तृत न हो। पर इसके द्वारा अशिक्षित व्यक्तियों से भी सूचना प्राप्त की जा सकती है।

4– साक्षात्कार – प्राथमिक सूचनाओं को प्राप्त करने का एक और उल्लेखनीय साधन सम्बन्धित स्थानीय व्यक्तियों से स्वयं मिलकर व उनसे बातचीत करके विषय से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करना है। स्थानीय व्यक्ति उसे विषय के साथ अधिक समय से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होने के कारण उसके विषय में अधिक निर्भरयोग्य व वास्तविक जानकारी रखते हैं और इसीलिए उनसे साक्षात्कार करके न केवल अनेक महत्वपूर्ण सूचनाओं या तथ्यों को एकत्रित किया जा सकता है अपितु सामाजिक प्रक्रियाओं के सम्बन्ध में भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट है कि प्राथमिक स्त्रोत के अन्तर्गत स्वयं अनुसंधानकर्ता और सूचनादाता ही आते हैं। अनुसंधानकर्ता जो कुछ देखता–सुनता है और सूचनादाता जो कुछ कहता है या लिखित रूप में प्रश्नों का जो कुछ उत्तर देता है, वह विषय के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण तथ्य या सूचनाएँ होती हैं।

13.22 द्वितीयक या प्रलेखीय स्त्रोत

द्वितीयक या प्रलेखनीय स्त्रोत वे होते हैं जो कि प्रकाशित या अप्रकाशित समस्त लिखित सामग्री का प्रतिनिधित्व करते हैं और जिसके माध्यम से अनुसन्धानकर्ता को अपने विषय से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं, आँकड़ें आदि प्राप्त हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, जनगणना–रिपोर्ट से हमें देश की जनसंख्या आदि विषयों के सम्बन्ध में जो गणनात्मक तथा वैषयिक आँकड़े व सूचनाएँ प्राप्त हो जाती हैं, उन्हें एकत्रित करना किसी भी व्यक्तिगत या सामूहिक अनुसंन्धानकर्ता के लिए सम्भव नहीं हैं। उसी प्रकार एक विषय से सम्बन्धित एक व्यक्ति के पत्रों तथा डायरी से उस व्यक्ति के आन्तरिक जीवन, मनोभाव तथा अन्य अनेक बातों का जिस रूप में हमें पता लगता है वह अन्य किसी भी प्राथमिक स्त्रोत से हमें कदापि नहीं मिल सकता। साथ ही

द्वितीयक स्त्रोतों से प्राप्त सूचनाएँ अध्ययन–विषय के सम्बन्ध में अनेक ऐसी प्राथमिकी व गहन जानकारी को प्रस्तुत करतीं हैं तथा उस विषय की एक ऐसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का निर्माण करती हैं कि उसे जाने बिना नवीन शोधकर्ता को सफलतापूर्वक उसके लक्ष्य तक पहुँचना अत्यधिक कठिन होता है। इसीलिए श्री लुण्डबर्ग का सुझाव है कि प्रस्ताविक अनुसंधान को आरम्भ करने से पूर्व उसमें सम्बन्धित समस्त प्रलेखीय स्त्रोतों का सदैव सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण कर लेना चाहिए। एक ही कार्य को दोबारा करने की गलती करने, अध्ययन–पद्धति के सम्बन्ध में सुझाव प्राप्त करने, त्रुटियों से बचने, कठिनाइयों से अवगत होने आदि के लिए यह काम महत्वपूर्ण है। साथ ही, यदि हम अपने परिणामों की तुलना अन्य अनुसंधानकर्ताओं के परिणामों के साथ करना चाहते हैं तो भी हमें प्रलेखीय स्त्रोतों के माध्यम से उनके द्वारा अपनाई गई पद्धतियों से परिचित होना आवश्यक होगा।

द्वितीयक या प्रेलखीय स्त्रोतों के अन्तर्गत विद्वानों द्वारा लिखित ग्रन्थ, सर्वेक्षण रिपोर्ट, संस्मरण, यात्रा–वर्णन, पत्र डायरी, ऐतिहासिक प्रलेख, सरकारी आँकड़े तथा रिकार्ड, अन्य प्रकाशित रिकार्ड आदि सम्मिलित हैं। इन सभी स्त्रोतों को मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है– प्रथम व्यक्तिगत प्रलेखीय स्त्रोत तथा दूसरा सार्वजनिक प्रलेखीय स्त्रोत। इन दोनों स्त्रोतों की कुछ विस्तार में विवेचना कर लेना उचित होगा।

13.22.1 व्यक्तिगत प्रलेख

व्यक्तिगत प्रलेखों में वह समस्त लिखित सामग्री सम्मिलित है जो कि एक व्यक्ति के द्वारा स्वयं अपने विषय में अथवा सामाजिक घटनाओं के विषय में उसके अपने दृष्टिकोण से लिखी गई हो। यह कोई जरूरी नहीं हैं कि उन्हें लिखने वाले का दृष्टिकोण वैज्ञानिक हो अथवा सामाजिक शोध या अनुसंधान सम्बन्धी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही उसे उसने लिखा हो। अधिकांशतया ऐसा नहीं होता है और इन व्यक्तिगत प्रलेखों में लेखक के अपने दृष्टिकोण, मनोभाव, विचार व आदर्श ही मूर्त होते हैं। फिर भी यदि उसके द्वारा लेखक के अपने मनोभाव या आन्तरिक जीवन अथवा किसी सामाजिक संस्था या घटना के वर्णन पर प्रकाश पड़ता है तो वह स्वतः ही सामाजिक अनुसंधान व शोध के लिए महत्वपूर्ण आधार बन जाता है, क्योंकि इन प्रलेखों द्वारा न केवल लेखक की व्यक्तिगत स्थिति या जीवन पर ही प्रकाश पड़ता है, अपितु उस समाज या सामाजिक जीवन व प्रक्रियाओं का भी स्पष्टीकरण होता है जिसका कि लेखक भी एक इकाई का अंग है। श्री आलपोर्ट के अनुसार व्यक्तिगत प्रलेखों

को लिखने के 13 सम्भावित कारण होते हैं, जो कि इस प्रकार हैं—

1— अपने किसी कार्य के औचित्य को सिद्ध करने के लिए।

2— अपने दोषों की स्वीकृति के लिए।

3— घटनाओं के क्रमवद्ध वर्णन की इच्छा को चरितार्थ करने के लिए।

4— साहित्यिकता का आनन्द लेने के लिए अर्थात् व्यक्तिगत अनुभवों को साहित्यिक रूप देने के लिए।

5— व्यक्तिगत प्रलेखों के अनुसंधान के लिए।

6— मानसिक तनाव से छुटकारा पाने के लिए।

7— धन प्राप्ति के लिए।

8— किसी सौंपे हुए कार्य की पूर्ति के लिए (कभी—कभी इस प्रकार के प्रलेख दूसरों की आज्ञानुसार लिखे जाते हैं)।

9— चिकित्सा सम्बन्धी विवरण प्रस्तुत करने के लिए जैसे, मानसिक चिकित्सा के लिए पिछली घटनाओं तथा अनुभवों का वर्णन।

10— अपनी योग्यताओं को प्रदर्शित करने के लिए।

11— किसी सिद्धान्त या वाद को लोकप्रिय बनाने के लिये।

12— जनसेवा तथा कल्याण के लिए, और

13— अमरत्व प्राप्त करने के लिए।

व्यक्तिगत प्रलेखों को मोटे तौर पर चार प्रकारों में बांटा जा सकता है—

1— **जीवन—इतिहास**— प्रोफसर मैज के विचारानुसार वास्तविक अर्थ में जीवन इतिहास का अभिप्रायः विस्तृत आत्मकथा से है। सामान्य अर्थ में इसका प्रयोग प्रर्याप्त ढीले—ढाले तौर पर होता है और किसी भी जीवन सम्बन्धी सामग्री के लिए 'जीवन—इतिहास' वाक्यांश का प्रयोग कर लिया जाता है। कुछ भी हो, जीवनी अथवा आत्मकथाएँ प्रायः प्रख्यात व्यक्तियों अथवा महापुरुषों के द्वारा लिखी जाती हैं या तैयार की जाती हैं। कुछ भी हो, इन आत्मकथाओं से केवल लेखक के व्यक्तिगत जीवन की ही नहीं बल्कि उसके समाज तथा समूह के जीवन से सम्बन्धित अनेक घटनाओं तथा परिस्थितियों की झाँकी देखने को मिलती है। सबसे उल्लेखनीय बात तो यह है कि इन जीवनियों में ऐसी अनेक आन्तरिक या गुप्त बातों का भी उल्लेख रहता है, जिसे कि हम अन्य किसी भी रूप में जान नहीं सकते हैं।

उदाहरणार्थ, श्री चर्चिल की जीवनी द्वितीय महायुद्ध की एक ज्वलन्त झाँकी है, महात्मा गांधी तथा जवाहरलाल नेहरू की आत्मकथाएं वास्तव में भारत में स्वतन्त्रता संग्राम की आत्मकथाएं, भारतीय संस्कृति, समस्या व दर्शन की आत्मकथाएं हैं। इनके अध्ययन करने पर तत्कालीन भारतवर्ष की सामाजिक, सास्कृतिक, आर्थिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों व घटनाओं के सम्बन्ध में असंख्य महत्वपूर्ण सूचनाएँ व तथ्य प्राप्त होते हैं।

जीवन–इतिहास तीन प्रकार के होते हैं–

अ) स्वतःलिखित आत्मकथा–यह आत्मरचित है जो कि एक व्यक्ति स्वतः अपनी इच्छा से अपने जीवन की घटनाओं का रिकार्ड रखने के लिए लिखता है। अनेक दिन बाद भी पुरानी बातों को याद करके दुःख–सुख को अनुभव करने और आत्म विश्लेषण करने के लिए ही इस प्रकार की जीवनी लिखी जाती है और इसीलिए यह अधिकतर निष्पक्ष होती हैं।

ब) ऐच्छिक आत्मकथा– वे आत्मकथाएँ हैं जो किसी प्रकाशक या अन्य व्यक्ति के कहने से एक व्यक्ति ऐच्छिक तौर पर लिखता है।

स) संकलित जीवन–इतिहास–वे जीवनियाँ जो किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा लिखी जाती हैं। इसका तात्पर्य यह है कि मूलव्यक्ति स्वयं अपनी जीवनी–कथा नहीं लिखता है बल्कि उसके द्वारा विभिन्न अवसरों पर दिये गए व्याख्यान, लिखित रचनाएँ, साक्षात्कार के समय कही गई बातें, पत्र आदि के माध्यम से प्राप्त सामग्री को संकलित करके कोई दूसरा व्यक्ति उसकी जीवनी को तैयार करता है।

जीवन–इतिहास चाहे वह किसी प्रकार का भी क्यों न हो, सामाजिक शोध या अनुसंधान में उसका अत्यधिक महत्व होता है। इसका कारण यह है कि जीवनियों में व्यक्तिगत जीवन सम्बन्धी नीरस घटनाओं का ही वर्णन नहीं होता अपितु उनके माध्यम से अनेक महत्वपूर्ण सामाजिक घटनाओं, संस्थाओं तथा सामाजिक प्रक्रियाओं का भी पता चलता है। इतना ही नहीं, अपनी आत्मकथा लिखने वाला व्यक्ति तत्कालीन अनेक सामाजिक समस्याओं का अति रोचक व महत्वपूर्ण वर्णन के साथ–साथ अनेक रचनात्मक व व्यावहारिक सुझावों को भी प्रस्तुत करता है। तत्कालीन सामाजिक घटनाओं, समस्याओं तथा प्रक्रियाओं के सम्बन्ध में लेखक के व्यक्तिगत मनोभाव व दृष्टिकोण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का एक अति उत्तम साधन आत्मकथाएँ होती हैं जिनका कि मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्व

होता है। जीवनियाँ इतिहास की अपेक्षा सरल, रोचक तथा स्पष्ट होती हैं।

उपरोक्त महत्व होते हुए भी जीवनियों की अपनी कुछ सीमाएँ व दोष भी होते हैं। आत्मकथाओं में प्रायः लेखक केवल अपने व्यक्तिगत को ही बढ़ा–चढ़ाकर प्रस्तुत नहीं करते अपितु विभिन्न सामाजिक घटनाओं को भी अपने ढंग से प्र्याप्त रंग चढ़ाकर प्रस्तुत करते हैं। जब वे इस सम्बन्ध में सचेत रहते हैं कि उनकी जीवन–कथा प्रकाशित होगी तो वे स्वभावतः ही ऐसे तथ्यों को छुपा जाते हैं जो कि उनके व्यक्तित्व को जनता की निगाह में गिरा देने वाले होते हैं। उसी प्रकार सामाजिक व राजनैतिक नेता अपनी आत्मकथा में अपनी ही पार्टी के सिद्धान्तों को सर्वोत्तम प्रमाणित करने के लिए गलत तथ्यों को भी प्रस्तूत करने में संकोच नहीं करते। कभी–कभी तो ऐसा लगता है कि अपने व्यक्तित्व तथा पार्टी के सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए ही आत्मकथा लिखी गई है। ऐसा भी होता है कि प्रशासक धन कमाने के लिए जीवन की रोचक तथा आकर्षक घटनाओं को ही अत्यधिक महत्व देता है या लेखक स्वयं केवल ऐसी घटनाओं को ही जीवनी में सम्मिलित करता है जो कि उसके दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। ऐसी दशाओं में वास्तविकताओं से परिचित होने के सौभाग्य से हम वंचित ही रह जाते हैं।

2– डायरी– बहुत से लोगों की डायरी लिखने का शौक होता है जिसमें कि वे प्रतिदिन या विभिन्न अवसरों पर अपनी जीवन सम्बन्धी घटनाओं को तथा उसनके प्रति अपनी भावनाओं तथा प्रतिक्रियाओं को लिखते हैं। इन डायरियों में न केवल वह अपने जीवन के सम्बन्ध में लिखता है बल्कि उनके विषय में भी लिखता है जिनके कि सम्पर्क में वह रहता है या केवल कुछ समय के लिए ही सम्पर्क में आने का अवसर उसे प्राप्त होता है। डायरी उसकी अपनी निजी होती है इसलिए वह अत्यन्त गोपनीय बातों को भी उसमें सच्चाई के साथ लिपिबद्ध कर देता है। एक घटना या व्यक्ति के सम्बन्ध में वह जो कुछ दिल से अनुभव करता है उसी की सुस्पष्ट अभिव्यक्ति उसकी डायरी में मिलती है। इसीलिए अत्यन्त गोपनीय तथा अति आन्तरिक तथ्यों, विचारों तथा भावनाओं को जानने का डायरी से बढ़कर दूसरा कोई साधन नहीं हैं। क्रमबद्ध रूप में लिखी हुई डायरी जीवन–इतिहास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा विश्वसनीय आधार है।

सामाजिक शोध या अनुसंधान के क्षेत्र में डायरियों का अपना महत्व है। इसका कारण यह है कि डायरियाँ आत्मकथाओं की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय होती हैं क्योंकि बहुधा डायरियों को प्रकाशित करने के उद्देश्य से नहीं लिखा जाता है। इसीलिए

अत्यन्त गोपनीय विषयों को भी सच्चाई से लिख लिया जाता है क्योंकि लेखक को जनता के जान लेने का भय नहीं होता है। दूसरों की निगाहों में गिरने का भय न रहने के कारण घटनाओं के वर्णन में किसी भी प्रकार का तोड़–मरोड़ करने अथवा अपने विचारों को आकर्षक बनाने का मिथ्या प्रयत्न लेखक नहीं करता है। कभी–कभी तो डायरियाँ इसलिए भी लिखी जाती हैं कि बहुत–सी भावनाएँ व विचार, जिन्हें हम दूसरों के सामने कहने में संकोच करते हैं, डायरी में लिखकर अपने मन का भार हल्का कर लेते हैं। इसीलिए डायरियाँ व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी अनेक रहस्यों को उद्घाटित करती हैं और अनेक घटनाओं के सम्बन्ध में विश्वसनीय तथ्यों को प्रस्तुत करके शोध कार्य में सहायक सिद्ध होती हैं।

उपरोक्त महत्व के होते हुए भी डायरियों की अपनी कुछ सीमाएँ अथवा दोष भी होते हैं। इनका पहला दोष यह है कि वे जीवन के नाटकीय तथा संघर्षात्मक अंशों को बढ़ा–चढ़ाकर प्रकट करती हैं जबकि जीवन के शान्तिपूर्ण व स्वाभाविक पक्षों को उनमें स्थान नहीं मिलता है। दूसरी बात यह है कि डायरियों को रोज थोड़ा–थोड़ा करके लिखा जाता है इसलिए उसमें क्रमबद्धता का अभाव होता है। एक घटना को दूसरी घटना से जोड़ना अथवा दो विभिन्न समयों में घटित होने वाली एक ही प्रकार की घटना की तुलनात्मक विशेषता को दर्शाना डायरी में उल्लेखित विवरणों के आधार पर अत्यन्त कठिन होता है। डायरियों का तीसरा दोष यह है कि इनमें घटनाओं का संकेत मात्र मिलता है क्योंकि डायरी स्वयं अपने लिए लिखी जाती है और इसीलिए घटनाओं का विस्तार में समझाने की आवश्यकता नहीं समझी जाती है। अतः उसको समझने के लिए अनुसन्धानकर्ता को अपने अनुभवों पर निर्भर रहना पड़ता है। इस सम्बन्ध में चौथी कमी का भी उल्लेख किया जा सकता है और वह यह कि डायरी के अनेक लेखक डायरी में कल्पना व साहित्यिक भाषा की सहायता लेते हैं जिससे कि घटनाओं की स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है। डायरियों की पाँचवीं कमी यह होती है कि डायरियाँ प्रायः लगातार नहीं लिखी जाती हैं, कुछ समय तक लिखने के पश्चात् बन्द कर दिया जाता है या बीच–बीच में लिखा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि घटनाओं के वर्णन में क्रमबद्धता नष्ट हो जाती है। इन दोषों के होते हुए भी इतना मानना ही पड़ेगा कि डायरियों के माध्यम से हमें व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित अनेक आन्तरिक तथा गोपनीय तथ्य व सूचनाएँ अन्य, प्रलेखों की अपेक्षा कहीं अधिक विश्वसनीय होती है।

3– पत्र–पत्र व्यक्तिगत होते हैं और इसीलिए इनके माध्यम से एक व्यक्ति के आन्तरिक विचारों, भावनाओं तथा दृष्टिकोणों का पता चलता है। अपने पत्रों में लेखक प्रायः अकपट रूप में अपने विचारों को प्रस्तुत करता है इसीलिए उसमें व्यक्त उसके कथन पर्याप्त विश्वसनीय होते हैं। तलाक, पारिवारिक तनाव, प्रेम, मित्रता, वैवाहिक सम्बन्ध, यौन जीवन आदि महत्वपूर्ण कोमल सामाजिक सम्बन्धों की वास्तविकताओं पर पत्र पर्याप्त प्रकाश डालते हैं।

परन्तु पत्रों की अपनी कुछ सीमाएँ व दोष भी होते हैं और उनमें से सर्वप्रथम यह कि व्यक्तिगत पत्रों को प्राप्त करना बहुत कठिन होता है। अपने आन्तरिक जीवन से सम्बन्धित पत्रों को, विशेषकर उन पत्रों को जिनमें कि वैवाहिक जीवन व यौन जीवन का विवरण होता है, लोग नष्ट कर डालते हैं अथवा रहते हुए भी उन्हें देने से इन्कार कर देते हैं। पत्रों का दूसरा दोष यह है कि उनमें घटनाओं का विस्तृत विवरण नहीं मिलता है, उसके लिए कल्पना का सहारा लेना पड़ता है। तीसरा दोष यह है कि घटना की क्रमबद्धता को एक पक्ष के पत्रों से मालूम नहीं किया जा सकता। इसके लिए पत्र और उनके उत्तर दोनों का ही होना आवश्यक है जो कि प्रायः मिल नहीं पाता है पत्रों का चौथा व अन्तिम दोष यह है कि पत्रों में व्यक्त विचार या वर्णन केवल तभी विश्वसनीय होता है जब कि पत्र पाने और पत्र लिखने वाले का पारस्परिक सम्बन्ध आन्तरिक व घनिष्ठ है। यदि ऐसा नहीं है तो पत्रों में बनाबटीपन व औपचारिकता आ ही जाती है।

4– संस्मरण– मनुष्यों के द्वारा यात्राओं, जीवन–घटनाओं अथवा महत्वपूर्ण परिस्थितियों के विषय में लिखे गए संस्मरण भी सामाजिक अनुसंधान में महत्वपूर्ण सामग्री प्रदान करते हैं। प्राचीन काल में इस प्रकार यात्रा–वर्णनों तथा संस्मरणों ने महत्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री प्रदान करके तत्कालीन सामाजिक तथा सांस्कृतिक अवस्थाओं का विवरण प्रस्तुत करने में अत्यधिक सहायता की है। सर्वश्री मैगास्थनीज, ह्वेनसाँग, फाहियान, इब्नबतूता के वर्णन अब भी भारतीय–इतिहास की अमूल्य निधि हैं। इनके वर्णनों से उस समय के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक जीवन के सम्बन्ध में हमें जो जानकारी प्राप्त होती है वह वास्तव में महत्वपूर्ण है।

परन्तु संस्मरण की अपनी कुछ ऐसी सीमाएँ व दोष हैं जिनके कारण सामाजिक अनुसन्धानकर्ता को इनसे अधिक लाभ नहीं होता है। उन दोषों में सबसे उल्लेखनीय दोष यह है कि इन संस्मरणों में लेखक के व्यक्तिगत विचारों तथा कल्पनाओं का इतना अधिक पुट होता है कि वह वास्तविक घटनाओं का उचित

प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता है। इन संस्मरणों को लिखने वाले प्रायः अधिक रोचक, रोमांचकर व आकर्षक घटनाओं को ही अपने विवरण के लिए चुन लेते हैं और साथ ही उसमें अपना रंग चढ़ाकर उन्हें प्रस्तुत करते हैं।

व्यक्तिगत प्रलेखों का महत्व – उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट है कि सामाजिक अनुसन्धान व शोधकार्य में व्यक्तिगत प्रलेखों का अपना महत्व है। व्यक्तिगत जीवन व घटनाओं के सम्बन्ध में ही नहीं अपितु सामाजिक प्रक्रियाओं को भी समझने में इनकी सहायता अत्यावश्यक है। इन प्रलेखों द्वारा विचारों तथा मनोवृत्तियों का जितना स्पष्टीकरण सम्भव होता है उतना अन्य किसी साधन के द्वारा नहीं। व्यक्तिगत मनोभाव व दृष्टिकोणों को ठीक से जान लेने से सामाजिक अनुसन्धान में घटनाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने में अत्यन्य सहायता मिलती है। व्यक्तिगत प्रलेखों का एक और उल्लेखनीय महत्व यह है कि इनसे प्राप्त सूचनाएँ व तथ्य तुलनात्मक रूप में अधिक विश्वसनीय होते हैं, विशेषकर उन अवस्थाओं में जब कि लेखक का उद्देश्य अपने लेखों को प्रकाशित करना नहीं होता है। वास्तविक तथ्यों का ज्ञान उनके मूलरूप में व्यक्तिगत प्रलेखों द्वारा हमें जितनी सरलता से प्राप्त हो जाता है, उतना और किसी स्त्रोत से नहीं।

व्यक्तिगत प्रलेखों की सीमाएँ – व्यक्तिगत प्रलेखों की सीमाएँ अग्रलिखित हैं –

1– इन्हें सरलता से प्राप्त नहीं किया जा सकता।

2– ये व्यक्तिगत प्रलेखों में जो कुछ लिखा है वह सच है अथवा नहीं इस बात की जाँच करना कठिन होता है।

3– व्यक्तिगत प्रलेखों से प्राप्त तथ्य या सूचनाएँ प्रायः विकृत भी होती हैं।

4– इनसे प्राप्त सूचनाएँ सम्बन्धी समाज या समुदाय का उचित प्रतिनिधित्व नहीं कर पातीं।

13.22.2 सार्वजनिक प्रलेख

तथ्य या सूचना प्राप्त करने का जो प्रलेखीय स्त्रोत है उसका दूसरा प्रकार–भेद सार्वजनिक प्रलेख हैं। सार्वजनिक प्रलेख वास्तव में वे रिकार्ड होते हैं जिन्हें कि कोई सरकारी या गैर–सरकारी संस्था तैयार करती है। ये दो प्रकार के होते हैं – एक तो अप्रकाशित सार्वजनिक प्रलेख जैसे विभिन्न कम्पनियों, सरकारी विभागों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा तैयार रिकार्ड जो कि आम जनता के लिए नहीं होता है और प्रायः उन्हें गोपनीय रक्खा

जाता है। दूसरे, प्रकाशित सार्वजनिक रिकार्ड जैसे किसी कमेटी द्वारा सार्वजनिक हित से सम्बन्धित किसी विषय के सम्बन्ध में तैयार की गयी रिपोर्ट जो कि हर आम–खास के लिए उपलब्ध हो सकती हैं। इन दोनों प्रकार के प्रलेखों को निम्नलिखित उपभागों में विभाजित किया जा सकता है।

1– रिकार्ड– विभिन्न सरकारी तथा गैर–सरकारी संस्थाओं को अपने प्रतिदिन के काम–काज के लिए अथवा प्रशासकीय आवश्यकताओं को पूर्ति के हेतु अनेक आँकड़ों तथा सूचनाओं का रिकार्ड रखना पड़ता है। इसके अध्ययन से अनेक सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। उदाहरणार्थ, प्रोबेशन दफ्तर में प्रोबेशन पर छोड़े गए अपराधियों का जो रिकार्ड रहता है उससे इन अपराधियों के सम्बन्ध में अनेक उल्लेखनीय व महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त हो सकती हैं जो कि उनके विषय में किसी भी शोधकार्य का आधार बन सकती है। इस प्रकार के रिकार्डों के अतिरिक्त दस्तावेज, बहीखाता, सभाओं, समितियों व कान्फ्रेसों की रिपोर्ट, लोक–सभा तथा अन्य समितियों की कार्यवाही के रिकार्ड भी इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं और सामाजिक अनुसंधान कार्य में पर्याप्त सहायक सिद्ध होते हैं क्योंकि इनसे प्राप्त सूचनाएँ विश्वसनीय होती हैं, पर कठिनाई यह होती है कि ये रिकार्ड प्रायः मिल नहीं पाते हैं।

2– प्रकाशित आँकड़े – सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा अनेक प्रकार के आँकड़े संकलित तथा प्रकाशित किए जाते हैं। भारत सरकार के सूचना मंत्रालय द्वारा प्रतिवर्ष प्रकाशित 'भारत–2014 आदि में अनेक महत्वपूर्ण आंकड़ों का संकलन देखने को मिलता है। इसी प्रकार विभिन्न चैम्बर आफ कामर्स आदि अपने–अपने क्षेत्र से सम्बन्धित आँकड़ों को प्रकाशित करते रहते हैं। प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाले ईयर बुक में भी विविध विषयों पर आंकड़ों का उत्तम संकलन देखने को मिलता है।

3– पत्र–पत्रिकाओं की रिपोर्ट– समाचार पत्र व पत्रिकाओं में समय–समय पर सामाजिक जीवन व घटनाओं से सम्बन्धित अनेक प्रकार की रिपोर्ट तथा सूचनाएँ प्रकाशित होती रहती है, जिनका कि उपयोग आवश्यकतानुसार सामाजिक शोधकार्य में किया जा सकता है। पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादकीय लेख जनमत के झुकाव को जानने का एक अति उत्तम साधन हैं।

4– अन्य सामग्री– अन्य बहुत से प्रकाशित प्रलेख भी तत्कालीन सामाजिक जीवन तथा घटनाओं को समझने में पर्याप्त सहायक सिद्ध होते हैं। उदाहरणार्थ कहानी, उपन्यास, ग्राम्य गीत, चित्र आदि की सहायता से हम जन–जीवन सम्बन्धी अनेक

वास्तविकताओं को जान सकते हैं क्योंकि इन सबके रचयिता किसी न किसी सामाजिक घटना या समस्या को अपने प्रलेख का आधार बनाते हैं।

द्वितीयक या प्रलेखीय स्त्रोतों का उपयोग

द्वितीयक या प्रलेखीय स्त्रोतों से प्राप्त तथ्यों या सूचनाओं को बिना समझे–बूझे काम में लाना अत्यन्त घातक सिद्ध हो सकता है। अतः इन स्त्रोतों से उपलब्ध तथ्यों को उपयोग में लाने से पूर्व उनकी विश्वसनीयता के सम्बन्ध में निःसन्देह ही लेना आवश्यक है। सरकारी विभागों द्वारा प्रकाशित आंकड़े भी काल्पनिक हो सकते हैं। लेखक ने एक विभागीय अधिकारी को यह कहते हुए सुना है कि ''पिछले कुछ वर्षों के आंकड़ों के आधार पर ही वर्तमान आँकड़ों को, बिना वास्तविक सूचनाओं को प्राप्त किए, प्रस्तुत करना कोई कठिन काम नहीं है क्योंकि वे आंकड़े गलत हैं यह प्रमाणित करने के लिए कम–से–कम एक साल का समय चाहिए और उस दौरान आंकड़ों में और आगे परिवर्तन हो चुके होते हैं।'' अतः इन स्त्रोतों से प्राप्त सूचनाओं या आंकड़ों की हर सम्भावित उपायों से पुनर्परीक्षा कर लेना आवश्यक होता है। इन पुनर्परीक्षा का एक उपाय तथ्यों का आलोचनात्मक विवेचन है। प्रो0 चैपिन ने समालोचना के सिद्धान्तों को निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया है –

(1) सर्वप्रथम प्रलेखों की उनके बाह्य या वैषयिक विशेषताओं के सन्दर्भ में समालोचना करनी चाहिए –

(अ) लेखक की आलोचनात्मक परीक्षा होनी चाहिए।

(ब) स्त्रोतों का आलोचनात्मक वर्गीकरण कर लेना चाहिए।

(स) अनुसन्धानकर्ता को अतिछिद्रान्वेषण से बचना चाहिए, नही ंतो वह उसी–भर का हो जाएगा और सूचनाओं को अपने लक्ष्य तक पहुँचने के साधन के रूप में उपयोग नहीं कर पाएगा।

(2) इसके पश्चात् प्रलेखों की उनकी आन्तरिक या व्यक्तिनिष्ठ विशेषताओं के सन्दर्भ में समालोचना करनी चाहिये। इस प्रकार की आलोचना अधिक महत्वपूर्ण है। यह विश्लेषणात्मक समालोचना है।

(अ) एक कथन से लेखक का क्या तात्पर्य है? उस कथन का साहित्यिक अर्थ नहीं, वास्तविक अर्थ क्या है?

(ब) क्या वह कथन सत्यनिष्ठा के साथ कहा गया है?

(i) क्या पाठक को धोखा देने में लेखक का कोई स्वार्थ था?

(ii) क्या असत्य कहने के सम्बन्ध में लेखक पर दबाव डाला गया?

(iii) क्या असत्य कहने के सम्बन्ध में लेखक सहानुभूति अथवा विरोधाभाव द्वारा प्रभावित था?

(iv) क्या झूठे–अभियान ने लेखक को प्रभावित किया?

(v) क्या वह जनमत द्वारा प्रभावित था?

(vi) क्या सत्य को विकृत करने का कोई साहित्यिक या नाटकीय इरादे का कोई प्रमाण है?

(स) क्या कथन यथार्थ अथवा ठीक है? या और भी विशिष्ट रूप में–

(i) क्या आपने मानसिक दोष या अस्वाभाविकता के कारण लेखक एक तुच्छ निरीक्षक था?

(ii) क्या समय तथा स्थान के विषय में लेखक की स्थिति खराब होने के कारण यह ठीक से निरीक्षण न कर सका?

(iii) क्या वह लापरवाह या उदासीन था?

(iv) क्या तथ्य इस प्रकार का था कि उसका प्रत्यक्ष निरीक्षण सम्भव न था?

(v) क्या लेखक एक मूक–दर्शक या एक प्रशिक्षित निरीक्षक था?

(द) जब यह प्रतीत हो कि लेखक कोई मूल निरीक्षक नहीं था, तब उसके सूचना के स्त्रोतों की सत्यता व यथार्थता की जाँच कर लेना आवश्यक है।

(3) विशिष्ट तथ्यों की जाँच तुलनात्मक विधि द्वारा कर लेनी चाहिए जो कि सहमति और असहमति दोनों को ही ध्यान में रखता है और हर सम्भावित आधारों पर निष्कर्ष निकालता है।

उपरोक्त आधारों पर परीक्षणात्मक जाँच कर लेने से द्वितीयक स्त्रोतों से प्राप्त सूचनाओं व आँकड़ों की विश्वसनीयता

के सम्बन्ध में निश्चित हुआ जा सकता है और अनुसंधान–कार्य में अधिकाधिक परिशुद्धता व यथार्थता पनपने की सम्भावना रहती है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. प्राथमिक या क्षेत्रीय स्त्रोत के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. द्वितीयक या प्रलेखीय स्त्रोत का अर्थ लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

13.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में तथ्य संकलन के स्त्रोतों के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि तथ्य संकलन के दो स्त्रोत होते हैं जिसमें प्राथमिक स्त्रोत तथा द्वितीयक स्त्रोत आते हैं। प्राथमिक स्त्रोत उन स्त्रोतों को कहते हैं जिनसे कि सर्वेक्षण या शोधकर्ता प्रथम बार स्वयं मूल तथ्यों या सूचनाओं को प्राप्त करता है। इस प्रकार एक विषय से सम्बन्धित जीवित व्यक्ति व घटनाएँ ही प्राथमिक स्त्रोत होते हैं जिनसे कि अनुसन्धानकर्ता अपनी आवश्यकतानुसार तथ्यों को एकत्रित करता है। द्वितीयक स्त्रोतों पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि ये वे स्त्रोत होते हैं जो कि प्रकाशित या अप्रकाशित समस्त लिखित सामग्री का प्रतिनिधित्व करते हैं और जिसके माध्यम से अनुसन्धानकर्ता को अपने विषय से सम्बन्धित अनेक महत्वूपर्ण सूचनाएँ, आंकड़े आदि प्राप्त हो जाते हैं। प्राथमिक स्त्रोतों के विभिन्न प्रकारों की भी विवेचना की गई है जिसमें प्रत्यक्ष निरीक्षण, प्रश्नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार आदि सम्मिलित हैं। द्वितीयक स्त्रोतों के दो प्रकार होते हैं जिसमें व्यक्तिगत प्रलेख तथा सार्वजनिक प्रलेख उल्लेखनीय हैं। व्यक्तिगत प्रलेखों की प्रकारों की व्याख्या करते समय जीवन इतिहास, डायरी, पत्र तथा संस्मरण के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। सार्वजनिक प्रलेखों के विभिन्न प्रकारों जैसे रिकार्ड, प्रकाशित आंकड़े, पत्र पत्रिकाओं की रिपोर्ट तथा अन्य सामग्री पर भी प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत इकाई की रूपरेखा इस प्रकार से प्रस्तुत की गयी है कि तथ्य संकलन के स्त्रोतों के बारे में आप लोगों को अधिक–से–अधिक जानकारी प्राप्त हो सकेगी जिसका प्रयोग भविष्य में होने वाले अनुसंधानों में आसानी से आप लोग कर सकेंगे। आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी।

13.4 पारिभाषिक शब्दावली

प्राथमिक स्त्रोत – प्राथमिक स्त्रोत का तात्पर्य उस स्त्रोतों से है जिनसे कि सर्वेक्षण या शोधकर्ता प्रथम बार स्वयं मूल तथ्यों या सूचनाओं को प्राप्त करता है।

प्रत्यक्ष निरीक्षण – तथ्यों को एकत्रित करने का एक प्राथमिक स्त्रोत प्रत्यक्ष निरीक्षण है जिसके माध्यम से अनुसन्धानकर्ता स्वयं अध्ययन स्थल पर जाकर अपने विषय से सम्बन्धित घटनाओं, वस्तुओं तथा व्यवहारों का स्वयं निरीक्षण करके सूचना एकत्रित करता है।

प्रश्नावली – प्रश्नावली प्रश्नों की एक सूची होती है जिसको अनुसन्धानकर्ता पत्र व्यवहार के माध्यम से उत्तरदाताओं को भेजता है तथा उनसे निवेदन करता है कि वे स्वयं प्रश्नावली को भरकर वापस भेज दें।

द्वितीयक स्त्रोत – द्वितीयक स्त्रोत से तात्पर्य उन स्त्रोतों से है जो कि प्रकाशित या अप्रकाशित समस्त लिखित सामग्री का प्रतिनिधित्व करत हैं और जिसके माध्यम से अनुसन्धानकर्ता को अपने विषय से सम्बन्धित अपने महत्वपूर्ण सूचनाएँ, आंकड़े आदि प्राप्त हो जाते हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– प्राथमिक तथ्यों से आप क्या समझते हैं?

2– ऐतिहासिक स्त्रोतों पर प्रकाश डालिए।

3– प्रत्यक्ष निरीक्षण क्या है?

4– प्रश्नावली से आप क्या समझते हैं?

5– द्वितीयक स्त्रोत पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

6– जीवन इतिहास के बारे में संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत कीजिए।

7– डायरी पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

8– पत्र क्या होते हैं?

9– संस्मरण पर प्रकाश डालिए।

10– व्यक्तिगत प्रलेखों की सीमाएँ लिखिए।

11– रिकार्ड के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

12– प्रकाशित आंकड़ों से आप क्या समझते हैं?

13– द्वितीयक स्त्रोतों के उपयोग के बारे में लिखिए।

विस्तृत

1– प्राथमिक या क्षेत्रीय स्त्रोतों के बारे में प्रकाश डालिए।

2– द्वितीयक या प्रलेखीय स्त्रोतों पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

3– व्यक्तिगत प्रलेख क्या हैं? इनके महत्व व सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

4– सार्वजनिक प्रलेखों पर निबन्ध लिखिए।

13.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– यंग, पी0 वी0, ''सांइंटिफिक सोशल सर्वे एवं रिसर्च'', प्रेटिंस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, वर्ष–1975, पेज 127

2– लुण्डवर्ग, जार्ज, ए0, ''सोशल रिसर्च'', लांगमैन्स, ग्रीन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, वर्ष–1951, पेज–122

3– बागले, डब्ल्यू0 ए0, ''सोशल रिसर्च'', लॉगमैंन्स, ग्रीन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, वर्ष–1951, पेज–122

4– मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, ''समााजिक शोध व सांख्यिकी'', विवेक प्रकाशन, दिल्ली, वर्ष–2000, पेज –160–173

5– चैपिन, एफ0 एस0, ''फील्ड वर्क एण्ड सोशल रिसर्च'', सेंचुरी प्रेस, न्यूयार्क, वर्ष–1920, पेज – 37–38

खण्ड–तृतीय
तथ्य का एकत्रीकरण एवं विश्लेषण

इकाई : 14 सर्वेक्षण के लक्ष्य एवं विशेषतायें

14.0 इकाई का उद्देश्य

14.1 परिचय

14.2 सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

14.3 सर्वेक्षण की विशेषतायें

14.4 सर्वेक्षण के लक्ष्य

14.5 सार–संक्षेप

14.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

14.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

14.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सर्वेक्षण के लक्ष्य एवं विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है जिसमें सर्वेक्षण की परिभाषाओं का भी उल्लेख किया गया है। प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य सर्वेक्षण के लक्ष्यों एवं विशेषताओं के बारे में आप लोगों को ज्ञान प्रदान करना है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे –

1– सर्वेक्षण के अर्थ एवं परिभाषा को लिख सकेंगे।

2– सर्वेक्षण की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

3– सर्वेक्षण के लक्ष्यों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

4– सर्वेक्षण की विषय सामग्री के बारे में लिख सकेंगे।

5– सर्वेक्षण की प्रकृति व विशिष्ट लक्षणों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

14.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में सर्वेक्षण के लक्ष्य एवं विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। वास्तव में सामाजिक विज्ञानों में प्रयोग की

जाने वाली सर्वेक्षण की मौलिक प्रक्रिया प्रविधियों का एक संयोजन है जो विभिन्न अनुसंधान–अनुशासनों में विकसित की गई हैं। उदाहरणस्वरूप साक्षात्कार की प्रक्रियाएँ अधिकांशतः मनोवैज्ञानिकों, मानवशास्त्रियों तथा अन्य के अनुभव पर आधारित हैं, जिन्होंने वैयक्तिक साक्षात्कार का प्रयोग एक अनुसंधान उपकरण के रूप में तथा निदान विधा या चिकित्सा विज्ञान के साधनों के रूप में किया जिसका बहुत पहले प्रयोग सर्वेक्षण के लिए किया गया था। अनुमापन की प्रविधियाँ तथा मापन की अन्य विधियाँ समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान से ली गई हैं। प्रतिदर्श की विधियाँ कृषि–अर्थशास्त्र से ली गई हैं। अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विधियाँ राजनीतिशास्त्र सहित अन्य विविध क्षेत्रों से ली गई हैं। विपुल तथ्य समग्र के सांख्यिकी विश्लेषण की प्रविधियां सामाजिक विज्ञानों में मात्रात्मक अनुसंधान के सभी क्षेत्रों में सामान्य हैं।

सर्वेक्षण उपकरण किसी एक समाज विज्ञान अनुशासन की विशिष्ट विधि नहीं है, बल्कि इसका प्रयोग अनेक क्षेत्रों में विस्तृत रूप से किया जाता है। इस विस्तृत प्रयोग की योग्यता ने व्यावहारिक विज्ञानों में सर्वेक्षण प्रविधियों को महान उपादेयता प्रदान की है।

सर्वेक्षण उन व्यक्तियों अथवा उन व्यक्तियों के प्रतिदर्श के प्रत्यक्ष सम्पर्क पर आधारित है, जिनकी विशेषताएँ, अथवा अभिवृत्तियाँ किसी विशिष्ट अनुसंधान के लिये प्रासंगिक हैं। इस प्रकार सर्वेक्षण विधि आनुभविक अध्ययन है तथा पुस्तकालयी अनुसंधानों से पूर्णतया भिन्न है।

सर्वेक्षण प्रविधि का प्रयोग विशेषकर तब किया जाता है जबकि वाँछित सूचनाएं अन्य स्त्रोतों से उतनी आसानी एवं कम व्यय से प्राप्त नहीं की जा सकती हैं। सर्वेक्षण के लिए समग्र का चयन सर्वेक्षण के उद्देश्यों से निर्धारित होता है। कभी–कभी पूरे राष्ट्र को लेकर सर्वेक्षण किया जाता है। कभी–कभी किसी भौगिालिक क्षेत्र विशेष या नगर को ही समग्र मान लिया जाता है। अनेक सर्वेक्षणों में किसी निश्चित व्यवसाय, प्रजाति, धर्म, सेवा की अवधि, शैक्षिक स्तर, अथवा राजनीतिक सम्बद्धता के लोगों के समग्र का सर्वेक्षण किया जाता है। ऐसे भी सर्वेक्षण किए जाते हैं जिनमें तलाकशुदा पुरुषों या स्त्रियों, उच्च कक्षा में विद्यार्जन करने वाले धार्मिक सम्प्रदाय के व्यक्तियों इत्यादि को समग्र मानकर उनके किसी व्यवहार सम्बन्धी समस्या का अध्ययन करने

के उद्देश्य से उनसे प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श लेकर उसका सर्वेक्षण किया जाता है।

14.2 सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

सर्वेक्षण पद का प्रयोग इतना अधिक और इतने विस्तृत रूप में किया गया है कि इसकी कोई निश्चित सार्वभौमिक परिभाषा देना समीचीन प्रतीत नहीं होगा, क्योंकि कोई एक निश्चित परिभाषा इसकी सभी विशेषताओं, उद्देश्यों, प्रकारों एवं अभिकल्पों पर प्रकाश डालने में सक्षम नहीं होगी। तथापि इसका सम्यक् अवबोध प्राप्त करने के लिए कुछ प्रतिष्ठित शब्दकोषों, विश्वकोषों एवं लेखकों द्वारा प्रस्तुत की गई सर्वेक्षण की परिभाषाएँ, जो यहाँ प्रस्तुत की जा रही हैं, विशेष रूप से दृष्टव्य हैं:–

डिक्शनरी ऑफ सोशियोलॉजी के अनुसार, 'एक समुदाय के लगभग सम्पूर्ण जीवन अथवा उसके किसी एक पक्ष जैसे– स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन के सम्बन्ध में तथ्यों के प्रायः व्यवस्थित तथा विस्तृत एवं विश्लेषण को ही मोटे तौर पर सर्वेक्षण कहा जाता है।'

बेब्सटर न्यू कालिजिएट डिक्शनरी के अनुसार, ' सर्वेक्षण एक आलोचनात्मक निरीक्षण है जो प्रायः सही सूचना प्रदान करने के लिए सरकारी तौर पर किया जाता है –यह प्रायः परिस्थिति विशेष के दृष्टिकोण से एक क्षेत्र का अध्ययन है, जैसे कि एक विद्यालय का सर्वेक्षण।

एफ0 एल0 ह्वीटनी के शब्दों में–''सर्वेक्षण आधुनिक सामाजिक विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली के अनुसार, एक सामाजिक संस्था, समूह या क्षेत्र की वर्तमान प्रस्थिति का विश्लेषण, निर्वचन तथा प्रतिवेदन करने का एक संगठित प्रयास है।''

ए0 एफ0 वेल्स के अनुसार, ' साधारणतया सामाजिक सर्वेक्षण को किसी विशिष्ट प्रदेश में रहने वाले व्यक्तियों के समूह की सामाजिक संस्थाओं व क्रिया–कलापों के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।'

बोगार्डस के शब्दों में – 'विस्तृत रूप से सामाजिक सर्वेक्षण किसी एक समुदाय विशेष के लोगों के जीवन–निर्वाह तथा कार्य की दशाओं के सम्बन्ध में तथ्यों का संकलन करता है।'

मार्क अब्राहम्स के अनुसार, ''सामाजिक सर्वेक्षण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक समुदाय की रचना तथा उसकी क्रियाओं के

सामाजिक पक्ष के सम्बन्ध में परिमाणात्मक तथ्य एकत्रित किए जाते हैं।''

सिन पाओ यांग के अनुसार, ''सामाजिक सर्वेक्षण प्रायः एक समूह के लोगों की रचना, क्रिया–कलापों तथा रहन–सहन की दशाओं के सम्बन्ध में एक छानबीन है।''

इ0 डब्ल्यू0 बर्जेस के अनुसार, ''एक समुदाय का सर्वेक्षण सामाजिक विकास की रचनात्मक योजना प्रस्तुत करने के उद्देश्य से किया गया, उसकी दशाओं तथा आवश्यकताओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।''

एच0 एन0 मोर्स के अनुसार, ''संक्षेप में सामाजिक सर्वेक्षण किसी एक सामाजिक परिस्थिति, समस्या अथवा जनसंख्या के परिभाषित उद्देश्यों के लिए एक वैज्ञानिक तथा व्यवस्थित रूप में विश्लेषण करने की पद्धति है।''

सी0 ए0 मोजर एवं जी0 काल्टन के शब्दों में, ''समाजशास्त्री को सर्वेक्षणों को क्षेत्र–अन्वेषण, अध्ययन के विषय पर प्रत्यक्ष रूप से तथा घुमा–फिराकर दत्त–सामग्री के संकलन के एक ढंग तथा एक अत्यधिक लाभपूर्ण ढंग के रूप में देखना चाहिए ताकि समस्या पर प्रकाश पड़ सके तथा अपनाये जाने वाले योग्य बातों के विषय में सुझाव दिया जा सके।''

करलिंगर के अनुसार, ''सर्वेक्षण अनुसंधान समाज वैज्ञानिक खोज की वह शाखा है जो समाजशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक परिवत्यों की सापेक्ष घटना, आबंटन और पारस्परिक सम्बन्धों का पता लगाने के लिए समग्र से चुने हुए प्रतिदर्शों के चुनाव एवं अध्ययन द्वारा बड़ी एवं छोटी जनसंख्याओं (या समग्रों) का अध्ययन करती है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं पर विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक अनुसंधान की वह विशिष्ट शाखा है जिसके अन्तर्गत किसी निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले सम्पूर्ण व्यक्तियों अथवा सम्पूर्ण व्यक्तियों के प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श के सामाजिक जीवन के किसी पक्ष या व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों तथा इनके पारस्परिक सम्बन्धों को ज्ञात करने के संदर्भ में व्यवस्थित रूप से तथ्य–सामग्री का संकलन विश्लेषण तथा निर्वचन किया जाता है।

सर्वेक्षण की प्रकृति व विशिष्ट लक्षण – उपरोक्त परिभाषाओं के विवेचना के आधार पर विशेष रूप से यह कहा जा सकता है कि सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति वैज्ञानिक है। इस आधारभूत रूप में एक वैज्ञानिक पद्धति कहा जा सकता है क्योंकि

यह वह साधन है जिसके द्वारा सामाजिक घटनाओं तथा सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में हम निर्भरयोग्य तथ्यों का संकलन कर सकते हैं। इस दृष्टिकोण से सामाजिक सर्वेक्षण का सम्बन्ध सामाजिक घटनाओं तथा सामाजिक समस्याओं से है। पर इस सम्बन्ध में एक उल्लेखनीय शर्त यह है कि सामाजिक सर्वेक्षण एक ही समय में सम्पूर्ण समाज की सभी घटनाओं या समस्याओं का अध्ययन नहीं करता है। इसका अध्ययन–क्षेत्र एक समय में एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र के अन्तर्गत सीमित रहता है। श्री हैरीसन के मतानुसार केवल वे ही घटनाएँ सामाजिक सर्वेक्षण द्वारा अध्ययन की जा सकती हैं जो भौगोलिक रूप से सीमित हों। सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति की यह एक उल्लेखनीय विशेषता है। इसका कारण भी स्पष्ट है और वह यह कि चूँकि सामाजिक सर्वेक्षण में सर्वेक्षणकर्ता को स्वयं घटनाओं का निरीक्षण, साक्षात्कार आदि करना पड़ता है, इस कारण असीमित अध्ययन–क्षेत्र को चुनना सम्भव नहीं होता है। अतः अपनी वैज्ञानिक प्रकृति को बनाए रखने के लिए सामाजिक सर्वेक्षण को अपने अध्ययन–क्षेत्र को सीमित करना ही पड़ता है।

सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति व विलक्षणता के सम्बन्ध में दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि बहुधा सामाजिक समस्या से ही अपने को सम्बन्धित रखता है। सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करने के लिए सामाजिक सर्वेक्षण को उन समस्याओं से सम्बन्धित आँकड़ों का संकलन करना पड़ता है और साथ–साथ उनका विश्लेषण व विवेचना भी करनी पड़ती है। श्री मोजर ने लिखा है कि सामाजिक सर्वेक्षण एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा तथ्यों का संकलन किया जाता है जिससे कि समस्या का विषय की यथार्थताओं को समझना हमारे लिए सम्भव हो।

सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति व विलक्षणता के सम्बन्ध में एक और उल्लेखनीय बात यह है कि सामाजिक सर्वेक्षण में कुछ अन्तर्निहित उद्देश्य होता है। यह उद्देश्य तथ्य–संकलन व वर्णन दोनों ही हो सकता है। अधिकांश सर्वेक्षण समाज या समुदाय से सम्बन्धित भिन्न–भिन्न घटनाओं के विषय में तथ्यों को संकलित करने के उद्देश्य से किया जाता है। पर ये तथ्य तब तक अर्थहीन है जब तक उनका वर्णन उचित ढंग से करके उन्हें बोध के योग्य न बनाया जाए। इसीलिए सामाजिक सर्वेक्षण न केवल तथ्यों को संकलित करता है, अपितु उनका वर्णन व विश्लेषण भी करता है।

सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति सामाजिक है, न कि प्राकृतिक। इसका तात्पर्य यह है, जैसा कि उपरोक्त विवेचना से ही स्पष्ट है, कि सामाकि सर्वेक्षण का सम्बन्ध सामाजिक घटनाओं सामाजिक तथ्यों या सामाजिक समस्याओं से होता है, न कि

प्राकृतिक घटनाओं या समस्याओं से और भी संक्षेप में, सामाजिक सर्वेक्षण का सम्बन्ध सामाजिक दुनिया से होता है।

सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति व विलक्षण के सम्बन्ध में अन्तिम उल्लेखनीय बात यह है कि इसमें सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही प्रकार के उद्देश्य निहित हो सकते हैं। सैद्धान्तिक इस अर्थ में कि सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा संकलित तथ्य एक घटना या समस्या के सम्बन्ध में हमें यथार्थ, ज्ञान प्रदान करता है अथवा हमारी जानकारी को विस्तृत करता है। पर साथ ही, इस जानकारी के आधार पर समस्या के समाधान हेतु या समाज–सुधार की योजना बनाने के उद्देश्य की पूर्ति के हेतु चूँकि सामाजिक सर्वेक्षण को उपयोगी पाया जा सकता है, इस कारण सामाजिक सर्वेक्षण को व्यावहारिक भी माना जा सकता है।

14.3 सर्वेक्षण की विशेषतायें

सामाजिक सर्वेक्षण की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1– सामाजिक सर्वेक्षण, सामाजिक अनुसंधान की कोई विशेष पद्धति नहीं है, बल्कि सामाजिक अनुसंधान की विशिष्ट विधियों, प्रविधियों तथा उपकरणों का नियोजित संगठन है।

3– इसके अन्तर्गत किसी भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले सम्पूर्ण व्यक्तियों अथवा सम्पूर्ण व्यक्तियों के प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श से तथ्य सामग्री का संकलन किया जाता है।

4– इसमें प्रायः अधिकांशतः समग्र का अध्ययन करने के लिए उस समग्र के प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श का अध्ययन किया जाता है। इसलिए ऐसे अध्ययन का उल्लेख प्रायः प्रतिदर्श सर्वेक्षण के नाम से किया जाता है।

5– इसमें तथ्य–सामग्री का संकलन व्यक्तियों के सामाजिक जीवन के किसी पक्ष या व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों तथा इसके पारस्परिक सम्बन्धों को ज्ञात करने के संदर्भ में किया जाता है।

6– इसके अन्तर्गत तथ्य–सामग्री का संकलन व्यक्तियों से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके किया जाता है ।

7– इसके अन्तर्गत वैयक्तिक साक्षात्कार प्रयोग द्वारा अथवा तथ्य–सामग्री संकलन के अन्य उपायों या साधनों के आधार पर तथ्य–सामग्री का संकलन किया जाता है।

8– इसके अन्तर्गत यथासम्भव तात्कालिक सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करने का प्रयास किया जाता है तथा साथ ही अध्ययन की उपलब्धियों के आधार पर समस्या के हल या समाधान के लिए एक उपयुक्त रचनात्मक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया जाता है।

9– सामाजिक सर्वेक्षण यद्यपि एक सहकारी प्रक्रिया है, तथापि लघु सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित समाजिक सर्वेक्षण एक व्यक्ति द्वारा भी सम्पादित किया जा सकता है। यह सहकारी प्रक्रिया एक प्रकार का सहकारी अनुशासन है जिसमें विभिन्न विज्ञानों के विशेषज्ञ अपनी–अपनी सेवाओं को योगदान करते हैं।

10– इसके अन्तर्गत यद्यपि अधिकांशतः परिमाणात्मक तथ्य–सामग्री ही संकलित की जाती है, तथापि आवश्यकतानुसार इसमें गुणात्मक तथ्य सामग्री का संग्रहण भी किया जा सकता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. सर्वेक्षण की विशेषताएँ लिखिए।

....
....
....
....
....

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

14.4 सर्वेक्षण के लक्ष्य

सर्वेक्षण के लक्ष्य अत्यधिक विस्तृत हैं। मोजर तथा काल्टन के अनुसार, 'एक सर्वेक्षण जन–साधारण के किसी पक्ष पर प्रशासनिक तथ्यों की आवश्यकता अथवा किसी कार्य–कारण सम्बन्ध की गवेषणा करने अथवा समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के किसी पक्ष पर नया प्रकाश डालने के लिए किया जा सकता है।' इस प्रकार मोजर तथा काल्टन ने सामाजिक सर्वेक्षण के वर्णानात्मक तथा व्याख्यात्मक दोनों प्रयोजनों पर बल दिया है। परन्तु विवेचनात्मक अध्ययन की असुविधा हेतु सामाजिक सर्वेक्षण के विभिन्न लक्ष्यों को हम निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत कर सकते हैं –

1– सूचना प्रदान करना – अधिकांश सर्वेक्षणों का लक्ष्य केवल किसी व्यक्ति को सूचना प्रदान करना होता है। वह व्यक्ति सरकारी विभाग का हो सकता है जो यह जानना चाहता हो कि लोग भोजन पर कितना व्यय करते हैं, अथवा व्यापार से सम्बन्धित हो सकता है, जो यह जानना चाहता हो कि लोग कौन सी प्रक्षालक सामग्री का प्रयोग कर रहे हैं, अथवा कोई अनुसंधान संस्था हो सकती है, जो वृद्धावस्था की पेंशन पाने वालों के करों की स्थिति का पता लगाना चाहती हो।

2– सामाजिक स्थितियों, सम्बन्धों तथा व्यवहारों का अध्ययन– एक समाज वैज्ञानिक के लिए एक सर्वेक्षण का समान रूप से पूर्णतया वर्णानात्मक लक्ष्य सामाजिक स्थितियों, सम्बन्धों तथा व्यवहारों के रूप में ही हो सकता है। इस सम्बन्ध में उदाहरणस्वरूप, विभिन्न प्रकार के परिवारों का आकार, बनावट तथा सामाजिक स्थिति, व्यय तथा उनकी आय इत्यादि से सम्बन्धित तथ्य एकत्रित किये जा सकते हैं। वास्तव में सामाजिक विज्ञानों के तथ्य संकलन के इस प्रारम्भिक स्तर में सर्वेक्षणों के विषयों के विस्तार की वस्तुतः कोई सीमा नहीं है।

3— सामाजिक क्रियाओं में कार्य—कारण सम्बन्ध में गवेषणा— अनेक सर्वेक्षणों का लक्ष्य वर्णन के बजाय व्याख्या करना होता है। वास्तव में सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करते समय उन घटनाओं में अन्तर्निहित कारणों की खोज की जाती है क्योंकि सामाजिक सर्वेक्षण की प्रथम मान्यता है कि शून्य से किसी जीव की उत्पत्ति नहीं हो सकती। दूसरे शब्दों में, इसमें यह मानकर चला जाता है कि प्रत्येक कार्य का एक कारण होता है। अतः सामाजिक घटना आकस्मिक नहीं होती है। उदाहरणस्वरूप, 'आत्महत्या' से सम्बन्धित सामाजिक सर्वेक्षण में 'आत्महत्या' को एक सामाजिक कार्य मानकर उसके कारणों की गवेषणा की जाती है। वेश्यावृत्ति से सम्बन्धित सामाजिक सर्वेक्षण में वेश्यावृत्ति को एक सामाजिक कार्य मानकर उसके कारणों की व्याख्या की जाती है। कई बार सर्वेक्षण के आधार पर हम दो परिवर्त्यों के बीच के सम्बन्ध का अध्ययन करना चाहते हैं, उदाहरणस्वरूप, सिगरेट पीने तथा कैन्सर के रोग में क्या सम्बन्ध है?, क्या अध्यापकों द्वारा पढ़ाये गये छात्रों की उपलब्धि अधिक अच्छी होती हैं? क्या आयु बढ़ने के साथ अध्यापन कुशलता बढ़ती है? आदि अनेक ऐसे उदाहरण हो सकते हैं जो यह बताते हैं कि सर्वेक्षण का उपयोग परिवर्त्यों के मध्य सम्बन्ध में अध्ययन करने हेतु किया जा सकता है।

4— प्राक्कल्पनाओं का प्रतिपादन तथा परीक्षण— एक अत्यधिक विकसित स्तर पर आयोजित किये जाने वाले सर्वेक्षणों का लक्ष्य न केवल प्राक्कल्पनाओं का प्रतिपादन करना ही होता है, बल्कि उनके परीक्षण करने का भी उद्देश्य होता है। एक विशिष्ट अनुसंधान के अन्तर्गत सर्वेक्षण के उद्देश्य इस बात पर निर्भर करते हैं कि उपलब्ध ज्ञान की सीमा क्या है? तथा अध्ययन से प्राप्त परिणामों का क्या और किस प्रकार उपयोग किया जाता है।

5— सामाजिक सिद्धान्तों का सत्यापन— सामाजिक सिद्धान्तों के सत्यापन की आवश्यकता इसलिये पड़ती है, क्योंकि इन सिद्धान्तों का निर्माण एक विशेष सामाजिक व्यवस्था के सन्दर्भ में ही किया जाता है। सामाजिक व्यवस्था सदैव एक—सी नहीं रहती वरन् उसमें परिवर्तन होते रहते हैं। अतएव प्राचीनकाल की सामाजिक व्यवस्था के सन्दर्भ में जो सिद्धान्त बनाये गये हैं, वे नई व परिवर्तित सामाजिक व्यवस्था के लिये अनुपयुक्त प्रमाणित हो सकते हैं। अतः ऐसी स्थिति में पूर्व के बने सामाजिक सिद्धान्तों में परिवर्तन व परिवर्धन करने की आवश्यकता हो सकती है। यही कारण है कि परिवर्तित सामाजिक व्यवस्था के पूर्व में बने सामाजिक नियमों तथा सिद्धान्तों के सत्यापन की आवश्यकता होती है।

6— व्यावहारिक उपयोगितावादी अथवा सुधारात्मक दृष्टिकोण — प्रायः अधिकांश सर्वेक्षणों का लक्ष्य व्यावहारिक अथवा उपयोगितावादी होता है। सामाजिक स्थितियों तथा समस्याओं का वैज्ञानिक सर्वेक्षण

सामाजिक–रोग मीमांसा में सहायक होता है जिससे योजनाओं को आयोजित करने में आसानी होती है। इस प्रकार इसके अन्तर्गत सामाजिक सुधार, तथा समस्याओं के समाधान हेतु रचनात्मक योजना प्रस्तुत कर निश्चयात्मक कदम उठाये जाते हैं। सामाजिक सुधार तथा समस्याओं के समाधान की रचनात्मक योजनाएँ समुदाय विशेष की स्थिति एवं समस्याओं की भयंकरता के अनुसार लागू की जाती हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सर्वेक्षणकर्ता सामाजिक योजना बनाने वाला नहीं होता है। वह तो मात्र अपने सर्वेक्षण से प्राप्त ज्ञान के आधार पर रचनात्मक योजना बनाने के लिये आवश्यक सिद्धान्तों को प्रतिपादित करता है। उसको वास्तविक रूप से क्रियान्वित करने का कार्य तो प्रशासकों, राष्ट्रनेताओं तथा समाज सुधारकों का होता है। इस प्रकार उपयोगिता की दृष्टि से सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक विकास एवं समस्याओं के समाधान का वैज्ञानिक प्रयास है।

7– किसी व्यवहार अथवा प्रघटना का पूर्वानुमान लगाना– सामाजिक सर्वेक्षण का एक उल्लेखनीय कार्य मानव व्यवहार अथवा घटनाओं का पूर्वानुमान लगाना भी है। अनेक बार राजनीतिक दलों के सदस्य चुनावों के पूर्व सर्वेक्षण करके यह पूर्वानुमान लगाते हैं कि कौन से दल को कितने मत मिलने की सम्भावना है। इसी तरह तात्कालिक परिस्थितियों का सर्वेक्षण करके यह भी पूर्वानुमान लगाया जा सकता है कि इस वर्ष फसल कितने प्रतिशत बढ़ सकती है अथवा देश में कितने पर्यटकों की आने की सम्भावना है।

8– सामाजिक नियमों की गवेषणा तथा सामान्यीकरण– प्रायः प्रत्येक अनुसंधान का कार्य कुछ विशेष नियमों का पता लगाना होता है। कुछ सामाजिक सर्वेक्षणों द्वारा भी सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करके नियमों की खोज की जाती है तथा उनका सामान्यीकरण किया जाता है।

सर्वेक्षण की विषय–सामग्री – मोजर ने सामाजिक सर्वेक्षण की विषय–सामग्री को चार भागों में विभाजित किया है। अग्रलिखित हैं –

मोजर ने सर्वेक्षण की विषय–सामग्री को चार भागों में विभाजित किया है, जो अग्रलिखित हैं–

1– व्यक्तियों के एक समूह की जनांकिकीय विशेषताएँ – जनांकिकीय विशेषताओं से तात्पर्य परिवार अथवा कुटुम्ब की रचना, वैवाहिक स्थिति, जनन क्षमता तथा आयु आदि विषयों से हैं। यह सत्य है कि कुछ सामाजिक सर्वेक्षण परिशुद्ध रूप से जीवन के जनांकिकीय पक्ष पर आधारित होते हैं परन्तु सामान्यतया यह देखा जाता है कि प्रत्येक प्रकार के सर्वेक्षण में इस क्षेत्र से सम्बन्धित कुछ प्रश्न अवश्य ही पाये जाते हैं।

2– व्यक्तियों के एक समूह का सामाजिक पर्यावरण – सामाजिक पर्यावरण का तात्पर्य उन सभी सामाजिक तथा आर्थिक कारकों से हो जो लोगों के जीवन में सदा ही विद्यमान रहते हैं। इसके अन्तर्गत लोगों के व्यवसाय, आय, मकानों की स्थिति तथा सामाजिक सुख–साधन सम्मिलित हैं।

3– व्यक्तियों के एक समूह की क्रियाएँ – सामाजिक सर्वेक्षण की इस श्रेणी के अन्तर्गत पेशों की अतिरिक्त लोगों द्वारा की जाने वाली अन्य समस्त सामाजिक क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है, उदाहरणस्वरूप, लोगों का रेडियो सुनना, अखबार पढ़ना, व्यय के प्रतिमान, विश्राम का उपयोग, यात्रा करने की प्रवृत्तियाँ, खेल एवं बाहर क्रिया–कलापों में लोगों की अभिरूचि आदि।

4– व्यक्तियों के एक समूह के विचार तथा अभिवृत्तियाँ – समाज में अनेक ऐसी सामाजिक समस्याएँ होती हैं जिनका निवारण अथवा उपचार करने के लिए यह जानना आवश्यक होता है कि इन समस्याओं के प्रति समुदाय के लोगों के क्या विचार व अभिवृत्तियाँ हैं। उनके विचार तथा अभिवृत्तियों को जानने व भली–भाँति समझने के उपरांत ही समस्या का निराकरण करना सम्भव होता है।

यद्यपि मोजर ने सामाजिक सर्वेक्षण की विषय–वस्तु को चार भागों ने विभाजित किया है तथापि यह कहा जा सकता है कि उपयुक्त वर्गीकरण अन्तिम सत्य नहीं है। वास्तव में सामाजिक सर्वेक्षण की विषय–सामग्री के सम्बन्ध में कोई सम्पूर्ण सूची बनाना प्रायः सम्भव नहीं है क्योंकि अनुसंधान व सर्वेक्षण का विषय–क्षेत्र समाज विज्ञान में उत्तरोत्तर प्रगति के साथ–साथ स्वतः ही विस्तृत एवं व्यापक होता जाता है। अतः किसी अन्तिम क्षेत्र का निर्धारण करना उचित कार्य नहीं होगा।

14.5 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में सर्वेक्षण के लक्ष्य एवं विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है जिसमें सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषाएँ भी स्पष्ट की गयी हैं जिसमें बताया गया है कि विस्तृत रूप से सामाजिक सर्वेक्षण किसी एक समुदाय विशेष के लोगों के जीवन निर्वाह तथा कार्य की दशाओं के सम्बन्ध में तथ्यों का संकलन करता है। सर्वेक्षण की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए बताया गया है कि यह किसी भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले सम्पूर्ण व्यक्तियों के प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श से तथ्य का संकलन करता है तथा इसमें तथ्य सामग्री का संकलन व्यक्तियों के सामाजिक जीवन के किसी पक्ष या व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों तथा इसके पारस्परिक सम्बन्धों को ज्ञात करने के संदर्भ में किया जाता है। इसके अंतर्गत तथ्य सामग्री का संकलन व्यक्तिों से

प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके किया जाता है। सर्वेक्षण के लक्ष्यों पर प्रकाश डालते हुए बताया गया है कि सूचना प्रदान करना, सामाजिक स्थितियों, सम्बन्धों तथा व्यवहारों का अध्ययन, सामाजिक क्रियाओं में कार्यकारण सम्बन्ध की गवेषणा, प्राक्कल्पनाओं का प्रतिपादन तथा परीक्षण, सामाजिक सिद्धान्तों का सत्यापन, व्यावहारिक उपयोगितावादी अथवा सुधारात्मक दृष्टिकोण, किसी व्यवहार या घटना का पूर्वानुमान लगाना एवं सामाजिक नियमों की गवेषणा तथा सामान्यीकरण सम्मिलित हैं। इसी इकाई में सामाजिक सर्वेक्षण के प्रकृति एवं लक्षणों के बारे में भी बताया गया है जिसमें उल्लेख किया गया है कि इसकी प्रकृति वैज्ञानिक है तथा यह सामाजिक समस्या से ही अपने आप को सम्बन्धित रखता है। वास्तव में सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति सामाजिक है न कि प्राकृतिक। इकाई के अन्त में सामाजिक सर्वेक्षण की विषय सामग्री के बारे में लिखते हुए बताया गया है कि यह व्यक्तियों की एक समूह की जनांकिकीय विशेषताएँ, व्यक्तियों के एक समूह का एक सामाजिक पर्यावरण, व्यक्तियों के एक समूह की क्रियाएँ तथा व्यक्तियों के एक समूह के विचार तथा आवृत्तियाँ विषय सामग्री में अन्तर्निहित होती हैं।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोगों के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी एवं आप लोग सर्वेक्षण के लक्ष्यों, विशेषताओं, प्रकृति एवं लक्षणों, सर्वेक्षण की विषय सामग्री इत्यादि के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

14.6 पारिभाषिक शब्दावली

सर्वेक्षण – सर्वेक्षण का आशय सामाजिक अनुसंधान की वह विशेष शाखा से है जिसके अन्तर्गत किसी निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले सम्पूर्ण व्यक्तियों अथवा सम्पूर्ण व्यक्तियों के प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श के सामाजिक जीवन के किसी पक्ष या व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों तथा इनके पारस्परिक सम्बन्धों को ज्ञात करने के सम्बन्ध में व्यवस्थित रूप से तथ्य सामग्री का संकलन, विश्लेषण तथा विवेचन किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषाओं पर प्रकाश डालिए।

2– सर्वेक्षण की विशेषताओं के बारे में लिखिए।

3– सर्वेक्षण के लक्ष्यों पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

4– सर्वेक्षण के विषय–सामग्री पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

5– सर्वेक्षण की प्रकृति एवं विशिष्ट लक्षणों के बारे में प्रकाश डालिए।

विस्तृत

1– सर्वेक्षण का अर्थ बताते हुए इसकी परिभाषाओं की विवेचना कीजिए।

2– सर्वेक्षण को परिभाषित करते हुए इसके लक्ष्यों के बारे में प्रकाश डालिए।

3– सर्वेक्षण की विषय सामग्री एवं लक्षणों पर एक निबंध लिखिए।

4– सर्वेक्षण के लक्ष्यों एवं विषय सामग्री के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

14.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– फेयरचाइल्ड, एच0 पी0, ''डिक्शनरी ऑफ सोशियोलोजी'', फिलोसोफिकल लाइबरैरी, न्यूयार्क, वर्ष–1944, पेज–10

2– बेब्सटर, न्यू कोलिजिएट डिक्शनरी, मैरियन्स मैसाचुयेट्स, वर्ष–1949, पेज–855

3– बोगार्डस, ई.एस., ''लोकल सोशल सर्वे इन ग्रेट ब्रिटेन'', एलिन एण्ड अनविन, लन्दन, वर्ष–1935, पेज–7

4– सिंह, डा० एस.डी., ''वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूलतत्व'', कमल प्रकाशन, इंदौर, वर्ष–1995, पेज नं.–76–79, 85–86

5– मुकर्जी, रविन्द्रनाथ, ''सामाजिक शोध व सांख्यिकी'', विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष–2000, पेज – 29–31

MASW-06/196

खण्ड–तृतीय
तथ्य का एकत्रीकरण एवं विश्लेषण

इकाई : 15 तथ्य संकलन की प्रविधियां : अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, वैयक्तिक अध्ययन

15.0 इकाई का उद्देश्य

15.1 परिचय

15.2 प्रश्नावली की अवधारणा

15.21 प्रश्नावली का अर्थ एवं परिभाषा

15.22 प्रश्नावली की विशेषतायें

15.3 अवलोकन की अवधारणा

15.31 अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा

15.32 अवलोकन की विशेषतायें

15.4 साक्षात्कार की अवधारणा

15.41 साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा

15.52 साक्षात्कार की विशेषतायें

15.5 अनुसूची की अवधारणा

15.51 अनुसूची का अर्थ एवं परिभाषा

15.52 अनुसूची की विशेषतायें

15.6 वैयक्तिक अध्ययन की अवधारणा

15.61 वैयक्तिक अध्ययन का अर्थ एवं परिभाषा

15.62 वैयक्तिक अध्ययन की विशेषतायें।

15.7 सार–संक्षेप

15.8 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

15.9 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

15.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में तथ्य संकलन की प्रविधियाँ, प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची तथा वैयक्तिक अध्ययन के बारे में

प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य आप लोगों को उपरोक्त प्रविधियों के बारे में जानकारी प्रदान करना है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में ज्ञान अर्जित कर सकेंगे –

1– प्रश्नावली की अवधारणा को समझ सकेंगे।

2– प्रश्नावली का अर्थ एवं परिभाषा के बारे में लिख सकेंगे।

3– प्रश्नावली की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– अवलोकन की अवधारणा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

5– अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

6– अवलोकन की विशेषताओं को लिख सकेंगे।

7– साक्षात्कार की अवधारणा को जान सकेंगे।

8– साक्षात्कार का अर्थ, परिभाषा के बारे में ज्ञान अर्जित कर सकेंगे।

9– साक्षात्कार की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

10– अनुसूची की अवधारणा के बारे में जान सकेंगे।

11– अनुसूची का अर्थ एवं परिभाषा लिख सकेंगे।

12– अनुसूची की विशेषताओं पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

13– वैयक्तिक अध्ययन की अवधारणा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

14– वैयक्तिक अध्ययन का अर्थ एवं परिभाषा पर प्रकाश डाल सकेंगे।

15– वैयक्तिक अध्ययन की विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

15.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में तथ्य संकलन की प्रविधियों के बारे में विवेचना प्रस्तुत की गयी है जिसमें बताया गया है कि प्रश्नावली की अवधारणा क्या है?, इसका अर्थ एवं परिभाषा भी उल्लिखित की गयी है। वास्तव में प्रश्नावली प्रश्नों की एक ऐसी सूची होती है जो प्राथमिक तथ्यों को एकत्रित करने के लिए प्रयोग में लायी जाती है। कोई भी अनुसंधानकर्ता प्रश्नावली को उत्तरदाताओं के

पास भेजकर उनसे निवेदन करता है कि प्रश्नावली को भरकर कृपया लौटा दें। अवलोकन एक ऐसी प्रविधि है जो प्राथमिक स्त्रोतों को एकत्रित करने में प्रयोग की जाती है। वास्तव में अवलोकन के द्वारा विभिन्न प्रकार के तथ्य उत्तरदाता स्वयं एकत्रित करता है। अवलोकन की परिभाषा करते हुए जहोदा एवं कुक ने बताया है कि अवलोकन केवल दैनिक जीवन की ही अत्यधिक व्यापक क्रिया नहीं है बल्कि यह वैज्ञानिक जाँच का भी एक प्राथमिक यंत्र है। प्रस्तुत इकाई में साक्षात्कार की अवधारणा के बारे में भी वर्णन किया गया है। वास्तव में एक साक्षात्कार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता के जीवन में प्रत्यक्ष रूप से प्रवेश करता है और अपने अनुसंधान से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करता है। इकाई में अनुसूची के बारे में प्रकाश डालते हुए बताया है कि वास्तव में अनुसूची प्रश्नों की एक ऐसी सूची होती है जिसे अनुसंधानकर्ता स्वयं उत्तरदाता के सामने उपस्थित होकर एवं प्रश्नों को पूँछकर अपने अनुसूची में लिखता है। इकाई में अन्त में वैयक्तिक अध्ययन की अवधारणा के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि वैयक्तिक अध्ययन एक सामाजिक इकाई का वृहद् अध्ययन है चाहे वह इकाई एक व्यक्ति, एक समूह, एक सामाजिक संस्था, एक जनपद या एक समुदाय हो सकता है, एक वैयक्तिक अध्ययन कहलाता है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद उपरोक्त के बारे में आप अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

15.2 प्रश्नावली की अवधारणा

वर्तमान समय में सामाजिक शोध अथवा अनुसंधान में प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु प्रश्नावली विधि का प्रयोग बढ़ रहा है। प्रश्नावली विधि अन्य विधियों की अपेक्षा सरल एवं कम खर्चीली है। आजकल यातायात एवं संदेश–वाहन के साधनों के विकास के कारण प्रश्नावली विधि द्वारा दूर–दराज क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों का अध्ययन सरल हो गया है। जब सूचनादाता शिक्षित हो, समग्र विशाल एवं विस्तृत हो तो इस विधि के द्वारा अध्ययन करना अधिक लाभकारी होता है। प्रायः कई बार ऐसा होता है कि जिस विषय अथवा समस्या का हम अध्ययन करना चाहते हैं, उससे सम्बन्धित लोग बहुत बड़े क्षेत्र में फैले हुए रहते हैं, जिनका अध्ययन अवलोकन या साक्षात्कार विधि द्वारा करने पर बहुत अधिक समय एवं धन की आवश्यकता होती है और सूचनाएं भी शीघ्र संकलित नहीं की जा सकतीं। ऐसी परिस्थितियों में समय, श्रम एवं धन की बचत करने तथा शीघ्र सूचनाएं प्राप्त करने के लिए प्रश्नावली–विधि का प्रयोग किया

जाता है। इसका प्रयोग विषय की प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने के लिए भी किया जाता है।

15.21 प्रश्नावली का अर्थ एवं परिभाषा

सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि एक विषय से सम्बन्धित व्यक्तियों से सूचना प्राप्त करने के लिए बनाये गए प्रश्नों की एक क्रमबद्ध सूची को प्रश्नावली कहते हैं जिसको कि डाक द्वारा भेजकर सूचना एकत्रित की जाती हैं। प्रश्नावली के बारे में भिन्न–भिन्न विद्वानों ने भिन्न–भिन्न परिभाषायें प्रस्तुत कर अपने–अपने ढंग से समझाने का प्रयास किया है।

गुडे तथा हॉट के अनुसार, ' सामान्य रूप से प्रश्नावली से तात्पर्य प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की उस प्रविधि से है जिसमें कि एक पत्रक का प्रयोग किया जाता है, जिसे उत्तरदाता स्वयं भरता है।

लुण्डबर्ग ने लिखा है कि, 'मूलतः प्रश्नावली प्रेरणाओं का एक समूह है, जिसे शिक्षित लोगों के सम्मुख, उन प्रेरेणाओं के अन्तर्गत उनके मौखिक व्यवहारों का निरीक्षण करने के लिए प्रस्तुत किया जाता है।'

पोप के अनुसार, 'एक प्रश्नावली को प्रश्नों के एक समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसका उत्तर सूचनादाता को बिना एक अनुसंधानकर्ता अथवा प्रगणक की व्यक्तिगत सहायता के देना होता है।'

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि प्रश्नावली एक विशेष प्रकार की अनुसूची है, जिससे कि अध्ययन–विषय से सम्बन्धित प्राथमिक तथ्यों को एकत्रित करने के लिए निदर्शन के रूप में चुने हुए व्यक्तियों के पास डाक द्वारा इस अनुरोध के साथ भेज दिया जाता है कि वे उन प्रश्नों का उत्तर स्वयं लिखकर प्रश्नावली को वापस भेज दें, क्योंकि ये उत्तरदातागण या तो संख्या में इतने अधिक हैं अथवा इतने अधिक विखरे हुए हैं कि व्यक्तिगत सम्पर्क के द्वारा उनसे सूचना एकत्रित नहीं की जा सकती है।

15.22 प्रश्नावली की विशेषतायें

प्रश्नावली की विशेषताओं के आधार पर इसे और अधिक स्पष्ट रूप में समझा जा सकता है। इसकी विशेषतायें अग्रलिखित हैं–

1– प्रश्नावली अध्ययन किये जाने वाले विषय से सम्बन्धित प्रश्नों की एक सूची होती है।

2– इसको डाक द्वारा सूचनादाताओं के पास भेजा जाता है। कभी–कभी स्थानीय स्तर पर इसे वितरित भी कराया जा सकता है ।

3– इसको सूचनादाता स्वयं ही भरता है। इसके लिए वह किसी अन्य की सहायता नहीं लेता है।

15.3 अवलोकन की अवधारणा

अवलोकन विधि अनुसंधान की सबसे प्राचीन और प्रचलित विधि है। जिज्ञासु प्रकृति होने के कारण सृष्टि के आदिकाल से लेकर आज तक मनुष्य अपने ज्ञान में वृद्धि करने के लिए अवलोकन विधि का सहारा लेता रहा है। मानव ने अपने चारों ओर के विश्व का प्रारम्भिक ज्ञान अवलोकन द्वारा ही प्राप्त किया है। मानव के पास जो भी संचित ज्ञान है उसका अधिकांश भाग अवलोकन का ही परिणाम है। सामान्य ज्ञान से लेकर सृष्टि के गूढ़ रहस्यों को जानने में मानव ने अवलोकन विधि का सहारा लिया है। विभिन्न प्रकार के विज्ञानों के प्रारम्भिक विकास में अवलोकन विधि की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। नक्षत्रों एवं ग्रहों के अवलोकन; वनस्पतिशास्त्र एवं जीवशास्त्र का ज्ञान, वनस्पतियों के फलने–फूलने एवं जीवों के जन्म–मृत्यु वृद्धि, शारीरिक परिवर्तन एवं अन्तर को अवलोकन के आधार पर ही प्राप्त किया जाता है। ज्ञान की प्राप्ति में अवलोकन विधि का योगदान आदिकाल से होने के कारण ही मोजर, इसे वैज्ञानिक अनुसंधान की शास्त्रीय पद्धति कहते हैं। वास्तव में सामाजिक विज्ञान की वह पद्धति जिसमे घटनाओं का आंखों के माध्यम से निरीक्षण और परीक्षण किया जाता है, अवलोकन के नाम से जाना जाता है। व्यवस्थित अवलोकन में घटनाओं को देखना, सुनना, समझना और उन्हें व्यवस्थित रूप से लिखना भी होता है, वह नियोजित उद्देश्यपूर्ण एवं सैद्धान्तिक मान्यताओं से सम्बन्धित होता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. प्रश्नावली का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

....

....

....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. प्रश्नावली की विशेषतायें लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

15.31 अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा

अवलोकन शब्द अंग्रेजी भाषा के Observation शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है जिसका तात्पर्य 'देखना' 'प्रेक्षण', और 'अवलोकन करना' है। दूसरे शब्दों में 'कार्य–कारण या पारस्परिक सम्बन्धों को जानने के लिए स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली घटनाओं को सूक्ष्म रूप से देखना ही अवलोकन है।'

अवलोकन से सम्बन्धित कुछ परिभाषायें अग्रलिखित हैं– **ऑक्सफोर्ड कन्साइज शब्द कोष** के अनुसार 'घटनाएँ कार्य–कारण अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के सम्बन्ध में, जिस रूप में वे उपस्थित होती हैं, का यथार्थ निरीक्षण एवं वर्णन है।'

जहोदा एवं कुक के अनुसार, 'अवलोकन केवल दैनिक जीवन की ही अत्यधिक व्यापक क्रिया मात्र नहीं है, यह वैज्ञानिक जाँच का भी एक प्राथमिक यंत्र है।'

जॉन होलार्ड अवलोकन को अनुसंधान का एक प्रमुख यन्त्र मानते हुए लिखते हैं– 'अनुसंधान का प्राथमिक यन्त्र मानव–वुद्धि का अवलोकन तथा अनुभवों के आधार पर ज्ञान प्राप्त करना होता है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अवलोकन प्राथमिक सामग्री संकलित करने की एक प्रत्यक्ष एवं महत्वपूर्ण विधि है। अवलोकन में शोधकर्ता घटनाओं को देखता है, सुनता है, समझता है और सम्बन्धित सामग्री का संकलन करता है। अवलोकन हेतु अवलोकनकर्ता समूह या समुदाय के दैनिक जीवन में भाग ले भी सकता है और दूर बैठकर भी ऐसा कर सकता है। अवलोकन में मानव अपनी ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग करता है।

15.32 अवलोकन की विशेषतायें

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर अवलोकन पद्धति की अग्रलिखित विशेषतायें प्रकट होती हैं–

1– प्रत्यक्ष पद्धति : सामाजिक अनुसंधान की दो पद्धतियां हैं– प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष। अवलोकन सामाजिक अनुसंधान की प्रत्यक्ष पद्धति है, जिसमें अनुसंधानकर्ता सीधे अध्ययन वस्तु को देखता है और निष्कर्ष निकालता है।

2– मानव इन्द्रियों का प्रयोग : अवलोकनार्थ विधि में मानव इन्द्रियों का पूर्ण एवं व्यवस्थित प्रयोग किया जाता है। इसमें अवलोकनकर्ता अपने कान एवं वाणी का भी प्रयोग करता है, परन्तु नेत्रों का प्रयोग भी इसमें विशेष रूप से किया जाता है। अवलोकनकर्ता नेत्रों द्वारा घटनाओं का निरीक्षण करता है और उन्हें संकलन हेतु नोट कर लेता है।

3– प्राथमिक सामग्री का संकलन– अवलोकन विधि में अवलोकनकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होकर घटनाओं के बारे में प्राथमिक स्तर की सूचनाएँ इकठ्ठा करता है, अतः वे अधिक विश्वसनीय होती हैं।

4– सूक्ष्म, गहन एवं उद्देश्यपूर्ण अध्ययन– इस विधि में अवलोकनकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होता है, अतः वह घटनाओं का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन कर सकता है

और केवल उन्हीं तथ्यों का संकलन करता है, जिनका सम्बन्ध उसके अध्ययन से होता है।

5— पारस्परिक एवं कार्य—कारण सम्बन्धों का ज्ञान— सामान्य अवलोकन एवं वैज्ञानिक में वास्तविक अन्तर यह है कि सामान्य अवलोकन में अवलोकनकर्ता केवल घटनाओं को देखता है जबकि वैज्ञानिक अवलोकन में वह घटनाओं को देखकर उनके कारणों और परिणामों की भी खोज करता है जिनके आधार पर सिद्धान्त का निर्माण किया जा सकता है तथा वास्तविकता का पता लगाया जाता है।

6— विश्वसनीयता— यह विधि अधिक विश्वसनीय होती है, क्योंकि इसमें किसी समस्या या घटना का स्वाभाविक रूप से अध्ययन किया जाता है। इसलिये इसके द्वारा प्राप्त निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय होते हैं।

7— व्यावहारिक एवं अनुभवाश्रित अध्ययन— अवलोकन एक अप्रयोगात्मक एवं अनुभवाश्रित अध्ययन पद्धति है जिसके द्वारा सामूहिक एवं विशेष दोनों ही प्रकार के व्यवहारों का अध्ययन किया जा सकता है। अवलोकन द्वारा किया जाने वाला अध्ययन काल्पनिक न होकर व्यावहारिक या अनुभवों पर अधारित होता है ।

8— निष्पक्षता— इसमें अवलोकनकर्ता स्वयं अपनी आंखों से घटनाओं को देखता है और उनकी जांच परख करता है। इस प्रकार उसका निष्कर्ष निष्पक्ष एवं वैज्ञानिक होता है और वह अभिनति से बच जाता है।

9— वैज्ञानिक अध्ययन विधि— सामाजिक शोध की अन्य विधियों की तुलना में अवलोकन विधि अधिक वैज्ञानिक है, क्योंकि इसमें आंखों से देखकर सामग्री का संकलन किया जाता है। इसलिए इसमें वैज्ञानिकता रहती है।

10— सामूहिक व्यवहार का अध्ययन— जिस प्रकार से व्यक्तिगत अध्ययन हेतु वैयक्तिक अध्ययन पद्धति उत्तम विधि होती है, उसी प्रकार सामूहिक व्यवहार के अध्ययन के लिए अवलोकन विधि, उत्तम विधि होती है ।

11— विचारपूर्वक किया जाने वाला अध्ययन— अवलोकन एक ऐसी विधि है जिसमें अवलोकनकर्ता स्वयं घटनाओं का विचारपूर्वक अध्ययन कर तथ्यों का संकलन करता है। वह अन्य लोगों की बातों पर आश्रित नहीं रहता।

अवलोकन की उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर ही इसे विश्वसनीय एवं वैज्ञानिक विधि की एक महत्वपूर्ण प्रविधि माना गया है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. अवलोकन की अवधारणा लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. अवलोकन की विशेषतायें लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

15.4 साक्षात्कार की अवधारणा

सामाजिक शोध एवं सर्वेक्षण के अन्तर्गत तथ्य संकलन के उपकरण के रूप में साक्षात्कर भौतिक रूप से एक पारस्परिक प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत साक्षात्कारकर्ता विषयी की प्रत्यक्ष उपस्थिति में वांछित जानकारी प्राप्त करता है। साक्षात्कार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें साक्षात्कारकर्ता एवं साक्षात्कार देने वाले के मध्य किसी विशेष प्रयोग को सामने रखकर वार्तालाप, संवार्ता, या उत्तर–प्रति–उत्तर होता है। यह एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसमें साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता एक दूसरे के निकट आते हैं तथा एक सौहार्दपूर्ण वातावरण में हृदय खोलकर विचार–विमर्श करते हैं। गुडे तथा हॉट ने इसे एक सामाजिक पारस्परिक प्रक्रिया के रूप में स्पष्ट करते हुए लिखा है कि –'न तो विश्वसनीयता तथा न ही गंभीरता को तब तक पाया जा सकता है जब तक मस्तिष्क में यह स्पष्ट न हो कि साक्षात्कार मौलिक रूप से सामाजिक पारस्परिक की एक प्रक्रिया है।' पी0वी0 यंग के अनुसार 'साक्षात्कार एक पारस्परिक प्रक्रिया है। यह एक दूसरे का एक अन्योन्न पर्यावलोकन है।' सिन पाओ यांग ने साक्षात्कार के बारे में कहा है कि 'यह एक सामाजिक प्रक्रिया है, इसमें प्रायः दो व्यक्तियों के मध्य अन्तः क्रिया अन्तनिर्हित होती है।' जब तक दोनों पक्ष समान सामाजिक स्तर पर आकर विचार–विमर्श करने को तैयार नहीं होते तब तक साक्षात्कार होना सम्भव नहीं होता है। इस प्रकार साक्षात्कार व्यक्तियों के सम्बन्ध में हमारे ज्ञान एवं अनुभव की वृद्धि करता है तथा उस सामग्री के सत्यापन एवं नियन्त्रण में सहायता करता है जिसका संकलन साक्षात्कार प्रणाली के अन्तर्गत अन्य प्रणालियों एवं उपकरणों द्वारा किया गया है। वास्तव में किसी भी प्रकार के लिखित अन्वेषण–प्रपत्र की अपेक्षा साक्षात्कार निश्चय ही अधिक लचीला उपकरण है तथा परिस्थिति के अनुकूल इसकी व्याख्या समायोजन एवं परिवर्तनशीलता सम्भव है। सर्वप्रथम हम साक्षात्कार के अर्थ एवं परिभाषा को स्पष्ट रूप से जानने की कोशिश करेंगे।

15.41 साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा

हमारे जीवन तथा सामान्य व्यवहार में हमारे सामने अनेक प्रकार के साक्षात्कार होते रहते हैं, जैसे, व्यस्त व्यक्तियों, उच्चाधिकारियों से मिलने के लिए, नौकरी के लिए या संस्था में प्रवेश पाने के लिए आदि। ऐसे साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता, साक्षात्कृत की सामर्थ्य की परीक्षा लेता है, अर्थात् साक्षात्कारकर्ता उसकी योग्यता की जांच करता है। परन्तु सामाजिक अनुसंधान

तथा सर्वेक्षण में साक्षात्कारकर्ता, साक्षात्कृत की योग्यता का परीक्षण ही नहीं करता बल्कि अपने अनुसंधान से सम्बन्धित अपेक्षित तथ्यों का संकलन करता है।

वास्तव में साक्षात्कार शब्द अंग्रेजी शब्द interview का हिन्दी रूपान्तर हैं अतः Interview शब्द का हम यदि सन्धि विग्रह करें तो पायेंगे कि Inter का अर्थ भीतर या अन्दर होता है तथा View का अर्थ देखना होता है। अर्थात् साक्षात्कार का वास्तविक अर्थ आन्तरिक रूप से देखना (अन्तरदर्शन) होता है। दूसरे अर्थों में Interiew का अर्थ समागम होता है। सामाजिक अनुसंधान में साक्षात्कार प्रविधि का प्रयोग सामग्री एवं सूचना संग्रहण के लिए किया जाता है। साक्षात्कार विधि मनुष्य की इन्द्रियों पर आधारित है अर्थात्–इसमें बातचीत के माध्यम से सूचनाओं एवं सामग्री का संग्रहण किया जाता हैं। यदि हमें एक दूसरे के विचारों–भावनाओं और अनुभूतियों को जानना है तो उसके लिए बातचीत सबसे उपयुक्त माध्यम है।

साक्षात्कार का अर्थ और अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्नलिख्ति परिभाषायें अवलोकनीय है–

पी. वी. यंग के अनुसार ''साक्षात्कार एक प्रभावकारी, अनौपचारिक, मौखिक तथा अमौखिक वार्तालाप के रूप में देखा जा सकता है, जिसका प्रारम्भ विशिष्ट उद्देश्यों के लिए किया जाता है तथा निश्चित आयोजित सन्तुष्ट क्षेत्रों पर केन्द्रीभूत किया जाता है।''

सी. ए. मोजर के शब्दों में ''एक सर्वेक्षण साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य एक वार्तालाप है, जिसका उद्देश्य उत्तरदाता से निश्चित सूचना प्राप्त करना होता है।''

एफ. एन. करलिंगर के अनुसार ''साक्षात्कार एक आमने–सामने अंतर्वैयक्तित्क भूमिका वाली परिस्थिति है जिसमें एक व्यक्ति साक्षात्कारकर्ता, साक्षात्कार किये जाने वाले व्यक्ति, उत्तरदाता से, प्रश्न पूछता है। प्रश्नों का निर्माण अनुसंधान समस्या के उद्देश्यों के लिए उचित उत्तरों की प्राप्ति हेतु किया जाता है।''

उपयुक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि साक्षात्कार एक ऐसी व्यवस्थित पद्धति है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी विशिष्ट उद्देश्य को सामने रखकर परस्पर आमने–सामने होकर संवाद, वार्तालाप एवं उत्तर–प्रत्युत्तर करते हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है जिसमें साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता की

भावनाओं, विचारों, मनोवृत्तियों एवं आन्तरिक जीवन का अध्ययन करता है। यह एक सामाजिक प्रक्रिया भी है।

15.42 साक्षात्कार की विशेषतायें

साक्षात्कार सामाजिक अन्तर्क्रिया की प्रक्रिया है जिसकी मुख्य विशेषतायें अग्रलिखित हैं –

1. साक्षात्कार प्राथमिक तथ्यों के संकलन की महत्वपूर्ण प्रविधि है।
2. साक्षात्कार द्वारा सामाजिक जीवन तथा सामाजिक घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है।
3. साक्षात्कार परिस्थिति के अन्तर्गत दो या दो से अधिक व्यक्ति पाये जाते हैं। ये व्यक्ति आमने–सामने के सम्बन्धों के माध्यम से साक्षात्कारकर्ता एवं उत्तरदाता की भूमिका अदा करते हैं।
4. साक्षात्कार का एक विशिष्ट उद्देश्य होता है और यह उद्देश्य अनुसंधान विषय के सन्दर्भ में पूर्व निश्चित होता है।
5. साक्षात्कार के दौरान साक्षात्कारकर्त्ता साक्षात्कार की सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पृष्ठभूमि का पूर्ण प्रयोग करते हुए उत्तरदाता के साथ अर्थपूर्ण अनुसंधानिक सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है।
6. साक्षात्कार के अन्तर्गत वार्तालाप के दौरान न केवल साक्षात्कारकर्ता स्वयं सतत् उत्तरदाता से प्रश्न पूँछता है, प्रत्युत उत्तरदाता भी समय–समय पर आवश्यकतानुसार साक्षात्कारकर्ता से प्रश्न पूँछता है। साक्षात्कार की यही आधारभूत विशेषता इसे चक्रीय प्रकृति प्रदान करती है।
7. साक्षात्कार एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत अनेक मनोवैज्ञानिक विधियों के द्वारा उत्तरदाता से उसके जीवन की आन्तरिक विशेषताओं को ज्ञात करने का प्रयत्न किया जाता है।
8. साक्षात्कार प्रक्रिया के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता किसी व्यक्ति विशेष से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित कर पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सूचनाओं का संग्रहण करता है।
9. एक प्रविधि के रूप में साक्षात्कार का उपयोग अनेक रूपों में किया जा सकता है लेकिन इसका आधारभूत उद्देश्य

प्राप्त तथ्यों की सहायता से किसी परिकल्पना का सत्यापन करना होता है।

15.5 अनुसूची की अवधारणा

सामाजिक अनुसंधान के लिये सबसे बड़ी आवश्यकता अध्ययन–विषय से सम्बन्धित सामाजिक तथ्यों का संकलन है। अनुसन्धानकर्ता इन तथ्यों को विभिन्न सूचना–स्रोतों से एकत्रित करता है। हम मोटे–तौर पर दो भागों में विभाजित कर सकते हैं–प्रथम तो प्राथमिक स्रोत और दूसरा द्वितीय स्रोत। प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता अध्ययन–विषय से सम्बन्धित घटनाओं को स्वयं देख–सुनकर अर्थात् निरीक्षण कर और सम्बन्धित व्यक्तियों से मिलकर उनसे बात–चीत कर एकत्रित करता है। द्वितीयक स्रोत के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता अध्ययन–विषय से सम्बन्धित लिखित प्रलेखों का अध्ययन कर तथ्यों को एकत्रित करता है। पर इस द्वितीयक स्रोत से हम अध्ययन–विषय से सम्बन्धित बीती हुई घटनाओं के सम्बन्ध में ही जान सकते हैं। वर्तमान स्थिति का पता तो हम स्वयं निरीक्षण करके और सम्बन्धित व्यक्तियों से सूचना एकत्रित करके ही लगा सकता है। अध्ययन–विषय से काफी समय से सम्बन्धित व्यक्ति न केवल महत्वपूर्ण सूचनाओं को प्रदान करते हैं अपितु सामाजिक प्रक्रिया के धारा–प्रवाह से भी हमारा परिचय करवाते हैं। पर सम्बन्धित व्यक्तियों से इस प्रकार की महत्वपूर्ण सूचनाओं को मनमाने ढंग से एकत्रित नहीं किया जा सकता। इसके लिए कोई व्यवस्थित तरीका होना चाहिए जिससे कि केवल उन्हीं तथ्यों को एकत्रित करना सम्भव हो जो कि हमारे अध्ययन–विषय की वास्तविकताओं को सही और संक्षेप में व्यक्त कर सके और व्यर्थ की सामग्री का ढेर इकट्ठा न होने पाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जिन–जिन उपकरणों का प्रयोग अनुसन्धानकर्ता करता है उनमें से अनुसूची एक है। अनुसूची वास्तव में प्रश्नों की एक लिखित सूची है जिसे कि अनुसन्धानकर्ता अपने अध्ययन–विषय की प्रकृति व उद्देश्य को ध्यान में रखकर तैयार करता है, जिससे कि उन प्रश्नों का उत्तर सम्बन्धित व्यक्तियों से मालूम किया जा सके और इस प्रकार आवश्यक सूचना एकत्रित करने की प्रक्रिया को एक व्यवस्थित रूप मिले।

15.51 अनुसूची का अर्थ एवं परिभाषा

सर्व श्री गूडे तथा हॉट के अनुसार, ''अनुसूची उन प्रश्नों के एक समूह का नाम है जो साक्षात्कारकर्ता द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति से आमने–सामने की स्थिति में पूछे और भरे जाते हैं।''

श्री बोगार्डस ने अनुसूची को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''अनुसूची उन तथ्यों को प्राप्त करने की औपचारिक प्रणाली का प्रतिनिधित्व करती है जो वैषयिक रूप में है तथा सरलता से प्रत्यक्ष योग्य है।''

श्री मैककोमिक के शब्दों में, ''अनुसूची उन प्रश्नों की एक सूची से अधिक कुछ नहीं है जिनका उत्तर देना प्राक्कल्पना या प्राक्कल्पनाओं की जाँच के लिए आवश्यक प्रतीत होता है।''

15.52 अनुसूची की विशेषतायें

अनुसूची प्रश्नों के उत्तर के रूप में प्राप्त सूचनाओं को एकत्रित करने का एक साधन है। इसकी सफलता इसीलिए प्रश्न तथा उत्तर पर निर्भर है अर्थात् प्रश्न इस प्रकार का हो जिससे कि वास्तविक तथ्य मालूम किया जा सके और उन प्रश्नों को सही अर्थ में सभी सूचनादाता समझ सकें और सही उत्तर दे सकें। इस प्रकार उत्तम अनुसूची की दो उल्लेखनीय विशेषताएँ होती हैं–सही सन्देशवाहन तथा सही उत्तर। इन दोनों विशेषताओं की विवेचना हम इस प्रकार कर सकते हैं–

(1) सही सन्देशवाहन – इसका तात्पर्य है कि उत्तम अनुसूची में इस ढंग से प्रश्नों को पूँछा जाता है, ऐसी भाषा का प्रयोग किया जाता है कि उन प्रश्नों के सम्बन्ध में किसी भी सूचनादाता के मन में कोई अस्पष्ट या गलत धारणा पनपने की गुँजाइश नहीं रहती अर्थात् अनुसन्धानकर्ता वास्तव में जो कुछ पूँछना चाहता है सूचनादाता उसे उसी रूप में समझता है।

(2) सही प्रत्युतर – एक उत्तम अनुसूची की यह भी पहचान है कि अनुसूची इस प्रकार की हो कि सूचनादाता वही उत्तर दे जो अनुसन्धानकर्ता के लिए उपयोगी तथा आवश्यक हो।

15.6 वैयक्तिक अध्ययन की अवधारणा

सामाजिक इकाइयों का अध्ययन समाज–विज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है परन्तु वास्तव में सामाजिक इकाइयों का निर्माण वैयक्तिक इकाइयों द्वारा होता है। इस प्रकार सामाजिक इकाइयों के बारे में वृहद जानकारी प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि वैयक्तिक इकाइयों का व्यापक एवं गहन अध्ययन किया जाये। वर्तमान अध्ययन सामाजिक इकाइयों की वैज्ञानिक जानकारी के लिए एक प्रविधि के रूप में वैयक्तिक इकाइयों के वैयक्तिक अध्ययनों से सम्बन्ध रखता है।

मानव व्यवहार के अध्ययन में मौलिक रूप से वैयक्तिक अनुभवों के वास्तविक तथ्यों तथा प्रबुद्ध प्रलेख को प्राप्त करने में समाज–वैज्ञानिक सतत् प्रयत्नशील हैं, जो व्यक्ति आंतरिक संघर्षों, तनावों, प्रेरणाओं का मूर्त विस्तृत विवरण प्रकट करते हैं, जो उसे क्रिया करने के लिए उत्तेजित करते हैं, अवरोधक जो उसे निराश करते हैं अथवा चुनौती देते हैं, शक्तियां व बाध्यताएँ जो उसे एक निश्चित व्यवहार को अपनाने तथा किसी एक योजना तथा जीवन–दर्शन के अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिए निर्देशित करती हैं। अवलोकन प्रविधि के द्वारा कुछ व्यक्तियों के व्यवहारों, कृत्यो एवं अनुभवों को अवश्य जाना जा सकता है। परन्तु उनके व्यवहारों, कृत्यों एवं अनुभवों को पूर्णरूपेण तथा आन्तरिक रूप से जानने के लिए यह आवश्यक है कि वह क्या करता है तथा क्या किया है, वह क्या सोचता है, क्या सोचा है, वह क्या करना चाहता है तथा उसे क्या करना चाहिए आदि बातों की विस्तृत जानकारी प्राप्त की जाये। एक व्यक्ति अथवा समूह का उचित रूप से सर्वांगपूर्ण अध्ययन जीवन अथवा वैयक्तिक इतिहास कहलाता है।

15.61 वैयक्तिक अध्ययन का अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली बहुत पुरानी एवं महत्वपूर्ण प्रविधि मानी जाती है। यही कारण है कि इसकी परिभाषा भिन्न–भिन्न समाज वैज्ञानिकों ने भिन्न–भिन्न दी है। कुछ समाज वैज्ञानिकों की परिभाषायें अग्रलिखित दी जा रही है –

पी. वी. यंग के अनुसार, ''एक सामाजिक इकाई का वृहद् अध्ययन – वह इकाई एक व्यक्ति, एक समूह, एक सामाजिक संस्था, एक जनपद अथवा एक समुदाय हो – एक वैयक्तिक अध्ययन कहलाता है।''

हावर्ड ओडम तथा काथेरिन जोचर के शब्दों में, ''वैयक्तिक अध्ययन एक प्रविधि है जिसके द्वारा प्रत्येक वैयक्तिक कारक चाहे, वह संस्था अथवा एक व्यक्ति या समूह के जीवन की सम्पूर्ण घटना हो, का विश्लेषण उस समूह की किसी भी अन्य इकाई के सन्दर्भ में किया जाता है।''

बीसेंज तथा बीसेंज के अनुसार, ''वैयक्तिक अध्ययन पद्धति गुणात्मक विश्लेषण का एक स्वरूप है जिसमें एक व्यक्ति, परिस्थिति अथवा संस्था का अत्यन्त सावधानीपूर्वक तथा पूर्ण प्रेक्षण किया जाता है।''

उपरोक्त परिभाषाओं का अवलोकन करने पर हम कह सकते हैं कि वैयक्तिक अध्ययन का अर्थ किसी एक सामाजिक इकाई से संबंधित सम्पूर्ण पक्ष का अत्यन्त व्यापक, सूक्ष्म तथा गहन अध्ययन करना है। अध्ययन हेतु चयनित सामाजिक इकाई एक व्यक्ति, एक समूह, एक संस्था, एक समुदाय, एक जाति, एक राष्ट्र, एक सांस्कृतिक क्षेत्र अथवा इतिहास का कोई युग भी हो सकता है।

15.62 वैयक्तिक अध्ययन की विशेषतायें

वैयक्तिक अध्ययन की अग्रलिखित विशेषतायें हैं –

1. समस्या का गहन अध्ययन।
2. विशिष्ट अध्ययन इकाई।
3. सम्पूर्ण अध्ययन।
4. कारणिक कारकों का अध्ययन।
5. वैयक्तिक अध्ययन गुणात्मक तथा मात्रात्मक दोनों ही हो सकता है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. वैयक्तिक अध्ययन की अवधारणा लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. वैयक्तिक अध्ययन का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

....
....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

15.7 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में तथ्य संकलन की प्रविधियों की चर्चा प्रस्तुत की गयी जिसमें प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची तथा वैयक्तिक अध्ययन के बारे में प्रकाश डाला गया है। वास्तव में प्रश्नावली सामान्य रूप से प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की एक प्रविधि है जिसमें कि एक पत्र का प्रयोग किया जाता है जिसे उत्तरदाता स्वयं भरता है। प्रश्नावली के विशेषताओं में प्रमुख रूप से बताया गया है कि यह प्रश्नों की एक सूची होती है जिसे उत्तरदाता के पास डाक द्वारा भेजा जाता है और जिसे उत्तरदाता स्वयं भरकर अनुसंधानकर्ता के पास भेज देता है। इकाई में ही अवलोकन के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि अवलोकन घटनाएँ कार्यकारण अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के सम्बन्ध में जिस रूप में वे उपस्थित होती हैं, का यथार्थ निरीक्षण एवं वर्णन है। अवलोकन की विशेषताएँ प्रमुख रूप से प्रत्यक्ष पद्धति, मानव इन्द्रियों का प्रयोग, प्राथमिक सामग्री का संकलन, सूक्ष्म एवं ग्रहण उद्देश्यपूर्ण अध्ययन, पारस्परिक एवं कार्यकारण सम्बन्धों का ज्ञान, विश्वसनीयता, व्यवहारिक एवं अनुभवाश्रित अध्ययन इत्यादि समायित होते हैं।

इसी इकाई में साक्षात्कार के बारे में भी प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि साक्षात्कार एक प्रभावकारी, अनौपचारिक, मौखिक तथा अमौखिक वार्तालाप के रूप में देखा जा सकता है, जिसका प्रारम्भ विशिष्ट उद्देश्यों के लिए किया

जाता है तथा निश्चित आयोजित संतुष्ट क्षेत्रों पर केन्द्रिभूत किया जाता है। साक्षात्कार की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि यह प्राथमिक तथ्यों के संकलन की महत्वपूर्ण विधि है जिसके द्वारा सामाजिक जीवन व सामाजिक घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। वास्तव में इसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक व्यक्ति पाये जाते हैं। इसका एक विशिष्ट उद्देश्य होता है। इसमें अनुसंधानकर्ता स्वयं उत्तरदाता से प्रश्न पूँछता है।

इसी इकाई में अनुसूची के बारे में भी लिखा गया है जिसमें बताया गया है कि अनुसूची उन तथ्यों को प्राप्त करने की औपचारिक प्रणाली का प्रतिनिधित्व करती है जो वैषयिक रूप में है तथा सरलता से प्रत्यक्ष योग्य है। सही सन्देशवाहन तथा प्रत्युत्तर अनुसूची की प्रमुख विशेषताओं हैं। इकाई के अन्त में वैयक्तिक अध्ययन के बारे में लिखा गया है जिसमें बताया गया है कि वैयक्तिक अध्ययन एक प्रविधि है जिसके द्वारा प्रत्येक वैयक्तिक कारक चाहें, वह संस्था या एक व्यक्ति या समूह के जीवन की सम्पूर्ण घटना हो, का विश्लेषण उस समूह की किसी भी अन्य इकाई के सन्दर्भ में किया जाता है। समस्या का गहन अध्ययन, विशिष्ट अध्ययन इकाई, सम्पूर्ण अध्ययन, कारणिक कारकों का अध्ययन, वैयक्तिक अध्ययन इत्यादि, वैयक्तिक अध्ययन की विशेषताएँ हैं।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोगों के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी जो प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची एवं वैयक्तिक अध्ययन से सम्बन्धित होगी। आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में एक नयी दिशा प्रदान करेगी।

15.8 पारिभाषिक शब्दावली

प्रश्नावली – प्रश्नावली का तात्पर्य प्रश्नों के एक समूह के रूप में लगाया जा सकता है जिसका उत्तर सूचनादाता को बिना एक अनुसंधानकर्ता या प्रगणक की व्यक्तिगत सहायता के देना होता है।

अवलोकन – अवलोकन का तात्पर्य ऐसे प्रेक्षण से है जिसमें अनुसंधानकर्ता स्वयं घटनाएँ एवं कार्यकारण सम्बन्धों के बारे में जानकारी प्राप्त करता है।

साक्षात्कार – साक्षात्कार का तात्पर्य आमने–सामने अन्तर्वैयक्तिक भूमिका वाली प्रस्तुति है जिसमें एक व्यक्ति साक्षात्कारकर्ता, साक्षात्कार किये जाने वाले व्यक्ति, उत्तरदाता से प्रश्न पूछता है। प्रश्नों का निर्माण अनुसंधान समस्या के उद्देश्यों के लिए उचित उत्तरों की प्राप्ति हेतु किया जाता है।

अनुसूची – अनुसूची का तात्पर्य उन प्रश्नों की एक सूची से अधिक कुछ नहीं है जिनका उत्तर देना उपकल्पना की जाँच के लिए आवश्यक प्रतीत होता है।

वैयक्तिक अध्ययन – वैयक्तिक अध्ययन पद्धति गुणात्मक विश्लेषण का एक स्वरूप है जिसमें एक व्यक्ति, परिस्थिति या संस्था का अत्यन्त सावधानीपूर्वक तथा पूर्व प्रेक्षण किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– प्रश्नावली की अवधारणा से आप क्या समझते हैं?

2– प्रश्नावली का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

3– प्रश्नावली की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

4– अवलोकन की अवधारणा के बारे में आप क्या जानते हैं?

5– अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

6– अवलोकन की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

7– साक्षात्कार की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।

8– साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा के बारे में बताइए।

9– साक्षात्कार की विशेषताओं पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

10– अनुसूची का अर्थ लिखिए।

11– अनुसूची की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

12– वैयक्तिक अध्ययन को परिभाषित कीजिए।

13– वैयक्तिक अध्ययन की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

विस्तृत

1– प्रश्नावली की अवधान को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

2– अवलोकन को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

3– साक्षात्कार की अवधारणा को लिखते हुए इसकी विशेषताओं पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

4– अनुसूची से आप क्या समझते हैं? तथा इसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

5– वैयक्तिक अध्ययन क्या है? तथा इसकी विशेषताएँ कौन–कौन सी हैं, के बारे में बताइए।

15.9 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– गुडे एण्ड हॉट, ''मैथड्स इन सोशल रिसर्च'', मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयॉर्क, वर्ष–1952, पेज–56

2– लुण्डबर्ग, जार्ज, ए0, ''सोशल रिसर्च'', लागमैन्स एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, वर्ष–1942

3– यंग, पी0 वी0, ''सांइंटिफिक सोशल सर्वे एवं रिसर्च'', वर्ष–1960

4– मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, ''सामाजिक शोध व सांख्यिकी'', विवेक प्रकाशन, दिल्ली वर्ष–2000

5– बोगार्डस, एस0, ''इन्ट्रोडक्शन टू सोशल रिसर्च'', वर्ष–1936, पेज – 45

6– मैक्कोर्मिक, थामस कार्सन, ''एलिमेन्ट्री सोशल स्टैटिस्टिक्स'', वर्ष–1941, पेज – 37

खण्ड–तृतीय
तथ्य का एकत्रीकरण एवं विश्लेषण

इकाई : 16 मापन एवं अनुमापन की विधियाँ

16.0 इकाई का उद्देश्य

16.1 परिचय

16.2 मापन की विधियाँ

16.21 समाजमितीय माप

16.22 तीव्रता मापक पैमाने

16.3 अनुमापन की विधि की परिभाषा

16.31 अनुमापन विधियों के प्रकार

16.4 सार–संक्षेप

16.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न, लघु, विस्तृत

16.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

16.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य मापन एवं अनुमापन की विधियों के बारे में आपको अवगत कराना है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– समाजमितीय माप के बारे में जान सकेंगे।

2– बोगार्डस के सामाजिक दूरी के पैमाने को समझ सकेंगे।

3– तीव्रता मापक पैमानों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

4– अनुमापन विधि की परिभाषा को लिख सकेंगे।

5– अनुमापन विधियों के प्रकारों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

16.1 परिचय

सामाजिक शोध से सम्बन्धित एक मुख्य समस्या व्यक्तिगत मनोवृत्तियों, विचारों एवं दृष्टिकोण के माप से है। वास्तविकता यह है कि अधिकांश सामाजिक तथ्य अपनी प्रकृति से गुणात्मक तथा अमूर्त होते हैं जिसके फलस्वरूप उनकी गणनात्मक माप करना बहुत कठिन हो जाता है। भौतिक अथवा प्राकृतिक तथ्यों का अध्ययन इसलिए वैज्ञानिक मान लिया जाता है कि उनकी निश्चित माप करने के लिए अनेक प्रविधियाँ विकसित हो चुकी हैं। इन प्रविधियों के द्वारा गर्मी, आर्द्रता, भार, लम्बाई अथवा चौड़ाई की सरलतापूर्वक माप की जा सकती है। दूसरी ओर, यदि हम व्यक्तियों के विचारों, मनोवृत्तियों, भावनाओं तथा पसन्द आदि का अध्ययन करना चाहें तो उनकी निश्चित माप करके कोई सांख्यिकीय निष्कर्ष दे सकना कुछ समय पहले तक एक कठिन कार्य समझा जाता था। सामाजिक शोध की प्रविधियों के विकास के साथ ही अब ऐसे मापन उपकरणों का विकास होता जा रहा है जिनसे गुणात्मक तथ्यों का माप करके गणनात्मक निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा सकते हैं। संक्षेप में इन्हीं प्रविधियों को हम 'अनुमापन प्रविधियाँ' अथवा 'माप क्रम प्रविधियाँ' कहते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि अनुमापन प्रविधियों का तात्पर्य उन प्रणालियों से है जिनके द्वारा शोधकर्त्ता गुणात्मक सामाजिक तथ्यों का माप करके उनकी गणना को सांख्यिकीय निष्कर्षों के रूप में प्रस्तुत करता है।

16.2 मापन की विधियाँ

प्रस्तुत इकाई में मापन की विधियों पर प्रकाश डाला गया है जिसमें विभिन्न प्रकार की मापन की विधियों के बारे में जैसे, समाजमितीय माप एवं तीव्रता मापक पैमाने पर प्रकाश डाला गया है। समाजमितीय माप के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि, समाजमितीय विधि एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनके आकर्षण, विकर्षण एवं समूह की सम्बन्ध व्यवस्था में व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति आदि को स्पष्ट किया जा सकता है। तीव्रता मापक पैमाने पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि, ये वे पैमाने हैं जिनका उपयोग किसी व्यक्ति या समूह की मनोवृतियों एवं रूचियों की गहनता या तीव्रता की माप करने के लिए किया जाता है ऐसे पैमाने का उपयोग करना अधिक लाभप्रद होता है जब किसी विशेष तथ्य के प्रति व्यक्ति की रुचि केवल दो विकल्पों तक ही सीमित नहीं होती बल्कि अनेक श्रेणियों में विभाजित हो सकती

है। इस इकाई में इन्हीं मापन की विधियों के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गयी है।

16.21 समाजमितीय माप

यह एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनके आकर्षण, विकर्षण एवं समूह की सम्बन्ध व्यवस्था में व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति आदि को स्पष्ट, सरल तथा संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। सर्वप्रथम इस पद्धति का प्रयोग **मोरनियों** ने अपनी पुस्तक में विकसित किया था। इस विधि में विषय का मूल्यांकन करने के लिए कुछ ऐसे मापदंड निश्चित किये गये हैं, जिसके आधार पर सरलता से सामाजिक सम्बन्धों, व्यक्ति के मानसिक भावों आदि को मापा जा सकता है। उदाहरणार्थ, मान लीजिए हमें किसी कक्षा के 12 छात्रों के बीच पाये जाने वाले आकर्षण एवं विकर्षण की माप करनी है तो इसके लिए प्रत्येक लड़के से यह कहा जाएगा कि वह तीन ऐसे लड़कों को प्राथमिकता के अनुसार चुने जिनको वह क्रियाओं में अपने साथ सबसे अधिक रखना पसन्द करता है।

इसी प्रकार सबसे कम पसन्द के लड़कों को चुनने के लिए भी उनको कहा जा सकता है। पसन्द के लड़कों को चुन लेने पर उनको प्राथमिकता के अनुसार 1, 2, 3, 4, 5 नम्बर दे देंगे।

16.22 तीव्रता मापक पैमाने

ये पैमाने वे हैं जिनका उपयोग किसी व्यक्ति अथवा समूह की मनोवृत्तियों एवं रुचियों की गहनता अथवा तीव्रता की माप करने के लिए किया जाता है। ऐसे पैमानों का उपयोग करना तब अधिक लाभप्रद होता है जब किसी विशेष तथ्य के प्रति व्यक्ति की रुचि केवल दो विकल्पों तक ही सीमित नहीं होती बल्कि अनेक श्रेणियों में विभाजित हो सकती हैं। दूसरे शब्दों में, जब एक ही स्थिति से सम्बद्ध तीव्रता की विभिन्न श्रेणियाँ अथवा उसकी निकटतम मात्रा का माप करना हो तब तीव्रता मापक पैमाने का उपयोग करना अधिक लाभप्रद समझा जाता है। इस दृष्टिकोण से तीव्रता मापक पैमाने तीन, चार, पाँच अथवा इससे भी अधिक श्रेणियों अथवा खण्डों को लेकर बनाये जा सकते हैं। सामाजिक अध्ययनों के अन्तर्गत प्रायः तीन या पाँच खंड के पैमानों का ही प्रचलन अधिक है। इसके लिए किसी विशेष स्थिति से सम्बन्धित खण्डों को इस प्रकार विभाजित किया जाता है जिससे प्रत्येक खण्ड मनोवृत्ति की तीव्रता की एक निश्चित मात्रा

का ज्ञान कर सके। मनोवृत्तियों अथवा रुचियों की माप करने के लिए पहले उत्तरदाता के समक्ष एक कथन अथवा दशा प्रस्तुत की जाती है तथा उसके आगे अथवा पीछे सम्बन्धित मनोवृत्ति से लेकर नकारात्मक तीव्रता का बोध कराने वाले होते हैं। सांख्यिकी गणना के लिए प्रत्येक खंड को कुछ भार भी दिया जा सकता है। जो खण्ड सकरात्मक तीव्रता को स्पष्ट करते हैं, उनका भार धन (+) में तथा नकारात्मक तीव्रता को स्पष्ट करने वाले खण्डों का भार ऋण (–) में होता है। एक उदाहरण द्वारा तीव्रता मापक पैमानों के स्वरूप को हम इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं।

यदि हमें यह ज्ञात करना है कि, अस्पृश्यता के प्रति किसी विशेष समूह अथवा व्यक्ति की मनोवृत्ति क्या है? तो हमें उसके समक्ष कोई इस तरह का कथन प्रस्तुत करना होगा कि 'अस्पृश्यता सामाजिक प्रगति में बाधक है।' कथन के नीचे मनोवृत्ति की तीव्रता मापक निम्नांकित खंड प्रस्तुत किये जा सकते हैं–

पूर्णतया सहमत	सहमत	अनिश्चित	असहमत	पूर्णतया असहमत
+2	+1	0	–1	–2

स्पष्ट है कि किसी विशेष दशा के प्रति यदि व्यक्ति की मनोवृत्ति ऋणात्मक है तो खण्डों का यह विभाजन उस विशेष दशा के प्रति उसकी असहमति की तीव्रता को स्पष्ट कर सकता है। जबकि धनात्मक मनोवृत्ति सहमति की तीव्रता को प्रदर्शित करेगी। तीव्रता मापक पैमानों में जिन शब्दों का प्रायः उपयोग किया जाता है, उनका तीन तथा पाँच खण्ड वाले पैमानों में अग्रांकित रूप से उल्लेख किया जा सकता है।

तीन खण्ड के पैमाने

1	2	3
पूर्णतया सहमत	तटस्थ	पूर्णतया अहसमत
बहुत अच्छा	सामान्य	बिल्कुल व्यर्थ
अनुकूल	तटस्थ	प्रतिकूल
हाँ	हो सकता है	बिल्कुल नहीं
सदैव सम्भव	कभी–कभी संभव	बिल्कुल संभव नहीं
अधिकांश व्यक्ति	कुछ व्यक्ति	कोई नहीं

पांच खण्ड के पैमाने

1	2	3	4	5
पूर्णतया सहमत	सहमत	अनिश्चित	असहमत	पूर्णतया असहमत
बहुत पसन्द	पसन्द	तटस्थ	नापसन्द	बहुत नापसन्द
पूर्णतया अनुकूल	अनुकूल	तटस्थ	प्रतिकूल	पूर्णतया प्रतिकूल
सब	बहुत से	लगभग आधे	थोड़े से	कोई नहीं
अत्यधिक सन्तुष्ट	सन्तुष्ट	अनिश्चित	असन्तुष्ट	अत्यधिक असन्तुष्ट
बहुत अधिक	पर्याप्त	अनिश्चित	नहीं	बिल्कुल नहीं

इससे स्पष्ट होता है कि विभिन्न दशाओं के प्रति व्यक्तियों की मनोवृत्तियों की तीव्रता को जानने के लिए अनेक विकल्प दिये जा सकते हैं तथा प्रत्येक विकल्प एक निश्चित मात्रा में उत्तरदाता की मनोवृत्ति का बोध करा सकता है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि तीव्रता मापक पैमाने भी दो प्रकार के होते हैं–

1– समान विस्तार वाले तीव्रता मापक पैमाने – इस प्रकार के पैमानों में मध्य भाग तटस्थ स्थिति को दर्शाता है जबकि उसके दोनों ओर खण्डों का विस्तार समान होता है। तटस्थता की स्थिति को दर्शाने के लिए 'अनिश्चित,' 'उदासीन' या तटस्थ जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। और इस स्थिति को शून्य भार प्रदान किया जाता है। तटस्थ की स्थिति के एक ओर पक्ष अथवा सहमति सम्बन्धी खण्ड होते हैं जबकि दूसरी ओर विपक्ष अथवा असहमति के खंड प्रदर्शित किये जाते हैं। पूर्व विवेचन में जिन तीन तथा पांच खंड वाले पैमानों को प्रदर्शित किया गया है, वे समान विस्तार वाले तीव्रता मापक पैमानों के ही उदाहरण हैं।

2– असमान विस्तार वाले तीव्रमापक पैमाने – ऐसे पैमानों में किसी विशेष दशा के प्रति मनोवृत्ति की तीव्रता को एक निश्चित निरन्तरता अथवा क्रम में अभिव्यक्ति किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि ऐसे पैमानों में पहले स्थिति शून्य भार को स्पष्ट करती है जबकि प्रत्येक आगामी स्थिति तीव्रता की अधिकता को स्पष्ट करती जाती है। उदाहरण के लिए यदि हम प्रश्न करें कि भारत के विकास के लिए आप सामाजिक–आर्थिक नियोजन को कितना आवश्यक मानते हैं तो इसके लिए असमान विस्तार वाले पैमाने का निर्माण इस प्रकार किया जा सकता है।

अनिश्चित	आवश्यक	बहुत अधिक आवश्यक	अपरिहार्य
0	+1	+2	+3

(क) थर्सटन की समविस्तार प्रणाली – सामाजिक मनोवृत्तियों की माप करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने जिन अलग–अलग पैमानों का निर्माण किया है उनमें थर्सटन द्वारा निर्मित पैमाना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उन्हीं के नाम के आधार

पर इसे थर्सटेन का पैमाना भी कहा जाता है। थर्सटन की प्रणाली द्वारा मनोवृत्तियों का माप किस प्रकार होता है? इसे इस प्रणाली की निर्माण विधि तथा कार्यविधि द्वारा निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है।

प्रथम चरण– थर्सटन ने चर्च के विषय में लोगों की मनोवृत्तियों का अध्ययन करने के लिए इस प्रकार के 130 कथनों को एकत्रित किया, जिनमें से कुछ के उदाहरण द्वारा इनकी प्रकृति को समझा जा सकता है ।

(क) मुझे चर्च की सेवाएँ बहुत सुखदायी और प्रेरणादायक प्रतीत होती हैं।

(ख) मैं धर्म में विश्वास करता हूँ परन्तु चर्च कभी नहीं जाता।

(ग) मैं समझता हूँ कि चर्च समाज का शोषण करने वाला है।

(घ) मेरे विचार से संगठित चर्च विज्ञान और सत्य का शत्रु है।

(ङ) मेरा अनुभव है कि चर्च की कार्यविधि अत्यधिक पुरानी पड़ गई है।

यह सभी कथन चर्च के बारे में विभिन्न व्यक्तियों की पूर्णतया अनुकूल एवं पूर्णतया प्रतिकूल मनोवृत्ति को प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार के विभिन्न कथनों का चयन करते समय कुछ विशेष मापदण्डों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है जो मुख्यतः इस प्रकार हैं–

1– जहाँ तक सम्भव हो कथन इस प्रकार के होने चाहिए जिनसे उत्तरदाता की वर्तमान मनोवृत्तियों को समझा जा सके, अतीत की मनोवृत्तियों को नहीं।

2– दोहरे अर्थ वाले ऐसे कथनों को सम्मिलित नहीं करना चाहिए जिनसे एक साथ ही पक्ष और विपक्ष दोनों प्रकार की मनोवृत्ति का आभास हो; जैसे– मैं चर्च के आदर्श में तो विश्वास करता हूँ लेकिन मुझे उसका आडम्बर पसन्द नहीं है।

3– वक्तव्य ऐसे भी नहीं होने चाहिए जिनका उपयोग बहुत थोड़े से लोगों तक ही सीमित हो; उदाहरणार्थ– मैं चर्च इसलिए जाता हूँ क्योंकि मुझे वहाँ का संगीत बहुत प्रिय है।

4– पैमाने के लिए चुने गये कथन ऐसे होने चाहिए कि पक्ष और विपक्ष दोनों ही श्रेणियों के लोग उनका समर्थन न कर सकें।

5– सभी वक्तव्य स्पष्ट होने चाहिए तथा उनमें पारिभाषिक जटिलता नहीं होनी चाहिए।

6– जब तक बहुत आवश्यक न हो, कथन में किसी ऐसी भाषा का उपयोग नहीं होना चाहिए जो किसी वर्ग अथवा स्थान तक ही सीमित हो।

द्वितीय चरण– उपरोक्त निर्देशों के अनुसार जब निर्णायकों के मत ज्ञात हो जाते हैं तो प्रत्येक कथन को दिये गये स्थान के आधार पर सारणी का निर्माण कर लिया जाता है। थर्सटन ने विभिन्न कथनों के आधार पर जिस प्रणाली का निर्माण किया तो उनमें से 4 कथनों से सम्बन्धित सारणी को अग्रांकित रूप से समझा जा सकता है।

सारणी का निर्माण करने के एक विशेष प्रक्रिया को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। सर्वप्रथम निर्णायकों द्वारा छांटी गयी पर्चियों के ढेर को देखकर यह ज्ञात किया जाता है कि कितने निर्णायकों ने किसी विशेष पर्ची को प्रथम श्रेणी में रखा और कितने निर्णायकों ने द्वितीय श्रेणी में। इस प्रकार निर्णायकों के मत को ज्ञात करके उन्हें आवृत्ति के खाने या वर्ग में लिख लिया जाता है। इसके पश्चात् आवृत्तियों को संचयी आवृत्ति में परिवर्तित कर लिया जाता है। अन्त में संचयी आवृत्ति ज्ञात करने के पश्चात् उनका संचयी अनुपात ज्ञात किया जाता है। इसका मूल सूत्र इस प्रकार है।

$$\text{संचयी अनुपात} = \frac{\text{संचयी आवृत्ति}}{\text{कुल संख्या}} \quad \text{जैसे} \quad \frac{18}{300} \text{ अथवा } \frac{78}{300}$$

संचयी अनुपात ज्ञात करने के पश्चात् विभिन्न कथनों का संख्यात्मक माप ज्ञात किया जाता है। इसके लिए प्रत्येक वर्ग की माध्यिका को ज्ञात करना आवश्यक है। यह माध्यिका चाहे गणितीय विधि से ज्ञात की जाए अथवा ग्राफ के द्वारा इसके आधार पर स्पष्ट होता है कि किसी कथन का मूल्य जितना कम होता है। उससे सम्बन्धित मनोवृत्ति विषय को उतना ही अधिक पक्ष में मानी जाती हैं, जबकि कथन का मूल्य अधिक होने पर यह प्रतिकूल मनोवृत्ति को प्रदर्शित करता है।

वर्ग	कथन संख्या–4 (अनुकूल)		कथन संख्या–67 (प्रतिकूल)		कथन संख्या–9 (तटस्थ)		कथन संख्या–8 (संदिग्ध)	
	संचयी आवृत्ति	संचयी अनुपात	संचयी आवृत्ति	संचयी अनुपात	संचयी आवृत्ति	संचयी अनुपात	संचयी आवृत्ति	संचयी अनुपात
I	**18**	**.06**	**–**	**.00**	**3**	**.01**	**–**	**.00**
II	**78**	**.26**	**–**	**.00**	**6**	**.02**	**3**	**.01**
III	**780**	**.60**	**–**	**.00**	**9**	**.03**	**6**	**.02**
IV	**273**	**.91**	**–**	**.00**	**18**	**.06**	**27**	**.09**
V	**284**	**.98**	**–**	**.00**	**75**	**.25**	**81**	**.27**
VI	**287**	**.99**	**3**	**.01**	**261**	**.87**	**123**	**.41**
VII	**300**	**1.00**	**18**	**.06**	**279**	**.83**	**162**	**.54**
VIII	**–**	**1.00**	**66**	**.22**	**288**	**.96**	**201**	**.67**
IX	**–**	**1.00**	**144**	**.48**	**294**	**.98**	**243**	**.81**
X	**–**	**1.00**	**240**	**.80**	**300**	**1.00**	**279**	**.83**
XI	**–**	**1.00**	**300**	**1.00**	**–**	**1.00**	**300**	**1.00**

यह सच है कि सामाजिक शोध में मनोवृत्तियों का माप करने के लिए थर्सटन का पैमाना बहुत उपयोगी माना जाता है। लेकिन इसके उपयोग और गणना की प्रक्रिया निश्चित रूप से बहुत अधिक जटिल है। यही कारण है कि सांख्यिकीय ज्ञान से अनभिज्ञ व्यक्ति इस प्रणाली का उपयोग अधिक कुशलतापूर्वक नहीं कर सकता।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समाजमितीय माप का अर्थ लिखिए।

....

....

....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. तीव्रता मापक पैमाने के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

16.3 अनुमापन विधि की परिभाषा

अनुमापन पद्धति के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों की परिभाषाएँ निम्नांकित हैं–

1. **गुडे एवं हॉट :** "अनुमापन प्रविधियों में अन्तर्निहित समस्या इकाइयों की श्रेणियों को एक क्रम के अन्तर्गत व्यवस्थित करने की है। दूसरे शब्दों में, अनुमापन प्रविधियाँ गुणात्मक तथ्यों की श्रेणियों को गणनात्मक श्रेणियों में बदलने की पद्धतियाँ हैं।"

2. **पी. वी. यंग :** "किसी वस्तु अथवा घटना की मात्रा अथवा भार को मापने के लिए जिस पैमाने का प्रयोग किया जाता है, उसके आधार पर जिन अनुमापन साधनों का निर्माण किया जाता है उसे अनुमापन प्रणाली कहते हैं।"

16.31 अनुमापन विधियों के प्रकार

यह सच है कि मनोवृत्तियों का सम्बन्ध अमूर्त दशाओं से होने के कारण इनका माप करना एक कठिन कार्य है किन्तु आज अनेक ऐसे पैमानों का विकास किया जा चुका है जिनके द्वारा मनोवृत्तियों, जैसे—अमूर्त तथ्यों एवं समाजिक व्यवहारों को माप करना संभव हो गया है। सामाजिक शोध के अन्तर्गत प्रयोग में लायी जाने वाली अनुमापन प्रविधियाँ भौतिक विज्ञानों से सम्बद्ध अनुमापन प्रविधियों के समान अधिक विकसित, प्रामाणिक एवं विश्वसनीय तो नहीं हैं। फिर भी इस दिशा में होने वाले वर्तमान प्रयत्नों के आधार यह आशा की जा सकती है कि भविष्य में सामाजिक मनोवृत्तियों एवं व्यवहारों का एक अधिक विश्वसनीय अनुमापन कर सकना संभव हो जाएगा। इस दिशा मे सामाजिक घटनाओं की माप करने के लिए मुख्य अनुमापन प्रविधियाँ इस प्रकार हैं।—

1 **अंक पैमाने :** सामाजिक घटनाओं की माप करने में यह एक सामान्यीकृत पैमाना है जिसका उपयोग आज सबसे अधिक किया जाता है। इसका कारण यह है कि इसका उपयोग करने में शोधकर्त्ता को तुलनात्मक रूप से सबसे कम समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस पैमाने के द्वारा एक अथवा अधिक समूहों में विभिन्न विषयों के प्रति व्यक्तियों की मनोवृत्तियों का माप किया जाता है। इसके निर्माण के लिए अध्ययन—विषय से सम्बन्धित विभिन्न स्थितियों अथवा कथनों को संकलित करके एक सूची में व्यवस्थित कर लिया जाता है। इसके पश्चात् इन कथनों के विषय में उत्तरदाताओं की राय ज्ञात की जाती है। उत्तरदाता अथवा सूचनादाता से सहमत हो अथवा जिसे अपने लिए अधिक अनुकूल समझता हो उसके आगे क्रास (×) अथवा सही (✓) का निशान लगा दें। जिन कथनों के आगे क्रास अथवा सही का निशान लगाया जाता है, उन्हें एक अंक प्रदान कर दिया जाता है। इस प्रकार विभिन्न कथनों को जो अंक प्राप्त होते हैं उन्हीं के आधार पर उत्तरदाता की मनोवृत्तियों को ज्ञात कर लिया जाता है। उदाहरण के लिये, यदि किसी सूचनादाता की धार्मिक मनोवृतियों का अध्ययन करना है तो उसके सामने अनेक कथनों की सूची इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है—

(क) नित्य पूजा—पाठ करना मानसिक शान्ति देता है।

(ख) दैनिक पूजा—पाठ ही स्वर्ग प्राप्त करने का साधन है।

(ग) पूजा–पाठ की अपेक्षा ईमानदारी से व्यवहार करना अधिक
धार्मिक क्रिया है।

(घ) पूजा–पाठ से वह प्रसन्नता नहीं मिलती है जो क्लब के
आयोजनों से मिल सकती है, आदि।

उत्तरदाता यदि पहले कथन के आगे सही का निशान लगाता है तथा बाद के तीनों कथनों को यों ही छोड़ देता है तो यह समझा जाएगा कि उत्तरदाता एक–सदाचारी व्यक्ति है। दूसरी ओर उत्तरदाता यदि तीसरे कथन के आगे सही का निशान लगाये तो यह मान लिया जाएगा कि उत्तदाता की मनोवृत्ति पारलौकिकता की अपेक्षा लौकिक सदाचार से अधिक सम्बद्ध है।

2. **सामाजिक दूरी का पैमाना : बोगार्डस :** यह एक सामान्य तथ्य है कि प्रत्येक व्यक्ति, समूह अथवा वस्तु के प्रति हमारी मनोवृत्ति समान नहीं होती। कुछ व्यक्ति अथवा समूह ऐसे होते हैं जिनसे हम बहुत निकटता का अनुभव करते हैं जबकि कुछ के प्रति हमारी भावना इतनी दूरी अथवा घृणा की होती है कि हम उनसे किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखते। एक ही व्यक्ति से हम एक विशेष परिस्थिति में बहुत घनिष्ठता का अनुभव करते हैं जबकि दूसरे समय उसी व्यक्ति के प्रति हमारे मन में सन्देह की भावना उत्पन्न हो जाने के कारण पारस्परिक दूरी बढ़ने लग जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि विभिन्न व्यक्तियों एवं सामाजिक समूहों के बीच पारस्परिक निकटता अथवा दूरी की न तो कोई निश्चित सीमा है और न ही केवल अवलोकन के द्वारा इस सीमा का मूल्यांकन किया जा सकता है। सामाजिक अध्ययनों के अन्तर्गत इस प्रकार की निकटता अथवा दूरी को मापने के लिए जिस मुख्य पैमाने का उपयोग किया जाता है उसे हम **बोगार्डस** का सामाजिक दूरी का पैमाना कहते हैं।

बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना : सामाजिक दूरी की माप करने के लिए **बोगार्डस** ने सर्वप्रथम जिस पैमाने को विकसित किया उसी को हम **बोगार्डस** के सामाजिक दूरी का पैमाना कहते हैं। इस पैमाने के निर्माण के के लिए बोगार्डस ने प्रारम्भिक चरण में 100 लोगों की राय के आधार पर कुछ ऐसी सामाजिक परिस्थितियों का चुनाव किया जिनके द्वारा विभिन्न समूहों के प्रति एक विशेष व्यक्ति अथवा समूह की घटती हुई अथवा बढ़ती हुई सामाजिक दूरी को ज्ञात किया जा सके। इन परिस्थितियों के चुनाव का उद्देश्य अंग्रेज, स्वीडस, पोल तथा कोरियन लोगों के प्रति अमेरिका के नागरिकों की सामाजिक दूरी अथवा घनिष्ठता की सीमा की माप करना था। ऐसी सामाजिक

दूरी का माप करने के लिए **बोगार्डस** ने जिन 7 परिस्थितियों का उपयोगा किया उन्हें निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है।"

वर्ग	अंग्रेज	स्वीडिश	पोल	कोरियन
1. विवाह करने की स्वीकृति 2. क्लब में साथी बनाने की स्वीकृति 3. पड़ोस में रहने की स्वीकृति। 4. एक ही दफ्तर में साथ–साथ कार्य करने की स्वीकृति 5. अपने देश में नागरिक के रूप में स्वीकार करने को तैयार 6. देश में केवल यात्री के रूप में आने 7. अपने देश से बाहर निकाल देने की इच्छा की अनुमति देने को तैयार				

बोगार्डस ने उपर्युक्त समूहों के प्रति अमेरिकनों की मनोवृत्ति का माप करने के लिए इस अनूसूची को 1,725 अमेकिरनों में वितरित किया। सभी उत्तरदाओं को यह निर्देश दिया कि

1– प्रत्येक दिशा में वे अपनी प्रारिम्भक प्रतिक्रिया को व्यक्त करें।

2– अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने समय किसी विशेष व्यक्ति को ध्यान में न रखकर उस सम्पूर्ण को ध्यान में रखें, तथा

3– प्रत्येक समूह के खाने में 7 वर्गों में से केवल उतने वर्गों के सामने ही निशान लगाये जायें जिनसे उत्तरदाता सहमत हो।

उपर्युक्त उत्तर प्राप्त हो जाने के पश्चात् प्रत्येक वर्ग तथा प्रत्येक समूह का योग निकाल कर उसे प्रतिशत में परिवर्तित करने के लिए कुल 1,725 सूचनादाताओं के उत्तरों को 100 के बराबर मान लिया गया। इस प्रकार प्रत्येक वर्ग समूह को जो प्रतिशत प्राप्त हुआ वह इस प्रकार था।

समूह प्रजाति	विभिन्न वर्गों में उत्तरों का प्रतिशत						
	1	2	3	4	5	6	7
1. अंग्रेजी	93.7	96.7	97.3	95.4	95.9	1.7	0.0
2. स्वीडिश	45.3	62.1	75.6	78.0	86.3	5.4	1.0
3. पोल	11.0	11.6	28.3	44.3	58.3	19.7	4.7
4. कोरियन	1.1	6.8	13.0	21.4	23.7	47.1	19.1

सारणी से स्पष्ट होता है कि अमेरिकन नागरिकों में सबसे अधिक घनिष्ठता अंग्रेजों के प्रति है। क्योंकि निकटता देखने वाले अधिकांश प्रश्नों के उत्तर उनके पक्ष में हैं जबकि दूरी प्रदर्शित करने वाले छठे एवं सातवें प्रश्नों के उत्तर उनके पक्ष में नहीं हैं। दूसरी ओर, कोरिया के निवासियों के प्रति अमेरिकन नागरिकों की मनोवृति सबसे अधिक दूरी की है क्योंकि दूरी दिखाने वाले छठें और सातवें प्रश्नों के उत्तर उनके सबसे अधिक पक्ष में है। वास्तविकता यह है कि **बोगार्डस** द्वारा किये गये इस अध्ययन–अवधि में अमेरिकियों को कोरिया में जिस क्षति का सामना करना पडा था उसे देखते हुए यह निष्कर्ष बहुत स्वाभाविक प्रतीत होता है।

बोगार्डस के पैमाने के द्वारा प्राप्त तथ्यों की माप गणितीय विधियों से करना भी संभव है। यह कार्य विभिन्न वर्ग के उत्तरों के लिए भार देकर किया जा सकता है। साधारणतया ऐसा भार वर्गों की क्रम संख्या के अनुसार दिया जाता है। बोगार्डस द्वारा प्रस्तुत उदाहरण में प्रारम्भ के पांच वर्ग निकटता को और अन्तिम दो वर्ग पारस्परिक दूरी को प्रदर्शित करते हैं। इस स्थिति में इन सभी परिस्थितियों को एक ही क्रम में नहीं रखा जा सकता। गणितीय विधि द्वारा माप करने के लिए प्रारमभ की केवल पाँच परिस्थितयों को ही लिया जाएगा क्योंकि वे काफी सीमा तक सामाजिक घनिष्ठता को प्रदर्शित हैं। वहीं आगामी परिस्थितियाँ क्रमशः कम धनिष्ठता को स्पष्ट करती जाती हैं। इस दृष्टिकोण से इन पाँचों परिस्थितियों को क्रमशः 1, 2, 3, 4 तथा 5 भार दिया जाएगा ऐसा करने के लिए निम्नांकित प्रक्रिया का पालन किया जाता है।

(क) सर्वप्रथम समूह अथवा समुदाय के प्रति प्राप्त होने वाले उत्तरों का प्रतिशत विभिन्न वर्गों के सामने रख लिया जाता है।

(ख) उत्तरों के प्रतिशत को भार से गुणा कर दिया जाता है।

(ग) गुणनफल के योग की सहायता से यह ज्ञात कर लिया जाता है कि एक विशेष समूह के प्रति किसी दूसरे समूह की सामाजिक घनिष्ठता अथावा दूरी कितनी अधिक है इसे निम्नलिखित सारणी द्वारा समझाा जा सकता है ।

वर्ग	भार	अंग्रेज		स्वीडिश		पोल		कोरियन	
		उत्तरों का प्रतिशत	भार प्रतिशत	उत्तरों का प्रतिशत	भार प्रतिशत	उत्तरों का प्रतिशत	भार प्रतिशत	उत्तरों का प्रतिशत	भार प्रतिशत
1.	1	93.7	93.7	45.3	45.3	11.0	11.0	1.1	1.1
2.	2	96.7	193.4	62.1	124.2	11.6	23.2	10.8	21.6
3.	3	97.3	291.9	75.6	226.8	28.3	84.9	11.8	35.4
4.	4	95.4	381.6	78.0	312.0	44.3	177.2	20.1	80.4
5.	5	95.9	479.5	86.3	431.5	58.3	291.5	27.5	137.5
		योग	1440.1		1139.8		587.8		276.0

उपर्युक्त गणितीय विधि का उपयोग करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि अंग्रेज, स्वीडश, पोल तथा कोरियन लोंगों के प्रति अमेरिका के निवासियों की निकटता का अनुपात कमशः 1440.1, 1139.8, 587.8 तथा 276.0 है। यह स्थिति एक विशेष समूह के प्रति दूसरे समूह की निकटता के अनुपात को सरलतापूर्वक स्पष्ट कर देती है।

अनुमापों की उपयोगिता

वैज्ञानिक अध्ययन में अनुमाप की उपयोगिता निम्न कारणों से अधिक है—

1— वैज्ञानिक परिपक्वता की प्राप्ति के लिए — अनुमाप विज्ञान को इस योग्य बना देते हैं कि वह अपने अध्ययन विषय

के अन्तर्गत आने वाली घटनाओं का सही एवं प्रामाणिक नाप कर सकें। प्रगतिशील होना प्रत्येक विज्ञान की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। लेकिन इसकी पूर्ति तब तक नहीं हो सकती, जब तक अनुमापन प्रविधियों की उत्तरोत्तर वृद्धि न होती जाए। जैसा कि **गुडे एवं हॉट** ने लिखा है कि – 'सभी विज्ञान अधिकतम परिशुद्धता की दिशा में अग्रसर होते हैं। इस परिशुद्धता के अनेक रूप होते हैं परन्तु उसका एक आधारभूत रूप है– क्रमबद्ध श्रेणियों की माप।'

अतः उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि अधिकतम परिशुद्धता की प्राप्ति के लिए ये प्रविधियाँ आवश्यक है।

2– वैषयिक माप के लिए– वैषयिकता के अभाव में हम किसी भी अध्ययन को प्रौढ़ और वैज्ञानिक नहीं कह सकते हैं। वास्तविकता को ज्ञात करने के लिए गणनात्मक विवेचन अत्यन्त आवश्यक होती है तथा यह कार्य अनुमाप प्रविधियों की सहायता से ही संभव हो सकता है। भौतिक विज्ञानों की तुलना में अभी इन प्रविधियों का विकास समाजशास्त्र नहीं कर पाया है। फिर भी जैसे–जैसे इसकी प्रगति होती जाएगी, वैसे ही गणनात्मक परिशुद्धता भी बढ़ती जाती है। जैसा कि **डॉ. पी. वी.यंग** ने लिखा है कि–

"यद्यपि इस क्षेत्र में बहुत सा कार्य अभी आरम्भिक स्तर पर है, फिर भी यह कहा जा सकता है कि एक विज्ञान के रूप में जैसे–जैसे समाज विज्ञान परिपक्व होता जाएगा, वैसे–वैसे विद्यमान मापक यन्त्रों तथा प्रविधियों में अधिक उन्नति होगी और साथ ही अन्य अनेक, नवीन व अधिक परिशुद्ध मापक प्रविधियाँ विकसित होगी।

16.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में मापन एवं अनुमापन की विधियों के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गयी है जिसमें मापन की विधियों के बारे में बताया गया है कि यह ऐसी प्रविधियां हैं जिनके द्वारा समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनके आकर्षण, विकर्षण एवं रुचियों, मनोवृत्तियों के बारे में माप की जा सकती है। मापन की दो विधियों का वर्णन इसमें किया गया है, जिसमें समाजमितीय माप एवं तीव्र मापक माप प्रमुख हैं। समाजमितीय माप वह माप है जिसके द्वारा किसी समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनके आकर्षण, विकर्षण एवं समूह की सम्बन्ध व्यवस्था में व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति आदि को स्पष्ट, सरल तथा संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। तीव्रता मापक पैमाने

वे पैमाने जिनके द्वारा किसी व्यक्ति या समूह की मनोवृत्तियों एवं रुचियों की गहनता या तीव्रता की माप करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इसी इकाई में थर्सटन की समविस्तार प्रणाली के बारे में प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत इकाई में अनुमापन की विधि के बारे में भी चर्चा की गयी है जिसके बारे में लिखते हुए बताया गया है कि अनुमापन पद्धति वह पद्धति है जिसमें अन्तर्निहित समस्या इकाईयों की श्रेणियों को एक क्रम के अन्तर्गत व्यवस्थित करने की है। अर्थात् अनुमापन प्रविधियों गुणात्मक श्रेणियों को गणनात्मक श्रेणियों में बदलने की पद्धतियां है। अनुमापन विधियों पर प्रकाश डालते हुए इसके दोनों प्रकारों का वर्णन किया गया है। जिसमें अंक पैमाने एवं सामजिक दूरी का पैमाना प्रमुख है। अंक पैमाना सामाजिक घटनाओं को माप करने में सबसे अधिक प्रयोग में लाया जा रहा है इसका कारण यह है कि इसका उपयोग करने में शोधकर्ता को तुलनात्मक रूप से सबसे कम समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेंगी तथा आप लोग मापन एंव अनुमापन की विधियों के बारे में विस्तार से जान सकेंगे।

16.5 पारिभाषिक शब्दावली

अनुपामन प्रविधि – किसी वस्तु या घटना की मात्रा या भार को मापने के लिए जिस पैमाने का प्रयोग किया जाता है, उसके आधार पर जिन अनुमापन साधनों का निर्माण किया जाता है, उसे अनुमापन प्रणाली कहते हैं।

सामाजिक दूरी का पैमाना– विभिन्न व्यक्तियों एवं सामाजिक समूहों के बीच पारस्परिक निकटता या दूरी की न तो कोई निश्चित सीमा है और न ही केवल अवलोकन के द्वारा इस सीमा का मूल्यांकन किया जा सकता है। सामाजिक अध्ययनों के अन्तर्गत इस प्रकार की निकटता या दूरी को मापने के लिए जिस पैमाने का उपयोग किया जाता है उसे सामाजिक दूरी का पैमाना कहते हैं।

सामजमितीय माप – यह एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनके आकर्षण, विकर्षण एवं समूह की सम्बन्ध व्यवस्था में व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति आदि को स्पष्ट, सरल तथा संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है, इसे ही समाजमितीय माप कहते हैं।

तीव्रता मापन पैमाना – ये वे पैमाने हैं जिनके द्वारा किसी व्यक्ति या समूह की मनावृत्तियों एवं रुचियों की गहनता या तीव्रता की माप करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

लघु

1– मापन विधियों के बारे में प्रकाश डालिये।

2– अनुमापन विधियों से आप क्या समझते है?

3– समाजमितीय माप पर प्रकाश डालिये।

4– बोगार्डस के सामाजिक दूरी पैमाने के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिये।

5– तीव्रता मापक पैमाने के बारे में प्रकाश डालिये।

विस्तृत–

1– मापन से आप क्या समझते हैं? तथा इसकी विधियों की विवचेना कीजिए।

2– अनुमापन पद्धति को परिभाषित करते हुए इसके विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डालिये।

16.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– गुडे एण्ड हॉट, मैथड्स इन सोशल रिसर्च, वर्ष– 1952, पेज– 25.

2– बोगार्डस, इमिग्रेशन एण्ड रेश एटिट्यूट, पेज – 25

3– यंग, पी0 वी0 सांइंटिफिक सोशल सर्वे एवं रिसर्च, वर्ष 1960, पेज 349–361।

4– गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, प्रारिम्भक सामाजिक अनुसंधान (शोध), आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष–2005 पेज नं. 372–376, 378–384

खण्ड–तृतीय
तथ्य का एत्रीकरण एवं विश्लेषण

इकाई : 17 समंकों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण

17.0 इकाई का उद्देश्य

17.1 परिचय

17.2 समंकों का वर्गीकरण

17.21 समंकों के वर्गीकरण की परिभाषा

17.22 समंकों के वर्गीकरण की विशेषतायें

17.23 समंकों के वर्गीकरण के उद्‌देश्य

17.24 समंकों के वर्गीकरण का आधार

17.3 समंकों का विश्लेषण

17.31 समंकों के विश्लेषण के सोपान

17.32 समंकों के विश्लेषण के प्रकार

17.4 सार–संक्षेप

17.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास–प्रश्न, लघु, विस्तृत

17.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

17.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को आपके सम्मुख इसलिए प्रस्तुत किया गया है कि आप लोग समंकों के वर्गीकरण एवं विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें। वास्तव में इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य आप लोगों को तथ्यों के वर्गीकरण एवं विश्लेषण से सम्बन्धित सभी प्रकार के ज्ञान को आप लोगों को प्रदान करना है। वस्तुतः प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगें–

1– समंकों के वर्गीकरण के अर्थ के बारे में जान सकेंगे।

2– समंकों के वर्गीकरण की परिभाषा के बारे में लिख सकेंगे।

3– समंकों के वर्गीकरण की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– समंकों के वर्गीकरण के उद्देश्यों पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

5– समंकों के वर्गीकरण के आधारों पर अपने सुझाव दे सकेंगे।

6– समंकों के विश्लेषण के बारे में जान सकेंगे।

7– समंकों के विश्लेषण के सोपानों पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

8– समंकों के विश्लेषण के प्रकारों पर लिख सकेंगे।

17.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में समंकों के वर्गीकरण एवं विश्लेषण के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि वर्गीकरण की क्रिया वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। वास्तव में वर्गीकृत एवं क्रमबद्ध तथ्य अपने आप बोलते हैं, जबकि यदि वे अव्यवस्थित रूप में होते हैं तो वे मृत तुल्य होते हैं। वास्तविकता तो यह है कि वर्गीकरण तथ्यों को उनकी सामान्य विशेषताओं के आधार पर क्रमों अथवा समूहों में व्यवस्थित करने, विभिन्न परन्तु सम्बद्ध भागों में पृथक करने की प्रक्रिया है। प्रस्तुत इकाई में वर्गीकरण की विशेषताओं, उद्देश्यों तथा आदर्श वर्गीकरण की प्रधान विशेषताओं के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इसी इकाई के मध्य में समंकों के वर्गीकरण के आधारों पर भी चर्चा प्रस्तुत की गयी है। जिसमें गुणात्मक वर्गीकरण, संख्यात्मक वर्गीकरण आदि के बारे में जानकारी प्रस्तुत की गयी है।

प्रस्तुत इकाई में समंकों के विश्लेषण के बारे में ज्ञान प्रदान किया गया है, जिसमें बताया गया है कि समंकों का विश्लेषण करते समय अनुसंधान के अंतर्गत समस्या की वैषयिक रूप से तथ्यों के अनुसार प्रस्तुत करना चाहिए एवं वैज्ञानिक रूप में विश्लेषक को सदैव यह प्रयत्न करना चाहिए कि तथ्य विश्लेषण करते समय उसमें अभिनति प्रवेश न करने पाये। तथ्य विश्लेषण में वैषयिकता को लाने के लिये प्रत्येक स्तर पर विश्लेषक को अत्यन्त सावधान एवं सतर्क रहना चाहिए तथा तथ्य संकलन में पूर्व धारणा का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। इसी इकाई में समंकों के विश्लेषण के विभिन्न सोपानों की भी चर्चा

प्रस्तुत की गयी है। इकाई के अन्त में समंकों के विश्लेषण के प्रकारों पर वृहद् प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी तथा आप लोग समंकों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण आसानी से कर सकेंगे।

17.2 समंकों का वर्गीकरण

वर्गीकरण किसी भी वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए मौलिक आधारशिला है। जे. आर. हिक्स के अनुसार–"वर्गीकृत एवं क्रमबद्ध तथ्य अपने आप बोलते हैं, अव्यवस्थित रूप से वे मृत तुल्य होते हैं। 'वर्गीकरण की क्रिया वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। वैज्ञानिक अनुसंधान की सफलता तथा निष्कर्ष का महत्व प्रत्यक्षतः वर्गीकरण की प्रक्रिया से ही सम्बन्धित है। किसी भी अनुसंधान में चाहे उसका आकार कुछ भी हो, संकलित तथ्य अथवा सामग्री इतनी कम नहीं होती है कि उसे शीघ्रता व सरलता से भरी हुई सूचियों के अवलोकन मात्र से समझा जा सके। अतः अनुसंधानकर्ता का प्रथम महत्वपूर्ण कार्य यह है कि उन विवरणों को संक्षिप्त व सरल करके ऐसे रूप में रखे जिससे उनकी प्रमुख विशेषताएँ स्पष्ट हो सकें तथा संकलित तथ्यों का निर्वचन करना सुविधाजनक हो सके। यह कार्यप्रणाली तथ्य वर्गीकरण के नाम से सम्बोधित की जाती है। संकलित तथ्यों के व्यवस्थित विश्लेषण तथा वैषयिक निर्वचन के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि उन्हें सूक्ष्म रूप में प्रस्तुत किया जाय। इस प्रकार संकलित तथ्यों को उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गों तथा उपवर्गों में विभक्त किया जाता है। इस क्रिया को वर्गीकण कहते हैं।

17.21 समंकों के वर्गीकरण की परिभाषा

प्रो. एल. आर. कॉनर के अनुसार – 'वर्गीकरण तथ्यों को (वास्तविक अथवा कल्पित रूप से) उनकी समानता तथा सदृश्यता के अनुसार अथवा वर्गों में क्रमबद्ध करने की क्रिया है तथा इससे व्यक्तिगत इकाइयों की विविधता में पाए जाने वाले गुणों की एकता व्यक्त हो जाती है।'

प्रो. होरेस सीक्रीट के अनुसार – 'वर्गीकरण तथ्यों को उनकी सामान्य विशेषताओं के आधार पर क्रमों अथवा समूहों में विन्यासित करने, विभिन्न परन्तु सम्बद्ध भागों में पृथक करने की प्रक्रिया है।'

17.22 समंकों के वर्गीकरण की विशेषतायें

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर वर्गीकरण की प्रमुख विशेषताएँ अग्रलिखित हैं–

1– वर्गीकरण के अन्तर्गत संकलित तथ्यों कों विभिन्न भागों में विभक्त किया जाता है ।

2– वर्गीकरण का आधार गुणों की समानता अथवा एकता होती है।

3– वर्गीकरण को वास्तविक अथवा काल्पनिक रूप से किया जाता है।

4– वर्गीकण इस प्रकार किया जाता है कि इकाइयों की भिन्नता में भी उनकी एकता स्पष्ट हो जाये।

17.23 समंकों के वर्गीकरण के उद्देश्य

वर्गीकरण के प्रधान उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1– तथ्यों को सरल एवं संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना।

2– समानता तथा असमानता को स्पष्ट करना।

3– तुलना करने में सहायता प्रदान करना।

4– तर्कसंगतपूर्ण प्रस्तुतीकरण।

5– सारणीयन का आधार प्रस्तुत करना।

6– विश्लेषण तथा निर्वचन का आधार।

7– सामान्यीकरण को सरल बनाना।

आदर्श वर्गीकरण की विशेषतायें –

1– यह स्पस्ट होना चाहिए।

2– यह स्थायी होना चाहिए।

3– नमनीय या लचीला होना चाहिए।

4– सजातीय होना चाहिए।

5– अनुसंधान उद्देश्यों के अनुकूल होना चाहिए।

6– इसे सर्वांगपूर्ण होना चाहिए।

7– यह पारस्परिक एकान्तिक व पृथक होना चाहिए।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समंकों के वर्गीकरण की परिभाषा लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

2. समंकों के वर्गीकरण की विशेषतायें लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

17.24 समंकों के वर्गीकरण का आधार

सांख्यिकीय तथ्य सामग्री का वर्गीकरण समग्र के विभिन्न गुणों व विशेषताओं के आधार पर किया जाता है। सामान्यतः तथ्य सामग्री की विशेषताएँ दो प्रकार की हो सकती हैं– 1. वर्णानात्मक, 2. संख्यात्मक। वर्णनात्मक विशेषताओं का संख्यात्मक माप नहीं किया जा सकता है। केवल व्यक्तिगत इकाइयों में उनकी उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। बेकारी, व्यवसाय, साक्षरता, वैवाहिक स्थिति तथा लिंग आदि वर्णनात्मक विशेषताओं के उदाहरण हैं। इनका हम संख्यात्मक माप नहीं कर सकते। इन्हें हम गुणात्मक परिवर्त्य अथवा गुण भी कहते हैं। इसके प्रतिकूल संख्यात्मक विशेषताओं के अन्तर्गत संख्यात्मक माप संभव है, जैसे आयु, आय, ऊँचाई, भार आदि। ऐसी विशेषताओं को संख्यात्मक परिवर्त्य कहते हैं।

तथ्य सामग्री की उपर्युक्त दो प्रकार की विशेषताओं के आधार पर उसका वर्गीकरण भी दो प्रकार से किया जा सकता है।

1– गुणात्मक वर्गीकरण– वर्गीकरण के इस प्रकार में तथ्य सामग्री को उसके गुणों व विशेषताओं के आधार पर विभिन्न वर्गों में विभाजित किया जाता है। यह विभाजन निम्नांकित दो प्रकार का होता है–

(क) सरल वर्गीकरण अथवा द्वन्दभाजन वर्गीकरण– यदि तथ्य सामग्री का वर्गीकरण एक ही विशेषताओं अथवा गुण के आधार पर किया जाय तो उसे सरल वर्गीकरण कहते हैं। इसके अन्तर्गत एक गुण की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के आधार पर तथ्यों को दो भागों में विभाजित किया जाता है इसलिए इसे द्वन्दभाजन वर्गीकरण भी कहते हैं, जैसे साक्षात्कार के गुण के आधार पर साक्षर व निरक्षर में विभाजन करना।

(ख) बहुगुण वर्गीकरण – जब तथ्य सामग्री का विभाजन एक से अधिक गुणों के आधार पर किया जाय तथा वर्गों का उपविभाजन किया जाय तो इसे बहुगुण वर्गीकरण कहते हैं। इसमें पहले किसी एक गुण की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के आधार पर विभाजन होता है। फिर अन्य गुण के आधार पर उसे उपवर्गों में विभाजित करते हैं, जैसे साक्षरता के आधार पर दो भागों में विभाजित करके लिंग के आधार पर पुनः उपविभाजन करते हैं, जैसे साक्षर पुरुष, साक्षर स्त्रियाँ इत्यादि। इसी प्रकार नगर और गाँव में कितनी स्त्रियाँ व पुरुष साक्षर है जैसा कि निम्नंकित चार्ट से स्पष्ट होता है –

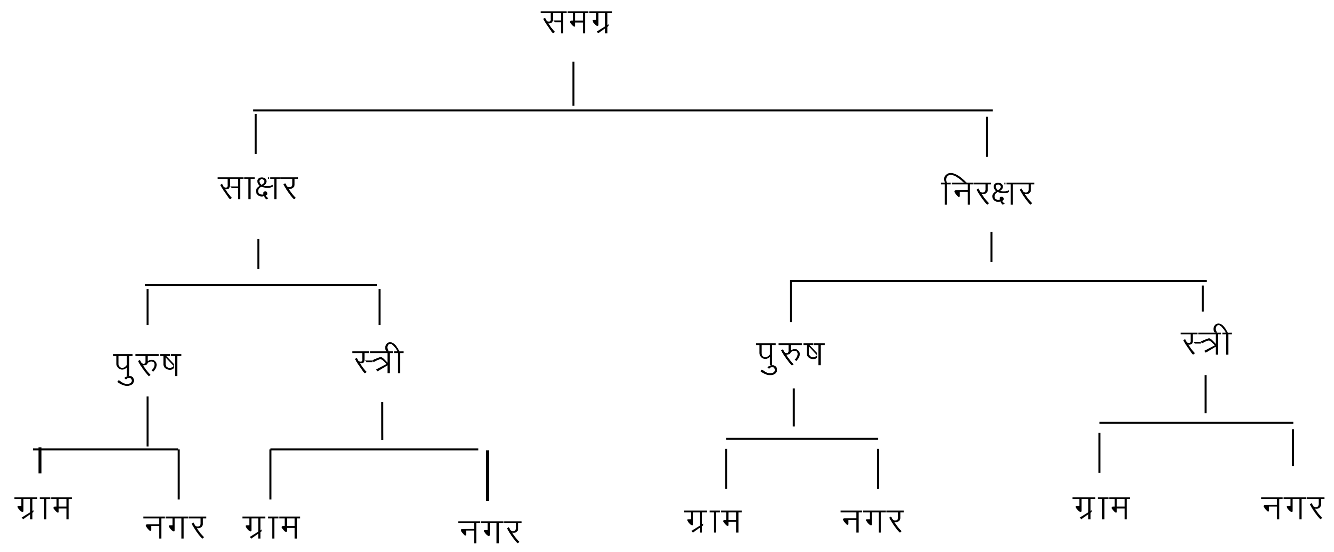

2– संख्यात्मक वर्गीकरण अथवा वर्ग मध्यान्तरों के अनुसार वर्गीकरण – वर्गीकरण का यह प्रकार वहाँ उपयुक्त होता है जहाँ तथ्यों की प्रत्यक्ष संख्यात्मक माप सम्भव होती है। ऐसे तथ्यों का वर्गीकरण सामान्यतः वर्ग मध्यान्तरों के अनुसार किया जाता है। तथ्यों की समता व विषमता का ध्यान रखते हुए कुछ छोटे–छोटे वर्ग निर्धारित कर लिए जाते हैं तथा पुनः उन्हें सावधानी के साथ उन वर्गों में वितरित कर दिया जाता है। यदि किसी महाविद्यालय के प्रवक्ताओं का मासिक वेतन 10,000 रुपये से 70,000 रुपये तक है तो बीस–बीस हजार सौ रूपये के वर्ग–मध्यान्तरों में अग्रलिखित रूप में वर्गीकरण होगा।

मासिक वेतन (रुपयों में)	प्रवक्ताओं की संख्या
10,000 – 30,000	14
30,000 – 50,000	20
50,000 – 70,000	11
योग	45

संख्यात्मक वर्गीकरण में जिन विशेष शब्दावलियों का उपयोग होता है, उनका स्पष्टीकरण आवश्यक है।

1– वर्ग–सीमाएँ– अंक सीमाएँ, जिनमें एक वर्ग–मध्यान्तर, आता है, उन्हें वर्ग सीमाएँ कहते हैं। पहली अंक सीमा को आधार अथवा निचली तथा दूसरी अंक सीमा को ऊपर अथवा ऊपरी सीमा कहते हैं। उपर्युक्त उदाहरण में प्रथम वर्ग की निचली सीमा तथा ऊपरी वर्ग सीमा क्रमशः 10,000 और 30,000 हैं।

2– वर्ग–विस्तार– किसी वर्ग की दोनों सीमाओं के मध्यान्तर को वर्ग–विस्तार कहते हैं। उपर्युक्त उदाहरण में प्रत्येक वर्ग का विस्तार 20,000 है।

3– वर्ग आवृत्ति– प्रत्येक वर्ग मध्यान्तर के समक्ष प्रदर्शित किये गये पदों को वर्ग आवृत्ति कहा जाता है। उपर्युक्त उदाहरण में 10,000–30,000 वर्ग की आवृत्ति 14 है।

4– मध्य–मूल्य अथवा मध्य बिन्दु– किसी वर्ग की सीमाओं के मध्य स्थान को मध्य–मूल्य अथवा मध्य–बिन्दु कहते हैं। मध्य मूल्य ज्ञात करने के लिए वर्ग की दोनों सीमाओं को जोड़कर आधा किया जाता है, जैसे उपर्युक्त उदाहरण में प्रथम वर्ग का मध्य मूल्य इस प्रकार निकाला जा सकता है।

$$\text{मध्य मूल्य} = \frac{\text{निचली सीमा} + \text{ऊपरी सीमा}}{2}$$

$$= \frac{10,000 + 30,000}{2}$$

$$= \frac{40,000}{2}$$

$$= 20,000$$

17. 3समंकों का विश्लेषण

तथ्यों के संकलन, सम्पादन वर्गीकरण तथा सारणीकरण के बाद समाजवैज्ञानिक उनका विश्लेषण तथा निर्वचन की दिशा में अग्रसर होता है। विश्लेषण का प्रधान उद्देश्य किये गये अवलोकनों को इस ढंग से संक्षिप्त करना है कि वे अनुसंधान प्रश्नों के उत्तरों को प्रस्तुत कर सकें। दूसरी ओर निर्वचन में मुख्यतः इन उत्तरों के विस्तृत अर्थ के लिए अन्वेषण करना होता

हैं। इस संदर्भ में निर्वचन प्राप्य ज्ञान का उनसे सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है। सामान्यतः अनुसंधान की सम्पूर्ण प्रक्रिया इन दोनों उद्देश्यों से प्रशासित रहती है। अनुसंधान में सम्मिलित पूर्ववर्ती सोपान उसकी उद्देश्य–पूर्ति को संभव बनाने के लिए आवश्यक है। इस प्रकार सामाजिक अनुसंधानात्मक तथ्यों के विश्लेषण तथा निर्वचन का प्रथम उद्देश्य सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक तथ्यों का इस प्रकार सूक्ष्मान्वेषण करना है जिससे उनकी प्रकृति, तथ्यों के पारस्परिक सम्बन्धों तथा उनके नियामक सिद्धान्तों का पता लगाया जा सके और उनके बारे में भविष्यवाणी करना संभव हो सके।

पी. वी. यंग के अनुसार – 'एक सामाजिक विश्लेषक यह मानकर चलता है कि तथ्यों के संचयन के पीछे स्वयं तथ्यों तथा आंकड़ों से कहीं बढ़कर कोई ऐसी वस्तु है जो अधिक महत्वपूर्ण तथा विस्मयकारी है। वह धारणा बनाता है कि सावधानीपूर्वक तथा सुव्यवस्थित तथ्यों तथा आँकड़ों को जब तथ्यों के सम्पूर्ण भाग से सम्बन्धित किया जाय तो महत्वपूर्ण सामान्य अर्थ प्रकट हो सकता है जिसके आधार पर वैध सामान्यीकरणों को प्राप्त किया जा सकता है।' वास्तव में अनुसंधान में किस प्रकार के तथ्यों का संकलन करना है, उन तथ्यों की प्राप्ति हेतु किन प्रविधियों को प्रयोग करना है, किन स्त्रोतों से तथ्यों का संकलन करना है, किस प्रकार प्राक्कल्पनाओं तथा परीक्षणों का निर्माण करना है, तथा किस प्रकार उनका परीक्षण किया जाय आदि का निर्धारण, वर्गीकरण तथा विश्लेषण की आवश्यकता व उनके महत्व पर जोर देता है। जब संकलित तथ्यों का सम्पूर्ण भाग एक ढेर के रूप में एकत्रित हो जाता है तो उसका व्यवस्थित एवं तार्किक विश्लेषण करने की आवश्यक प्रतीत होती है।

अमेरिकन मार्केटिंग सोसाइटी के अध्ययन उपलब्धियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि विश्लेषण की प्रामणिकता अनुसंधानकर्ता द्वारा निर्धारित नियमों को मानने की अपेक्षा उसके सामान्य ज्ञान, अनुभव, पिछला ज्ञान तथा बौद्धिक ईमानदारी पर अधिक निर्भर करती है। अतः विश्लेषणात्मक प्रक्रिया की एक आवश्यक माँग यह है कि एक आलोनात्मक तथा अनुशासित कल्पना शक्ति का विकास कर सके जो सम्पूर्ण तथ्यों को तथा उनके अन्तः सम्बन्धों को समझ सके तथा उनका आलोचनात्मक परीक्षण कर सके।

तथ्य विश्लेषण की विश्लेषक से एक आवश्यक अपेक्षा यह भी है कि वह तथ्यों का विश्लेषण करते समय अनुसंधान के अन्तर्गत समस्या की वैषयिक रूप से तथ्यों के अनुसार प्रस्तुत करे। वैज्ञानिक रूप में विश्लेषक को सदैव यह प्रयत्न करना

चाहिए कि तथ्य विश्लेषण करते समय उसमें अभिनति प्रवेश न करने पाये। तथ्य विश्लेषण में वैषयिकता को लाने के लिए प्रत्येक स्तर पर विश्लेषक को अत्यन्त सावधान एवं सतर्क रहना चाहिए तथा तथ्य–संकलन में पूर्व धारणा का कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

17.31 समंकों के विश्लेषण के सोपान

तथ्य–विश्लेषण के अन्तर्गत निम्नलिखित सोपान सम्मिलित हो सकते हैं–

1– एकत्रित तथ्यों की सूक्ष्म परीक्षा– तथ्यों के विश्लेषण में प्रारम्भिक महत्वपूर्ण चरण एकत्रित तथ्यों का आलोचनात्मक परीक्षण करना हैं। तथ्यों की सूक्ष्म परीक्षा से यह देखना चाहिए कि उनमें यथार्थता व वैषयिकता विद्यमान है या नहीं। यदि वैषयिकता का गुण विद्यमान नहीं तो पुनर्परीक्षण करके पता लगाना चाहिए कि ऐसी कौन–सी परिस्थितियाँ थीं जिनके कारण वैषयिकता का अभाव रहा। इसी तरह यह भी देखना चाहिए कि तथ्यों में पर्याप्त, सुव्यवस्था अथवा क्रमबद्धता है अथवा नहीं। यदि नहीं हो तो सुव्यवस्थित कर लेना चाहिए। वास्तव में यदि कोई घटना का अध्ययन करने की इच्छा प्रकट करता है तो तार्किक बात जो उसे करनी है वह यह है कि उसे अपने नेत्रों के सामने उस घटना का एक नमूना रखना चाहिए और उसे तब तक देखते रहना चाहिए जब तक कि समस्त आवश्यक विशेषताएँ उसके मस्तिष्क में स्थायी रूप से समाहित नहीं हो जाती हैं। एकत्रित तथ्यों के पढ़ने, पुनः पढ़ने, परीक्षण तथा पुनर्परीक्षण से तथ्यों में जो अन्तर्निहित दोष छिपे रहते हैं, उनका निष्कासन किया जा सकता है। ऐसा करने से वैषयिक तथ्यों के सौन्दर्य में अभिवृद्धि हो जाती है, जो विज्ञान का अन्तिम लक्ष्य है।

2– तथ्य–विश्लेषण की योजना–अनुसंधान अभिकल्प की रचना करते समय ही भावी तथ्य विश्लेषण की प्रक्रिया की एक पूर्व योजना बना ली जाती है और यह आवश्यक भी है, जैसे–जैसे अनुसंधान कार्य की गति बढ़ती है प्रारंम्भिक अपूर्ण योजना विश्लेषण प्रक्रिया, एक पूर्ण तथा अन्तिम विश्लेषण के रूप में विकसित होती है। आवश्यकतानुसार उसे बढ़ाया अथवा पुनः कार्यान्वित भी किया जा सकता है। इस क्रिया के लिए सचेत, लचीले तथा सुलझे हुए मस्तिष्क की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत यदि विश्लेषण की योजना पहले से तैयार नहीं की गयी है तो ऐसी स्थिति में संकलित तथ्यों का विश्लेषण प्रारम्भ करने से पूर्व उसकी आवश्यक रूप रेखा बना लेनी चाहिए। ऐसा न

करने से आगे तथ्य विश्लेषण में कठिनाइयाँ उपस्थित हो सकती है। संकलित तथ्यों का विश्लेषण प्रारम्भ करने हेतु गुड, बार तथा स्केट्स ने निम्नलिखित चार उपयोगी सुझाव प्रस्तत किये हैं –

(क) तथ्यों से जो सारणी निर्मित हो सकती है उसके सन्दर्भ में विचार करना।

(ख) समस्या के कथन एवं प्रारम्भिक विश्लेषण का सावधानीपूर्वक परीक्षण करना तथा तथ्यों के मूल आलेखों का अध्ययन करना।

(ग) तथ्यों का ध्यान न रखते हुए समस्या के सम्बन्ध में विचार करना अथवा अन्य व्यक्तियों से उसके सम्बन्ध में विचार–विमर्श करना।

(घ) विविध सरल सांख्यिकीय गणनाएँ करके तथ्यों की आलोचना करना।

3– सांख्यिकीय वर्णन – अनुसंधान तथ्यों के विश्लेषण की सामान्य प्रक्रिया में सांख्यिकीय विधियों का अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सामान्यतः लघु अथवा वृहत दोनों प्रकार के सर्वेक्षणों तथा अनुसंधानों के अन्तर्गत सांख्यिकीय गणनाएँ प्रस्तुत की जाती हैं। सर्वेक्षण विश्लेषण के अन्तर्गत सांख्यिकीय वर्णन के उपयोग के सन्दर्भ में मोजर तथा काल्टन ने चार उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किये हैं–

(क) सर्वेक्षण सामग्री का विश्लेषण आवश्यक रूप से सांख्यिकीय ही नहीं होता। जिस सीमा तक हम सम्पूर्णता में अभिरूचि न रख वैयक्तिक इकाइयों में अभिरूचि रखते हैं, उसी सीमा तक विश्लेषण एवं मूल्यांकन के गैर संख्यात्मक ढंग को प्राथमिकता प्रदान करते हैं। तथापि वृहत् पैमाने के सर्वेक्षणों में तथ्यों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकीय विधियों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

(ख) विश्लेषण का बहुत बड़ा अंश सांख्यिकीय वितरणों का पता लगाने, आलेखों की रचना करने तथा औसतों, प्रसार के मापों, प्रतिशतों, सह–सम्बन्ध–गुणाकों, जैसे सरल माप की गणना करने से सम्बन्धित होता है। इन क्रियाओं को विश्लेषण शब्द से सम्बन्धित करना अत्यधिक कृत्रिमतापूर्ण है। वास्तव में इनके लिए 'साख्यिकीय वर्णन' शब्द का प्रयोग कही समीचीन प्रतीत होता है, क्योंकि ये माप अध्ययन की इकाइयों की विशेषताओं का विवरण ही प्रस्तुत करते हैं।

(घ) तथापि इस अर्थ में सांख्यिकीय वर्णन सर्वेक्षण विश्लेषण का केवल एक अंश है, शब्द के विस्तृत अर्थ में निष्कर्ष इसका दूसरा अंग है।

इस प्रकार के निष्कर्ष के अन्तर्गत हम निदर्शन के अन्तर्गत पाये जाने वाले तथ्यों पर समग्र की विशेषताओं के विषय के निष्कर्ष निकालते हैं तथा उसके बारे में न्यादर्शात्मक विभागों की जानकारी प्राप्त करते हैं।

(ग) पृथक सन्दर्भ में भी निष्कर्ष की समस्या उत्पन्न होती है। एक सर्वेक्षण में दो परिवर्त्यों के बीच के सह–सम्बन्ध का मापन करना एक बात है, ये सम्बन्ध विश्लेषणात्मक पद्धतियों के द्वारा किस प्रकार प्रमाणित किये जाते हैं, यह पूर्णतया दूसरी बात है। सर्वेक्षण में जटिल सांख्यिकीय विधियों के प्रयोग से हम बहुपरिवर्तित सम्बन्धों की स्थापना तथा उनका निर्वचन करते हैं।

4– कारण–कार्य सम्बन्धों का विश्लेषण– तथ्य विश्लेषण से सन्दर्भ में विशेषकर सामाजिक तथा वैयक्तिक समस्याओं के सम्बन्ध में अत्यन्त कठिन कार्य कारण–कार्य सम्बन्धों का निर्धारण करना है।

अरस्तु ने वैज्ञानिक ज्ञान की एक शर्त रखी है कि हमें ''किसी वस्तु के कारण को जानना चाहिए।'' विज्ञान की सुप्रसिद्ध परिभाषा '(Cognito certy per causas)' कारणों के माध्यम से निश्चितता के साथ ज्ञान होना थी। वैज्ञानिक अन्वेषण का समस्त इतिहास कारणता की महत्ता को कम करता है क्योंकि सम्पूर्ण विज्ञान सर्वदा स्पष्टीकरण को खोज रहा है। वैज्ञानिक कभी भी यह जानकर संतुष्ट नहीं हुए हैं कि कोई वस्तु इस प्रकार है अपितु उन्होंने हमेशा यह जानने का प्रयास किया है कि कोई वस्तु ऐसी क्यों है? बिना कारणता सम्बन्धी स्पष्टीकरण के ज्ञान में उस श्रेष्ठ गुण का अभाव होता है जो उसे विज्ञान बनाता है।

समाजशास्त्री तथा अन्य समेत अनेक आधुनिक लेखकों ने स्वयं कारण पद का विरोध किया है। ऐसा अधिकांशतया डेविड ह्यूम के प्रभाव से हुआ है, जिसने अठारहवीं शताब्दी में इस तर्क के आधार पर कारणता के सिद्धान्त पर आक्रमण किया था कि कारण और कार्य में सम्बन्ध मात्र मस्तिष्क में होता है, अस्तित्व में नहीं होता। काम्टे ने प्रघटना के अंतरंग कारणों की खोज को अस्वीकार किया तथा 'Lemoteur indispensable' की तरह व्यंग्य का प्रयोग किया। नवीन प्रत्यक्षविदों ने इस परम्परा को बनाए रखा। न्यूरथ ने कार्य कारण के मुहावरे की आलोचना की तथा कारण (कार्य) को उन पदों की सूची में रखा जिसका उसने अपने ग्रन्थ में बहिष्कार किया है। लॉरेंन्स के. फ्रैंक लिखते हैं कि

जब तक सामाजिक वैज्ञानिक नई अवधारणाओं को स्वीकार करके कारण–कार्य के पुराने यंत्रवत् विचारों का परित्याग नहीं करते, वास्तविक प्रगति नहीं की जा सकती है।

कारण कार्य मुहावरे के ऊपर किए गए इन प्रहारों को अधिसमाजशास्त्र के सन्दर्भ में अतर्कसंगत मानकर छोड़ा जा सकता है।

आवश्यक बात यह है कि सभी सम्प्रदायों के समाजशास्त्री वस्तुतः उन तथ्यों का स्पष्टीकरण, जिनका वे अध्ययन कर रहे हैं, अन्य तथ्यों के सन्दर्भ में करते हैं। वे कारणों के बजाय पूर्वगामी अथवा अप्रकार्यात्मक सम्बन्ध या लुण्डबर्ग की तरह क्रियाविधियों की चर्चा करते हैं। ऐसे मुहावरे तात्विक दृष्टिकोण की भिन्नता बताते हैं, किन्तु यहाँ पर अरस्तू के तत्व–दर्शन का नवीन प्रत्यक्षवादी के तत्व–दर्शन की तुलना में प्रतिवाद करने का स्थान नहीं है।

कारण शब्द की परिभाषा एक वस्तु की अवस्था अथवा अस्तित्व को निर्धारित करने के रूप में की जा सकती है।

17.32 समंकों के विश्लेषण के प्रकार

सामान्यतः तथ्य–विश्लेषण का वर्गीकरण निम्नलिखित मुख्य आधारों पर किया जा सकता है –

1. **तथ्यों की प्रकृति के आधार पर –** प्रकृति के आधार पर तथ्य –विश्लेषण के दो प्रकार हो सकते हैं –

   (क) गुणात्मक तथ्यों का विश्लेषण तथा (ख) मात्रात्मक व संख्यात्मक तथ्यों का विश्लेषण

2. **समग्र की जानकारी के आधार पर –** जानकारी के आधार पर तथ्य–विश्लेषण के दो प्रकार हो सकते हैं –

   (i) समष्टि विश्लेषण, तथा (ii) निदर्शन विश्लेषण।

3. **अनुसंधान के उद्देश्य के आधार पर –** इस आधार पर तथ्य विश्लेषण निम्न प्रकार का हो सकता है –

   (i) अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक अनुसंधान विश्लेषण।

   (ii) वर्णनात्मक अनुसंधान विश्लेषण।

   (iii) निदानात्मक अनुसंधान विश्लेषण।

(iv) प्रयोगात्मक अनुसंधान विश्लेषण।

(v) संरचनात्मक–प्रकार्यात्मक विश्लेषण।

4. **विश्लेषण के ढंगों या स्तरों के आधार पर –**

(i) तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण।

(ii) तथ्यों के कारणात्मक सम्बन्धों का विश्लेषण।

5. **अनुसंधान की पद्धतियों के आधार पर –**

(i) निगमनात्मक विश्लेषण – निगमनात्मक विश्लेषण का तात्पर्य है सामान्य से विशिष्ट निष्कर्ष निकालना। निगमन पद्धति सामान्य से विशिष्ट की ओर तथा सार्वभौमिक से व्यक्तिगत की ओर तर्क करने की प्रक्रिया है।

(ii) आगमनात्मक विश्लेषण।

सामान्य कथन को सिद्ध करने के लिए तथ्यों का प्रस्तुतीकरण, विशेष उदाहरणों से सामान्य नियम निकालना।

17.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समंकों के वर्गीकरण एवं विश्लेषण के बारे में प्रकाश डाला गया जिसमें बताया गया है कि संकलित तथ्यों के व्यवस्थित विश्लेषण तथा वैषयिक निर्वचन के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि, उन्हें सूक्ष्म रूप में प्रस्तुत किया जाये। इस प्रकार संकलित तथ्यों को उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गों तथा उपवर्गों में विभक्त किया जाता है, इस क्रिया को वर्गीकरण कहते हैं। इसमें वर्गीकरण के विभिन्न परिभाषाओं का उल्लेख किया गया तथा इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए बताया गया कि इसके अन्तर्गत तथ्यों को विभिन्न भागों में विभक्त किया जाता है, वर्गीकरण का आधार गुणों में समानता होती है, इसको वास्तविक अथवा काल्पनिक रूप से किया जा सकता है तथा इसको इस प्रकार किया जाता है कि भिन्नता में भी उनकी एकता स्पष्ट हो जाये। वर्गीकरण के उद्देश्यों के बारे में चर्चा की गयी है जिसमें बताया गया है कि यह तथ्यों को सरल एवं संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करता है, समानता तथा असमानता को स्पष्ट करता है, तुलना में सहायता प्रदान करता है, तर्कपूर्ण प्रस्तुतीकरण करता

है, सारणीयन का आधार प्रस्तुत करता है, विश्लेषण तथा निर्वचन का आधार है तथा सामान्यीकरण को सरल बनाता है। इसी इकाई में समंकों के वर्गीकरण के आधारों के बारे में बताया गया है जिसमें दो प्रकार के आधारों का वर्णन किया गया है पहला गुणात्मक वर्गीकरण तथा दूसरा संख्यात्मक वर्गीकरण। इसी इकाई में समंकों के विश्लेषण के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गयी है जिसके बारे में बताया गया है कि विश्लेषण की प्रमाणिकता अनुसंधानकर्ता द्वारा निर्धारित नियमों को मानने की अपेक्षा उसके सामान्य ज्ञान, अनुभव, पिछला ज्ञान तथा बौद्धिक ईमानदारी पर अधिक निर्भर करती है। अतः विश्लेषणात्मक प्रक्रिया की एक आवश्यक मांग यह है कि एक आलोचनात्मक तथा अनुशासित कल्पना शक्ति का विकास किया जाये जो कि वास्तविक तथ्यों के आधार पर एक वैज्ञानिक विचारधारा को विकसित कर सके जो सम्पूर्ण तथ्यों को तथा उनके अन्तर्सम्बन्धों को समझ सके तथा उनका आलोचनात्मक परीक्षण कर सके।

प्रस्तुत इकाई में समंकों के विश्लेषण के सोपानों के बारे में प्रकाश डालती है जिसमें एकत्रित तथ्यों की सूक्ष्म परीक्षा, तथ्य विश्लेषण की योजना, सांख्यिकीय वर्णन एवं कार्यकारण सम्बन्धों का विश्लेषण आदि सोपानों की चर्चा करती है। इकाई के अन्त में समंकों के विश्लेषण के प्रकारों की जानकारी दी गयी है जिसमें विभिन्न प्रकार के विश्लेषण प्रस्तुत किये गये हैं।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोगों के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी तथा अपने ज्ञान को अनुसंधान के वर्गीकरण एवं विश्लेषण में प्रयोग कर पायेंगे।

17.5 पारिभाषिक शब्दावली

समंकों का वर्गीकरण – वर्गीकरण तथ्यों को उनकी समानता तथा सदृश्यता के अनुसार या वर्गों में क्रमबद्ध करने की क्रिया है तथा इससे व्यक्तिगत इकाईयों की विविधता में पाये जाने वाले गुणों की एकता व्यक्त हो जाती है।

समंकों का विश्लेषण – एक सामाजिक विश्लेषक यह मानकर चलता है कि तथ्यों के संचयन के पीछे स्वयं तथ्यों तथा आंकड़ों से कहीं बढ़कर कोई ऐसी वस्तु है जो अधिक महत्वपूर्ण तथा विस्मयकारी है। वह धारणा बनाता है कि सावधानीपूर्ण तथा सुव्यवस्थित तथ्यों तथा आंकड़ों को जब तथ्यों के सम्पूर्ण भाग से सम्बन्धित किया जाये तो महत्वपूर्ण सामान्य अर्थ प्रकट हो सकता

है जिसके आधार पर वैध सामान्यीकरण को प्राप्त किया जा सकता है। यही समंकों का विश्लेषण है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1– समंकों के वर्गीकरण का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

2– समंकों के वर्गीकरण की परिभाषा लिखिए।

3– समंकों के वर्गीकरण की विशेषताएँ लिखिए।

4– समंकों के वर्गीकरण के प्रमुख उद्देश्यों के बारे में लिखिए।

5– समंकों के वर्गीकरण का प्रमुख आधार क्या है? के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

6– समंकों के विश्लेषण से आप क्या समझते हैं?

7– समंकों के विश्लेषण के सोपानों के बारे में जानकारी दीजिए।

8– समंकों के विश्लेषण के प्रकारों की चर्चा कीजिए।

विस्तृत –

1– समंकों के वर्गीकरण को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं एवं उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

2– समंकों के वर्गीकरण के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसके आधारों के बारे में लिखिए।

3– समंकों के विश्लेषण को परिभाषित करते हुए इसकी विभिन्न सोपानों की चर्चा कीजिए।

4– समंकों के अर्थ लिखते हुए इसके विभिन्न प्रकारों पर एक निबन्ध लिखिए।

17.6 संदर्भ ग्रंथ–सूची

1. कार्नर, एल. आर., ''स्टैटिस्टिक्स इन थियरी एण्ड प्रैक्टिस, थर्ड इडिशन'', लन्दन, सर साक पिटमैन एण्ड सन्स लिमिटेड, वर्ष–1949, पेज–16
2. सेक्राइस्ट, एच. एन., ''इन्ट्रोडक्शन टू स्टैटिस्टिकल मेथड''

3. यंग, पी. वी., ''साइंटिफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च'', प्रेंटिस हाल आफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, वर्ष–1975, पेज–472
4. पाल्मर, विविन, ''फिल्ड स्टडीज इन सोशियोलोजी'', यूनिवर्सिटी आफ शिकागो, वर्ष–1928, पेज–100
5. गुड, कार्टर, वी. बार, ए. एस. एण्ड डगलस, ''इ. स्केट्स, मेथडोलाजी आफ एजूकेलशन रिसर्च'' एप्पलेटेन–सेन्चुरी क्राफ्ट, न्यूयार्क, 1941, पेज–559–691
6. मोजर, सी. ए. एण्ड काल्टन, जी., ''सर्वे मेथड्स इन सोशल इनवेस्टिगेशन'', हेनेमैन एजूकेशनल बुक लिमिटेड, 48, चार्ल्स स्ट्रीट, लन्दन, वर्ष–1974, पेज–439–440
7. सिंह, एस. डी., ''वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व'', कमल प्रकाशन जयपुर, वर्ष–1995, पेज–373–376, 388–392, 397–398

MASW-06

समाजिक शोध एवं सांख्यिकी

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

खण्ड–चतुर्थ

संख्यिकी प्रयोग

इकाई–18 255–266
सांख्यिकी : अर्थ, प्रयोग एवं सीमायें

इकाई–19 267–276
समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता

इकाई–20 277–310
माध्य, माध्यिका एवं बहुलक

इकाई–21 311–320
कम्प्यूटर का प्रयोग

इकाई–22 321–338
सह सम्बन्ध के माप

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश प्रयागराज

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति – प्रो० प्रो० के०एन० सिंह

विशेषज्ञ समिति

(1) प्रो० एस० त्रिपाठी, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु वि०वि० वाराणसी भूतपूर्व निदेशक, सुलभ इण्टरलेशनल, नई दिल्ली।

(2) प्रो० अमरनाथ सिंह विभागाध्यक्ष समाजकार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

(3) प्रो० अरविन्द जोशी, प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(4) डॉ० एम० एन० सिंह पूर्व निदेशक, समाजवि, वि उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

(5) डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता सामजकार्य विभाग वि० उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

परिमापक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष सामजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

सम्पादक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष समाजकार्य विभाग, लखनऊ।

समन्वयक

डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

लेखक

(1) डॉ० राजेश कुशवाहा, समाजकार्य विभाग, डॉ० भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

(2) डॉ० अलका वर्मा, समाजकार्य विभाग, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

सितम्बर, 2019 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2020

ISBN-

सर्वाधिक सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक – कुलसचिव, डॉ. अरूण कुमार गुप्ता उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 20019

मुद्रक – चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज (इलाहाबाद)

खण्ड–चतुर्थ
सांख्यिकी प्रयोग

इकाई : 18 सांख्यिकी : अर्थ, प्रयोग एवं सीमायें

18.0 इकाई का उद्देश्य

18.1 परिचय

18.2 सांख्यिकी का अर्थ एवं परिभाषा

18.3 सांख्यिकी की विशेषतायें

18.4 सांख्यिकी का प्रयोग

18.5 सांख्यिकी की सीमायें

18.6 सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका

18.7 सार–संक्षेप

18.8 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न, लघु, विस्तृत

18.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

18.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सांख्यिकी के अर्थ, प्रयोग एवं सीमाओं पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1. सांख्यिकी का अर्थ एवं परिभाषाओं के बारे में लिख सकेंगे।
2. सांख्यिकी के प्रयोग के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. सांख्यिकी की सीमाओं के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।
4. समंकों के संकलन के बारे में जानकारी कर सकेंगे।
5. समंकों का प्रस्तुतीकरण कर सकेंगे।
6. समंकों का विश्लेषण कर पायेंगे।
7. समंकों के निर्वचन की जानकारी कर सकेंगे।

18.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में सांख्यिकी के अर्थ, प्रयोग एवं सीमाओं का वर्णन किया गया है जिसमें बताया गया है कि सांख्यिकी वह विज्ञान है जिसको संख्या सम्बन्धी समंकों के संग्रहण, प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण और निर्वचन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। वास्तव में सांख्यिकी के सर्वत्र प्रयोग के कारण आधुनिक युग सांख्यिकी का युग कहा जाता है। कैसे भी तथ्य हों–चाहें प्राकृतिक, आर्थिक अथवा सामाजिक सभी को सांख्यिकीय भाषा में मापा जा सकता है, प्रस्तुत किया जा सकता है तथा उनका निवर्चन किया जा सकता है। प्रत्येक ज्ञान के क्षेत्र में सांख्यिकी का प्रयोग एक अनिवार्यता बन गयी है। आज यदि आप किसी तथ्य को संख्या द्वारा प्रकट नहीं कर सकते तो उसकी सत्यता में संदिग्धता बनी रहेगी। यहाँ तक कहा जाता है, कि "जो कुछ आप कह रहे हैं, यदि उसे संख्या में माप सकते हैं तथा व्यक्त कर सकते हैं, तब तो आप कुछ जानते हैं अन्यथा आपका ज्ञान अल्प एवं असन्तोषजनक हैं।" जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सांख्यिकी का महत्वपूर्ण स्थान है।

18.2 सांख्यिकी का अर्थ एवं परिभाषा

सांख्यिकी अंग्रेजी भाषा के 'स्टैटिस्टिक्स' शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है जो कि लैटिन भाषा के स्टेट्स शब्द तथा जर्मनी भाषा के Statistik शब्द का मिश्रित रूप है जिसका सामान्य अर्थ राज्य से है। इस प्रकार प्राचीन काल में सांख्यिकी के लिए राजाओं का विज्ञान के रूप में मान्यता दी जाती थी किन्तु सन् 1749 में जर्मन विद्वान **गॉटफ्रायड एकेनवाल** ने सांख्यिकी का प्रयोग किया और गॉडफ्रायड एकेनवाल को ही सांख्यिकी का जन्मदाता माना जाता है। सामान्य रूप में सांख्यिकी का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है। प्रथम रूप में सांख्यिकी का उपयोग आंकड़ों के रूप में किया जाता है, जबकि द्वितीय रूप में सांख्यिकी का प्रयोग सांख्यिकी विज्ञान के रूप में होता है और विद्वानों ने जो परिभाषायें प्रस्तुत की वे इन दोनों अर्थों में प्रकट होती हैं। डॉ. बाउले ने संक्षिप्त रूप में सांख्यिकी को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''सांख्यिकी अनुसंधान के किसी भी भाग से सम्बन्धित तथ्यों का ऐसा संख्यात्मक विवरण है जिन्हें एक–दूसरे के सम्बन्ध में रखा जाता है। वास्तव में अंग्रेजी भाषा के 'स्टैटिस्टिक्स' शब्द का तीन अर्थों में प्रयोग होता है। प्रसिद्ध विद्वान **टेट** के इस कथन से स्पष्ट है, "आप समंकों से सांख्यिकीय विज्ञान द्वारा सांख्यिकीय माप (माध्य, अपकिरण व विषमता के माप आदि) की संगणना करते हैं। इस प्रकार तीन अर्थ हुए : (1) समंक, (2) सांख्यिकी विज्ञान, (3) सांख्यिकीय माप। परन्तु सामान्यतः यह पहले दो अर्थों में ही प्रयोग होता है– समंक, बहुवचन के रूप में तथा सांख्यिकीय विज्ञान एकवचन के रूप में। प्राचीनकाल में यह शब्द

सामान्यतः बहुवचन के रूप में प्रयुक्त होता था। परन्तु अब दोनों रूपों, बहुवचन व एकवचन में होता है।

सांख्यिकी को समय–समय पर भिन्न–भिन्न विद्वानों के द्वारा भिन्न–भिन्न रूपों में परिभाषित किया गया है। इन परिभाषाओं की विविधिता का सर्वप्रथम कारण आधुनिक युग में सांख्यिकी के क्षेत्र की महत्वपूर्णता का विस्तृत होना है। प्रारम्भिक काल में सांख्यिकी के क्षेत्र की महत्वपूर्णता का विस्तृत होना हैं। प्रारम्भिक काल में सांख्यिकी को मात्र राज्य के मामलों तक ही सीमित रखा गया था। शासन को सुचारू रूप में चलाने, राज्य व सैन्य संचालन, सेना की संख्या, करों में आवश्यकतानुसार कटौती व बढ़ोत्तरी आदि कार्यों के लिए इसका उपयोग होता था। परन्तु आज इसे सम्पूर्ण मानव क्रियाओं की परिधि के रूप में स्वीकारा गया है। आज मानव जीवन का शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र हो जहां सांख्यिकी का उपयोग न हो। आर्थिक सामाजिक व प्राकृतिक सभी तथ्यों को सांख्यिकी के रूप में मापा जा सकता है। ज्ञान–विज्ञान के सभी क्षेत्रों में सांख्यिकी का प्रयोग हो रहा है। पुरानी परिभाषाओं में इसका क्षेत्र अत्यधिक संकुचित होने के कारण उन्हें विस्तृत रूप में विभाजित किया गया है। कुछ विद्वानों ने इसे सांख्यिकी समंक में प्रस्तुत किया है, जैसे–संख्यात्मक कथनों के तथ्यों के रूप में। अन्य ने इसे सांख्यिकीय रीतियों में परिभाषित किया है जिसमें सम्पूर्ण सिद्धान्तों और प्रविधियों का प्रयोग आकड़ों के संग्रह और विश्लेषण के रूप में करते हैं। कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्नलिखित हैं:

प्रो० होरेस सेक्राइस्ट के अनुसार

"सांख्यिकी से तात्पर्य तथ्यों के उन समूहों से है जो कई कारणों से निश्चित सीमा तक प्रभावित होते हैं, संख्याओं में व्यक्त किये जाते हैं, एक उचित मात्रा की शुद्धता के अनुसार गिने या अनुमानित किये जा सकते हैं, किसी निश्चित उद्देश्य के लिए व्यवस्थित ढंग से संग्रहीत किये जाते हैं, जिन्हें एक दूसरे से सम्बन्धित रूप में प्रस्तुत किया जाता है।"

केन्डाल के अनुसार–

"सांख्यिकी वैज्ञानिक विधि की वह शाखा है जो प्राकृतिक पदार्थों के समूह की विशेषताओं को मापकर या गिनकर प्राप्त की गयी सामग्री से सम्बन्धित है।"

क्रास्टन और काउडन के अनुसार–

"साख्यिकी वह विज्ञान है जिसकों संख्या सम्बन्धी समंकों के संग्रहण, प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण और निर्वचन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के तर्कपूर्ण विश्लेषण से स्पष्ट है कि सांख्यिकी की परिभाषा में क्राक्सटन और काउडेन की परिभाषा अत्यधिक वैज्ञानिक और वास्तविक (सजीव) है।

डा. बाउले के अनुसार–

"साख्यिकीय अनुसंधान के किसी विभाग से संबंधित तथ्यों का ऐसा संख्यात्मक विवरण है जिन्हे एक दूसरे के संबंध में रखा जा सकता है।"

सेलिगमैन के अनुसार–

"सांख्यिकीय वह विज्ञान है जो अनुसंधान के किसी क्षेत्र पर प्रकाश डालने वाले आंकडों के संकलन, प्रस्तुतीकरण, तुलना तथा विवेचन की रीतियों से सम्बंधित होती है।"

वालिस एवं राबर्ट्स के अनुसार–

"सांख्यिकी को तथों के परिमाणात्मक पहलुओं के संख्यात्मक विवरण हैं जो गणना या माप के रूप में व्यक्त होते हैं।"

वेब्सटर शब्दकोश के अनुसार–

"समंक किसी राज्य के निवासियों की स्थिति से सम्बन्धित वर्गीकृत तथ्य है, विशेष रूप से वे तथ्य जिन्हें संख्याओं में या संख्याओं की सारणियों से प्रस्तुत किया जा सके।"

इस प्रकार हम निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि सांख्यिकी एक विज्ञान और कला है जो सामाजिक, आर्थिक, प्राकृतिक व अन्य समस्याओं से सम्बन्धित समंकों के संग्रहण, वर्गीकरण, सारिणीयन, प्रस्तुतीकरण, सम्बन्ध स्थापन, निवर्चन और पूर्वानुमान से सम्बन्ध रखती है ताकि निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति हो सके।

18.3 सांख्यिकी की विशेषतायें

विभिन्न परिभाषाओं से सांख्यिकी की निम्नाकिंत विशेषताएँ प्रकट होती है–

1– तथ्यों के समूह – सांख्यिकी का सम्बन्ध किसी एक तथ्य से सम्बन्धित आँकड़ों से नहीं होता वरन् अनेक तथ्यों से सम्बन्धित होता है, जिससे कि उनकी परस्पर तुलना की जा सके और निष्कर्ष निकाले जा सकें। उदाहरण के लिए, सांख्यिकी नहीं कह सकते हैं। घटना या दहेज की अनेक दुर्घटनाओं के आँकड़ों को ही सांख्यिकी कहा जाएगा। अतः एक तथ्य नहीं वरन् अनेक तथ्यों के समूह ही सांख्यिकी की विषय–सामग्री हैं।

2– संख्याओं के रूप में प्रस्तुत – तथ्यों को हम गुणनात्मक एवं संख्यात्मक दोनों रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। तथ्यों को गुणात्मक रूप में, जैसे सुन्दर, असुन्दर, अच्छा, बुरा, गरीब, अमीर बालक, युवा, प्रौढ़ और वृद्ध मे व्यक्त किया जा सकता है, किन्तु सांख्यिकी का सम्बन्ध संख्यात्मक तथ्यों से होता है ।

3– अनेक कारणों से प्रभावित – सांख्यिकी विविध कारणों से प्रभावित होती है उदाहरण के लिए, कृषि उत्पादन सम्बन्धी आँकड़ें जलवायु, वर्षा, सिंचाई, भूमि की उत्पादकता, बीज, खाद, खेती के तरीकों आदि से प्रभावित होते हैं। अनेक कारणों से प्रभावित होने के कारण ही आंकडों का सांख्यिकीय विश्लेषण आवश्यक होता है।

4– गणना या अनुमान–आंकडों का संकलन गणना अथवा अनुमापन द्वारा किया जा सकता है। जब अनुसंधान का क्षेत्र सीमित हो तो गणना के द्वारा और जब क्षेत्र विस्तृत हो तो अधिकांशतः सर्वोत्तम अनुमापन के द्वारा ही तथ्यों का संकलन किया जाता है।

5– समुचित शुद्धता – आँकड़ों के संकलन में शुद्धता की समुचित मात्रा होनी आवश्यक है। समुचित शुद्धता, अनुसंधान के उद्देश्य, उसकी प्रकृति, आकार और उपलबध साधनों पर निर्भर करती है। उदाहरणार्थ, यदि विद्यार्थियों की लम्बाई का माप किया जा रहा हो तो से.मी. तक यथार्थता होनी चाहिए, किन्तु यदि दिल्ली से जयपुर की दूरी का माप किया जाता है तो कि.मी. तक शुद्धता ही अपेक्षित है, मीटर और सेण्टीमीटर तक नहीं। इसके विपरीत, पृथ्वी से सूर्य या अन्य ग्रहों की दूरी का अनुमान लगाने में हजारों कि.मी. तक को भी छोड़ा जा सकता है। स्पष्ट है कि शुद्धता के समुचित स्तर विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न होते हैं।

6– सुव्यवस्थित संकलन – आँकड़ों को एक निश्चित योजना के अनुसार सुव्यवस्थित नीति द्वारा संकलित किया जाना चाहिए। अव्यवस्थित रूप से संकलित तथ्यों से समुचित निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते। उदाहरणार्थ, यदि बिना किसी योजना के कुछ परिवारों की मासिक आय–व्यय के आँकड़े अव्यस्थित रूप से एकत्र किये जाए तो वे सांख्यिकी नहीं कहलाएंगे। इसके विपरीत, यदि श्रमिक परिवारों के पारिवारिक बजट के आँकड़े एक निश्चित योजना के अनुसार सुव्यवस्थित नीति द्वारा विधिवत् रूप से एकत्रित किये जाते हैं तो उसे सांख्यिकी कहेंगे।

7– पूर्व–निश्चित उद्देश्य – आँकड़ों को संकलित करने का उद्देश्य पहले से ही स्पष्ट रूप से निर्धारित कर लेना चाहिए। उद्देश्यहीन आँकड़ें सांख्यिकीय नहीं कहलाएँगे। उदाहरण के लिए, किसी गन्दी बस्ती में निवास करने वाली श्रमिकों की आय के बारे में आँकड़े एकत्रित किये जा रहे हैं तो यह पहले से ही निश्चित कर लेना चाहिए कि इनको

संकलित करने का क्या उद्देश्य है–उनके जीवन स्तर का पता लगाना, जन्म दर, मृत्यु दर, औसत आयु एवं स्वास्थ्य आदि पर विचार करना या तुलनात्मक विश्लेषण करना, आदि।

8– परस्पर तुलना – आँकड़े इस प्रकार प्रस्तुत किये जाने चाहिए जिनसे उनकी आपस में तुलना की जा सके। तुलना के लिए आँकड़ों में सजातीयता एवं एकरूपता होना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, व्यक्तियों की आय, उनकी आयु, पेड़ों की ऊँचाई एवं जनसंख्या की परस्पर तुलना नहीं की जा सकती, इसलिए उसे सांख्यिकी नहीं कहेंगे। सांख्यिकी कहलाने के लिए संख्याओं का समय, स्थान या परिस्थितियों के आधार पर तुलना योग्य होना आवश्यक है।

इस प्रकार सांख्यिकीय आँकड़ें संख्यात्मक तथ्य होते हैं, किन्तु सभी संख्यात्मक तथ्य आंकड़े नहीं होते हैं। केवल उन्हें संख्यात्मक तथ्यों को आँकड़े कहा जा सकता है जिनमें उपर्युक्त सभी विशेषताएँ हों।

9– एक विज्ञान के रूप – एक विज्ञान के रूप में सांख्यिकी ऐसे सामूहिक तथ्यों से सम्बन्धित है जिनको संख्याओं के रूप में व्यक्त किया जा सकता है तथा जिन पर अनेक कारणों का प्रभाव पड़ता है। इसमें सामूहिक संख्यात्मक तथ्यों के संकलन, प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण तथा निर्वचन की रीतियों का विधिवत् अध्ययन किया जाता है

18.4 सांख्यिकी का प्रयोग

क्राक्सटन और काउडेन की परिभाषा से सांख्यिकी अनुसंधान के प्रयोग के चार चरण स्पष्ट होते हैं जो निम्नलिखित हैं–

1. समंकों का संकलन
2. समंकों का प्रस्तुतीकरण
3. समंकों का विश्लेषण
4. समंकों का निर्वचन

उपरोक्त चरणों में एक और चरण समंकों का संगठन (organization of data) भी जोड़ा जा सकता है, क्योंकि सांख्यिकी की व्याख्या समंकों के संग्रहण, प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण और निर्वचन से सम्बन्ध रखती है। सांख्यिकी अनुसंधान में तथ्यों या समंकों के पाँच चरण निम्नलिखित हैं–

1. समंकों का संकलन

सांख्यिकी अनुसंधान में समंकों (तथ्य) का संकलन प्रथम व आवश्यक चरण है। समंकों (तथ्यों) को मनमाने ढंग से एकत्रित नहीं किया जाता है बल्कि विभिन्न उपकरणों एवं प्रविधियों की सहायता से

सावधानीपूर्वक संकलित करते हैं। यदि तथ्य संग्रहण उचित रूप से न किया गया हो तो निष्कर्ष निकालने में अनुसंधानकर्ता पथभ्रष्ट हो सकता है। तथ्य प्रकाशित या अप्रकाशित रूप में भी उपलब्ध होते हैं या अनुसंधानकर्ता स्वयं उन्हें एकत्रित करता है। प्रथम स्तरीय समंकों का संकलन (प्राथमिक तथ्य) सांख्यिकीवेत्ता के लिए कठिन व आवश्यक कार्य होता है। इसमें शोधकर्ता स्वयं या अपने सहायकों की सहायता से आंकड़ों को संग्रहित करता है। इसके अतिरिक्त वे तथ्य या सूचनाएं जिन्हें शोधकर्ता स्वयं संकलित नहीं करता है बल्कि जो पहले से प्रकाशित या अप्रकाशित रूप में उपलब्ध हैं द्वैतीयक तथ्य कहलाते हैं।

2. संगठन

प्रकाशित स्रोत से एकत्रित किये गये तथ्य अधिकांशतः संगठित रूप में होते हैं, सर्वेक्षण में एकत्रित समंकों को व्यवस्थित करते हैं। संगठन में प्रथम चरण तथ्यों का सम्पादन होता है। एकत्रित समंकों का सावधानीपूर्वक सम्पादन किया जाता है। सम्पादन में संकलित समंकों की शुद्धता की जांच, भूल–चूक तथा अशुद्धता या गलतियों को दूर कर उन्हें व्यवहार योग्य बनाते हैं। समंकों के संकेतन के पश्चात् अगला चरण उनका वर्गीकरण होता है। वर्गीकरण का उद्देश्य होता है कि तथ्यों (समंकों) को कुछ सामान्य विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करना। तत्पश्चात् संगठन का अन्तिम चरण सारिणीयन होता है। इसका उद्देश्य तथ्यों (समंकों) को पंक्तियों (खानों) में व्यवस्थित करना है यह तथ्यों को उचित रूप में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है।

3. प्रस्तुतीकरण

समंकों के संकलन, सम्पादन, संकेतन, वर्गीकरण और सारिणीयन के पश्चात उसे प्रस्तुतीकरण के लिए तैयार करते हैं। समंकों को क्रमागत रूप में सांख्यिकी विश्लेषण में सुगमता के लिए प्रस्तुतीकरण करते हैं। इन संग्रहीत आंकड़ों को दो विधियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। 1.चित्रमय प्रदर्शन 2.बिन्दुरेखीय प्रदर्शन

4. विश्लेषण

समंकों के संकलन, सम्पादन संकेतन, वर्गीकरण, सारिणीयन और प्रस्तुतीकरण के पश्चात इनका विश्लेषण करते हैं। यह उपरोक्त विधियाँ विश्लेषण की प्राथमिक अवस्था हैं। इससे समंकों (तथ्यों) की सभी महत्वपूर्ण विशेषताएं स्पष्ट नहीं होती हैं। समंकों के विश्लेषण का उद्देश्य है कि सूचनाओं को इसमें विभिन्न गणितीय विधियां–माध्य, विचरण, विषमता, सह–सम्बन्ध आदि का उपयोग होता है। इन विधियों द्वारा आंकड़ों की परस्पर तुलना की जाती है।

5. निर्वचन

समंकों के विश्लेषण के पश्चात् सांख्यिकी अनुसंधान की अन्तिम अवस्था सांख्यिकी निर्वचन है। सांख्यिकी निर्वचन का कार्य अत्यन्त

लचीला एवं महत्वपूर्ण है इसके लिए कुशलता एवं अनुभव का होना आवश्यक है। यदि (तथ्य) समंक विश्लेषण का उचित रूप से निर्वचन न किया जाए तो अनुसंधान के सम्पूर्ण उद्देश्य का भ्रमक एवं दोषपूर्ण निष्कर्ष निकलेगा।

18.5 सांख्यिकी की सीमाएँ

सांख्यिकी का मानव जीवन के सभी क्षेत्र में अत्यधिक प्रयोग हो रहा है। सांख्यिकी में समंकों के उचित संकलन तथा सही विश्लेषण से समस्या का हल सही निकलता है। इसके अत्यधिक महत्वपूर्ण व उपयोगी होने पर इसकी सीमाओं का ज्ञान होना भी आवश्यक है। सांख्यिकी की कुछ आवश्यक सामाऐं निम्नलिखित हैं—

1. **सांख्यिकी केवल संख्यात्मक (गुणात्मक नहीं) विशेषताओं का अध्ययन कर सकती है:** सांख्यिकी विज्ञान के अन्तर्गत केवल संख्या में व्यक्त तथ्यों को अध्ययन के प्रयोग में लाती है जिनका संख्यात्मक स्वरूप होता है। गुणात्मक पहलू जैसे ईमानदारी, गरीबी, सभ्यता आदि जिनकों संख्या में व्यक्त नहीं किया जा सकता है अतः इनका सांख्यिकी विश्लेषण सम्भव नहीं है। उदाहरण—समूहों के सदस्यों के बुद्धि का अध्ययन उनके किसी परीक्षा में दिये गये अंकों के आधार पर किया जा सकता है।

2. **सांख्यिकी व्यक्तिगत इकाई का अध्ययन नहीं करती है:** सांख्यिकी विवेचन मुख्यतः सामूहिक होता है, व्यक्तिगत विशेषताओं का इसमें अध्ययन नहीं होता है। व्यक्तिगत इकाईयों को किसी सांख्यिकी समंक से नहीं जोड़ा जा सकता है। इसके अलग स्वरूप का सांख्यिकी अध्ययन में कोई अर्थ नहीं होता है। उदाहरण— मैकाइवर के अनुसार—हजारों व्यक्तियों का कष्ट एक अकेले ह्रदय की व्यथा से इसलिए बड़ा नहीं होता है क्योंकि उसे हजारों व्यक्ति सहन करते हैं। एक व्यक्ति की व्यथा कहीं अधिक तीव्र होती है।

3. **सांख्यिकीय उत्तरदायित्व का दुरूपयोग:** सांख्यिकी की सबसे आवश्यक सीमा है कि उसका उपयोग अनुभवी व्यक्ति के द्वारा किया जाए। अनभिज्ञ (अयोग्य) व्यक्ति के हाथों में यह औजार अत्यधिक खतरनाक है। सांख्यिकी वह विज्ञान है जिसकों एक कुशल तथा अत्यधिक अभ्यासरत व्यक्ति प्रयोग कर सकता है। सांख्यिकी औजारों का अयोग्य और अकुशल व्यक्तियों के प्रयोग से अत्यधिक निराशपूर्ण परिणाम आयेगा।

4. **सांख्यिकी प्रणालियाँ गहन अध्ययन के लिए अनुपयुक्त होती हैं:** मानव स्वभाव अत्यधिक जटिल और दुरूह है। कुछ प्रश्न पूँछ कर समंकों का संकलन करके मानव व्यवहार के सम्बन्ध में कोई नियम नहीं

बनाए जा सकते हैं। इसके लिए धैर्य, दीर्घकालीन समय तथा लगन के साथ अध्ययन की आवश्यकता होती है।

5. सांख्यिकी समंकों में एकरूपता और सजातीयता होती है: सांख्यिकी में जो समंक (तथ्य) एकत्र होते हैं उनमें एक जैसे गुण होने चाहिए तो परिणाम ठीक होगा अन्यथा नहीं। उदाहरण–किसी निश्चित समय में चावल का औसत मूल्य ज्ञात करना है तो उचित परिणाम के लिए आवश्यक है कि समस्त स्थानों पर उसी प्रकार के चावल के मूल्यों को एकत्र किया जाए। अन्यथा परिणाम अशुद्ध होगा। विजातीय आँकड़ों से परिणाम की तुलना नहीं की जाती है इससे परिणाम अशुद्ध होता है।

6. सांख्यिकी के नियम यथार्थ नहीं हैं: भौतिकी व प्राकृतिक विज्ञानों की तरह सांख्यिकी के नियम पूर्णता सत्य नहीं होते हैं यह केवल सन्निकट सत्यता पर आधारित हैं। सांख्यिकी विश्लेषण के आधार पर हम बात सम्भाविता के आधार पर करते हैं, न कि निश्चितता के आधार पर।

सांख्यिकी के महत्व और क्षेत्र

वर्तमान समय में सांख्यिकी का स्वरूप केवल संख्यात्मक तथ्यों के संग्रहण के रूप में ही नहीं बल्कि मानव विकास के साथ इसकी उपयोगिता भी सभी क्षेत्रों में बढ़ रही है। आज हमें राज्य के मामलों तक ही नहीं बल्कि इसका प्रयोग मानव ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र सामाजिक, भौतिक, जैविक, मनोविज्ञान, शिक्षाशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, और प्रशासन आदि सभी में हो रहा है। इसकी गणना (गिनती) किसी एक विभाग में करना मुश्किल है। यह मानव प्रयास के सभी क्षेत्र में उपयोगी हो रहा है।

18.6 सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका

कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुए विकास ने सांख्यिकी को भी इस क्षेत्र में अपने प्रतिदर्शी को एकीकृत कर संस्थाओं (संगठनों) में निर्णय निर्धारण प्रक्रिया में अपनी भागीदारी बनाए रखने का सामर्थ्य प्रदान किया है।

सांख्यिकी समस्याओं की दीर्घसूत्री गणना में समय व्यय अधिक है। एक सरल समस्या भी केलकुलेटर व हाथ से करने में समय अधिक लगता है। कम्प्यूटर के विकास ने सांख्यिकी प्रविधियों को त्वरित किया। व्यापार वाणिज्य तथ सरकारी प्रशासनिकी क्षेत्र की सामने आने वाली जटिल समस्याओं योजना निर्माण आदि सभी क्षेत्रों में सांख्यिकी प्रविधियों की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका है। कम्प्यूटर के माध्यम से सांख्यिकी की गणनात्मक प्रविधियों को अत्यधिक सहायता प्राप्त हुई है। अंकगणितीय गणनाओं तथा तथ्यों के संग्रहण, विश्लेषण आदि में तथा निर्णय निर्धारण में सहायता प्राप्त हुई है। कम्प्यूटर निर्माणक और विक्रेता कम्प्यूटर

सिस्टम में सांख्यिकी प्रविधियों की गणनात्मक (गणीतीय) समस्याओं को हल करने के लिए नये साफ्टवेयर पैकेज विकसित कर रहे हैं। विश्वविद्यालय के शैक्षिक विभाग, अनुसंधान संस्थाएं भी विभिन्न समस्याओं के लिए साफ्टवेयर पैकेज तैयार कर रहे हैं।

18.7 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में सांख्यिकी के अर्थ, प्रयोग एवं सीमाओं के बारे में वर्णन किया गया है, जिसमें बताया गया है कि सांख्यिकी, वैज्ञानिक विधि की वह शाखा है जो प्राकृतिक पदार्थों के समूह की विशेषताओ को माप कर या गिन कर प्राप्त की गयी सामग्री से सम्बन्धित है। वास्तव में सांख्यिकी एक विज्ञान और कला है जो सामाजिक, आर्थिक, प्राकृतिक व अन्य समस्याओं से सम्बन्धित समंकों के संग्रहण, वर्गीकरण, सारणीयन, प्रस्तुतीकरण, सम्बन्ध स्थापन, निर्वचन और पूर्वानुमान से सम्बन्ध रखती है, जिससे निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति हो सके। इसी इकाई में सांख्यिकी के प्रयोग के बारे में बताया गया है जिसमें संमकों का संकलन, संगठन, प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण एवं निर्वचन में इसका किस प्रकार प्रयोग होता है के बारे में प्रकाश डाला गया है। सांख्यिकी की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि यह तथ्यों के समूह, संख्याओं के रूप में प्रस्तुत, अनेक कारणों से प्रभावित, गणना अथवा अनुमान, समुचित शुद्धता, सुव्यवस्थित संकलन, पूर्वनिश्चित उद्देश्य, परस्पर तुलना एवं एक विज्ञान के रूप में अपनी विशेषतायें धारण करती हैं।

सांख्यिकी की सीमाओं के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि यह केवल संख्यात्मक विशेषताओं का अध्ययन करती है जबकि व्यक्तिगत इकाई का अध्ययन नहीं करती है, इसके उत्तरदायित्व का दुरुपयोग हो सकता है तथा इसके नियम यर्थार्थ नहीं हैं। प्रस्तुत इकाई के अंत में सांख्यिकी के महत्व और क्षेत्र एवं सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका पर भी प्रकाश डाला गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई को पढ़ कर आप लोग सांख्यिकी के अर्थ, प्रयोग एवं सीमाओं के बारे में अधिक से अधिक जानकारी कर सकेंगे।

18.8 पारिभाषिक शब्दावली

सांख्यिकी से आशय तथ्यों के उस समूहों से है जो कई कारणों से निश्चित सीमा तक प्रभावित होते हैं, संख्याओं में व्यक्त किये जाते हैं, एक उचित मात्रा की शुद्धता के अनुसार गिने या अनुमानित किये जा सकते है, किसी निश्चित उद्देश्य के लिए व्यवस्थित ढंग से संग्रहित किये जाते हैं जिन्हें एक दूसरे से सम्बन्धित रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1— सांख्यिकी का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

2— सांख्यिकी की परिभाषा लिखिए।

3— संमकों के संकलन से आप क्या समझते है।

4— समकों के प्रस्तुतीकरण पर प्रकाश डालिये।

5— सांख्यिकी के प्रयोग के बारे में लिखिए।

6— सांख्यिकी की सीमाओं के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

7— संख्यिकी के महत्व और क्षेत्र के बारे में लिखिए।

8— सांख्यिकी की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।

विस्तृत

1— सांख्यिकी का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके प्रयोग पर एक निबन्ध लिखिए।

2— सांख्यिकी को परिभाषित करते हुए इसकी सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

3— सांख्यिकी से आप क्या समझते हैं? इसके महत्व एवं विशेषताओं की विवेचना कीजिए।

18.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1— गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, प्रारिम्भक सामाजिक अनुसंधान (शोध), आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष—2005 पेज नं. 1—7

2— मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, समााजिक शोध व सांख्यिकी विवेक प्रकाश, दिल्ली वर्ष—2000 पेज नं. —

खण्ड–चतुर्थ
सांख्यिकी प्रयोग

इकाई : 19 समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता

19.0 इकाई का उद्देश्य

19.1 परिचय

19.2 समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता

19.3 समाज कार्य अध्ययनों में सांख्यिकी की सीमाएँ

19.4 सार–संक्षेप

19.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास–प्रश्न, लघु, विस्तृत

19.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

19.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता के बारे में आपको जानकारी प्रदान करना है। इस इकाई में समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता एवं सीमाओं के बारे में बताया गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता के बारे में लिख सकेंगे।

2– समाज कार्य के अध्ययनों में सांख्यिकी की सीमाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

19.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता पर प्रकाश डाला गया है, जिसमें सांख्यिकी की उपयोगिता पर लिखते हुए बताया गया है कि, समाज कार्य में सांख्यिकी का उपयोग किन–किन क्षेत्रों में किया जा सकता है। वास्तव में सांख्यिकी का उपयोग समाज कार्य के अनुसंधानों में बहुतायत से होता है, क्योंकि अनुसंधान को वास्तविक रूप रेखा प्रदान करने में एवं तथ्यों का सारणीयन एवं विश्लेषण में सांख्यिकी महत्वपूर्ण

भूमिका का निर्वहन करती है। प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए अग्रलिखित बिन्दु प्रस्तुत किये गये हैं, सांख्यिकी जटिल तथ्यों को सरल बनाती है, सांख्यिकी तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करती है, सांख्यिकी तथ्यों का तुलनात्मक एवं सह–सम्बन्ध का ज्ञान प्रस्तुत करती है, सांख्यिकी समाज कार्य अध्ययन को वैषयिकता प्रदान करती है, यह प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन के चयन में सहयोगी होती है, सांख्यिकी सामाजिक अनुसंधान व सर्वेक्षण में सहायता प्रदान करती है, सांख्यिकी वास्तविकता से अवगत कराती है तथा सांख्यिकी नीति निर्धारण में सहयोग प्रदान करती है। इन उपरोक्त बिन्दुओं के माध्यम से आप लोग सांख्यिकी की समाज कार्य में उपयोगिता के बारे में जान सकेंगे।

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य अध्ययनों में सांख्यिकी की सीमाओं पर भी प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य अध्ययनों में भी सांख्यिकी की कुछ सीमायें है जिसके इतर सांख्यिकी भी असहाय होती है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता आपके ज्ञान में वृद्धि करायेगी और सांख्यिकी की उपयोगिता के बारे में आप लोग अच्छी तरीके से समझ पायेंगे।

19.2 समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता

सांख्यिकी को 'राजाओं का विज्ञान' या राजनैतिक अंक गणित ही मानकर स्वीकार किया जाता था, किन्तु वर्तमान समय में सांख्यिकी का प्रयोग एवं उपयोग न केवल प्राकृतिक विज्ञानी करते देखे जा सकते हैं वरन् समाज विज्ञानियों में भी सांख्यिकी का प्रयोग लोकप्रिय विषय बन चुका है। वास्तविकता तो यह है कि आजकल सांख्यिकी का प्रयोग इतनी अधिक सीमा तक होने लगा है कि वह मानव क्रियाओं के प्रत्येक पहलुओं को प्रभावित करने लगी है, जो सांख्यिकी का महत्व व्यक्त करते हैं। वॉकर (H. M. Walker) का विचार है कि "प्रारम्भिक स्तर पर मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, अर्थव्यवस्था अथवा भौतिक विज्ञानों का औसत, विचरण, सहवर्तिता, निदर्शन, चार्ट और सारणियों के सामान्य ज्ञान के अभाव से समझना असंभव ही है।"

सांख्यिकी का महत्त्व व्यक्त करते हुए क्राक्स्टन, काउडेन तथा क्लीन (Croxton, Cowden and Klein) का कथन है कि "सांख्यिकी के पर्याप्त मात्रा में ज्ञान के बिना समाज विज्ञान के अनुसंधानकर्ता प्रायः उस अन्धे व्यक्ति के समान हैं जो अन्धेरे कमरे में उस काली बिल्ली को खोजने का प्रयास कर रहे हों, जो

वहाँ हैं ही नहीं।" इसी प्रकार जार्ज सिम्पसन तथा एफ. काँफ्का (George Simpson and Fritze Kafka) का कहना है कि "सांख्यिकी समस्त विज्ञानों का एक महत्वपूर्ण उपकरण है, मेधावी निर्णय तथा अनुसंधान हेतु अपरिहार्य है।" अतः कहा जा सकता है कि समाजशास्त्र, समाज विज्ञान व अन्य सभी विज्ञानों के अध्ययनों के तर्कपूर्ण विवेचन एवं विश्लेषण में सांख्यिकी की उपयोगिता एवं महत्त्व स्वीकारा जाने लगा है। समाजशास्त्र में सांख्यिकी के उपयोग एवं महत्त्व को प्रदर्शित करने हेतु निम्न बिन्दुओं द्वारा विवेचना की जा सकती है–

1. **सांख्यिकी जटिल तथ्यों को सरल बनाती है :** समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता का प्रथम तत्त्व यह है कि सांख्यिकीय अध्ययन सम्बन्धित जटिल से जटिल तथ्यों, सूचनाओं या सामग्री की प्रकृति गुणात्मक होती हैं। जबकि उनका वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए उन्हें गणनात्मक रूप में परिवर्तित करना आवश्यक होता है। सांख्यिकी गुणात्मक सामाजिक तथ्यों को गणनात्मक रूप में प्रस्तुत करके इनकी जटिल प्रकृति को समझने योग्य बनाती है। जटिल एवं बिखरे हुए तथ्यों को वर्गीकरण (Classification)] सारणीयन (Tabulation)] संकेतन (Coding)] चित्रमय व बिन्दुरेखीय प्रदर्शन (Diagrammatic and Graphic Representation)] का सहयोग लेकर जटिल तथ्यों को सरल व समझने योग्य बनाती है।

2. **सांख्यिकी तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करती है:** समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता का द्वितीय कारण यह है कि यह सामाजिक तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करने के कारण किसी भी विषय समस्या के बारे में शीघ्र व सरलतापूर्वक उसके गुण–दोषों या उसकी प्रकृति को समझा जा सकना अत्यन्त सरल हो जाता है। उदाहरण के लिए बम्बई को मुम्बई नाम देने के पक्ष–विपक्ष की राय को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करने में जनमत की राय को सरलतापूर्वक समझा जा सकता है।

3. **सांख्यिकी से तथ्यों का तुलनात्मक एवं सह–सम्बन्ध का ज्ञान करना संभव :** समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता का एक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि सांख्यिकी द्वारा सामाजिक तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना तथा सामाजिक तथ्यों में सह–सम्बन्ध स्थापित करना बहुत सरल हो गया है। सांख्यिकी में तथ्यों की तुलना करने के लिए माध्य, निर्देशांक तथा गुण सम्बन्ध आदि का उपयोग किया जाता है। इसी प्रकार तथ्यों में पारस्परिक सम्बन्ध गुण–सम्बन्ध के द्वारा ज्ञात किया जाता है। सह–सम्बन्ध के माध्यम से विभिन्न सामाजिक समस्याओं जैसे धर्म

व भिक्षावृत्ति, निर्धनता व अपराध, पारिवारिक विघटन व बाल अपराध, आदि के बारे में सम्बन्धों का ज्ञान किया जा सकता है।

4. सांख्यिकी समाज कार्य अध्ययन को वैषयिकता प्रदान करती है : समाज कार्य अध्ययनों का एक विशाल क्षेत्र समाज की सामाजिक समस्याएँ बनती हैं। इन सामाजिक समस्याओं के वैज्ञानिक अध्ययन में सांख्यिकी बहुत उपयोगी साबित हुई है। सामाजिक शोध या अनुसंधान के जितने भी चरण या चरणों पर चलकर अध्ययन करना आवश्यक होता है। उन सभी चरणों की वैज्ञानिक पूर्ति का माध्यम सांख्यिकी पद्धतियाँ ही हैं। संक्षेप में, जो समाज कार्य अध्ययन में जितनी अधिक सांख्यिकीय पद्धतियों का सहयोग लेकर अध्ययन किया जाएगा वह उतनी ही अधिक वैषयिकता युक्त होगा, क्योंकि सांख्यिकीय पद्धतियाँ स्वयं ही वैज्ञानिक पद्धतियाँ हैं।

5. सांख्यिकी प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन चयन में सहयोगी : समाज कार्य अध्ययन विषय समस्या के समग्र पर न होकर प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चयन करके ही किये जाते हैं, क्योंकि न तो समग्र पर अध्ययन कर पाना कोई सरल कार्य है, और न ही इसे संभव कहा जा सकता है साथ ही समय, श्रम व धन की बर्बादी होती है। अतः समग्र में से कुछ इकाइयों को निदर्शन के रूप में लेकर अध्ययन करना श्रेष्ठ माना गया। परन्तु व्यवहारिक धरातल पर कुछ इकाइयों का चयन करना या प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाइयों का चयन करना भी सरल कार्य नहीं होता। वास्तव में प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाइयों का चयन व जाँच सांख्यिकीय विधि द्वारा ही किया जा सकता है।

6. सांख्यिकी सामाजिक अनुसंधान व सर्वेक्षण में सहयोगी : सामाजिक अनुसंधान व सर्वेक्षण में अध्ययनकर्ता अध्ययन योजना बनाकर उसके उद्देश्य, प्राकल्पना, निदर्शन, क्षेत्र व अध्ययन पद्धतियों आदि को निश्चित करता है। वही अध्ययन क्षेत्र से तथ्यों या सूचनाओं को संकलित करने हेतु कार्य योजना बनानी पड़ती है, अर्थात् तथ्य या सूचनाएँ संग्रहीत करने हेतु किन–किन प्रविधियों का सहयोग लिया जाएगा, चयनित प्रविधियों का ही उपयोग क्यों किया जाएगा आदि–आदि प्रश्नों का उत्तर सांख्यिकीय विधियाँ सरल रूप से दे देती हैं। उदाहरण के लिए सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के लिए प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शित इकाइयों का चयन व चयनित इकाइयों से विषय समस्या से सम्बन्धित तथ्यों को संकलित करना, उनका वर्गीकरण करना, सारणीयन करना, विश्लेषण करना आदि सभी कार्यों के लिए सांख्यिकी की अत्यधिक उपयोगिता होती है। संक्षेप में, सामाजिक

अनुसंधान व सर्वेक्षण के कार्य में सांख्यिकी का अत्यधिक महत्व है।

7. सांख्यिकी वास्तविकता से अवगत कराती है : सांख्यिकी की उपयोगिता का एक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि यह वास्तविकता या वास्तविक परिस्थितियों से अवगत कराने में समर्थ है। अध्ययन की विषय समस्या चाहे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, अपराधिक या मनोवैज्ञानिक किसी भी पक्ष से सम्बन्धित हो, सांख्यिकी के सहयोग से विषय–समस्या की वास्तविकता से परिचित हो सकते हैं। उदाहरण के लिए मात्र यह प्रदर्शित करना कि भारत में सन् 1984–94 के मध्य आपराधिक घटनाओं में वृद्धि हुई है? इससे वास्तविक स्थिति का ज्ञान नहीं होता, बल्कि यदि इसे संख्यात्मक रूप से प्रदर्शित करते हुए बताया जाए कि 1984 में आपराधिक घटनाओं की संख्या 1,00,000 थी, जो 1994 में बढ़कर 1,20,000 हो गई अर्थात् इसमें 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार सांख्यिकी वास्तविक स्थिति से अवगत कराती है।

8. सांख्यिकी वैज्ञानिक नियमों का परीक्षण संभव : सांख्यिकी की एक महत्त्वपूर्ण उपयोगिता यह है कि सांख्यिकी नवीन नियमों के निर्माण में ही सहयोगी साबित नहीं हुई बल्कि इसके साथ ही यह पुराने नियमों का परीक्षण करके हमें वास्तविकता से अवगत कराने में सहयोगी सिद्ध हुई है। सांख्यिकी में वैज्ञानिक नियमों का परीक्षण करने हेतु निगमन प्रविधि का सहयोग लिया जाता है और इस विधि का प्रयोग मात्र समाज कार्य ही नहीं वरन् अन्य विज्ञानों में करना लोकप्रिय हो चुका है।

9. सांख्यिकी भविष्यवाणी करने में सक्षम : समाज कार्य तथा उन विज्ञानों में सांख्यिकी की लोकप्रियता एवं उपयोग का एक विशिष्ट कारण यह है कि यह आँकड़ों के आधार पर भविष्यवाणी करने में सक्षम सिद्ध हुई है। वास्तव में सांख्यिकी आन्तर्गठन तथा बाह्यगठन प्रविधि द्वारा सम्बन्धित आँकड़ों के आधार पर ही भविष्य के सन्दर्भ में स्थिति–परिस्थिति के सम्बन्ध में भविष्यवाणी की जा सकती है। वास्तविकता यह है कि आकस्मिक तथा अवैज्ञानिक स्तर से भविष्यवाणी करने की तुलना में सांख्यिकी भविष्यवाणी अधिक श्रेष्ठ एवं यथार्थ होती है, जैसा कि बाउले ने लिखा भी है कि "सांख्यिकी अनुमान अच्छा हो या बुरा, सत्य हो या असत्य, परन्तु प्रत्येक परिस्थिति में यह आकस्मिक प्रेक्षण के अनुमान से श्रेष्ठ होगा।"

10. सांख्यिकी नीति निर्धारण में सहयोगी– सांख्यिकी का समाज कार्य एवं समाज विज्ञान में उपयोग का अन्तिम कारण तथ्य के रूप में कहा जा सकता है कि यह नीति निर्धारण करने

में बहुत सहयोगी होती है। सरकार की पूर्व की नीतियों का मूल्यांकन करके वर्तमान नीति को बनाने हेतु सांख्यिकी का अपना योगदान रहता है। अतः सरकारी कार्यों तथा समाज–सुधार के कार्यों में सांख्यिकी पथ प्रदर्शक का कार्य करती है। उदाहरण के लिए सरकार द्वारा अनुसूचित जाति एवं जनजाति को आरक्षण देने की व्यवस्था कहा तक सफल हुई। इसका ज्ञान सांख्यिकी के सहयोग से किया जा सकता है।

उपरोक्त विवचेना से स्पष्ट है कि समाज कार्य में सांख्यिकी का अत्यधिक उपयोग एवं महत्व है जिसके कारण समाज कार्य अनुसंधानों में विभिन्न क्षेत्रों में सांख्यिकी का प्रयोग करके अध्ययन को अधिकाधिक रूप में वैज्ञानिकता प्रदान करने का प्रयास किया जाने लगा हैं समाज कार्य में बढ़ते सांख्यिकी उपयोग से समाज के विभिन्न क्षेत्रों में भी सांख्यिकी के उपयोग को महत्व दिया जाने लगा है और वह समय दूर नही जब आधुनिक युग को सांख्यिकी युग के नाम से सम्बोधित किया जाने लगेगा।

19.3 समाज कार्य अध्ययनों में सांख्यिकी की सीमाएँ

जैसा कि हम ऊपर विवेचन कर चुके हैं कि सांख्यिकी, समाज कार्य के लिए उपयोगी है। इसकी उपयोगिता के साथ ही इसकी कुछ सीमाएँ भी हैं। सांख्यिकी संख्यात्मक अध्ययन में ही उपयोगी है, सामाजिक घटना के गुणात्मक पक्ष का अध्ययन सांख्यिकी द्वारा करना कठिन है। कई सामाजिक तथ्य ऐसे होते हैं जिनको सांख्यिकीय आधार पर प्रदर्शित नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए पति–पत्नी के सम्बन्धों में तनाव, सामाजिक विघटन, युवा असंतोष, मित्रता, योजना के कार्यान्वयन एवं विकास कार्यों में सहभागिता आदि को हम किसी माप के पैमाने के रूप में प्रकट नहीं कर सकते।

सांख्यिकी की सहायता से केवल सामूहिक विशेषताओं का अध्ययन किया जा सकता है। कभी–कभी सांख्यिकीय अध्ययनों से प्रमाणित निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते हैं। इसी प्रकार सांख्यिकीय विधियों से सामाजिक घटना को सामान्य प्रवृत्तियों की जांच हो सकती है। गहराई से उसके सम्बन्ध में अध्ययन संभव नहीं हो पाता।

सांख्यिकी सामाजिक अध्ययनों की एक विधि नहीं अल्कि एक साधन है। अन्य कई विधियों से भी सामाजिक अध्ययन किये जा सकते हैं। सांख्यिकी का प्रयोग सांख्यिकी के सम्बन्ध में पूर्ण

ज्ञान रखने वाला ही कर सकता है। सांख्यिकी का प्रयोग सामान्य या साधारण व्यक्ति के बस की बात नहीं है।

सामाजिक अनुसंधान में सामग्री संग्रहण में अनुसंधानकर्ता द्वारा की गयी गड़बड़ का सांख्यिकी पता नहीं लगा सकती। अनुसंधानकर्ता प्रश्नावली या अनुसूची को घर पर बैठकर भर ले व आँकड़े पूरा कर ले तो सांख्यिकी उसका पता नहीं लगा सकती। पके हुए आँकड़ों के आधार पर निकले निष्कर्ष भी भ्रमित करने वाले एवं अवैज्ञानिक ही होंगे।

सांख्यिकी अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिगत अभिनति को समाविष्ट होने से नहीं रोक सकती है।

सांख्यिकी जहाँ एक ओर समाज कार्य के लिए बहुत उपयोगी है वहीं दूसरी ओर अक्षम, अयोग्य व्यक्ति के हाथों इसका प्रयोग खतरनाक हो सकता है। सांख्यिकी का प्रयोग बहुत ही सावधानी से किया जाना चाहिए। बाउले ने ठीक ही लिखा है कि अयोग्य व्यक्ति के हाथों में पड़कर समंक बहुत खतरनाक औजार सिद्ध हो सकते हैं। सांख्यिकी के बारे में पर्याप्त ज्ञान के बिना इसका प्रयोग करना बहुत ही विपरीत परिणाम लाने वाला कार्य होगा।

इसमें कोई दो मत नहीं कि सांख्यिकी समाज कार्य में बहुत उपयोगी है बिना सांख्यिकी के पर्याप्त ज्ञान के सामाजिक विज्ञानों के अनुसंधानकर्ता उस अन्धे व्यक्ति के समान है जो निकट अंधेरे में उस काली बिल्ली को टटोलने का प्रयास कर रहा है जो वहां है ही नहीं। परन्तु यह भी सत्य है कि बिना सांख्यिकी नियमों के पूर्ण ज्ञान के समान खतरनाक भी हो सकता है। समंकों का चक्रव्यूह ऐसा जटिल होता है जिसमें प्रवेश करने के पश्चात् बिना सम्पूर्ण ज्ञान के उसमें से निकलना दुरूह कार्य होता है। संमकों के जाल में एक बार फंसने पर सांख्यिकी के अधकचरे ज्ञान वाला अनुसंधानकर्ता उसमें फंसता ही चला जाता है। उसमें से वह निकल नहीं पाता।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता लिखिए।

....

....

....

....
....
....
....
....
....
....
....

2. समाज कार्य अध्ययनों में सांख्यिकी की सीमाएँ लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

19.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता का प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि समाज कार्य अनुसंधान में सांख्यिकी का उपयोग किन–किन क्षेत्रों में किया जा सकता है। वास्तविकता तो यह है कि कोई भी अनुसंधान सांख्यिकी से अछूता नहीं है। समाज कार्य में भी सांख्यिकी की कुछ महत्वपूर्ण उपयोगितायें हैं जिनको बिन्दुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है जो अग्रलिखित है, सांख्यिकी समाज कार्य अनुसंधानों में जटिल तथ्यों को सरल बनाती है, यह तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करती है, यह तथ्यों का पूर्णात्मक एवं

सहसम्बन्ध का ज्ञान कराती है, यह समाज कार्य के अध्ययनों को वैषयिकता प्रदान करती है यह प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन में सहयोगी होती है, यह सामाजिक अनुसंधान व सर्वेक्षण सहयोग प्रदान करती है, यह वास्तविकता से अवगत कराती है, इसके आधार पर वैज्ञानिक नियमों का परीक्षण सम्भव हो पाता है, यह भविष्यवाणी करने में सक्षम है तथा यह नीति निर्धारण में सहयोग प्रदान करती है।

उपरोक्त बिन्दुओं सांख्यिकी का समाज कार्य अध्ययनों में उपयोगिता पर प्रकाश डालते हैं जिनके माध्यम से आप लोग सांख्यिकी की उपयोगिता के बारे में जान पायेंगे। इसी इकाई के अंत में समाज कार्य अध्ययनों में सांख्यिकी की सीमाओं का वर्णन किया गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग सांख्यिकी की समाज कार्य के अध्ययनों में उपयोगिता के बारे में विस्तृत ज्ञान अर्जित कर पायें होंगे।

19.5 पारिभाषिक शब्दावली

सांख्यिकी की उपयोगिता– समाज कार्य में सांख्यिकी की उपयोगिता का आशय समाज कार्य अनुसंधानों में तथ्यों को सरल बनाना, संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करना, तथ्यों का तुलनात्मक एवं अध्ययन को वैषियकता प्रदान करना इत्यादि समायोजित है।

अभ्यास–प्रश्न

लघु,

1– जटिल तथ्यों को सरल बनाने की प्रक्रिया में सांख्यिकी की उपयोगिता पर प्रकाश डालिये।

2– सांख्यिकी प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन चयन में किस प्रकार सहयोगी होती है।

3– सांख्यिकी का सामाजिक अनुसंधान व सर्वेक्षण में उपयोगिता पर प्रकाश डालिये।

4– सांख्यिकी नीतिनिर्धारण में किस प्रकार सहयोगी होती है।

विस्तृत

1– समाज कार्य अनुसंधान में सांख्यिकी की उपयोगिता पर एक निबन्ध लिखिए।

2– समाज कार्य अध्ययनों में सांख्यिकी की सीमाओं पर प्रकाश डालिये।

19.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सोलोमन, फैब्रिकैन्ट, फैक्टर्स इन एक्यूमुलेशन आफ सोशल स्टैटिसटिक्स, इन जर्नल आफ दी अमेरिकन स्टैटिसटिकल एसोशियेशन, जून, 1952.
2. सेक्राइस्ट, एच., ऐन इन्ट्रोडक्शन टू स्टैटिसटिकल मेथड्स.
3. बाउले, ए.ल., ऐन एलिमेन्टरी मैन्टरी मैनुअल आफ स्टैटिसटिक्स.
4. वालिश एण्ड राबर्ट, स्टैटिसटिक्स ए न्यू एप्रोच।
5. वाकर, एच. एम., स्टैटिसटिकल लिटरेसी इन दी सोशल साइन्सेज, दी अमेरिकन स्टैटिसटिसियन, फेबरौरी, 1951, पेज, 6–12.
6. क्राक्सटन, फ्रेडरिक, इ. काउडन, डूडले, जे, एण्ड क्लेन सिडनी, अप्लाईड जनरल स्टैटिसटिक्स, प्रन्टिस हाल आफ इन्डिया, न्यू दिल्ली, वर्ष, 1971, पेज–1.
7. जार्ज सिम्पसन एण्ड फ्रीज, काफका, बेसिक स्टैटिसटिक्स, वर्ष, 1965, पेज–5.
8. बाउले, ए. ल., एलिमेण्टस आफ स्टैटिसटिक्स, पेज–9.

खण्ड–चतुर्थ
सांख्यिकी प्रयोग

इकाई : 20 माध्य, माध्यिका एवं बहुलक

20.0 इकाई का उद्देश्य

20.1 परिचय

20.2 माध्य या समान्तर माध्य का अर्थ एवं परिभाषा

  20.21 माध्य या समान्तर माध्य की विशेषतायें

  20.22 माध्य या समान्तर माध्य की गणना

20.3 मध्यिका या मध्यका का अर्थ एवं विशेषतायें

  20.31 माध्यिका या मध्यका की विशेषतायें।

  20.32 माध्यिका या मध्यका की गणना

20.4 बहुलक का अर्थ एवं परिभाषायें

  20.41 बहुलक की विशेषतायें

  20.42 बहुलक की गणना

20.5 सार–संक्षेप

20.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

20.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

20.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य माध्य, माध्यिका एवं बहुलक से आपको परिचित करवाना है। चूंकि इस इकाई में ये तीनों प्रस्तुत किये जा रहे हैं, जिसको पढ़ने के बाद आप अग्रिलिखित के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें–

1– माध्य का अर्थ एवं परिभाषा पर प्रकाश डाल सकेंगे।

2– माध्य की विशेषताओं को जान सकेंगे।

3– माध्य की गणना कर सकेंगे।

4– मध्यिका के अर्थ एवं परिभाषा के बारे में लिख सकेंगे।

5– मध्यिका की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

6– मध्यिका की गणना कर सकेंगे।

7– बहुलक के अर्थ व परिभाषा को जान सकेंगे।

8– बहुलक की विशेषताओं को लिख सकेंगे।

9– बहुलक की गणना कर सकेंगे।

20.1 परिचय

वर्गीकरण एवं सारणीयन पद्धतियों से एकत्रित विशाल सामग्री व्यवस्थित हो जाती है एवं समरूप प्रवृत्ति के समंक वर्गीकृत हो जाते हैं। फिर भी उनकी विशालता इतनी कम नहीं होती कि मानव मस्तिष्क पर उनके अतिसंक्षिप्त रूप को अपनी याद में संयोजकर रख सके। समंकों में छिपी हुई केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप से एक ऐसा संक्षिप्त समंक प्राप्त होता है जो समस्त समंकों की प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करता है एवं साथ ही औसतन रूप से उनके निष्कर्षों को भी प्रकट करता है। केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप की विधियों को सांख्यिकीय औसत निकालने की विधियाँ से जो औसत अंक निकलता है उसे सांख्यिकीय माध्य कहते हैं। सांख्यिकीय माध्य जटिल समंक श्रेणियों को सरलतम एवं संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करते हैं। सांख्यिकीय माध्य जटिल समंक श्रेणियों को इस रूप में ले जाते हैं कि उनसे न केवल तुलनात्मक अध्ययन ही संभव होता है वरन् उनकी सहायता से महत्वपूर्ण निष्कर्षों तक भी पहुँचा जा सकता है।

20.2 माध्य का अर्थ एवं परिभाषा

सांख्यिकीय माध्यों में सर्वाधिक लोकप्रिय माध्य समान्तर या गणितीय माध्य है। इसी लोकप्रियता के कारण इसे हम सरल भाषा में केवल माध्य के नाम से भी पुकारते हैं। जब भी औसत या केन्द्र बिन्दु निकालने की बात आती है तो उसका अर्थ सामान्य भाषा में माध्य निकालने से ही होता है। समान्तर माध्य से आशय उस संख्या से है जो किसी श्रेणी के समस्त पदों के मूल्यों कें योग उनकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है।

उदाहरण के लिए – किसी कक्षा में दस विद्यार्थियों के परीक्षा में प्राप्तांक इस प्रकार हैं– 56, 60, 64, 70, 60, 64, 68, 66, 58, 56

इन सभी अंकों का योग 622 हुआ। यदि हम 622 को विद्यार्थियों की संख्या को 10 से भाग देंगे तो हमें माध्य 622 / 10 = 62.2 प्राप्त होगा।

परिभाषाएँ : विभिन्न समाजशास्त्रियों ने समानान्तर माध्य की परिभाषाएँ इस प्रकार दी हैं–

1– **घोष तथा चौधरी के अनुसार**, 'समान्तर माध्य वह परिणाम है जो किसी चर के पदों के मूल्यों के योग को उनकी संख्या से भाग देकर प्राप्त होता है।'

2– **एलहान्स के अनुसार**– किसी समंकमाला में अंकगणितीय औसत या माध्य वह अंक होता है जिसे विभिन्न पदों के मूल्यों में उनकी कुल आवृत्ति से भाग देने पर प्राप्त किया जाता है।'

3– **सेक्रिस्ट के अनुसार** – 'समंकमाला के पदों के मूल्यों के जोड़ में उनकी संख्या के द्वारा भाग देने से प्राप्त माध्य कहलाती है।'

20.21 माध्य या सामान्तर माध्य की विशेषतायें

1– यह केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप की एक बहुत ही सरल विधि है। इसे किसी श्रेणी के समस्त मूल्यों के योग में उसकी संख्या से भाग देने पर प्राप्त किया जाता है।

2– इसमें श्रेणी के समस्त मूल्यों को एक समान महत्व दिया जाता है।

3– समान्तर माध्य में पदों की आवृत्ति की तुलना में पदों के मूल्यों को अधिक महत्व दिया जाता है।

4– समान्तर माध्य तथा पदों की संख्या ज्ञात होने पर पदों के मूल्यों का योग आसानी से निकाला जा सकता है।

5– आदर्श माध्य के लगभग सभी गुण समान्तर माध्य में पाये जाते हैं।

20.22 माध्य या समान्तर माध्य की गणना

समान्तर माध्य की गणना दो विधियों से की जा सकती है।

(1) प्रत्यक्ष विधि (2) लघु विधि

I– व्यक्तिगत मूल्यों की श्रेणी में माध्य की गणना

अ) **प्रत्यक्ष विधि–** श्रेणी के समस्त पदों के मूल्यों का योग करके पदों की संख्या से भाग दिया जाता है, प्राप्त संख्या समान्तर माध्य होती है। इसे निम्न सूत्र द्वारा समझा जा सकता है।

$$\overline{X} = \frac{\sum x}{n}$$

जहाँ $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

$\sum$ = योग

X = पदों का मूल्य

n = पदों की कुल संख्या

नोट– $\sum$ का चिन्ह ग्रीक भाषा का है। इसे हम सिगमा कहकर पुकारते है। इसका मतलब होता है योग करना (जोड़ना या Summation)।

(i) लघु विधि

$$\overline{X} = a + \frac{\sum dx}{n}$$

जहाँ $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

a = कल्पित माध्य

$\sum$ = योग

dx = कल्पित माध्य से निकाला गया विचलन

dx = *x* - *a*

n = पदों की कुल संख्या

उदाहरण– समाज कार्य के एम.ए.पूर्वाद्ध के दस विद्याथियों की लम्बाई इस प्रकार है।

लम्बाई से.मी. 155, 153, 162, 168, 180, 165, 166, 164, 157, 160

समान्तर माध्य ज्ञात कीजिए।

(1) **प्रत्यक्ष विधि**

संख्या	x = लम्बाई (सेमी में)
1	155
2	153
3	162
4	168
5	180
6	165
7	166
8	164
9	157
10	160
n= 10	$\sum x = 1630$

Using the formula $\overline{X} = \frac{\sum x}{n}$

$$\overline{X} = \frac{1630}{10} = 163cm$$

अतः विद्यार्थियों की लम्बाई का समानान्तर माध्य 163 से. मी. है।

(i) लघु विधि

संख्या (Number)	लम्बाई (Height cms.)	*dx=(dx=x-a)* *a=165*
1	155	(155 -165)=-10
2	153	(153-165)=-12
3	162	(162-165)=-3
4	168	(168-165)=+3
5	180	(180-165)=+15
6	165	(165-165)=0
7	166	(166-165)=+1
8	164	(164-165)=-1
9	157	(157-165)=-8
10	160	(160-165)=-5
n= 10		$\sum dx$ = -20

Using the formula, $\overline{X} = a + \frac{\sum dx}{n}$

$$= 165 + \left(\frac{-20}{10}\right) = 165 - 2 = 163cms.$$

अतः विद्यार्थियों की लम्बाई का समान्तर माध्य 163 सेमी है।

नोट– हमें यहाँ ध्यान रखना है कि समान्तर माध्य की हम चाहे प्रत्यक्ष अथवा लघु विधि से निकालें, उत्तर एक समान ही होगा।

2– खण्डित श्रेणी में माध्य की गणना

प्रत्यक्ष विधि

$$\overline{X} = \frac{\sum fx}{N}$$

जहाँ $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

$\sum$ = योग

f = पदों की आवृत्ति

x = पदों का मूल्य

n = पदों की संख्या या आवृत्ति का योग

लघु विधि

$$\overline{X} = a + \frac{\sum fdx}{n}$$

जहाँ $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

a = कल्पित माध्य

$\sum$ = योग

f = पदों की आवृत्ति

dx = कल्पित माध्य से निकाला गया विवचन

$dx = x - a$

n = आवृत्तियों का योग

उदाहरण–2 बी0ए0 अन्तिम वर्ष के पचास विद्यार्थियों के प्राप्तांक इस प्रकार है–

प्राप्तांक	– 44, 46, 48, 42, 40, 36, 30, 20, 60, 50
छात्र संख्या	– 10, 02, 08, 02, 03, 05, 07, 05, 03, 05

समान्तर माध्य ज्ञात कीजिए

हल

(i) प्रत्यक्ष विधि

प्राप्तांक x	छात्र संख्या (f)	$f \times x = fx$
44	10	40×10 = 440
46	2	46×2 = 92
48	8	48×8 = 384
42	2	42×2 = 84
40	3	40 × 3 = 120
36	5	36×5=180
30	7	30×7 = 210
20	5	20×5=100
60	3	60 × 3 =180
50	5	50×3=250
	N= 50	$\sum fx$ =2040

सूत्र का प्रयोग करने पर

$$\overline{X} = \frac{\sum fx}{n} = \frac{2040}{50} = 40.8$$

(ii) लघु विधि

प्राप्तांक	छात्र संख्या	dx(dx=x-a)	f×dx=fdx
xf	a=40		
44	10	(44-40)=+4	10×4 = +40
46	2	(46-40)=+6	2×6 =+12
48	8	(48-40)=+8	8×8=+64
42	2	(42-40)=+2	2×2=+4
40	3	(40-40)=0	3×0 = 0
36	5	(36-40)=-4	5×(-4)=-20
30	7	(30-40)=-10	7×(-10)=-70
20	5	(20-40)=-20	5×(-20)=-100
60	3	(60-40) =+20	3×20=+60
50	5	(50-40)=+10	5×10=+50
N=50	$\sum dx$ =+16	$\sum fdx$ =+40	

Using the formula, $\overline{X} = a = \frac{\sum fdx}{n}$

$= 40 + \frac{40}{50} = 40 + 0.8 = 40.8$

बी.ए. अन्तिम वर्ष के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का औसत 40.8 है।

II –अखण्डित श्रेणी या सतत् श्रेणी में माध्य की गणना

प्रत्यक्ष विधि

$$\overline{X} = \frac{\sum fm}{N}$$

जहाँ $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

m = मध्य मूल्य

$$= \frac{\text{वर्गान्तर की निम्न सीमा + वर्गान्तर की उच्च सीमा}}{2}$$

f = पदों की आवृत्ति

N = आवृत्तियों का योग

(ii) लघु विधि

$$\overline{X} = a + \frac{\sum fdm}{n}$$

जहाँ $\overline{X}$ = समानान्तर माध्य

a = कल्पित माध्य

$\sum$ = योग

f = आवृत्ति

dm = कल्पित माध्य से निकाला गया विचलन

N = आवृत्तियों का योग

$dm = m - a$

(iii) **पद विचलन विधि**

$$\overline{X} = a + \frac{\sum fd^1m}{n} \times i$$

जहाँ $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

a = कल्पित माध्य

$\sum$ = योग

f = आवृत्ति

d^1m = विचलनों से निकाला गया पद विचलन

$d^1m = \frac{dm}{i}$ =

$\frac{\text{कल्पित माध्य से निकाला गया विचलन}}{\text{वर्ग अन्तराल}}$

N = आवृत्तियों का योग

i= वर्ग अन्तराल

उदाहरण–3 शेर बीड़ी कारखाने के श्रमिकों की साप्ताहित मजदूरी इस प्रकार है।

श्रमिकों की मजदूरी (रू. में)	श्रमिकों की संख्या
50-60	8
60-70	10
70-80	15
80-90	18
90-100	20
100-110	12
110-120	5

हल – समान्तर माध्य ज्ञात कीजिए

(i) = पदों की आवृत्ति

N = आवृत्तियों का योग

श्रमिकों की मजदूरी (रु.) (m)	श्रमिकों की संख्या (f)	मध्य मूल्य (m)	$m \times f = mf$
50-60	8	55	55×8=440
60-70	10	65	65×10=650
70-80	15	75	75×15=1125
80-90	18	85	85×08=1530
90-100	20	95	95×20=1900
100-100	12	105	105×12+1260
110-120	5	115	115×5=575
	N= 88		$\sum mf = 7480$

Using the formula. $\overline{X} = \frac{\sum mf}{N} = \frac{7480}{88} = Rs.85$

अतः श्रमिकों की औसत साप्ताहिक मजदूरी (रु०) 85 है।

(ii) लघु विधि

श्रमिकों की मजदूरी (रु०) (m)	श्रमिकों की संख्या (f)	मध्य मूल्य (m)	*dm* *dm = (m-a)* *a = 85*	*f × dm = fdm*
50-60	8	$\frac{50+60}{2}=55$	(55-85)=-30	8×(-30)=-240
60-70	10	$\frac{60+70}{2}=65$	(65-85)=-20	10×(-20)=-200
70-80	15	$\frac{70+80}{2}=75$	(65-85)=-10	15×(-10)=-150
80-90	18	$\frac{80+90}{2}=58$	(85-85)=0	18×0=0
90-100	20	$\frac{90+100}{2}=95$	(95-85)=+10	20×10)=200
100-110	12	$\frac{100+110}{2}=105$	(105-85)=+20	12×20=240
110-120	5	$\frac{110+120}{2}=115$	(115-85)=-+30	5×30=+150
	N= 88			$\Sigma fdm = 0$

Using the formula = $\overline{x} = a + \frac{\Sigma fdm}{N}$

$= 85 + \frac{0}{88}$

$= 85$

अतः श्रमिकों की औसत साप्रहिक मजदूरी रू. 85 है।

(iii) पद विचलन विधि

श्रमिकों की मजदूरी (रु0) (m)	श्रमिकों की संख्या (f)	मध्य मूल्य (m)	dm dm=(m-a) a=85	d^1m $d^1m = \left(\frac{dm}{i}\right)$ i=10	$f \times d^1m = fd^1m$
50-60	8	55	-30	$\frac{-30}{10} = -3$	8×(-3)=-24
60-70	10	65	-0	$\frac{-20}{10} = -2$	10×(-2)=-20
70-80	15	75	-10	$\frac{-10}{10} = -1$	15×(-1)=-15
80-90	18	85	0	$\frac{0}{10} = 0$	18×(-1)=0
90-100	20	95	+10	$\frac{10}{10} = +1$	20×1)=+20
100-110	12	105	+20	$\frac{20}{10} = +2$	12×2)=+24
110-120	5	115	+30	$\frac{30}{10} = +3$	5×3=+15
	N= 88				$\sum fd^1m = 0$

Using the formula $\overline{X} = a + \frac{\Sigma fd^1m}{N} xi = 85 + \frac{0}{88} x10$

= Rs. 85

अतः श्रमिकों की औसत साप्ताहिक मजदूरी रु० 85 है।

20.3 माध्यिका या मध्यका का अर्थ एवं विशेषतायें

माध्यिका या माध्यांक भी एक महत्वपूर्ण सांख्यिकीय माप है। माध्यिका अंक या पद का वह मूल्य है जो श्रेणी के समंकों को दो भागों में विभक्त करता है। दूसरे शब्दों में माध्यिका किसी समंक श्रेणी का वह मूल्य होता है जो श्रेणी के बिल्कुल मध्य में स्थित है। इसकी विशेषता यह है कि श्रेणी में माध्यिका के अंक के एक भाग में सभी अंक माध्यिका अंक से कम दूसरे भाग में माध्यिका अंक से अधिक होना चाहिए। दूसरों शब्दों में श्रेणी के सभी मूल्य आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित होने चाहिए। इस प्रकार हम कह सकते हैं जब एक समंक श्रेणी आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित होती है तो इस समंक श्रेणी को दो बराबर भागों में बॉटने वाला मध्य माध्यिका या मध्यांक कहलाता है।

परिभाषाए –विभिन्न विद्वानों ने मध्यका या मध्यांक की परिभाषाएं इस प्रकार दी हैं–

1– बल्दुआ एवं शर्मा–'पदमाला के पदों को आरोही अथवा अवरोही क्रम से व्यवस्थित करने पर जो मध्य में रहता है, उसे मध्यका कहते हैं।'

2– सेक्रिप्ट– ' पदमाला की मध्यका वह वास्तविक या अनुमानित होता है, जो पदमाला को विस्तार के क्रम में व्यवस्थित करने पर उसे बराबर दो भागों में विभक्त करती है।

3– प्रो. एलहांस–'जब एक समंक माला आरोही व अवरोही क्रम मे व्यवस्थित होती है तो इस समंक माला को दो बराबर हिस्सों में विभाजित करने वाले मध्य मूल्य को मध्यांक कहते हैं।'

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समान्तर माध्य का अर्थ लिखिए।

....
....
....
....
....
....

....
....
....
....
....

2. माध्य का अर्थ स्पष्ट कीजिए लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

20.31 मध्यिका या मध्यका की विशेषतायें

1– मध्यका समंकमाला के केन्द्र में स्थित एक विशेष पद–मूल्य होता है ।

2– मध्यका सम्पूर्ण समंक श्रेणी को दो बराबर हिस्सों में विभाजित करता है।

3– मध्यका ज्ञात करने के लिए पदों को अरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना पड़ता है।

4–मध्यका ज्ञात करने के लिए पदों का सतत् श्रेणी में अपवर्जी बनाना आवश्यक होता है।

5– पदों की आवृत्ति को संचयी क्रम में व्यवस्थित करना आवश्यक होता है।

6– मध्यका केवल एक विशेष मूल्य की ओर संकेत करता है। यह मूल्य जिस संख्या अथवा विशेषता से सम्बन्धित होता है, उसी को मध्यका मान लिया जाता है।

20.32 माध्यिका या मध्यका की गणना

1– व्यक्तिगत या सरल या अव्यवस्थित या स्वतंत्र श्रेणी में मध्यका की गणना करना।

अ) सर्वप्रथम श्रेणी को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित कर लें।

आ) श्रेणी को उपरोक्तानुसार व्यवस्थित करने के पश्चात् निम्न सूत्र का प्रयोग करें:

$$Median\ (Me) = \left(\frac{n+1}{2}\right)$$ वें पद का मान

ख) यदि पदों की संख्या विषम है (Odd Number) है तो–

$$Median\ (Me) \frac{1}{2}\left[\frac{n}{2} = \text{ वें पद का मान } + \left(\frac{n}{2}+1\right)\text{वें पद का मान}\right]$$

उदाहरण– (i) निम्न पदों का मध्यका मूल्य ज्ञात कीजिए।

3, 5, 10, 12, 9, 1, 11, 13, 4

हल – सर्वप्रथम इन्हें आरोही क्रम में जमा लीजिए

पदों का क्रम	मूल्य
1	1
2	3
3	4
4	5
5	9
6	10
7	11
8	12
9	13

इसमें कुल पदों की संख्या–, अर्थात् n = 9 है

Median (Me) = $\frac{n+1}{1}$ वे पद का मान

$$\frac{9+1}{2} = \frac{10}{2}$$

= 5 वें पद का मान =9

उदाहरण 7– निम्न समंक संख्या में मध्यिका मूल्य ज्ञात कीजिए

सदस्य : 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10

आयु वर्षों में : 10, 12, 24, 42, 29, 13, 18, 54, 48, 18

हलः सर्वप्रथम उपरोक्त समकों को आरोही क्रम में जमा करने पर

सदस्य	आयु वर्षों में
1	10
2	12
3	13
4	18
5	18
6	24
7	29
8	42
9	48
10	54

इसमें कुल पदों की संख्या , n=10 है, अर्थात सम संख्या है।

$$Me = \frac{1}{2}\left[\frac{n}{2}\text{वें पद का मान} + \left(\frac{n}{2}+1\right)\text{वें पद का मान}\right]$$

$$= \frac{1}{2}\left[\frac{10}{2}\text{वें पद का मान} + \left(\frac{10}{2}+1\right)\text{वें पद का मान}\right]$$

$$= \frac{1}{2}\left[5\text{वें पद का मान} + 6\text{ वें पद का मान}\right]$$

$$= \frac{1}{2}\left[18 + 24\right] = \frac{1}{2} \times 42 = 21$$

अतः माध्यिका आयु 21 वर्ष होगी।

2. खण्डित श्रेणी में माध्यिका की गणना करना

इस श्रेणी में मध्यका निकालने की विधि इस प्रकार होगी।

1– सर्व प्रथम श्रेणी के पदों को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित कर लें।

2– आवृत्तियों को संचयी आवृत्ति में परिवतर्तित करें

3– निम्न सूत्र का प्रयोग कर मध्यका ज्ञात करें।

Median (Me) = $\left(\frac{n+1}{2}\right)$वें पद का मान

जहाँ **N** आवृत्ति का योग या अन्तिम संचयी आवृत्ति

इस प्रकार प्राप्त संचयी आवृति के सामने वाला पद ही मध्यका होगा। यदि वह संख्या ऐसी है कि वह संचयी आवृत्ति में नहीं है तो इसके बाद जो संख्या हो, उसके सामने वाला पद ही मध्यका होगा।

उदाहरण 3 माजा अगरबत्ती फैक्ट्री में श्रमिकों की साप्ताहिक मजदूरी निम्नानुसार है–

साप्ताहिक मजदूरी (रुपयों में)	20	25	27	30	40	50	55	60	70	75	80
श्रमिकों की संख्या	20	30	08	12	14	09	10	07	03	02	01

हल : सर्वप्रथम उपरोक्त श्रेणी को आरोही क्रम में व्यवस्थित रूप से जमा लें।

साप्ताहिक मजदूरी (रुपयों में)	आवृत्ति	श्रमिकों की संख्या संचयी आवृत्ति
20	20	20 = 20
25	30	(20+30) = 50
27	8	(50+8) = 58
30	12	(58+12) = 70
40	14	(70+14) = 84
50	9	(84+9) = 93
55	10	(93+10) = 103
60	7	(103+7) = 110
70	3	(110+3) = 113
75	2	(113+2) = 115
80	1	(115+1) = 116

Median (Me) = $\frac{N+1}{2}$ वे पद का मान

$= \frac{116+1}{2}$ वें पद का मान = 58.5 वें पद का मान

चूंकि 58.5 का पद संचयी आवृत्ति में 70 वें पद में शामिल है क्योंकि इससे पूर्व 58 वों पद है जो 58.5 छोटा है। इसलिये 70 वें पद से सम्बन्धित मजदूरी अर्थात् 30 रुपये मध्यांक होगा।

उदाहरण –4 : निम्न समंकों से मध्यका ज्ञात कीजिए।

पद का आकार	11	13	15	16	17	12	14	18	19	20
आवृत्ति	5	12	24	18	13	8	20	10	6	3

पद का आकार	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति
11	5	5 = 5
12	8	5+8 = 13
13	12	13+12 = 25
14	20	25+20 = 45
15	24	45+24 = 69
16	18	69+18 = 87
17	13	87+13 = 100
18	10	100+10 = 110
19	6	110+6 = 116
20	3	116+3 = 119

Median (Me) = $= \frac{N+1}{2}$ वें पद का मान

$= \frac{119+1}{2}$ वें पद का मान = 60 वें पद का मान।

इस प्रकार मध्यका संचयी आवृत्तिा 60 है। परन्तु संचयी आवृत्ति में यह संख्या नहीं है। अतः संचयी आवृत्ति में 60 के बाद की संचयी आवृत्ति संख्या 69 है। अतः संचयी आवृत्ति 69 के सामने वाली संख्या अर्थात् 15 ही मध्यका काा मूल्य होगा। अतः मध्यका का आकार है, 15 ।

3. सतत् या निरन्तर या अखण्डित श्रेणी में मध्यिका की गणना करना

सतत् श्रेणी में मध्यका की गणना निम्न विधि से की जाती है–

1) सर्वप्रथम संचयी आवृत्ति ज्ञात कीजिए।

2) N/2 वें पद के मान मध्यका वर्ग ज्ञात करने के बाद निम्न सूत्र का प्रयोग करें।

$$Me = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(M - C)$$

जहाँ

Me = मध्यका

L_1 = मध्यका वर्ग की निम्न सीमा

L_2 = मध्यका वर्ग की उच्च सीमा

M = मध्यका संख्या की संचयी आवृत्ति का आधार मूल्य या n/2

C = मध्यका वर्ग के पूर्व वर्ग की संचयी आवृत्ति

उदाहरण 5: निम्न श्रेणी से मध्यका ज्ञात कीजिए।

आय (रु.में) :	100-200	200-300	300-400	400-500	500-600
व्यक्तिओं :	15	33	63	83	100

आय (रुपयों में)	व्यक्तियों की संख्या f	संचयी आवृत्ति c.f.
100-200	15	15
200-300	33	48
300-400	63	111
400-500	83	194
500-600	100	294

using the formula, $Me = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(M - C)$

Here , $\frac{N}{2} = \frac{294}{2} = 147th$ item

147 वाँ पद संचयी आवृत्ति 194 में स्थित है जिसका वर्गान्तर 400–500 है। यही वर्गान्तर मध्यका वर्गान्तर कहलाता है।

Median Class =m 400 – 500

Therefore, L_1 = 400, L_2 = 500, f= 83, C=111

$$Me = 400 + \frac{500-400}{83}(147-111) = 443.37$$ रुपये

अतः मध्यका आय 443.37 रुपये है

उदाहरण 6 : निम्न समावेशी पदमाला से मध्यका की गणना कीजिए।

मजदूरी (रुपयों में)	श्रमिकों की संख्या
0-24	5
25-49	11
50-74	15
75-99	20
100-124	35
125-149	24
150-174	18
175-199	9
200-224	3

हल : उपरोक्त प्रश्न में समावेशी पदमाला दी हुई है। सबसे पहले इसे अपवर्जी पदमाला में परिवर्तित करना होगा। इस परिवर्तन के पश्चात् ही इस प्रश्न को हल करें। अपवर्जी पदमाला में परिवर्तन के लिये प्रथम प्रत्येक वर्गान्तर का अन्तर देखते हैं। यह अन्तर यहाँ पर एक अंक का है। इस अन्तर का आधार कर लेते हैं। इसके पश्चात् प्रत्येक वर्गान्तर जोड़ देते हैं। इस प्रकार नवीन वर्गान्तर के आधार पर अपवर्जी पदमाला निर्मित हो जाती हैं। इस प्रश्न में आधा अंक होगा ½ = 0.5

मजदूरी बारमबारता (रुपयों में)	परिवर्तित पदमाला प्रक्रिया	परिवर्तन से प्राप्त पदमाला	आवृत्ति f	संचयी c.f
0-24	0.5to 24 + 0.5	0.5-24.5	5	5
25-49	25-0.5to 49 + 0.5	24.5-49.5	11	16
50-74	50-0.5to 74 +0.5	49.5 -74.5	15	31
75 -99	75-0.5 to 99 + 0.5	74.5-99.5	20	51
100-124	100-0.5 to 124 + 0.5	99.5+124.5	35	86
125-149	125-0.5 to 149 +0.5	124.5-149.5	24	110
150-174	150-0.5 to 174 + 0.5	149.5-174.5	18	128
175-199	175 -0.5 to 199 + 05	174.5-299.5	9	137
200-224	200-0.5 to 224 + 0.5	199.5 -224.5	3	140

Using the formula, $Me = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(M - C)$

Here, $\frac{N}{2} = \frac{140}{2} = 70$ वें पद का मान या वर्गान्तर

70 वों पद संचयी आवृत्ति 86 में स्थित है, अतः मध्यका वर्गान्तर 99.5 –124.5 होगा

Median Class = 99.5 – 124.5

Therefore, L_1 = 99.5, L_2 = 124.5, f= 35, C=51

$$Me = 99.5 + \frac{124.5 - 99.5}{35}(70 - 51)$$

$$= 99.5 + \frac{25}{35} \times 19 = Rs.113.07$$

अतः मध्यका मजदूरी 113.07 रुपये होगी।

उदाहरण 7 : नीचे दी गये अवरोही पदमाला से मध्यका की गणना कीजिए।

मजदूरीः 90-100, 80-90, 70-80, 60-70, 50-60,
40-50, 30-40, 20-30, 10-20, 0-10

श्रमिकों कीः 5 11 18 25 45 19

संख्या 15 9 7 3

हल : – उपरोक्त प्रश्न में पदमाला अवरोही क्रम में दी गयी है। इस प्रश्न में C का मान निकालते समय विशेष सावधानी रखनी चाहिए। "C" की गणना करने के लिये आवृत्ति को घटा देना चाहिए अथवा मध्यका वर्गान्तर से कम मूल्य के सभी वर्गान्तर की आवृत्तियों का योग लेना चाहिए। यही "C" का मूल्य होता है।

मजदूरी (रुपये में)	श्रमिकों की संख्या f	संचयी आवृत्ति (c.f.)
90-100	5	5
80-90	11	16
70-80	18	34
60-70	25	59
50-60	45	107
40-50	19	126
30-40	15	141
20-30	9	150
10-20	7	157
0-10	3	160

Using the formula, $Me = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(M - C)$

Here, $\frac{N}{2} = \frac{160}{2} = 80$ वें पद का मान या वर्गान्तर

मध्यका का वर्गान्तर = 50 – 60

Therefore, L_1 =50, L_2 =60, f= 45, M=80,

C= 3+7+9+15+19+= 53

$$Me=50+\frac{60-50}{45}(80-53)=50+\frac{10}{45}x27=Rs.56$$

अतः मध्यका मजदूरी दर रु० 56 होगी।

इस प्रश्न को निम्न सूत्र द्वारा भी हल किया जा सकता है।

$$Me=L_2-\frac{L_2-L_1}{f}(M-C)$$

Therefore, L_2 =60, L_1 =50, f= 45, M=80, C=59,

$$Me=60-\frac{60-50}{45}(80-59)=60-\frac{10}{45}\times 21=Rs.55.33$$

अतः मध्यका मजदूरी की दर रु० 55.33 होगी।

20.4 बहुलक का अर्थ एवं परिभाषायें

बहुलक को अधिक घनत्व का स्थान कहा जा सकता है। किसी भी समंक श्रेणी का वह मूल्य जिस पर सर्वाधिक बड़ी संख्या स्थित हो, बहुलक कहलाता है। दूसरे शब्दों में, किसी समंक श्रेणी में जो भी मूल्य सबसे अधिक बार आता है, उसे बहुलक या बहुलांक कहते हैं।

'बहुलांक' = शब्द, बहुल+अंक से बना है, इसका अर्थ है बाहुल्य अर्थात् समंक श्रेणी में जिस अंक की बाहुल्यता होगी वही बहुलांक कहलाता है।

Mode शब्द फ्रेंच भाषा के LaMode से बना है। इसका अर्थ होता है फैशन या रिवाज या प्रचलन। अतः बहुलक किसी श्रेणी का वह मूल्य होता है जो समंकमाला में सबसे अधिक बार आता हो या जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक हो।

परिभाषाएँ – प्रमुख विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाएँ इस प्रकार हैं–

(1) **डॉ. बाउले –** "किसी सांख्यकीय समूह में वर्गीकृत मात्रा का वह मूल्य (भूमि, ऊँचाई, अथवा कुछ अन्य मापकीय परिमाण का जहाँ पंजीकृत संख्याएँ हों, उन्हें बहुलक कहा जाता है।"

(2) **बोडिंगटन –** "महत्त्वपूर्ण प्रकार, रूप अथवा पद आकार अथवा सर्वोच्च घनत्व की स्थिति के रूप में बहुलक को परिभाषित किया जा सकता है।

(3) **क्राक्सटन एवं काउडेन** – "बहुलक एक समंकमाला का वह मूल्य है जिसके आसपास श्रेणी के अधिक से अधिक पद मूल्य केन्द्रित होते हैं।"

20.41 बहुलक की विशेषतायें

1. बहुलक समंकमाला का वह मूल्य है जो सर्वाधिक बार पुनरावृत्ति करना है।
2. बहुलक ज्ञात करने के लिए पदों को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना आवश्यक है।
3. बहुलक श्रेणी के समस्त पद मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता है।
4. बहुलक को ग्रॉफ के माध्यम से भी ज्ञात किया जा सकता है।
5. कभी–कभी एक समंक श्रेणी के पद मूल्यों में एक से अधिक पद मूल्यों की आवृत्तियों की पुनरावृत्ति होती है, ऐसी स्थिति में एक से अधिक बहुल भी हो सकते हैं।

20.42 बहुलक की गणना

1. व्यक्तिगत श्रेणी में बहुलांक की गणना

व्यक्तिगत श्रेणी में सामान्यतः बहुलक का निर्धारण निरीक्षण पद्धति के द्वारा किया जाता है। यदि निरीक्षण पद्धति से बहुलक की गणना न हो सके तो व्यक्तिगल श्रेणी को खण्डित अथवा अखण्डित श्रेणी में परिवर्तित करके भी बहुलक की गणना की जा सकती है।

निरीक्षण द्वारा बहुलक निकालना – इस विधि की प्रक्रिया इस प्रकार है–

(1) सर्वप्रथम विखरे पदों को व्यवस्थित रूप से जमाइये। एक जैसे पदों को पास रखकर यह पता लगाया जाता है कि किस अंक की आवृत्ति सबसे अधिक है।

(2) जिस अंक की आवृत्ति सबसे अधिक है, वही बहुलक होगा।

उदाहरण–1 निम्नलिखित छात्रों की आयु (वर्षों में) का बहुलक ज्ञात कीजिए।

15, 13, 16, 18, 20, 22, 19, 15, 14, 13, 19, 20, 21, 20, 16, 20, 15, 20, 17 और 18.

हल (Solution) : यदि हम उपरोक्त समंको का निरीक्षण करें ते क्रमानुसार आरोही क्रम में जमाएँ–

13, 13, 14, 15, 15, 15, 16, 16, 17, 18, 18, 18, 19, 19, 20, 20, 20, 20, 20, 21, 22

समंक श्रेणी में 20 अंक 5 बार आया है अतः बहुलक 20 वर्ष होगा।

2. **खण्डित श्रेणी में बहुलक की गणना**

खण्डित श्रेणी में बहुलक ज्ञात करने की पद्धतियाँ इस प्रकार हैं–

(अ) निरीक्षण द्वारा

(ब) समूहीकरण द्वारा

(स) निरीक्षण द्वारा

खण्डित श्रेणी में भी निरीक्षण द्वारा भूयिष्ठक का पता लगाया जा सकता है। इसके लिये तीन बातें होना आवश्यक है–

(i) पदमाला नियमित हो।

(ii) सभी पद सजातीय हों।

(iii) एक से अधिक पदों की आवृत्तियाँ सबसे अधिक न हो।

उदाहरण 2 – निम्न समंकों से बहुलक ज्ञात कीजिए।

ऊँचाई (सेमी) –	155,	165,	175,	180,	195,	200,	210
व्यक्तियों की संख्या –	3	4	8	10	6	5	4

हल (Solution) :

ऊँचाई (सेमी)	आवृत्ति
155	3
165	4
175	8
180	10
195	6
200	5
210	4

सबसे अधिक आवृत्ति 10 है, उसकी ऊँचाई संख्या 180 सेमी है। अतः बहुलक 180 सेमी है।

(ब) समूहीकरण द्वारा :

समूहीकरण द्वारा बहुलक की गणना एक जटिल प्रक्रिया है। यदि किसी समंकमाला में एक से अधिक पदों की आवृत्तियाँ सबसे अधिक होती हैं तब ऐसी स्थिति में समूहीकरण पद्धति द्वारा बहुलक की गणना की जाती है। इसकी प्रक्रिया इस प्रकार है—

(i) सर्वप्रथम समूहीकरण सारणी का निर्माण करना

(ii) विश्लेषण सारणी बनाना

(iii) भूयिष्ठक की गणना करना

(i) समूहीकरण सारणी का निर्माण : इसके लिए सर्वप्रथम आवृत्तियों का समूहीकरण किया जाता है। समूहीकरण के लिये सामान्यतः छः कॉलम का निर्माण किया जाता है। इन कॉलम में आवृत्तियों का समूहीकरण किया जाता है।

पहला कॉलम — इसमें दी हुई आवृत्तियाँ लिखी जाती हैं।

दूसरा कॉलम — पहले कॉलम में दी हुई प्रथम दो आवृतियों को जोड़कर उनका समूहीकरण किया जाता है।

इसके बाद उसके आगे वाली दो आवृत्तियों का जोड़ तथा उसी प्रकार अंत तक दो—दो आवृतियों को जोड़कर उनका समूहीकरण किया जाता है।

तीसरा कॉलम — इस प्रथम कॉलम में दी हुई प्रथम आवृति को छोड़कर शेष दो—दो आवृत्तियों को जोड़कर उनका समूहीकरण किया जाता है।

चौथा कॉलम — इस कॉलम में दी हुई तीन—तीन आवृत्तियों को जोड़कर उनका समूहीकरण किया जाता है।

पाँचवा कॉलम — इसमें प्रथम कॉलम में दी हुई प्रथम आवृत्ति को छोड़कर शेष तीन—तीन आवृत्तियों को जोड़कर उनाक समूही किया जाता है।

छठा कॉलम — इस कॉलम में प्रथम कॉलम में दी हुई प्रथम दो आवृत्तियों को छोड़कर अगली तीन आवृत्तियों का जोड़, फिर अगली तीन आवृत्तियों का जोड़ तथा इसी प्रकार अंत तक आवृत्तियों का समूहीकरण किया जाता है।

संक्षेप में—

प्रथम कॉलम — आवृत्तियों का।

द्वितीय कॉलम — दो—दो आवृत्तियों को जोड़।

तृतीय कॉलम – प्रथम आवृत्ति को छोड़कर शेष दो–दो आवृत्तियों का जोड़।

चतुर्थ कॉलम – तीन–तीन आवृत्तियों का जोड़।

पाँचवा कॉलम – प्रथम आवृत्ति को छोड़कर तीन–तीन आवृत्तियों को जोड़।

छठा कॉलम – प्रथम दो आवृत्ति को छोड़कर तीन–तीन आवृत्तियों का जोड़।

(ii) विश्लेषण सारणी बनाना – विश्लेषण सारणी को समूहीकरण सारणी के आधार पर बनाया जाता है। समूहीकरण के प्रत्येक कॉलम की अधिकतम आवृत्ति की तालिका बनाकर विश्लेषण किया जाता है।

(iii) बहुलक ज्ञात करना – विश्लेषण सारणी के आधार पर यह देखा जाता है कि किस पद की संख्या अधिकतम बार आयी है तथा जिसकी संख्या अधिकतम हो वही पद या माप बहुलक कहलाता है।

उदाहरण 3 – निम्न सारणी से बहुलक ज्ञात कीजिए–

पद का आकार	: 4	5	6	7	8	9	10
आवृत्तियाँ	: 11	15	18	14	12	16	9

पद का आकार	आवृत्तियां					
	1	2	3	4	5	6
4	11	26				
5	15		33	44		
6	18	32			47	
7	14		26			
8	12	28		42		
9	16		25		37	
10	9					

विश्लेषण सारणी

पद का आकार	आवृत्तियां						
	4	5	6	7	8	9	10
1			✓				
2			✓	✓			
3		✓	✓				
4	✓	✓	✓				
5		✓	✓	✓			
6			✓	✓			
					✓		
योग	1	3	6	3	1	–	–

उपरोक्त विश्लेषण सारणी के अध्ययन से स्पष्ट है कि छठें पद की आवृत्ति अधिकतम है अतः बहुलक = 6

3. **अखण्डित अथवा सतत् श्रेणी में बहुलक की गणना**

अखण्डित श्रेणी में बहुलक की निम्न सूत्र की सहायता से गणना की जा सकती है–

$$\text{Mode} = M_o = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2}(L_2 - L_1)$$

Where जहाँ,

L_1 = बहुलक वर्ग की निम्नतम सीमा

L_2 = बहुलक वर्ग की उच्चतम सीमा

f_1 = बहुलक वर्गान्तर की आवृत्ति

f_0 = बहुलक वर्गान्तर से पहले वाले या निकटतम मूल्य वाले वर्गान्तर

f_2 = बहुलक वर्गान्तर के बाद वाले या निकटतम अधिक मूल्य वाले

उदाहरण 4 – निम्न समंकों से बहुलक ज्ञात कीजिए :

अंक :	0–5	5–10	10–15	15–20	20–25	25–30	30–35	35–40
आवृत्तिः	5	8	15	18	15	9	9	6

हल (Solution) : उपरोक्त प्रश्न के समंकों का अध्ययन करने का पता चलता है कि वर्गान्तर 15–20 की आवृत्ति सबसे अधिक 18 है, अतः यह वर्गान्तर होगा। इसकी हम समूहीकरण विधि से जाँच करेंगे।

समूहीकरण द्वारा बहुलक गणना

अंक	**आवृत्तियां**					
	1	**2**	**3**	**4**	**5**	**6**
0–5	**5**					
5–10	**8**	13	23	28	41	
10–15	**15**				41	48
15–20	**18**	33	33	42	33	48
20–25	**15**	24		42		
25–30	**9**		18			
30–35	**9**					24
35–40	**6**	15				

कालम	अधिकतम आवृत्ति वाले वर्गान्तर						
संख्या	0–5	5–10	10–15	15–20	20–25	25–30	30–25
1				✓			
2			✓	✓			
3				✓	✓		
4				✓	✓	✓	
5		✓	✓	✓	✓	✓	
6			✓	✓	✓		
योग	–	1	3	6	3	1	–

अतः स्पष्ट है कि वर्गान्तर 15–20 की आवृति सबसे अधिक 6 है,

अतः यही बहुलक वर्गान्तर है।

Now using the formula, $M_o = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2}(L_2 - L_1)$

Here, $L_1 = 15$, $L_2 = 20$, $f_1 = 18$, $f_0 = 15$, $f_2 = 15$

$$M_o = 15 + \frac{(18-15)}{(2\times18)-15-15}\ (20-15)$$

$$= 15 + \frac{3}{6} \times 5 = 15 + \frac{15}{6} = 17.5 \text{ vad}$$

अतः बहुलक 17.5 अंक है।

20.5 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में माध्य, माध्यिका एवं बहुलक के बारे में प्रकाश डाला गया जिसमें बताया गया कि समान्तर माध्य वह माध्य है जिसमें किसी समंकमाला में अंकगणितीय औसत या माध्य वह अंक होता है जिसे विभिन्न पदों के मूल्यों में उनकी कुल आवृत्ति से भाग देने पर प्राप्त किया जाता है। समान्तर माध्य की गणना हेतु प्रत्यक्ष विधि एवं लघु विधि के बारे में ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है तथा इससे सम्बन्धित कई उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। इसी इकाई में माध्यिका के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि माध्यिका अंक या पद का वह मूल्य है जो श्रेणी के समंकों को दो भागों में विभक्त करता है अर्थात् माध्यिका किसी समंक श्रेणी का वह मूल्य होता है जो श्रेणी के बिल्कुल मध्य में स्थित होता है। माध्यिका की गणना के लिए विभिन्न प्रकार के उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। इकाई के अन्त में बहुलक का अर्थ एवं परिभाषाओं पर प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि किसी सांख्यिकीय समूह में वर्गीकृत मात्रा का वह मूल्य जहाँ पंजीकृत संख्याएं सर्वोच्च हों उन्हें बहुलक कहा जाता है। इकाई के अन्त में बहुलक की गणना करने के लिए व्यक्तिगत श्रेणी एवं खंडित श्रेणी के बारे में भी वर्णन किया गया है जिसमें समूहीकरण प्रविधि के बारे में प्रकाश डाला गया है।

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग निश्चित रूप से माध्य, माध्यिका एवं बहुलक की गणना करने में सक्षम हो सके होंगे।

20.6 पारिभाषिक शब्दावली

माध्य – माध्य वास्तव में एक गणितीय परिकल्पना है जो एक विशिष्ट वर्ग का विशिष्टीकरण नहीं करती, अपितु यह सिर्फ एक गणितीय परिणाम व्यक्त करने का एक संक्षिप्त तरीका है, जैसे किसी परिवर्तनशील जनसंख्या में मानवीय मध्यक जीवन।

माध्यिका – जब एक समंकमाला आरोही व अवरोही क्रम में व्यवस्थित होती है तो इस समंकमाला को दो बराबर हिस्सों में विभाजित करने वाले मध्य मूल्य को मध्यांक कहते हैं।

बहुलक – बहुलक एक समंकमाला का वह पद है जो सबसे अधिक बार आता है। यह श्रेणी के बहुल मूल्य का सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि है।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

1— माध्य या समान्तर माध्य का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

2— माध्य की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3— माध्यिका का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

4— माध्यिका की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

5— बहुलक का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

6— बहुलक की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

विस्तृत

1— समान्तर माध्य का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

2— समाज कार्य के दस विद्यार्थियों के प्राप्तांक इस प्रकार हैं

56, 60, 64, 70, 60, 64, 68, 66, 58, 66

समान्तर माध्य ज्ञात कीजिए।

3— दस श्रमिकों की साप्ताहिक आय इस प्रकार है (रु0 में)

300, 350, 250, 350, 400, 200, 350, 500

समान्तर माध्य ज्ञात कीजिए।

4— माध्यिका का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

5— निम्न तालिका से माध्यिका गणना कीजिए —

मध्य मूल्य :	2.5	7.5	12.5	17.5	22.5	27.5	32.5
आवृत्ति :	5	8	15	22	16	11	7

6— बहुलक का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

7— निम्न सारणी बहुलक ज्ञात कीजिए—

आय रुपये मे :	0—10	10—20	20—30	30—40	40—50	50—60
श्रमिकों की संख्याः	7	11	24	15	24	4

20.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सिंह डा. एस0 डी0, "वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूलतत्व", कमल प्रकाशन, इन्दौर वर्ष–1995,

2– मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, "समााजिक शोध व सांख्यिकी", विवेक प्रकाशन, दिल्ली वर्ष–2000,

3– गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान (शोध), आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष–2005 पेज नं. 323–326, 332–334, 336–339, 348–357, 363–370।

खण्ड–चतुर्थ
सांख्यिकी प्रयोग

इकाई : 21 कम्प्यूटर का प्रयोग

21.0 इकाई का उद्देश्य

21.1 परिचय

21.2 कम्प्यूटर का अर्थ

21.3 कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली

21.4 कम्प्यूटर का प्रयोग

21.5 सार–संक्षेप

21.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न, लघु, विस्तृत

21.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

21.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय संगणानार्थियों प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य कम्प्यूटर या संगणक का सांख्यिकी में किस प्रकार प्रयोग किया जाता है, के बारे में आपको ज्ञान प्रदान करना है। वास्तव में वर्तमान युग तकनीकी का युग है जिसमें किसी भी सांख्यिकी गणना या लेखन में कम्प्यूटर का प्रयोग अधिकाधिक होने लगा हैं। इस इकाई में कम्प्यूटर का सांख्यिकी में क्या उपयोगिता है?, के बारे में प्रकाश डाला गया है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– कम्प्यूटर के अर्थ को जान सकेंगे।

2– कम्प्यूटर की कार्य प्रणाली के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3– सांख्यिकी में कम्प्यूटर के प्रयोग के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

21.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों वर्तमान युग वैज्ञानिक युग है जिसमें विज्ञान द्वारा नये–नये खोज अनवरत जारी हैं। इन्हीं वैज्ञानिक खोजों में कम्प्यूटर की खोज एक नयी क्रांति को जन्म दिया है। वर्तमान में जो गणनायें एवं कार्यक्रम मनुष्य आसानी से नहीं कर पाता उसे ये कम्प्यूटर सेकेण्डों में कर देते हैं। अतः वर्तमान समय में प्रत्येक संगणना एवं लिखने के कार्य कम्प्यूटर पर निर्भर हो गये हैं। वास्तविकता तो यह है कि जिस क्षेत्र में कम्प्यूटर का प्रयोग होने लगता है, उस क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन दिखायी देने लगते हैं। वस्तुतः कम्प्यूटर का प्रयोग हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होने लगा है ।

इसी तरफ ध्यान आकर्षित करने हेतु व समाज कार्य अनुसंधान में कम्प्यूटर का प्रयोग किस हद तक किया जा सकता है, के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत इकाई का गठन किया गया है। वास्तविकता तो यह है कि सांख्यिकी गणनाओं में कम्प्यूटर का प्रयोग अनिवार्य रूप से होने लगा है। समाज कार्य अनुसंधान में कम्प्यूटर का प्रयोग परियोजना निर्माण से लेकर प्रकाशन तक में होता है। चाहे किसी प्रबंध की रूपरेखा लिखनी हो, तथ्यों का विश्लेषण करना हो, तथ्यों को सारणीबद्ध करना हो, सांख्यिकी गणना करनी हो, हर क्षेत्र में कम्प्यूटर का प्रयोग अति महत्वपूर्ण हो गया है।

इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत इकाई आप लोगों के सामने प्रस्तुत की जा रही है जिससे आप लोग समाज कार्य अनुसंधान में कम्प्यूटर के प्रयोग के महत्व को समझ सकेंगे व समय आने पर कम्प्यूटर का प्रयोग कर सकेंगे। आशा है कि यह इकाई आपको कम्प्यूटर का समाज कार्य अनुसंधान में प्रयोग हेतु आशातीत ज्ञान प्रदान करेगी।

21.2 कम्प्यूटर का अर्थ

'कम्प्यूटर' शब्द की उत्पत्ति अंग्रेजी भाषा के शब्द 'कम्प्यूट' से हुई है जिसका तात्पर्य 'गणना करना' होता है। यद्यपि शुरू में कम्प्यूटर का उपयोग प्रमुखतः गणनात्मक कार्यों के लिए किया जाता था, परन्तु अब इसका कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है। अतः कम्प्यूटर एक ऐसी इलेक्ट्रोनिक युक्ति है जो दिये गये निदेशन समूह के आधार पर सूचना को संसाधित करती है। इस निदेशन समूह को प्रोग्राम कहते हैं। इस प्रकार कम्प्यूटर केवल एक गणक (कैलकुलेटर) ही नहीं है बल्कि यह गणितीय तथा

अगणितीय, सभी प्रकार की सूचना को संसाधित करने वाला उपकरण है।

कम्प्यूटर के प्रमुख तकनीकी कार्य चार प्रकार के होते हैं–

1– डेटा का संकलन तथा निवेशन

2– डेटा का संचयन

3– डेटा संसाधन

4– डेटा/इन्फार्मेशन का निर्गमन या पुनर्निर्गमन

ये डेटा (या जानकारी) लिखित, मुद्रित, श्रव्य, चाक्षुष, आरेखित या यांत्रिक चेष्ठाओं के रूप में हो सकते हैं। कम्प्यूटर की क्रिया–विधि का आधार उसकी केन्द्रीय संसाधन एकक होती है। जो मूलतः अग्रलिखित तीन प्रकार के कार्य करती है–

1– अंकगणितीय परिकलन जैसे, योग, घटाना, गुणा, एवं भाग इत्यादि

2– दो राशियों के मानों की तुलना करना।

3– कृत्रिम स्मृति में डेटा का अस्थायी संकलन एवं किसी भी क्षण पर जरूरत पड़ने पर तुरन्त इनकी खोज संचय एवं पुनः प्राप्ति।

21.3 कम्प्यूटर की कार्य प्रणाली

कम्प्यूटर की कार्य प्रणाली के 4 मुख्य अवयव होते हैं। इन्हें कम्प्यूटर का रचना–शिल्प भी कहते हैं। इनके नाम हैं–

1– निवेश (Input)

2– केन्द्रीय संसाधन एकक (CPU)

3– वाह्य स्मृति (External Memory)

4– निर्गम (Output)

निवेश एवं निर्गम एककों के द्वारा कम्प्यूटर एवं मानव के बीच सम्पर्क स्थापित होता है। चूँकि ये एकक कम्प्यूटर को चारों तरफ से घेरे हुए होती हैं, इसलिए इन्हें परिधीय युक्तियां भी कहा जाता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. कम्प्यूटर का अर्थ लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली के बारे में लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

21.4 कम्प्यूटर का प्रयोग

कम्प्यूटर का प्रयोग वर्तमान समय में बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। समाज कार्य अनुसंधान के प्रयोग से शोध कार्य बहुत ही आसान हो गया है। चाहे किसी प्रकार के तथ्यों का संकलन के पश्चात् उनको सारणीकरण करना हो या एकत्रित तथ्यों का विश्लेषण करना हो या तथ्यों के विवेचन में कम्प्यूटर महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

वस्तुतः देखा जाय तो सामाजिक अनुसंधानों में कम्प्यूटर का प्रयोग शोध कार्य प्रारम्भ होने से लेकर शोधकार्य की पूर्णाहुति तक होता है। समाज कार्य अनुसंधान में कम्प्यूटर के प्रयोग की महत्ता अग्रलिखित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट की जा सकती है–

1– प्रतिवेदन टंकण में प्रयोग।

2– तथ्यों को वर्गीकृत करने में प्रयोग।

3– तथ्यों को सारणीकरण करने में प्रयोग।

4– तथ्यों का विश्लेषण एवं विवेचन करने में प्रयोग।

5– अंकगणितीय परिकलन में प्रयोग।

6– दो राशियों के मानों की तुलना करने में प्रयोग।

7– इण्टरनेट के माध्यम से साहित्यिक अभिलेख खोजने में प्रयोग।

8– साहित्यिक पुनरावलोकन में प्रयोग।

9– तथ्यों को संरक्षित रखने में प्रयोग।

10– पूर्व में किये गये अध्ययनों को पुनः अवलोकन में प्रयोग।

उपर्युक्त बिन्दुओं का विवेचन अग्रिलिखित प्रस्तुत है –

1– प्रतिवेदन टंकण में प्रयोग– किसी अनुसंधान का अन्तिम उद्देश्य उसको एक प्रतिवेदन प्रस्तुत कर साहित्यिक रूपरेखा प्रस्तुत करना होता है। अनुसंधानों के प्रतिवेदनों को रूपरेखा प्रस्तुत करने के लिए आधुनिक समय में कम्प्यूटर अथवा संगणक का प्रयोग बहुतायत हो रहा है। वास्तव में कम्प्यूटर के आने के बाद पूर्व में हस्तलिखित अथवा टाइपराइटर द्वारा अभिलेखन वर्तमान में लगभग मृत प्राय हो चुके हैं। इसका वास्तविक श्रेय संगणक अथवा कम्प्यूटर को ही जाता है। वास्तव में कम्प्यूटर एक ऐसी युक्ति है जिसके माध्यम से टंकण का कार्य आसानी से किया जा सकता है तथा जिसमें गलतियों की

सम्भावना को प्रत्यक्षतः दूर किया जा सकता है। अतः प्रतिवेदन टंकण में कम्प्यूटर अथवा संगणक का प्रयोग किया जा रहा है।

2– तथ्यों को वर्गीकृत करने में प्रयोग– अनुसंधान के उपरान्त तथ्यों को एक सुव्यवस्थित ढंग से रूपरेखा प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि उनको वर्गीकृत किया जाये। तथ्यों के वर्गीकरण में कम्प्यूटर का प्रयोग अत्यधिक मात्रा में होने लगा है। वास्तव में देखा जाए तो तथ्यों को जब तक वर्गीकृत नहीं किया जाता है, तब तक वे बिखरे हुए एवं मृत प्राय होते हैं। जब इनका वर्गीकरण किया जाता है तो इनका वास्तविक विवेचन किया जा सकता है। अतः तथ्यों को वर्गीकृत करने में कम्प्यूटर बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3– तथ्यों को सारणीकरण करने में प्रयोग– सारणीकरण ऐसी प्रविधि है जिसमें अत्यधिक संख्याओं को प्रतिशत अथवा अन्य रूपों में प्रस्तुत किया जा सकता है। इस कार्य के लिए कम्प्यूटर की सहायता ली जा सकती है, जिसमें तथ्यों को उचित क्रम में सजाने के लिए कम्प्यूटर द्वारा सारणियों का निर्माण किया जा सकता है जिसमें उन तथ्यों को रखकर उनका उचित विश्लेषण एवं निष्कर्ष प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि तथ्यों को सारणीकरण करने में कम्प्यूटर अथवा संगणक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

4– तथ्यों का विश्लेषण एवं विवेचन करने में प्रयोग–

किसी भी अनुसंधान का अंतिम लक्ष्य प्राप्त तथ्यों से निष्कर्षों को निकालना होता है। ऐसा इसलिये आवश्यक है कि यदि अनुसंधान किये जाये और उनका वास्तविक निष्कर्ष न प्राप्त हो तो अनुसंधान की उपयोगिता का कोई महत्व नहीं रह पायेगा। अतः अनुसंधान का निष्कर्ष निकालने के लिए तथ्यों का विश्लेषण एवं विवेचन करना आवश्यक होता है। वास्तव में तथ्यों के विश्लेषण एवं विवेचन के लिए कम्प्यूटर की प्रणाली में एक ऐसी प्रविधि का विकास हुआ है जिसको एस.पी.एस.एस. के नाम से जानते हैं। इस प्रणाली के तहत अनुसंधानों के तथ्यों या आकड़ों को विभिन्न स्तरों पर प्रस्तुत किया जाता है तथा एस.पी. एस.एस प्रणाली उसका अपने आप विश्लेषण एवं विवेचन प्रस्तुत कर देती है। अतः देखा जाए तो विश्लेषण एवं विवेचन की प्रक्रिया इतनी आसानी से कोई मनुष्य नहीं कर सकता जिसको कम्प्यूटर की प्रणाली आसानी से प्रदान कर देती है। अतः तथ्यों के विश्लेषण एवं विवेचन में कम्प्यूटर अथवा संगणक का प्रयोग हो रहा है।

5– अंकगणितीय परिकलन में प्रयोग– अनुसंधान में प्राप्त तथ्यों को विभिन्न परीक्षणों में परखा जाता है जिसके आधार पर उनके सम्बन्धों की गणना प्रस्तुत की जाती है, जैसे–काई स्क्वायर टेस्ट, टी–टेस्ट एवं एफ टेस्ट। इन परीक्षणों के अंकगणितीय परिकलन में कम्प्यूटर अथवा संगणक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जो परिकलन आसानी से नहीं किये जा सकते हैं। उनका कम्प्यूटर आसानी से परिकलन कर परिणाम प्रस्तुत कर देता है।

अतः कम्प्यूटर अथवा संगणक का प्रयोग अंकगणितीय परिकलन में किया जाता है।

6– दो राशियों के मानों की तुलना करने में प्रयोग–

प्रायः अनुसंधान में तुलनात्मक विवरण भी प्रस्तुत करना होता है, जिसको कि विभिन्न तथ्यों के आधार पर निष्कर्षतः प्रस्तुत किया जा सकता है। कम्प्यूटर एक ऐसी प्रणाली है जो दो राशियों मानों की तुलना करने में सहायता प्रदान करती है तथा निष्कर्षों को आसानी से प्रस्तुत कर देती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि दो राश्यिों के मानों की तुलना करने में कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा सकता है।

7– इण्टरनेट के माध्यम से साहित्यिक अभिलेख खोजने में प्रयोग– वर्तमान समय में जहाँ पर ई–लाइब्रेरी तथा ई–डाक्यूमेन्टेशन का चलन अधिक है वहीं पर साहित्यिक अभिलेखों को खोजने में कम्प्यूटर का इण्टरनेट माध्यम अत्यन्त ही सहायक सिद्ध हो रहा है। वास्तव में अनुसंधानकर्ता जिन विषयों पर अपने अनुसंधान कर रहे होते हैं उनसे सम्बन्धित साहित्यिक अभिलेख उनको एक नई दिशा प्रदान करते हैं। वस्तुतः इण्टरनेट ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा कोई भी अनुसंधानकर्ता साहित्यिक अभिलेख खोज सकता है एवं उनकी सहायता अपने अनुसंधानों में ले सकता है।

अतः स्पष्टतः कहा जा सकता है कि कम्प्यूटर का प्रयोग साहित्यिक अभिलेख खोजने में किया जा सकता है।

8– साहित्यिक पुनरावलोकन में प्रयोग– किसी भी अनुसंधान को करने के पहले यदि उस अनुसंधान के विषय से सम्बन्धित तथ्य प्राप्त हो जाये तो अनुसंधान को एक नई दिशा प्राप्त हो सकती है। इसी परिप्रेक्ष्य में साहित्यिक पुनरावलोकन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके तहत पूर्व में हुए अनुसंधानों के बारे जानकारी प्राप्त की जाती है तथा उस जानकारी का उपकल्पना निर्माण एवं विभिन्न अन्य अनुसंधान से सम्बन्धित अभिलेखों में किया जाता है। कम्प्यूटर द्वारा पूर्व में हुए अनुसंधानों के बारे में

जानकारी प्राप्त की जा सकती है एवं उस जानकारी का उपयोग अनुसंधान कार्य में किया जा सकता है। अतः साहित्यिक पुनरावलोकन में संगणक का प्रयोग किया जा सकता है।

9–तथ्यों को संरक्षित रखने में प्रयोग– यदि अनुसंधान पूर्ण हो जाये तो उसको अभिलेख के रूप में संरक्षित रखना आवश्यक होता है, जिससे कि भविष्य में होने वाले अनुसंधानों में उनसे सहायता ली जा सके। तथ्यों को संरक्षित रखने में संगणक या कम्प्यूटर अपनी भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार तथ्यों को संरक्षित रखने में भी कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा सकता है।

10– पूर्व में किये गये अध्ययनों को पुनः अवलोकन में प्रयोग– पूर्व में किये गये अध्ययनों की जानकारी कम्प्यूटर के इण्टरनेट माध्यम से की जा सकती है एवं उनका अवलोकन कर अपने अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता सहायता ले सकता है। इस प्रकार पूर्व में किये गये अध्ययनों को पुनरावलोकन करने में कम्प्यूटर प्रयोग किया जा सकता है।

21.5 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में कम्प्यूटर के प्रयोग के बारे में जानकारी प्रदान की गयी है जिसमें कम्प्यूटर के अर्थ, कार्य प्रणाली एवं प्रयोग के बारे में प्रकाश डाला गया है। वास्तव में कम्प्यूटर को हिन्दी में संगणक के नाम जाना जाता है। अतः कम्प्यूटर एक गणना ही नहीं है बल्कि यह गणितीय तथा अंकगणितीय, सभी प्रकार की सूचनाओं को संसाधित करने का उपकरण है। कम्प्यूटर एक ऐसी इलैक्ट्रोनिक युक्ति है जो दिये गये निदेशन समूह के आधार पर सूचना को संसाधित करती है।

प्रस्तुत इकाई में कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली के बारे प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि इसमें निवेश, केन्द्रीय संसाधन एकक, वाह्य स्मृति तथा निर्गम प्रणाली के अन्तर्गत कार्य सम्पन्न किया जाता है। इकाई के अन्त में कम्प्यूटर के प्रयोग के बारे में प्रकाश डालते हुए बताया गया है कि इसका प्रयोग प्रतिवेदन टंकण, तथ्यों का वर्गीकरण एवं सारणीकरण, तथ्यों का विश्लेषण एवं विवेचन, अंकगणितीय परिकलन, दो राशियों के मानों की तुलना, इण्टरनेट के माध्यम से साहित्यिक अभिलेख खोजने में, साहित्यिक पुनरावलोकन एवं तथ्यों को संरक्षित रखने में किया जाता है।

21.6 पारिभाषिक शब्दावली

कम्प्यूटर अथवा संगणक– कम्प्यूटर एक ऐसी इलैक्ट्रोनिक युक्ति है जो दिये गये निदेशन समूह के आधार पर सूचना को संसाधित करती है। इस निदेशन समूह को प्रोग्राम कहते हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु

1– कम्प्यूटर का अर्थ लिखिये।

2– कम्प्यूटर के प्रमुख तकनीकी कार्यों के बारे में बताइये।

3– गणितीय एवंअंक गणितीय परिकलन में कम्प्यूटर किस प्रकार सहायक हो सकता है।

4– कम्प्यूटर के किन्ही तीन प्रयोगों के बारे में लिखिये।

विस्तृत–

1– कम्प्यूटर का अर्थ लिखते हुए इसके कार्यप्रणाली की चर्चा की कीजिए।

2– समाज कार्य अनुसंधानों में कम्प्यूटर के प्रयोग पर एक निबन्ध लिखिये।

21.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1. **डब्ल्यू.डब्ल्यू.डब्ल्यू. गूगल.को.इन**

खण्ड–चतुर्थ
सांख्यिकी प्रयोग

इकाई : 22 सह सम्बन्ध के माप

22.0 इकाई का उद्देश्य

22.1 परिचय

22.2 सह–सम्बन्ध की परिभाषा एवं विशेषतायें

22.21 सह सम्बन्ध के प्रकार

22.22 सह सम्बन्ध माप करने की विधियां

22.23 कार्ल पियर्सन का सह सम्बन्ध का गुणांक

22.24 कार्ल पियर्सन के सह सम्बन्ध की गणना

22.3 सार–संक्षेप

22.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न, लघु, विस्तृत

22.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

22.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय शोधार्थियों प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य सह सम्बन्धों के माप के बारे में आप लोगों को जानकारी प्रदान करना है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– सह सम्बन्ध की परिभाषा के बारे में जान सकेंगे।

2– सह–सम्बन्ध के प्रकारों के बारे में लिख सकेंगे।

3– सह–सम्बन्ध माप करने की विधियों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– कार्ल पियर्सन का सह–सम्बन्ध का गुणांक ज्ञात कर सकेंगे।

5– कार्ल पियर्सन के सह–सम्बन्ध की गणना कर सकेंगे।

22.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई में सह–सम्बन्ध के माप के बारे में प्रकाश डाला गया है। पूर्व की इकाईयों में आपने जिन संख्यिकीय गणनाओं का अध्ययन किया है, वे केवल एक चर से सम्बन्धित विभिन्न मूल्यों के विश्लेषण तक सीमित हैं। कभी–कभी ऐसे विश्लेषण करना भी आवश्यक हो जाता है जब विभिन्न चर समंकों में भी आपसी सह–सम्बन्ध होता है, इस दृष्टिकोण से हम दो चर समंकों अथवा पदमालाओं अथवा श्रेणियों के बीच पाई जाने वाली पारस्परिक निर्भरता या सम्बन्धता का अध्ययन जिस विधि से करते हैं, उसे 'सह–सम्बन्ध' कहते हैं।

सह–सम्बन्ध से मतलब दो समंक श्रेणियों या पदमालाओं में किसी भी प्रकार के आपसी सम्बन्ध से होता है। व्यावहारिक रूप में हम अनेक अवसरों पर देखते हैं कि दो तथ्यों में आपस में सम्बन्ध होता है, जैसे–यदि पिता की ऊँचाई ज्यादा है तो तो पुत्र की भी ज्यादा है, जब मार्केट में किसी विशेष वस्तु की मांग बढ़ती है तो क्रमशः उसके विक्रय मूल्य में भी बढ़ोत्तरी होती जाती है, यदि किसी क्षेत्र विशेष में वर्षा अच्छी एवं समय पर हुई है तो वहाँ फसल भी अच्छी होगी आदि। इसी प्रकार यदि एक पदमाला या समंक श्रेणी में हुए परिवर्तन का प्रभाव दूसरी पदमाला या समंक श्रेणी में हुए परिवर्तन का प्रभाव दूसरी पदमाला या समंक श्रेणी पर पड़ता है तथा दोनों पदमालाओं या समंक श्रेणी के बीच 'कार्य–कारण सम्बन्ध' है, तो हम कहेंगे कि दोनों के मध्य सह–सम्बन्ध है।

प्रस्तुत इकाई सह–सम्बन्ध में की परिभाषाएं एवं विशेषताएं, सह–सम्बन्ध मापने की विधियां तथा कार्ल पियर्सन के सह–सम्बन्ध के बारे में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। यह इकाई सह–सम्बन्ध मापन में आापके ज्ञान में वृद्धि करायेगी।

22.2 सह–सम्बन्ध की परिभाषा एवं विशेषतायें

प्रो. डी.एन. एलहांस– 'सह–सम्बन्ध अथवा सहविचरण दो चरों में ऐसे सम्बन्ध का संकेत करता है जिसके अन्तर्गत किसी एक चर के मूल्यों में परिवर्तन होने पर दूसरे चर मूल्यों में भी परिवर्तन हो जाता है।'

डॉ ए.एल. बॉउले : 'जब दो समंक (परिणाम) इस प्रकार सम्बन्धित हों कि एक में कुछ परिवर्तन होने पर दूसरे में भी वही परिवर्तन सहानुभूति में पाया जाए और इस प्रकार में घट–बढ़ होने पर दूसरे में भी घट–बढ़ हो और यह घट–बढ़ एक में

जितनी हो, उतनी ही दूसरे में भी होती हो, तो वे सह–सम्बन्धित समझे जाते हैं।'

प्रो. डब्ल्यू आई, किंग : 'दो पदमालाओं या समूहों के बीच कार्य–कारण सम्बन्ध को ही सह–सम्बन्ध कहते हैं।'

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम सह–सम्बन्ध के निम्न प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट कर सकते हैं–

प्रमुख विशेषताएँ–

1– सह–सम्बन्ध दो समंक श्रेणियों या पदमालाओं के बीच पारस्परिक निर्भरता को सांख्यिकीय स्वरूप प्रदान करता है।

2– यदि दो समंक श्रेणियाँ या पदमालाएँ सह–सम्बन्धित हैं, तो एक समंक श्रेणी या पदमाला में परिवर्तन से दूसरी समंक श्रेणी या पदमाला में भी परिवर्तन होगा।

3– दो समंक श्रेणियों या पदमालाओं के बीच होने वाला परिवर्तन एक ही दिशा में हो सकता है अथवा वह विपरीत दिशा में भी हो सकता है।

4– सह–सम्बन्ध दो समंक श्रेणियों या पदमालाओं के बीच पाये जाने वाले पारस्परिक प्रभाव एवं उस प्रभाव की सीमा को स्पष्ट करता है, यह परिवर्तन के कारण की व्याख्या नहीं करता।

5– सह सम्बन्ध दो समंक श्रेणियों या पदमालाओं के बीच पाये जाने वाले पारस्परिक प्रभाव एवं उस प्रभाव की सीमा को स्पष्ट करता है, यह परिवर्तन के कारण की व्याख्या नहीं करता।

22.21 सह–सम्बन्ध के प्रकार

सह सम्बन्ध के प्रकारों का उल्लेख हम निम्नलिखित दो तरह से कर सकते हैं–

1– धनात्मक तथा ऋणात्मक सह–सम्बन्ध –प्रोफेसर कटारिया के अनुसार, 'जब दो चरों या पद–श्रेणियों का परिवर्तन एक ही दिशा में होता है तो वह प्रत्यक्ष या धनात्मक सह–सम्बन्ध होता है। उदाहरण के लिये यदि किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि के साथ–साथ उस वस्तु की पूर्ति में भी वृद्धि होती है तो उसे, उसके बीच के सम्बन्ध में धनात्मक सह–सम्बन्ध कहते हैं।' इसके विपरीत यदि दो चरों के मूल्य विपरीत दिशाओं में घटते–बढ़ते हैं, जैसे किसी चर के मूल्य में वृद्धि का सम्बन्ध दूसरे चर के मूल्य में कमी से ही और उसी प्रकार किसी चर के मूल्य में कमी

का सम्बन्ध दूसरे चर के मूल्य में वृद्धि से स्थापित होता है तो सह–सम्बन्ध ऋणात्मक होता है।

उदाहरण के लिये, वस्तु के मूल्य में वृद्धि के साथ–साथ उसकी मांग में कमी होती है। इस प्रकार मांग और मूल्य में ऋणात्मक सह–सम्बन्ध होता है।

2– रेखीय और अरेखीय सह–सम्बन्ध– प्रोफेसर, एलहान्स ने इसके अर्थ को समझाते हैं कि, 'जब दो चरों के मूल्यों में विचरण स्थिर अनुपात में होता है, तो उसे रेखीय सह–सम्बन्ध कहा जाता है। अर्थात्, यदि प्रत्येक बार मूल्य में दस प्रतिशत वृद्धि हो तो पूर्ति में 20 प्रतिशत वृद्धि रेखीय सम्बन्ध का प्रमाण देगी। इसे एक सीधी रेखा के रूप में दिखाया जा सकता है। आर्थिक व सामाजिक आंकड़ों में ऐसे सम्बन्ध में बहुत ही कम उत्पन्न होते हैं, विशेषकर सामाजिक तथ्यों में दो चरों में परिवर्तन का अनुपात साधारणतया स्थित नहीं होता है। अतः उनके परिवर्तन को एक सीधी रेखा के द्वारा दिखाया नहीं जा सकता। इस प्रकार के सह–सम्बन्ध को वक्ररेखीय या अरेखीय सह–सम्बन्ध कहते हैं। **प्रोफेसर, एलहान्स** के शब्दों में, रेखीय सह सम्बन्ध उसे कहते हैं जहाँ सम्बन्धित चरों में विचरणों के अनुपात स्थिर होते हैं और अरेखीय सह–सम्बन्ध वे हैं जहाँ ऐसे अनुपात घटते–बढ़ते रहते हैं।

22.22 सह–सम्बन्ध माप करने की विधियाँ

दो या अधिक श्रेणियों में सह–सम्बन्ध निम्न विधियों द्वारा मालूम किया जा सकता है–

1– प्रकीर्ण आरेख

2– सह–सम्बन्ध बिन्दु–रेखीय चित्र

3– सह–सम्बन्ध का गुणांक

1– प्रकीर्ण आरेख– इसमें सह–सम्बन्ध चित्रों की सहायता से प्रदर्शित किया जाता है परन्तु इनमें सह–सम्बन्ध संख्यात्मक रूप में न होकर केवल अनुमान के रूप में प्राप्त होता है। इसके बनाने की विधि ठीक बिन्दु–रेखीय विधि की भांति है। इसके लिये एक ओर x श्रेणी और दूसरी ओर y श्रेणी का पैमाना मान लिया जाता है। इसके बाद x श्रेणी के प्रत्येक पद–मूल्य और y श्रेणी के प्रत्येक पद–मूल्य को बिन्दुओं के रूप में दिखाया जाता है। एक पद के दोनों मूल्यों (x तथा y श्रेणी) के लिये

एक–एक बिन्दु होता है। इस प्रकार जितने पदयुग्म होते हैं उतने ही बिन्दु हो जाते हैं।

2– सह–सम्बन्ध बिन्दु–रेखीय चित्र– सह–सम्बन्ध के विषय में जानने के लिय बिन्दु–रेखीय चित्रों का भी प्रयोग किया जाता है। इस विधि में दोनों पद–श्रेणयों (x तथा y) की कोटि अथवा खड़ी रेखा पर तथा संख्या, समय अथवा स्थान को पड़ी रेखा पर अंकित किया जाता है। यदि दोनों श्रेणियों के बिन्दु रेखा एक ही दिशा में आगे बढ़ते हैं तो धनात्मक सह–सम्बन्ध होगा। इसके विपरीत यदि दोनों पद–श्रेणियों के बिन्दु–रेखा दो विपरीत दिशाओं में जाते हैं तो ऋणात्मक सह–सम्बन्ध होता है। यदि दोनों श्रेणियों में अधिक अन्तर न हो तो दोनों बिन्दु–रेखायें एक ही पैमाने और आधार–रेखा पर खींची जा सकती हैं। यदि उनमें बहुत अधिक अन्तर हो तो दोनों के लिये अलग–अलग पैमानों का प्रयोग आवश्यक है।

3– सह–सम्बन्ध का गुणांक– दो चरों के बीच के सह–सम्बन्ध का परिणाम अथवा विस्तार जानने के लिये सह–सम्बन्ध के गुणांक की गणना की जाती है। सह–सम्बन्ध के गुणांक की गणना कई विधियों के द्वारा की जा सकती है, पर उनमें **कार्ल पियर्सन** का सूत्र सबसे अच्छा और लोकप्रिय है। यहाँ हम उसी के विषय में विवेचना करेंगे।

22.23 कार्ल पियर्सन का सह–सम्बन्ध का गुणांक

दो समंक मालाओं के बीच सह–सम्बन्ध का परिणाम मालूम करने के लिये प्रसिद्ध जीवशास्त्री एवं सांख्यिकीय श्री कार्ल पियर्सन द्वारा प्रस्तुत सूत्र सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इससे सह–सम्बन्ध की दिशा व मात्रा का केवल अनुमान हीं नहीं अपितु उनका अंकात्मक माप भी प्राप्त हो जाता है। कार्ल पियर्सन के सूत्र के अनुसार दो चरों का सह–सम्बन्ध गुणांक उनके माध्यों से लिये गये विचलनों के गुणनफल के योग को निरीक्षण के युग्मों की संख्या और उनके मानक विचलनों के गुणनफल से विभाजित करके प्राप्त होने वाली संख्या है। आगे की विवेचना से यह बात स्पष्ट हो जायेगी।

मुख्य लक्षण– श्री कार्ल पियर्सन के सह–सम्बन्ध गुणांक के निम्नलिखित मुख्य लक्षणों का उल्लेख **प्रो. के. एन. नागर** ने किया है–

1– दिशा का आभास– श्री कार्ल पियर्सन के सह–सम्बन्ध–गुणांक से सह सम्बन्ध की दिशा ज्ञात हो जाती है। गुणांक में धन का चिन्ह (+) धनात्मक सह–सम्बन्ध का द्योतक है

और ऋण का चिन्ह (–) ऋणात्मक सह–सम्बन्ध प्रदर्शित करता है।

2– मात्रा और सीमायें– इससे सह–सम्बन्ध की मात्रा का अंकात्मक माप प्राप्त हो जाता है। इस गुणांक का माप सदा +1 और –1 के बीच रहता है। +1 होने पर पूर्ण धनात्मक और –1 होने पर पूर्ण ऋणात्मक सह–सम्बन्ध पाया जाता है। यदि गुणांक 0 से 1 की ओर बढ़ता जाता है, सह–सम्बन्ध की मात्रा भी बढ़ती जाती है।

3– आर्दर्श माप– यह गुणांक सह सम्बन्ध का आदर्श माप हैं क्योंकि यह समान्तर माध्य और मानक विचलन पर आधारित है जो अनेक बीजगणितीय गुणों के कारण उच्चतर सांख्यिकीय रीतियों के लिये सर्वोपयुक्त माप है।

4– सह–विचरण की मात्रा– इस गुणांक को ज्ञात करने के लिये प्रत्येक समंकमाला में सामान्तर माध्य से विचलनों की मात्रा ज्ञात करनी पड़ती है फिर दोनों मालाओं के तत्सम्बन्धी विचलनों को गुणा करके गुणनफलों के जोड़ को मूल्यों की संख्या से भाग दिया जाता है। इस प्रकार दोनों श्रेणियों के सह–विचरण की मात्रा ज्ञात हो जाती है।

22.24 कार्य पियर्सन के सह–सम्बन्ध की गणना

श्री कार्ल पिर्यसन के सूत्रों के अनुसार सह–सम्बन्ध का गुणांक निकालने के लिये प्रत्यक्ष विधि तथा संक्षिप्त विधि का उपयोग किया जाता है। इन विधियों में अलग–अलग सूत्रों को काम में लाया जाता है जिसको कि हम निम्न रूप में समझा सकते हैं–

मााना दो समंक मालायें *x* और *y* दी गई हैं तो पियर्सन का सह–सम्बन्ध गुणांक *(r)* का सूत्र –

$$\gamma = \frac{\sum dxdy}{N\sigma x\sigma y} \qquad \text{..............(i)}$$

यहाँ $\gamma =$ सह–सम्बन्ध गुणांक

dx = x माला (Series) के किसी प्राप्तांक की उस माला (Series) के माध्य से विचलन (*x–Mx*)

dy = y माला (Series) के किसी प्राप्तांक की उस माला (Series) के माध्य से विचलन (*y–My*)

N= समंक माला में पदों की संख्या

σx और σy = *x* माला (Series) व *y* माला (Series) में क्रमशः मानक विचलन (Standd Devition)

सूत्र (i) में σx और σy का मान रखकर इसे और अधिक सरल किया जा सकता है

$$\sigma x = \sqrt{\frac{\Sigma dx^2}{N}}$$

$$\sigma y = \sqrt{\frac{\sum dy^2}{N}}$$

मान रखने पर,

$$\gamma = \frac{\sum dxdy}{N\sqrt{\frac{\sum dx^2}{N}}\sqrt{\frac{\sum dy^2}{N}}}$$

$$= \frac{\Sigma ddy}{\sqrt{\Sigma dx^2 \Sigma\, dy^2}} \qquad \text{.................................(ii)}$$

कार्ल पियर्सन के सूत्र (i) एवं सूत्र (ii) द्वारा सह–सम्बन्ध गुणांक निकालने को प्रत्यक्ष विधि द्वारा सह–सम्बन्ध गुणांक निकालना कहा जाता है। इसके लिये अन्य विधि का भी प्रयोग किया जाता है।

अन्य विधि का सूत्र–

दूसरी विधि में हमें चर मालाओं (*x*-Series एवं *y*-series) के मध्य (Mean) निकालने की आवश्यकता नहीं होती है। सूत्र निम्नलिखित प्रकार है।

प्रत्यक्ष विधि का सूत्र

सह सम्बन्ध गुणांक $(\gamma) = \frac{\sum dxdy}{N\sigma x\sigma y}$

हम जानते हैं कि

$$dx = x = Mx$$

जहाँ *Mx = x Series* का माध्य

My = y Series का माध्य

मान रखने पर

$$\sum dxdy = \sum(x - Mx)(y - My)$$

$$= \sum(xy - yMx - xMy + MxMy)$$

$$= \sum xy - \sum yMx - \sum xMy + \sum MxMy$$

$$= \sum xy - \sum y\frac{\sum x}{N} - \sum x\frac{\sum y}{N} + NMxMy$$

क्योंकि

$$Mx = \frac{\sum x}{N}$$

$$My = \frac{\sum y}{N}$$

$$\sum Mx - My = N \quad Mx\ My$$

$$= \sum xy - \sum y\frac{\sum x}{N} - \sum x\frac{\sum y}{N} + N\frac{\sum x}{N}\frac{\sum y}{N}$$

$$= \sum xy - \frac{\sum x \sum y}{N}$$

इसी प्रकार,

$$\sigma x = \sqrt{\frac{\sum x^2}{N} - \left(\frac{\sum x}{N}\right)^2}$$

$$\sigma y = \sqrt{\frac{\sum y^2}{N} - \left(\frac{\sum y}{N}\right)^2}$$

सूत्र में मान रखने पर,

$$\gamma = \frac{\sum xy - \frac{\sum x \sum y}{N}}{N\sqrt{\frac{\sum x^2}{N} - \left(\frac{\sum x}{N}\right)^2}\sqrt{\frac{\sum y^2}{N} - \left(\frac{\sum y}{N}\right)^2}} \quad \text{....................} \quad \text{(iii)}$$

इस सूत्र को और अधिक सरल करने पर,

$$\gamma = \frac{N\sum xy - \sum x \sum y}{\sqrt{N\sum x^2 - \left(\sum x\right)^2}\sqrt{N\sum y^2 - \left(\sum y\right)^2}} \quad \text{................................} \quad \text{(iv)}$$

प्रत्यक्ष विधि से सह–सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने के लिये सूत्र (ii) का ही अधिक प्रयोग किया जाता है तथा दूसरी विधि से सह–सम्बन्ध गुणांक निकालने में साधारणतया सूत्र (iv) का प्रयोग होता है। सूत्र (i) व (ii) से सह सम्बन्ध गुणांक उसी समय ज्ञात करना चाहिये जबकि समस्या में माध्य पूर्ण संख्या हो

यदि बिना माध्य का प्रयोग किये सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करना हो तो सूत्र (iii) या सूत्र (iv) का प्रयोग किया जाता है।

अब हम एक उदाहरण लेकर सूत्र (i) एवं सूत्र (ii) के प्रयोग को स्पष्ट करेंगे।

प्रत्यक्ष विधि

उदाहरण 1– 10 छात्रों के समाज कार्य व मनोविज्ञान के अंक दिये हैं। कार्ल पियर्सन विधि द्वारा इनके बीच सह–सम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिये।

समाज कार्य – 26,, 24, 20, 20, 16, 12, 12, 10, 6, 4

मनोविज्ञान – 22, 28, 22, 14, 18, 22, 6, 14, 12, 2

प्रत्यक्ष विधि द्वारा हल –

सारणी संख्या–1

S.n.	समाज कार्य (*x*)	मनोविज्ञान (**y**)	माध्य (*Mx*)= 15 से x का विचलन (*dx*) (*x-Mx*)	माध्य (*My*)=16 से y का विचलन (*dy*) (*y-My*)	dx^2	dy^2	*dxdy*
1	26	22	+11	+6	121	36	66
2	24	28	+9	+12	81	144	108
3	20	22	+5	+6	25	36	30
4	20	14	+5	–2	25	4	–10
5	16	18	+1	+2	1	4	2
6	12	22	–3	+6	9	36	–18
7	12	6	–3	–10	9	100	30
8	10	14	–5	–2	25	4	10
9	6	12	–9	–4	81	16	36
10	4	2	–11	–14	121	196	154
	$\sum x$ = 150	$\sum y$ =160			$\sum dx^2$ =498	$\sum dy^2$ =576	$\sum dxdy$ =408

माध्य $Mx = \frac{150}{10}$

= 15

माध्य $(My) = \frac{160}{10}$

= 16

कार्ल पियर्सन का सह सम्बन्ध गुणांक का सूत्र

$$\sigma = \frac{\sum dxdy}{\sqrt{\sum dx^2}\sqrt{\sum dy^2}}$$

जहाँ $\sum dxdy = 408$

$\sum dx^2 = 498$

$\sum dy^2 = 576$

मान रखने पर

$$r = \frac{408}{\sqrt{498}\sqrt{576}}$$

$$r = \frac{408}{22.31 \times 24}$$

$$= \frac{408}{535.44}$$

= +0.76 लगभग

इस प्रश्न को सूत्र $r = \frac{\sum dxdy}{N\sigma x\sigma y}$ से निम्नलिखित प्रकार

हल करेंगे।

यहाँ

$$\sigma\sqrt{\frac{\Sigma dx2}{N}} = \sqrt{\frac{498}{10}}$$

$$\sigma x = 7.055$$

$$\sigma y = \sqrt{\frac{\sum dy^2}{N}}$$

$$= \sqrt{\frac{576}{10}}$$

$\sigma y = 7.5$,

$\Sigma dxdy = 408$

इसलिये $r = \frac{408}{10 \times 7.05 \times 7.5}$

= .76 लगभग

सूत्र (iii) व (iv) का प्रयोग निम्नलिखित उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है।

P	S	P	S
20	5	10	2.5
4	1	14	3.5
12	3	6	1.5
16	4	8	2.0
2	0.5	18	4.5

उदाहरण 2 – 10 वर्गों के Parameter एव Sides दी गयी हैं। इनके बीच सह–सम्बन्ध गुणांक की गणना करो।

हल–

$$r = \frac{N\sum xy - \sum x \sum y}{\sqrt{\sum x^2 - (\sum x)^2}\sqrt{\sum y^2} - (\sum y)^2}$$ के प्रयोग में हमें माध्य (Mean) निकालने की आवश्यकता नहीं होती है। अतः इसके लिए सारणी निम्न होगी।

सारणी संख्या–2

S.N.	Parameter Sides				
	x	*y*	x^2	y^2	*xy*
1	20	5	400	25	100
2	4	1	16	1	4
3	12	3	144	9	36
4	16	4	256	16	64
5	2	0.5	4	0.25	1.0
6	10	2.5	100	6.25	25
7	14	3.5	196	12.25	49.0
8	6	1.5	36	2.25	9.0
9	8	2	64	4	16
10	18	4.5	324	20.25	81.0
	$\sum x$ =110	$\sum y$ =27.5	$\sum x^2$ =1540	$\sum y^2$ =96.25	$\sum xy$ = 385

$$r = \frac{N\sum xy - \sum x \sum y}{\sqrt{N\sum x^2 - (\sum x)^2}\sqrt{N\sum y^2 - (\sum y)^2}}$$

सारणी से

$$N = 10, \sum xy = 385, \sum x = 110, \sum y = 27.5$$

$$\sum x^2 = 1540, \sum y^2 = 96.25$$

सूत्र में मान रखने पर

$$r = \frac{10 \times 385 - 110 \times 27.5}{\sqrt{10 \times 1540 - (110)^2}\sqrt{10 \times 96.25 - (27.5)^2}}$$

$$r = \frac{3850 - 3025}{\sqrt{15400 - 12100}\sqrt{962.50 - 756.25}}$$

$$= \frac{825}{\sqrt{3300}\sqrt{206.25}}$$ (लगभग)

इसी प्रकार सूत्र (iii) के प्रयोग से भी यही परिणाम प्राप्त हुआ।

लघु विधि–कार्ल पियर्सन सह सम्बन्ध गुणांक की गणना जब हम प्रत्यक्ष विधि के द्वारा करते हैं तो इसमे विचलनों की गणना हम समान्तर माध्य से करते हैं। परन्तु समान्तर माध्य के माध्यम से सहसम्बन्ध गुणांक की गणना करने में उस समय कठिनाई उत्पन्न हो जाती है जब समान्तर माध्य पूर्णांक में न होकर दशमलव में होता है, ऐसी स्थिति में विचलन तथा विचलनों का वर्ग निकालने में व्यर्थ का समय बर्बाद होता है तथा लम्बी प्रक्रिया अपनानी पड़ती है। इसी कठिनाई को दूर करने के लिए लघु विधि अपनाई जाती है। इसमें विचलन की गणना वास्तविक माध्य से न होकर कल्पित माध्य से की जाती है ।

लघु विधि से सह सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने के लिए हम निम्न सूत्रों का उपयोग करते हैं–

$$= \frac{\sum dxdy - \frac{(\sum dx).(\sum dy)}{N}}{\sqrt{\sum d^2x - \frac{(\sum dx)^2}{N}}\sqrt{\sum d^2y - \frac{(\sum dy)^2}{N}}}$$

Where N tends to n, then

OR $$r = \frac{n.\sum dx.dy - (\sum dx).(\sum dy)}{\sqrt{n.\sum d^2x - (\sum dx)^2}\sqrt{n.\sum d^2y - (\sum dy)^2}}$$

OR $r = \frac{\Sigma dxd - n(\overline{x} - ax)(\overline{y} - ay)}{n\sigma x\sigma y}$

यहाँ,

r = सह सम्बन्ध गुणांक

dx = X श्रेणी का कल्पित माध्य से निकाला गया विचलन

dy = Y श्रेणी का कल्पित माध्य से निकाला गया विचलन

n = पदों की संख्या

$\sum$ =योग

$\overline{X}$ = X श्रेणी का वास्तविक समानान्तर माध्य

$\overline{Y}$ = y श्रेणी का वास्तविक समानान्तर माध्य

ax = X श्रेणी का कल्पित माध्य

ay = Y श्रेणी का कल्पित माध्य

σ x = X श्रेणी का प्रमाप विचलन

σ y = Y श्रेणी का प्रमाप विचलन

उदाहरण – 03 निम्न सारणी से कार्ल पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए।

मूल्य (000 Rs)	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
मांग (Kgs)	10	9	8	7	6	5	4	3	2	1

सारणी संख्या–3

X- Series			Y Series			
Price ('000Rs.)	dx = x-ax ax =5	d^2x	Demand (Kgs.)	dy = y-ay ay = 5	d^2y	dx.dy
1	-4	16	10	+5	25	-20
2	-3	9	9	+4	16	-12
3	-2	4	8	+3	9	-6
4	-1	1	7	+2	4	-2
5	0	0	6	+1	1	0
6	+1	1	5	0	0	0
7	+2	4	4	-1	1	-2
8	+3	9	3	-2	4	-6
9	+4	16	2	-3	9	-12
10	+5	25	1	-4	16	-20
$\sum dx=+5$		$\sum d^2x=+85$		$\sum dy=+5$	$\sum d^2y=+85$	$\sum dx\,dy = -80$

$$r = \frac{\sum dxdy - \frac{(\sum dx)(\sum dy)}{n}}{\sqrt{\sum d^2x - \frac{(\sum dx)^2}{n}}\sqrt{\sum d^2y - \frac{(\sum dy)^2}{n}}}$$

$$r = \frac{(-80) - \frac{5\times 5}{10}}{\sqrt{85 - \frac{(5)^2}{10}}\sqrt{85 - \frac{(5)^2}{10}}}$$

$$r = \frac{(-80) - \frac{25}{10}}{\sqrt{85 - \frac{25}{10}}\sqrt{85 - \frac{25}{10}}}$$

$$r = \frac{-800 - 25}{850 - 25}$$

$$r = -1$$

अतः यहाँ पर मूल्य एवं मांग के बीच पूर्ण ऋणात्मक सहसम्बन्ध है।

सह–सम्बन्ध गुणांक का निर्वाचन

यह जानने के लिये कि सह–सम्बन्ध गुणांक सार्थक है। अथवा नहीं निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए। प्रो० एलहान्स ने निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखने का सुझाव दिया है–

अ) यदि सह–सम्बन्ध गुणांक अपनी सम्भाव्य त्रुटि से कम है तो सह–सम्बन्ध बिल्कुल ही सार्थक न कहा जायेगा।

ब) यदि सह–सम्बन्ध गुणांक सम्भाव्य त्रुटि के 6 गुने से अधिक है तो यह सार्थक समझा जाता है।

स) साधारणतः यदि सम्भाव्य त्रुटि अधिक नहीं है और सह–सम्बन्ध गुणांक 0.5 या उससे अधिक हो तो यह सार्थक माना जाता है।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट है कि सह–सम्बन्ध गुणांक का निर्वाचन करने के लिए यह आवश्यक है कि सम्भाव्य त्रुटि या विभ्रम को पहले ज्ञात कर लिया जाए। सम्भाव्य विभ्रम ज्ञात करने का निम्न सूत्र है।

P.E. of $\gamma = 0.6745 \frac{1-(\gamma)^2}{\sqrt{n}}$

जहाँ γ = सह–सम्बन्ध–गुणांक

n = अवलोकनों के युग्मों की संख्या

यदि उपरोक्त बातों का ध्यान रखा जाए तो यह आशा की जा सकती है कि हमें यह पता लग सकता है। कि सह–सम्बन्ध गुणांक सार्थक करना है। अथवा नहीं और उसका सार्थक होना किसी भी वैज्ञानिक विवेचना के लिए अति आवश्यक है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. सह सम्बन्ध अर्थ लिखिए।

....

....

....
....
....
....
....
....
....
....

2. कार्ल पियर्सन के सह सम्बन्ध गुणांक के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

22.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में सह–सम्बन्ध के माप के बारे में प्रकाश डाला गया है, जिसमें बताया गया है कि सह–सम्बन्ध से तात्पर्य दो समंक श्रेणियों या पदमालाओं में किसी भी प्रकार के आपसी सम्बन्ध हो। यदि एक पदमाला या समंक श्रेणी में हुये परिवर्तन का प्रभाव दूसरी पदमाला या समंक श्रेणी पर है तथा दोनों पदमालाओं या समंक श्रेणी के बीच कार्यकारण सम्बन्ध होते हैं तो हम कहेंगे कि दोनों के मध्य सह–सम्बन्ध है। इसी इकाई में सह–सम्बन्ध की विशेषताओं के बारे में भी चर्चा की गयी है। सह–सम्बन्ध के प्रकारों में धनात्मक तथा ऋणात्मक सह–सम्बन्ध एवं रेखीय व अरेखीय सह–सम्बन्ध के बारे में भी प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत इकाई में सह–सम्बन्ध मापने की विधियों के बारे में वर्णन किया गया है। जिसमें कार्ल पियर्सन के सह–सम्बन्ध गुणांक की गणना कैसे की जाती है, के बारे में बताया गया है। इसमें कार्ल पियर्सन के प्रत्येक्ष विधि एवं लघु विधि के बारे में

प्रकाश डाला गया है। इकाई के अन्त में सह–सम्बन्ध गुणांक के निर्वचन के बारे में भी चर्चा की गयी है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के अनुसंधान कार्यों में सह–सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता प्रदान करेगी।

22.4 पारिभाषिक शब्दावली

सह–सम्बन्ध– जब दो या दो से अधिक पदमालायें या श्रेणियां सहानुभूति में परिवर्तित हों, जिसमें एक में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप दूसरे में भी परिवर्तन होता हो, तब वे पदमालाऐं सह–सम्बन्धित कहलाती है।

अभ्यास प्रश्न

लघु

1– सह–सम्बन्ध की परिभाषा लिखिए।

2– सह–सम्बन्ध की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।

3– ऋणात्मक सह–सम्बन्ध से आप क्या समझते हैं?

4– रेखीय सह–सम्बन्ध क्या है?

विस्तृत–

1– कार्ल पियर्सन के सह–सम्बन्ध की गणना कैसे करेंगे।

2– सह–सम्बन्ध की परिभाषा देते हुए इसको माप करने की विधियों के बारे में लिखिए।

22.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1. मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ, समाािजक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली वर्ष–2000, पेज–511–518
2. गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, प्रारिम्भक सामाजिक अनुसंधान (शोध), आर.बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष–2005 पेज–292–293, 314–317
3. ए. एल.बाउले, एलीमेण्ट्स आफ स्टेटिस्टिक्स, किंग, लन्दन, वर्ष, 1920
4. एलहांस, प्रो.,डी.एन., प्रिंसिपल आफ स्टेटिस्टिक्स, पेज–519
5. पिर्यसन, कार्ल, दि ग्रामर आफ साइंस, पेज–77

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

MASW-06

समाजिक शोध एवं सांख्यिकी

खण्ड—पंचम

शोध प्रतिवेदन

इकाई—23 341—348
शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा

इकाई—24 349—358
शोध प्रतिवेदन के प्रकार

इकाई—25 359—370
शोध प्रबंध की विषय वस्तु

इकाई—26 371—380
संदर्भ ग्रंथों का प्रयोग एवं प्रस्तुतिकरण

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश प्रयागराज

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति – प्रो० प्रो० के०एन० सिंह

विशेषज्ञ समिति

(1) प्रो० एस० त्रिपाठी, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु वि०वि० वाराणसी भूतपूर्व निदेशक, सुलभ इण्टरलेशनल, नई दिल्ली।

(2) प्रो० अमरनाथ सिंह विभागाध्यक्ष समाजकार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

(3) प्रो० अरविन्द जोशी, प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(4) डॉ० एम० एन० सिंह पूर्व निदेशक, समाजवि, वि उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

(5) डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता सामजकार्य विभाग वि० उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

परिमापक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष सामजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

सम्पादक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष समाजकार्य विभाग, लखनऊ।

समन्वयक

डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

लेखक

(1) डॉ० राजेश कुशवाहा, समाजकार्य विभाग, डॉ० भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

(2) डॉ० अलका वर्मा, समाजकार्य विभाग, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

सितम्बर, 2019 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2020

ISBN-

सर्वाधिक सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।
उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।
नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रकाशक – कुलसचिव, डॉ. अरूण कुमार गुप्ता उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 20019
मुद्रक – चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज (इलाहाबाद)

खण्ड–पंचम
शोध प्रतिवेदन

इकाई : 23 शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा

23.0 इकाई का उद्देश्य

23.1 परिचय

23.2 शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा

23.21 शोध प्रतिवेदन की भाषा एवं शैली

23.22 शोध प्रतिवेदन की कुछ कसौटियाँ

23.3 सार–संक्षेप

23.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न, लघु, विस्तृत

23.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

23.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय शोधार्थियों प्रस्तुत इकाई में शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा के बारे में प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1– शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2– शोध प्रतिवेदन की भाषा एवं शैली के बारे में प्रकाश डाल सकेंगे।

3– शोध प्रतिवेदन की कसौटियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

23.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा के बारे में वर्णन किया गया है। इस इकाई में शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि कोई भी अनुसंधान तभी वास्तविक आकार ले सकता है जब उसको एक

अस्थायी रूपरेख प्रदान की जाय । चूंकि कोई भी ज्ञान जो प्रयोग में नहीं लाया जाता निरर्थक होता है तथा क्योंकि इस ज्ञान के प्रयोग में लाए जाने के लिए इसका संचार आवश्यक होता है, इसीलिए प्रतिवेदन तैयार करने की आवश्यकता का अनुभव होता है। प्रतिवेदन का उद्देश्य पाठकों को अन्वेषित की गई समस्या, समस्या–समाधान के दौरान प्रयोग में लाए गये ढंगों, अनुसंधान के परिणामों तथा इन परिणामों से निकाले गए निष्कर्षों से अवगत कराना हैं। **अमेरिकन मार्केटिंग सोसाइटी** के मत में, प्रतिवेदन की तैयारी अनुसंधान का अंतिम चरण है तथा इसका उद्देश्य अभिरूचि रखने वाले व्यक्तियों को अध्ययन के सम्पूर्ण परिणाम से अधिक विस्तारपूर्वक और ऐसे व्यवस्थित ढंग से कि प्रत्येक पाठक आंकड़ों को समझने में समर्थ हो सके, अवगत कराना तथा स्वयं अपने लिए परिणामों की प्रामाणिकता को निर्धारित करना है।

प्रस्तुत इकाई में प्रत्यावेदन की रूपरेखा के अन्तर्गत प्रस्तावना, प्रतिवेदन का विषय, पूरक सामग्री, के बारे में प्रकाश डाला गया है। इकाई के अन्त शोध प्रतिवेदन की भाषा एवं शैली तथा प्रतिवेदन की कसौटियों के बारे में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

23.2 शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा

पार्टन ने प्रतिवेदन की निम्न रूपरेखा प्रस्तुत की है:

1– प्रस्तावना सम्बन्धी सामग्री –

अ) शीर्षक पृष्ठ

ब) संदर्भ सारिणी

स) उदाहरणों, सारिणियों एवं चार्टों की सूची

य) परिणामों का सारांश, सार अथवा संस्तुतियाँ

2– प्रतिवेदन का मजमून अथवा विषय

परिचय

1– उद्देश्य, समस्या का कथन एवं परिभाषा

2– विषय क्षेत्र–सर्वेक्षण का समय, स्थान एवं सामग्री

3– संगठन एवं कार्यरीति (यहां सामान्य विवरण होना चाहिए किन्तु विस्तृत विवरण परिशिष्टों में होना चाहिए)।

अ) प्रयोग में लाए गए ढंग एवं प्रविधियां।

ब) अनुसूचियां अथवा प्रश्नावलियां अथवा प्रयुक्त पत्रों की प्रतिलिपियां (इन्हें कभी–कभी परिशिष्टों में भी रखा जाता है)।

स) आवश्यक ऐतिहासिक अथवा तुलना योग्य सामग्री

परिणामों का विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण

1– तथ्यों का प्रतिवेदन–आँकड़ों, सारिणियों, रेखाचित्रों इत्यादि का प्रस्तुतीकरण।

2– आंकड़ों का विश्लेषण एवं विवेचन।

3– प्रस्तुत किए गए आंकड़ों पर आधारित निष्कर्ष एवं सम्भव संस्तुतियां

4– आवश्यक सामग्री का सूक्ष्म सारांश (यदि यह ऊपर एक में नहीं दिया गया है)।

3– पूरक सामग्री

अ) परिशिष्ट (इनमें प्रायः सर्वेक्षण में प्रयुक्त प्रतिदर्शन एवं अन्य प्रणालियों का विस्तृत प्रतिवेदन होता है)।

ब) ग्रन्थ–सूची

स) सूची

द) शब्द संग्रह (यदि परिभाषा की आवश्यकता रखने वाले वैज्ञानिक शब्दों का प्रयोग किया गया हो।)

यदि अनुसंधान कार्य विभिन्न चरणों में किया गया है तो **रैचेल मार्क्स** द्वारा प्रस्तावित निम्न रूपरेखा को प्रयोग में लाया जा सकता है–

शीर्षक

1– सामान्य परिचय

2– सामग्री एवं ढंगों का सामान्य विवरण

3– प्रथम चरण

अ) परिचय

ब) सामग्री एवं ढंग

स) परिणामों का प्रस्तुतीकरण

द) परिणामों पर विचार विमर्श

4– द्वितीय चरण

अ) परिचय

ब) सामग्री एवं ढंग

स) परिणामों का प्रस्तुतीकरण

द) परिणामों पर विचार विमर्श

5– तृतीय चरण

अ) परिचय

ब) सामग्री एवं ढंग

स) परिणामों का प्रस्तुतीकरण

द) परिणामों पर विचार विमर्श

6– सामान्य विचार विमर्श

23.21 शोध प्रतिवेदन की भाषा एवं शैली

समाज विज्ञानों के अन्तर्गत तैयार किए जाने वाले अनुसंधान प्रतिवेदनों के विरुद्ध प्रायः यह शिकायत की जाती है कि इनका पढ़ा जाना कठिन होता है क्योंकि प्रायः धिसी पिटी भाषा का प्रयोग किया जाता है तथा प्रायः इनकी भाषा अस्पष्ट होती है। समाज वैज्ञानिकों की अपने विचारों को प्रभावपूर्ण ढंग से संचारित कर पाने में असमर्थता केवल भाववाची एवं प्राविधिक शब्दों के प्रयोग के कारण ही नहीं है बल्कि उनके द्वारा गैर प्राविधिक भाषा की पूर्ण जानकारी करने में असमर्थता के कारण भी है। भाषा में स्पष्टता लाने के लिए यह आवश्यक है कि प्रतिवेदन की अन्य व्यक्तियों को भी दिखला दिया जाए।

सर्वप्रथम प्रतिवेदन की विस्तृत रूप रेखा तैयार की जानी चाहिए और इसे तैयार करते समय यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि हम क्या सूचना प्रदान करना चाहते हैं तथा विभिन्न तथ्य एक दूसरे से किस प्रकार सम्बन्धित हैं। रूपरेखा तैयार हो जाने पर यह देखने का प्रयास किया जाना चाहिए कि कोई भी आवश्यक पहलू छूट तो नहीं रहा है तथा विभिन्न विचार एक दूसरे से तर्क संगत रूप से सम्बन्धित हैं अथवा नहीं। रूपरेखा अन्य व्यक्तियों के समक्ष प्रस्तुत करने, उनकी राय जानने, तथा तदनुसार आवश्यक संशोधन करने के पश्चात् ही वास्तविक लिखाई या अभिलेखन का कार्य आरम्भ होता है।

अनुसंधान प्रतिवेदन का पहला ड्राफ्ट (पांडुलिपि) शैली सम्बन्धी विचारों की परवाह किए बिना शीघ्रतापूर्वक तैयार किया जाना चाहिए। तत्पश्चात इसके वाक्यों एवं अनुच्छेदों को सावधनीपूर्वक जांच करते हुए इनमें आवश्यक संशोधन करने

चाहिए। प्रतिवेदन की शैली सरल तथा व्याकरण की दृष्टि से सही होनी चाहिए ताकि अस्पष्टता से बचाया जा सके। आडंबर से बचने का प्रयास किया जाना चाहिए। प्राविधिक शब्दों का प्रयोग सर्वथा उपयुक्त है किन्तु सरलतम शब्दों को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए। वाक्य सूक्ष्म एवं सरलतापूर्वक बोधगम्य होने चाहिए।

प्रतिवेदन में दी गई सांख्यिकीय सामग्री एवं आंकड़े यथार्थ होने चाहिए। शैली, शब्द–रचना, मुहावरों इत्यादि के लिए प्रामाणिक पुस्तकों को पहले से ही पढ़ लिया जाना चाहिए। एक ही नियमावली का निरन्तर प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि प्रतिवेदन के विविध क्षेत्रों में एकरूपता बनी रहे। प्रतिवेदन को स्पष्ट एवं आकर्षक बनाने हेतु इसे शीर्षकों एवं उपशीर्षकों से युक्त करते हुए अनुच्छेदों में विभाजित किया जाना चाहिए।

प्रमाणिक शब्दाकोंषों का प्रयोग किया जाना चाहिए। फुटनोटों, उपशीर्षकों, मानचित्रों, चार्टों, चित्रों एवं रेखाचित्रों का प्रयोग आवश्यकतानुसार, किन्तु सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

अधिक अच्छी शैली में प्रतिवेदन को प्रस्तुत करने के लिए निम्न बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए :

1. परिकल्पनाओं का स्पष्टीकरण
2. परिकल्पनाओं के लिए आवश्यक पर्यवेक्षण एवं अध्ययन की उचित पृष्ठभूमि।
3. समस्याओं एवं परिकल्पनाओं का वैज्ञानिक शब्दों में उल्लेख।
4. अनुसंधान योजना में तार्किक सम्बन्धों की स्पष्टता।
5. विभिन्न उपपूर्वकल्पानाओं का प्रतिवेदन के अन्तर्गत दिए गए पर्यवेक्षणों एवं सारिणियों से सम्बन्ध तथा
6. सारांश के अन्तर्गत सार का पाया जाना तथा अग्रिम अनुसंधान के लिए निर्देशों का विद्यमान होना।

23.22 शोध प्रतिवेदन की कुछ कसौटियां

ये कसौटियां निम्न है–

1. क्या प्रतिवेदन के अन्तर्गत समस्या का स्पष्ट प्रतिपादन उपलब्ध है?
2. क्या अध्ययन के विषय क्षेत्र को भली–भांति स्पष्ट किया गया है?

3. क्या परिणामों को सही एवं सावधानीपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया है?

4. क्या सारिणी एवं अन्य उदाहरण सम्बन्धी सामग्री का प्रयोग उचित एवं सावधानीपूर्ण ढंग से किया गया है?

5. क्या परिणामों के अर्थ एवं इनकी सार्थकता पर विचार–विमर्श लेखक द्वारा किया गया है?

6. क्या परिणामों की पुष्टि प्रस्तुत किए गऐ आंकड़ों द्वारा की जा रही है?

7. क्या प्रतिवेदन तोड़–मरोड़ से स्वतंत्र है?

8. क्या अध्ययन की सीमाओं को भली–भांति स्पष्ट कर दिया गया है?

9. क्या पाठकों की दृष्टि से विषय वस्तु एवं शैली उपयुक्त है?

10. क्या प्रतिवेदन की भाषा सरल, कर्णप्रिय एव बोधगम्य है?

11. क्या लेखक ने अपने परिणामों का अन्य उपलब्ध अनुसंधान परिणामों एवं व्यापक समस्याओं से सम्बन्धित करने का प्रयास किया है?

12. क्या लेखक ने परिणामों की प्रायोगिकता तथा इससे सम्बन्धित साधनों पर प्रकाश डाला गया है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. शोध प्रतिवेदन का अर्थ लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....

2. शोध प्रतिवेदन की भाषा के बारे में लिखिए।

....
....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

23.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है जिसमें बताया गया है कि कोई भी अनुसंधान वास्तविक स्थिति तब तक प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि उसको एक रूपरेखा प्रदान न कर दी जाये। वास्तव में प्रतिवेदन की तैयारी अनुसंधान का अन्तिम चरण है तथा इसका उद्देश्य अभिरूचि रखने वाले व्यक्तियों को अध्ययन के सम्पूर्ण परिणाम से अधिक विस्तार पूर्वक और ऐसे व्यवस्थित ढंग से कि प्रत्येक पाठक तथ्यों को समझने में समर्थ हो सके, तथा यह भी अवगत कराना कि वह स्वयं अपने परिणामों की प्रमाणिकता को निर्धारित कर सके। वस्तुतः शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा में सामान्य परिचय, सामग्री एवं ढंगों का सामान्य विवरण, प्रथम चरण, द्वितीय चरण, एवं तृतीय चरण आदि के बारे में बताया गया है। शोध प्रतिवेदन की भाषा एवं शैली के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि अच्छी शैली प्रतिवेदन प्रस्तुत करना चाहिए, जिसमें परिकल्पनाओं को स्पष्ट रखना चाहिए। समस्यायें एवं परिकल्पनाओं वैज्ञानिक शब्दों में उल्लेख करना चाहिए एवं अन्ततः सारांश के रूप में अग्रिम अनुसंधान के लिए निर्देशों को उचित रूप से प्रदान करना चाहिए।

प्रस्तुत इकाई में प्रतिवेदन की कुछ कसौटियों के बारे में भी प्रकाश डाला गया है। आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है प्रस्तुत इकाई आप लोगों को शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा निर्माण करने में सहायता प्रदान करेंगी।

23.4 पारिभाषिक शब्दावली

शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा – शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा का तात्पर्य अभिरूचि रखने वाले व्यक्तियों के सामने अध्ययन के सम्पूर्ण परिणाम एवं तथ्यों की रूपरेखा प्रस्तुत करने से है।

अभ्यास प्रश्न

लघु

1– शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा से आप क्या समझते है?

2– पार्टन द्वारा उल्लेखित शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा पर प्रकाश डालिये।

3– रैचेल मार्क्स द्वारा प्रस्तावित शोध प्रतिवेदन की रूपरेख का वर्णन कीजिए।

4– शोध प्रतिवेदन की भाषा एवं शैली पर प्रकाश डालिये।

5– शोध प्रतिवेदन की कसौटियों से आप क्या समझते है?

विस्तृत–

1– शोध प्रतिवेदन की रूपरेखा पर एक निबन्ध लिखिए।

2– शोध प्रतिवेदन की भाषा एवं शैली तथा कसौटियों के बारे अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

23.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1. अमेरिकन मार्केटिंग सोसाईटी टैकनीक ऑफ मार्केटिंग रिसर्च, मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, वर्ष–1939, पेज 299
2. एम.पार्टेन, सर्वेजः पोल्स एण्ड सैम्पिल्स, पेज– 515– 516
3. मार्क्स रैचेल, रिसर्च, रिर्पोटिंग, नार्मन ए पोलेन्स्की, (सं)., सोशल वर्क रिसर्च, पेज –188
4. गुडे एण्ड हॉट, मैघड्स इन सोशल रिसर्च, मैक्ग्राहिल कम्पनी न्यूयार्क वर्ष–1952, पेज 364–365
5. सिंह डॉ0 सुरेन्द्र समाजिक अनुसंधान भाग–2, उ0प्र0 हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, वर्ष 1975, पेज–321, 323–328

खण्ड–पंचम
शोध प्रतिवेदन

इकाई : 24 शोध प्रतिवेदन की प्रकार

इकाई की रूपरेखा

24.0 उद्देष्य

24.1 प्रस्तावना

24.2 प्रतिवेदन का अर्थ

24.3 षोध परियोजनना

24.4 प्रतिवेदन लेखन

24.5 प्रतिवेदन के प्रकार

24.6 सारांष

24.7 बोध प्रष्न

24.8 बोध प्रष्नों उत्तर

24.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

24.0 उद्देष्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप –

- इस इकाई में आप प्रतिवेदन का अर्थ समझ सकेंगे
- प्रतिवेदन लेखन की आवष्यकता को समझ सकेंगे।
- प्रतिवेदन के विभिन्न प्रकारों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

24.1 प्रस्तावना

समाजिक षोध या अनुसंधान का उद्देष्य वैज्ञानिक विधियां (Scientific methods) सहायता से तथ्यों का संकलन करना होता हैं बाद में यही तथ्य सिद्धान्त का रूप धारण कर लेते है। वैज्ञानिक विधियों की सहायता से जो तथ्य प्राप्त किये जाते हैं, जब वे वैज्ञानिक तरीकों से

लिपिबद्ध कर दिये जाते हैं तो सिद्धान्त बन जाते हैं। संकलित तथ्यों का संकलन एवं सारणीयन (Collection and tabulation) किया जाता है इसके बाद तथ्यों का वर्गीकरण किया जाता है और इस विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता है इसी निष्कर्ष को सामान्यीकरण के नाम से जाना जाता है। जब सामान्यीकरण (Generalization) को विज्ञान की सहायता से लिख दिया जाता है तो यही रिपोर्ट (प्रतिवेदन) कहलाता है। अलग अलग षोधों की रिपोर्ट भी अलग–अलग प्रकार की होती है।

24.2 प्रतिवेदन का अर्थ

प्रतिवेदन का अर्थ होता है सामान्य बात या सामान्य बातों का लेखा कभी–कभी इसका तात्पर्य विस्तृत विवरण लेख या कथन से भी लिया जाता है। न्यायिक सन्दर्भ में किसी न्यायिक मत या निर्णय को भी रिपोर्ट कहा जाता है। किसी बैठक सभा या सत्र की औपचारिक कार्यवाही के लिये भी इस षब्द का प्रयोग किया जाता है रिपोर्ट मिलने पर अनुषासनात्मक कार्यवाही की जाती है। किन्तु समाज विज्ञान के अनुसंधान क्षेत्र में इसका प्रमुख सम्बन्ध किसी लघु माध्यम या बड़े षोध योजना कार्य के सम्पन्न हो जाने के बाद दिये जाने वाले प्रतिवेदन से होता है। प्रत्येक ऐसी षोध योजना के कर्ता या कर्ताओं को अपना प्रतिवेदन या रिपोर्ट प्रस्तुत करनी पड़ती है कि उसने क्या,कैसे और कितना किया। उसका क्या परिणाम निकला दूसरे लिखित विवरणों एवं रिपोर्ट (षोध प्रतिवेदन) में अन्तर होता है कि एक मानित रूपरेखा (Standard format) प्रतिवेदन पाठकों का ध्यान अपनी सूचना के विषेष भागों पर केन्द्रित करने में सक्षम होता हैं। रिपोर्ट किसी विषिट उद्देष्य, प्रयोजन या प्रार्थना के अनुसार रूचि रखने वाले पाठकों के लिये एक संरचित लिखित प्रस्तुतीकरण होती है। रिपोर्ट कई प्रकार की हो सकती है। परन्तु उनका निर्देष या प्रार्थना के अनुसार कार्य किसी समस्या के लिये समाधान या प्रष्न का उत्तर देने के लिये लेखा–जोखा देना होता है। इसलिये रिपोर्ट का रूपांकन करना, लिखना, दुहराना त्रुटि निकालना आदि बड़ी ही सावधानी से करना पड़ता है। ज्ञान, अनुसंधान एवं समाज कार्य के जगत में किसी विषय पर केन्द्रित रहकर किया गया लिखित कार्य, जो औपचारिक, तर्क एवं तथ्यपूर्ण हो, रिपोर्ट कहलाता है।

इन कार्यों को करने के लिये षोध परियोजना बनायी एवं स्वीकृति करायी जाती है। षोध परियोजनाएं मुख्यतः तीन प्रकार की होती है। (1) केवल षोध हेतु (2) किसी उपाधि के पाठ्यक्रम जैसे एम.फिल.एम.एड के अधीन एक भाग या प्रष्न पत्र के रूप में प्रस्तुत लघु शोध प्रबन्ध हेतु (3) पी–एच.डी. की उपाधि के लिये थीसिस के रूप में प्रस्तुत षोध कार्यक्रम।

24.3 षोध परियोजना

किसी क्षेत्र विषेष में स्वतन्त्र षोध कार्य करने को अनेक षोध संस्थाये प्रोत्साहन, आर्थिक सहायता एवं मार्गदर्षन प्रदान करती है। इनमें सर्वाधिक प्रसिद्ध संस्थाएं भारतीय सामाजिक विज्ञान परिषद,विष्वविद्यालय अनुदान आयोग,उच्च षिक्षा विकास आयोग भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद आदि है। ये संस्थायें प्रतिभावान एवं अनुभवी शोधकर्ताओं से अनुसंधान परियोजना या अनुसंधान प्रस्ताव आमन्त्रित करती है तथा उनकी विषेषज्ञों द्वारा जांच करवाकर आर्थिक सहायता प्रदान करती है। ये अनुसंधान प्रस्ताव उन संस्थाओं के समक्ष किसी एक पात्रता प्राप्त षिक्षक सम्पूर्ण संस्था या किसी एक पात्रता प्राप्त षिक्षक, संम्पूर्ण संस्था या किसी एक षोधकर्ता द्वारा प्रस्तुत किये जा सकते है। भारतीय समाज विज्ञान परिषद (icssr) के अनुसार प्रत्येक शोध प्रस्ताव या परियोजना में निम्नलिखित बातें होनी चाहिये।

1. षोध परियोजना का षीर्षक जो विषय को निष्चित, सीमित और स्पष्ट रूप से बताये।

2. षोध समस्या का विवरण जो यह बताये कि समाज विज्ञान के किस सिद्धान्त में उस षोध समस्या का क्या स्थान है तथा उनकी स्वीकृति में कौन–कौन से प्रष्न व अड़चने सामने आती है। इसके हल हो जाने, देष, सिद्धान्त और पद्धति विज्ञान के क्षेत्र में क्या योगदान सम्भव होगा।

3. सम्बन्धित एवं उपलब्ध साहित्य की विषय की दृष्टि से समीक्षा, जो विषय, विषय का अधूरापन या भूलें बतायें।

4. अवधारणात्मक योजना इसमें विषय की दृष्टि से अवधारणात्मक योजना इसके विषय की दृष्टि से अवधारणाए (concept) निर्मित की जायें जिनकी मदद से वास्तविकता का पता लगाना सम्भव हो सके।

5. षोध परिकल्पना जो समस्या का समाधान प्रस्तावित कर सके। ये गवेषणात्मक अनुसंधान में ही आवष्यक है किन्तु वर्णनात्मक में नहीं।

6. अनुसंधान क्षेत्र में आने वाली सभी इकाइयों को निष्चित किया जा सके और उनकी संख्या अधिक है तो उन्हें निदर्षन (sampling) द्वारा सीमित किया जा सके। जिससे अनुसंधान षोधकर्ता के पास उपलब्ध समय और साधनों की सीमाओं में रहकर पूरा किया जा सके।

7. समंक संकलन षोध के सन्दर्भ में संकलित तथ्यों को समंक (data) कहा जाता है। इसमें उनकी विषेषताओ/चरों को निर्धारित कर

के प्रष्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार आदि उपयुक्त प्रविधियों के उपयोग द्वारा इन्हें संकलित किया जाता है।

8. समंक प्रक्रमण (data processing) इसमें समंकों को गुणों एवं विषेषताओं तथा परिकल्पनाओं के अनुसार तालिकाओं में प्रस्तुत किया जाता है। जिससे चरों का विश्श्लेषण किया जा सके तथा अलग अलग वर्गों के मध्य सम्बन्धों कार्य–कारण या सहचार का पता लगाया जा सके। इनमें कम्प्यूटरों या संगणकों का उपयोग भी किया जाता है।

9. समय विभाजन का ब्यौरा (time budgeting) इसमें षोध के प्रत्येक कार्य या कदम के लिये लगने वाले समय का अनुमान बताया जाता है, जैसे सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन करने में 6 माह या समंक एकत्रित संकलित करने मे 4 माह का समय लग सकता है। उसी प्रकार षोध प्रतिवेदन में 3 माह लग सकते हैं।

10. संगठनात्मक संरचना इसके मुख्य षोधकर्ता, क्षेत्र कर्ताओं आदि के बारे में यह बताया जाता है कि उनकी संख्या कितनी होगी तथा उनका चयन किस प्रकार किया जायेगा।

11. व्यय का आंकलन इसमें यह बताया जाता है कि कौन–कौन लोग षोध कार्य में लगाये जायेंगे तथा उनको क्या पारिश्रमिक देना होगा। इसी में यात्रा व्यय, परामर्ष व्यय,डाक व्यय कम्प्यूटर या टंकण खर्च, पुस्तकों आदि का अनुमानित खर्च बताया जाता है। इन सब का औचित्य देख कर ही संस्था षोधकर्ता को व्यय की स्वीकृति देती है। विदेष यात्रा प्रयोग आदि देने के लिये संस्था अलग से विचार करती है। समय व्यय का किसी नियुक्त लेखा लिपिक से ब्यौरा तैयार कराया जाता है। कार्य समाप्ति पर सारे खर्च का अंकेक्षण करवा कर उपयोगिता, प्रमाण पत्र दाता संस्था को भेजना होता है। षोध प्रतिवेदन की रिपोर्ट धनदाता संस्था तथा विभाग को भेजी जाती है। सार्वजनिक प्रकाषन से पूर्व इसका विषेषज्ञों द्वारा मूल्यांकन किया जाता है उक्त संस्था प्रकाषन हेतु पच्चीस हजार रूपये तक की सहायता भी देती है।

प्रायः ये सभी बिन्दु समय,संगठन एवं धन विषयक को छोड़कर एम.ए,एम.फिल,पी.एच.डी. में आयोजित अनुसंधान में भी काम आते हैं। षोध परियोजना में प्रायः षोध योग्य विषय कों ही चुना जाता है। शोध विषय के चयन में निदेषक षिक्षक की रूचियां एवं व्यक्तित्व, विषय की बाजार में मांग,स्वयं शोध कर्ता की रूचि, अथवा संस्था की प्राथमिकताएं महत्वपूर्ण होती है।

अन्तर इतना है कि एम.ए.की षोध प्रायः पुस्तकों पर आधारित तथा अल्पांष में ही अनुभाविक होती है। एम.फिल.में अनुसंधान प्रविधि का अलग से षिक्षण दिया जाता है। तथा वास्तविक अनुसंधान

पुस्तकालयाधारित अथवा अनुभवधारित कराया जाता है। इसका लघु शोध प्रबन्ध 150 से 200 पृष्ठों के बीच होता है।

पी–एच.डी. सम्बन्धी षोध उच्च स्तरीय होता है तथा उसमें 400–800 या उससे अधिक पृष्ठ कम्प्यूटरीकृत होते हैं। इनमें और अनुसंधान परियोजना में यह अन्तर होता है कि उनमें प्रबन्ध के अन्तिम भाग में मूल एवं सहायक ग्रन्थों, पत्र पत्रिकाओं,साक्षात्कृतों आदि का वर्णन कमानुसार परिचय देना होता है। इनमें समय और व्यय का आंकलन नही बताया जाता किन्तु इसमें टिप्पणियों एवं सन्दर्भों की अधिकता होती है। इन्हें षोधकर्ता द्वारा षोध निदेषक की देखरेख में प्रायः 3–4 वर्षों के भीतर पूरा किया जाता है तथा विष्वविद्यालय या षिक्षण संस्था द्वारा उस पर मौखिक परीक्षा के बाद उपाधि प्रदान की जाती है।

षोध प्रतिवेदन रिपोर्ट, लघु षोध प्रबन्ध डिजर्टेषन षोध प्रबन्ध (थीसिज) ये तीनों ही उच्च स्तरीय अध्येताओं एवं अनुसंधानकर्ताओं से सम्बन्धित कार्य है। इनसें उनके ज्ञान,षोध तर्कणा, चिन्तन एवं लेखन षैली का पता चलता है। इन तीनों को ही मोटे तौर पर रिपोर्ट (प्रतिवेदन) कहा जाता हैं।

24.4 प्रतिवेदन लेखन

रिपोर्ट का लक्ष्य सूचनाओं एवं विचारों का सम्प्रेषण पाठकों को करना होता है। पाठकों पर प्रथम प्रभाव रिपोर्ट देकर ही किया जाता है वह उनके लिये संगत तथा सार्थक है।

प्रत्येक रिपोर्ट में निम्नलिखित बातें होनी चाहिये।

1 षीर्षक पृष्ठ

2 सारांष

3 विषय सूची

4 भूमिका

5 किये गये एवं प्रयुक्त पद्धति विषयक सामग्री

6 निष्कर्ष या परिणाम

7 परिणामों पर विचार विनियम एवं विश्लेषण

8 निष्पत्तियां

9 सुझाव सिफारिषें एवं भविष्य में किये जाने योग्य कार्य व सन्दर्भ एवं टिप्पणियां

10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11 अनुसूचियां

12 आभारप्रदर्षन

प्रतिवेदन या रिपोर्ट छोटे बड़े षोध कार्यों की जानकारी के लिये लिखी जाती है जब तक परिणाम अथवा निष्पतियां नहीं प्राप्त होती रिपोर्ट लिखना बेकार होता है। उसकी प्रस्तावना प्रष्न या समस्या से परिचित कराती है। तथा निष्कर्ष भाग उसका उत्तर प्रदान करता है। षेष भाग तो तर्क देने, प्रमाण जुटाने और समझाने से सम्बन्धित होता है। उसे सीधी और सरल भाषा में लिखना चाहिये। अन्यथा रिपोर्ट लिखने का लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकेगा।

24.5 प्रतिवेदन के प्रकार

रिसर्च रिपोर्ट या परियोजना प्रतिवेदन

1. षोध रिपोर्ट किसी लधु षोध कार्य या प्रोजेक्ट के लिये लिखी जाती है, इसका उद्देष्य कोई षैक्षिक उपाधि प्राप्त करना नहीं होता।
2. प्रायः प्रोजेक्ट पूरा करने तथा रिपोर्ट तैयार करने के लिये विभिन्न संस्थानो से अनुदान, आर्थिक सहायता आदि दी जाती है। इसका लेखा देना होता है और उसकी जांच की जाती है।
3. प्रतिवेदन आकार प्रकार में छोटा संक्षिप्त एवं सार गर्भित होता है।
4. प्रोजेक्ट एवं प्रतिवेदन का कार्य स्वयं अनुसंधानकर्ता करता है। उसे किसी के निर्देषन में करने की या उसका प्रमाणपत्र लेने की आवष्यकता नहीं पड़ती ।
5. इसके मूल्यांकन के लिये योजना या संस्था के अधिकारी होते हैं।
6. विभिन्न योजनाओं एवं उनके प्रतिवेदनों का समय असमान होता है वह तीन माह से लेकर 8–10 वर्श तक की अवधि वाला हो सकता है।
7. इनके प्रकाषन के लिये अनुदान दाता संस्था या परिषद् की अनुमति लेनी होती है।

लधु प्रबन्ध

1. लघु षोध प्रबन्ध प्रायः किसी विषय प्रकरण आदि पर अध्येता के अपने मौलिक विचारों को जानने तथा उनको पुष्ट सिद्ध या प्रभावित करने की लेखन सम्बन्धी योग्यता को जांचने के लिये होता है।
2. लघु षोध प्रबन्ध लगभग 100 पृष्ठों के आस पास होता है तथा उसे किसी वरिष्ठ षिक्षक या निदेषक की देख रेख में

लिखा जाता है। यह उपाधि किसी व्यापक पाठ्यक्रम का एक भाग होती है।

3. लघु षोध प्रबन्ध के विषय के चयन का मामला अध्येता एवं निदेषक के मध्य निर्णित होता है। इसके लिये कोई शोध स्पर्ष रेखा या संक्षेप अलग से बनानी एवं स्वीकृति कराने की आवष्यकता नहीं होती । इसे एक सत्र में पूरा करना होता है। इसको समयावधि में पूरा किये बिना परीक्षा का परिणाम घोषित नहीं किया जाता ।

4. लघु शोध प्रबन्ध लिखना एम.फिल.,एम.एड. आदि परिक्षाओं का एक भाग होता है। इसकी उपाधि को अलग से घोषित नहीं किया जाता। अर्थात् लघु षोध प्रबन्ध में मौलिक षोध या अध्ययन के परिणामों का लेखा–जोखा होता है। इसमें अध्येता अपने विषिष्ट दृष्टिकोण,बोध या चिन्तन को तर्कों तथ्यों एवं युक्तियों से प्रस्तुत करता है। यह एक प्रकार से किसी विषय पर सुविचारित विषाल लेख होता है।

3. षोध प्रबन्ध प्रतिवेदन

थीसिस या सामान्य षोध प्रबन्ध में विद्वता सम्पन्न व्यक्ति अपना मन्तव्य या स्थिति को तर्क एवं प्रमाणों के साथ प्रस्तुत करता है। उसमें ऐसी प्रस्तावना या मान्यता भी हो सकती है जिसे सिद्ध या प्रमाणित करना बाकी है। यह अवस्था प्राकल्पना कहलाती है। लेकिन इस षब्द का प्रयोग किसी उच्च षैक्षिक उपाधि के आषार्थी द्वारा लिखे गये ऐसे षोध प्रबन्ध के लिये किया जाता है जिसमें कि विषेष दृष्टिकोण को प्रस्तुत एवं सिद्ध करने के लिये मौलिक अनुसंधान की निष्पत्तियों एवं निष्कर्ष को रखा गया हो।

थीसिस षोध या अनुसंधान का प्रतिवेदन होता है। सीमित ज्ञान प्राप्ति का क्या–क्या कैसे। उपयोगिता,लाभ, एवं निहित समस्याओं का समाधान के लिये किया गया विवेचन है। उसमें एक प्रमुख समस्या या समस्याओं की श्रृंखला होती है उसमें यह बताया जाता है कि अब तक उस समस्या विषय के बारे में क्या और कितना ज्ञात था। इस दिषा में कार्य करने पर कितना और कहां तक और अधिक जाना जा सकता है। यदि वह षोध कार्य सम्पन्न कर लिये जाये तो मानव जाति को कितना लाभ हो सकता है, उसकी कठिनाई कैसे कम की, या सुलझायी जा सकती है। प्रतिवेदन या थीसिस पी–एच.डी. के योग्य कार्य तभी मानी जायेगी। जब आपने उसमें नवीन, मौलिक तथा अभी तक अज्ञात तथ्यों को ज्ञात करके बताया है। उसमें उन सभी पद्धतियों प्रमाणों, तथ्यों एवं स्त्रोतों का तर्कपूर्ण उल्लेख करना होगा जिसके आधार पर ऐसी नयी निष्पतियों की घोषणा कर रहे है। इसके अतिरिक्त शोध प्रबन्ध की निम्नलिखित अन्य विशेषतायें है।

1 षोध प्रबन्ध का उद्देष्य किसी विषय या समस्या पर ज्ञान के क्षेत्र में नया योगदान करना होता है। इसमें अध्येता षोधकर्ता होता है। वह या तो उस क्षेत्र में नया ज्ञात प्रस्तुत करता या स्थापित ज्ञान को चुनौती देता है और ऐसा करते समय नये प्रमाण समंक तर्क आदि प्रस्तुत करता है।

2. वृहत्षोध प्रबन्ध 300 पृष्ठों से अधिक बड़ा होता है यद्यपि वह किसी भी वरिष्ठ षिक्षक या निर्देषक की देख–रेख में लिखा जाता है, किन्तु समस्त कार्य, षोध, अध्ययन आदि स्वयं षोधकर्ता को ही करना होता है। यह षोध का एक स्वतन्त्र षैक्षिक कार्यक्रम होता है।

3. षोध प्रबन्ध के विषय का चयन षोधकर्ता एवं निर्देषक के बीच में नहीं होता उस विषय की मौलिकता एवं नवीनता को षोध मण्डल के समक्ष सहित एक अलग फार्म भरकर षुल्क एवं प्रमाणपत्रों के साथ विभागाध्यक्ष के माध्यम से विचारार्थ प्रस्तुत किया जाता है। कभी–कभी स्वयं षोधार्थी को अपने विषय की मौलिकता तथा स्वयं की मौलिकता तथा स्वयं की योग्यता सिद्ध करने के लिये साक्षात्कार हेतु बुलाया जाता हैं। कुछ विष्वविद्यालयों में षोध प्रारम्भ करने की अनुमति दिये जाने से पूर्व किसी न किसी प्रकार का शोध पद्धति का पाठ्यक्रम पूरा करना तथा उसमें उत्तीर्ण होना पड़ना है। विषय पर षोध करने की स्वीकृति सिंडीकेट एवं कुलपति द्वारा प्रदान की जाती है।

4. षोध प्रबन्ध की पांच टंकित प्रतियां स्वीकृत हेतु प्रस्तुत की जाती है। इसमें से निर्देषक समेत दो बाहर के विशेषज्ञों को प्रतिवेदन स्वीकृति या अस्वीकृति देने हेतु भेजा जाता हैं तीनों की सर्वसम्मति होने पर ही उसे षोध उपाधि देने योग्य माना जाता है। बाहर के दो विषेषज्ञों से किसी एक को षोध साक्षात्कार हेतु बुलाया जाता है इसमें शोधकर्ता से षोध के विषय में प्रष्न पूछे जाते हैं। उस समय विभाग के विभागाध्यक्ष तथा निर्देषक समेत विभाग के अन्य प्राध्यापक, षोधार्थी आदि बैठे होते है तथा कार्यवाही देखते एवं सुनते हैं। विषेषज्ञ षोध साक्षात्कार से सन्तुष्ट होने पर अपना प्रतिवेदन विष्वविद्यालय को देता है। आमतौर पर वह अपनी स्वीकृति, अस्वीकृति वहीं पर प्रकट कर देता है। इसमें मूल्यांकन रिपोर्ट में षोधकर्ता को छोटे मोटे सुधार करने के लिये कहा जा सकता है।

5. षोध प्रबन्ध लिखने में सफल होने पर शोधकर्ता को पी–एच. डी.की उपाधि सार्वजनिक तौर पर प्रदान की जाती है। वह अपने नाम से

पहले डाक्टर तथा अन्त में पी–एच.डी. शब्दों का प्रयोग कर सकता है। उसे ज्ञान के रूप में सम्मान दिया जाता है और उसके विचारों को ध्यान से सुना जाता है।

24.6 सारांष

अनुसंधान कठिन कार्य है और इसकी रिपोर्ट तैयार करना और भी कठिन कार्य है। रिपोर्ट को तैयार करना अनुसंधान का अन्तिम चरण हैं। एवं इसका उद्देष्य रूचि वाले लोगों का अध्ययन के समस्त परिणामों का पर्याप्त विस्तार से बताना एवं उन्हें इस तरह व्यवस्थित करना है जिससे प्रत्येक पाठक को तथ्यों को समझने एवं स्वयं के निष्कर्ष की प्रमाणिकता का निष्चय करने के योग्य बनाना है। अलग–अलग षोध प्रतिवेदन द्वारा अलग–अलग प्रकार से निष्कर्ष का प्रयास किया जाता है।

24.7 बोध प्रष्न

(क) वास्तुनिष्ठ प्रष्न

प्र. 1 रिपोर्ट तैयार करना षोध कार्य का कौन सा चरण है?

(अ) पहला **(ब)** दूसरा **(स)** अन्तिम

प्र. 2 किस रिपोर्ट में विस्तारपूर्वक अध्ययन की आवष्यकता पड़ती है।

(अ) षोध प्रबन्ध **(ब)** लघु षोध प्रतिवेदन

(स) परियोजना रिपोर्ट

प्र.3 निम्न में से कौन सी रिपोर्ट तैयार करने की समस्या नहीं

(अ) विषय की समस्या **(ब)** अवधारणा की समस्या

(स) भाषा की समस्या

(ख) लघु उत्तरीय प्रष्न

प्र.1 शोध रिपोर्ट क्यों तैयार की जाती है।

प्र.2 लघु शोध प्रतिवेदन को स्पष्ट कीजिये।

प्र.3 अच्छी रिपोर्ट में क्या–क्या विषेषताएँ होनी चाहिये।

(ग) दीर्घ उत्तरीयप्रष्न

प्र. 1 षोध प्रबन्ध थीसिस प्रतिवेदन की विषेषताओं का उल्लेख कीजिए।

प्र.2 रिपोर्ट क्या है रिपोर्ट तैयार करने का क्या उद्देष्य होता है?

24.8 बोध प्रष्नों के उत्तर

(क)	प्र.1	(स)
	प्र.2	(अ)
	प्र.3	(अ)

24.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सामाजिक षोध व सांख्यिकी – रवीन्द्र नाथ मुखर्जी
2. राजनीति विज्ञान में अनुसंधान – डा.एस.एल.वर्मा
3. एथिक्स पॉलिटिक्स एण्ड सोषल रिर्सच – गिडोन सजबर्ग
4. सामाजिक षोध प्रविधि – देवेन्द्र पाल सिंह तोमर
5. सामाजिक अनुसंधान की पद्धतिया – डा.धर्मवीर महाजन
6. सांख्यिकीय विधियां – डा. एस.पी.गुप्ता

खण्ड–पंचम
शोध प्रतिवेदन

इकाई : 25 शोध प्रबंध की विषय वस्तु

25.0 इकाई का उद्देश्य

25.1 परिचय

25.2 शोध प्रबंध की विषय–वस्तु

25.3 सार–संक्षेप

25.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न, लघु, विस्तृत

25.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

25.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय गवेषणार्थियों प्रस्तुत इकाई में शोध प्रबंध की विषय वस्तु के बारे में प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत इकाई में शोध प्रतिवेदन में किन–किन विषय वस्तुओं का समावेश होना चाहिए, के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रदान किया गया है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1– शोध प्रबन्ध की प्रस्तावना, समस्या का विवरण तथा अध्ययन के उद्देश्यों के बारे में लिख सकेंगे।

2– शोध प्रबन्ध में प्रस्तुत होने वाली प्रविधियों के बारे ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3– शोध प्रबन्ध की विषय वस्तु पर प्रकाश डाल सकेंगे।

25.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों प्रतिवेदन लेखन प्रत्येक सामाजिक शोध का अन्तिम लेकिन सबसे अधिक महत्वपूर्ण चरण है। एक अध्ययनकर्ता किसी शोध विषय से सम्बन्धित जितने भी तथ्यों का संकलन करता है उनका सारणीयन एवं विवेचन कर लेने के पश्चात् उन पर आधारित निष्कर्षों को एक व्यवस्थित प्रतिवेदन के रूप में ही प्रस्तुत करता है। इस दृष्टिकोण से प्रतिवेदन अथवा

रिपोर्ट एक प्रकार से सम्पूर्ण शोध–कार्य का लिखित विवरण है जिसके बिना शोध–कार्य को पूरा नहीं माना जा सकता। कोई अध्ययन चाहे सामाजिक हो या प्राकृतिक उससे सम्बन्धित तथ्यों एवं निष्कर्षों को प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस दृष्टिकोण से प्रतिवेदन अथवा रिपोर्ट एक प्रकार से सम्पूर्ण शोध–कार्य का लिखित विवरण है जिसके बिना शोध–कार्य को पूरा नहीं माना जा सकता है। कोई अध्ययन चाहे सामाजिक हो या प्राकृतिक उससे सम्बन्धित तथ्यों एवं निष्कर्षों को प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता अवश्य होती है। एक शोधकर्ता द्वारा प्राप्त निष्कर्ष चाहे कितने ही महत्वपूर्ण हों लेकिन शोध प्रतिवेदन के द्वारा उनका पाठकों में समुचित रूप से सम्प्रेषण नहीं हो पाता तो उनका कोई भी व्यावहारिक महत्व नहीं होता। इस दृष्टिकोण से प्रतिवेदन के आरम्भ से अन्त तक अध्ययन–विषय की विभिन्न इकाइयों, पारिभाषिक शब्दों, तथ्यों तथा निष्कर्षों को इस प्रकार प्रस्तुत करना आवश्यक होता है कि उनकी प्रासंगिकता एवं अभिप्राय को सभी के द्वारा समझा जा सके। इसका तात्पर्य यह है कि शोध–प्रतिवेदन सम्पूर्ण शोध कार्य का एक व्यवस्थित सार होता है। इसी निष्कर्ष को सामान्यीकरण के नाम से जाना जाता है जब सामान्यीकरण को विज्ञान की सहायता से लिख दिया जाता है तो यही प्रतिवेदन कहलाता है।

गुडे तथा हॉट ने लिखा है कि – 'तब विज्ञप्ति को तैयार करना अनुसंधान का अन्तिम चरण है एवं इसका उद्देश्य रुचि वाले लोगों का अध्ययन समस्त परिणामों को पर्याप्त विस्तार से बताना है एवं (उन्हें) इस तरह व्यवस्थित करना है। जिससे प्रत्येक पाठक को तथ्यों को समझने एवं स्वयं के लिए निष्कर्ष की प्रामणिकता का निश्चय करने के योग्य बनाए।

25.2 शोध प्रबंध की विषय वस्तु

सामाजिक शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया में रिपोर्ट को तैयार करना उतना सरल कार्य नहीं है जितना कि साधारणतया समझ लिया जाता है। एक शोधकर्ता को जब तक प्रतिवेदन को लिखने की कला का ज्ञान नहीं होता तब तक वह एक व्यवस्थित प्रतिवेदन प्रस्तुत नहीं कर सकता। शोधकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि उसे प्रतिवेदन के अन्तर्गत सम्मिलित की जाने वाली विषय–वस्तु के विभिन्न पक्षों का समुचित ज्ञान हो। विषय–वस्तु से तात्पर्य उन विषयों से है जिनका विवरण अथवा व्याख्या किसी भी सन्तुलित रिपोर्ट की एक आवश्यक शर्त होती है। एक शोध प्रतिवेदन में किन–किन पक्षों का समावेश होना

चाहिए, इस विषय में सभी विद्वान एकमत नहीं हैं। इसके पश्चात् भी–

पी.वी. यंग के अनुसार 'शोध प्रतिवेदन के अन्तर्गत जिस विषय वस्तु पर विशेष बल दिया है उसे इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।'

1– **प्रस्तावना अथवा भूमिका**

- अध्ययन की प्रकृति के बारे में संक्षिप्त एवं स्पष्ट विवरण,
- अध्ययन के उद्देश्य,
- सूचना के प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोत,
- अध्ययन का क्षेत्र

2– अध्ययन को दिशा देने वाली कार्यकारी उपकल्पना का संक्षिप्त विवेचन।

3– अध्ययन की इकाइयों की सुनिश्चित परिभाषा।

4– अध्ययन में प्रयुक्त प्रविधियों का संक्षिप्त में विवेचन

- प्रयोग में लाये गये अवलोकन के प्रकार तथा दशाएँ जिनमें अवलोकन सम्पन्न किया गया।
- निर्मित अनुसूची के प्रकार तथा वे दशाएँ जिनमें सूचनाओं का संकलन किया गया।
- वैयक्तिक अध्ययनों द्वारा प्राप्त तथ्यों के प्रकार उनके स्त्रोत प्रस्तुत करने के ढंग व उनसे सम्बन्ध आरम्भिक विश्लेषण।
- निदर्शन की कार्यविधि तथा चयन की स्थितियाँ, निदर्शन की उपयुक्तता का परीक्षण तथा उनकी प्रतिनिधिशीलता का विवेचन
- सांख्यिकीय कार्य प्रणालियाँ– सांख्यिकीय आँकड़ों के स्त्रोत तथा वे दशाएँ जिनमें वे आँकड़े प्राप्त किये गये।
- उपयोग में लाये गये अनुमान प्रविधियों के प्रकार।

5– तथ्यों के प्रयोगात्मक विवेचन की संक्षिप्त रूपरेखा तथा प्रयोग के लिए उपयोग में लाई गई प्रविधियों की विवेचना।

6– अध्ययन से प्राप्त प्रमुख परिणाम।

7– परिणामों से प्राप्त होने वाले प्रमुख निष्कर्ष।

8– विशेष टिप्पणियाँ।

- तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा विश्लेषण में आने वाली समस्याएँ
- उसी सन्दर्भ में कुछ अन्य विषयों पर भावी अनुसंधान कार्यों के लिए सुझाव।

9. अध्ययन में उपयुक्त पाये गये सन्दर्भों की व्याख्यात्मक सूची।

10. परिशिष्ट जिनमें प्रश्नावलियों, प्रतिलेखन पत्रों, चयनित सूचनादाताओं तथा इसी प्रकार के अन्य विवरणों का समावेश हो सकता है।

पी.वी. यंग द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन की उपर्युक्त विषय वस्तु के अतिरिक्त विभिन्न विद्वानों ने इसे अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। ऐसे सभी विचारों पर समन्वय करते हुए प्रतिवेदन की विषय–वस्तु से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों को संक्षेप में अग्र प्रकार समझा जा सकता है–

1– **प्रस्तावना–** शोध प्रतिवेदन की विषय–वस्तु में प्रस्तावना अथवा भूमिका का प्रमुख स्थान है। इसे प्रतिवेदन के सबसे आरम्भ में प्रस्तुत किया जाता है, प्रस्तावना का सम्बन्ध सम्पूर्ण रिपोर्ट की विषय–वस्तु को प्रतिबिम्बित करना होता है। यही कारण है कि कभी–कभी समय के अभाव में पाठक केवल प्रस्तावना को पढ़कर ही सम्पूर्ण प्रतिवेदन के सार को ज्ञात कर लेते हैं। प्रस्तावना के अन्तर्गत अध्ययन के महत्व, अध्ययन से सम्बन्धित परिकल्पना, शोध की रूपरेखा, योजना, संगठन, कठिनाइयों एवं रिपोर्ट में आने वाले विभिन्न अध्यायों की रूपरेखा पर संक्षेप में प्रकाश डाला जाता है। यदि अध्ययन कार्य किसी सरकारी, अर्द्ध–सरकारी विभाग अथवा व्यक्तिगत संगठन के द्वारा किया जाता है, तब उसे विभाग या संगठन का भी संक्षेप में परिचय देना आवश्यक होता है। प्रस्तावना में ही अध्ययन के लिए निर्धारित समय एवं सहयोग देने वाले व्यक्तियों तथा संगठनों का भी उल्लेख किया जाता है।

2– **समस्या का विवरण–** प्रस्तावना के प्रश्चात् प्रतिवेदन में अध्ययन विषय का संक्षिप्त विवरण दिया जाता है। अध्ययन समस्या की पृष्ठभूमि तथा उसके विषय में शोध की आवश्यकता को स्पष्ट करना भी प्रतिवेदन की विषय–वस्तु का एक प्रमुख भाग है। समस्या विवरण प्रस्तुत करते समय अध्ययनकर्ता प्रायः इन

प्रश्नों का उत्तर प्रस्तुत करता है कि अध्ययन से सम्बन्धित समस्या की पृष्ठभूमि क्या रही है? अध्ययन के लिए उस विशेष समस्या को ही क्यों चुना गया। इसके बारे में शोधकर्ता की उपकल्पनाएं क्या है? इस अध्ययन की सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक उपयोगिता क्या हो सकती है? सम्बन्धित विषय को लेकर अतीत में कौन से अध्ययन किये गये तथा प्रस्तुत अध्ययन पहले के अध्ययनों से किस प्रकार भिन्न है, आदि। समस्या का विवरण प्रस्तुत करते समय ही विशेष पक्षों को भी स्पष्ट कर दिया जाता है, जिन पर पाठकों को विशेष ध्यान देना आवश्यक हो।

3— अध्ययन का उद्देश्य— प्रत्येक अध्ययन का निश्चित उद्देश्य अवश्य होता है जिसे स्पष्ट करना प्रतिवेदन की विषय—वस्तु का एक प्रमुख अंग है। कोई अध्ययन या तो ज्ञान विस्तार करने के उद्देश्य से किया जाता है अथवा किसी व्यावहारिक लाभ को प्राप्त करने के लिए इस दृष्टिकोण से प्रतिवेदन में इस तथ्य का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाता है कि सम्बन्धित अध्ययन का उद्देश्य नवीन ज्ञान को प्राप्त करना, पूर्व—निर्मित सिद्धान्तों का परीक्षण करना अथवा किन्ही संगठन द्वारा सम्पन्न किया जाता है तो इसके उद्देश्य पहले से ही निर्धारित रहते हैं। किन्तु इसके बाद भी अध्ययन की रिपोर्ट लिखते समय इन उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से लिखना आवश्यक समझा जाता है। एक शोधकर्ता अपने शोध प्रतिवेदन में सभी सामान्य और विशिष्ट उद्देश्यों पर व्यापक प्रकाश डालता है, जो अध्ययन के प्रत्येक पक्ष से सम्बन्धित रहते हैं।

3— समग्र का स्पष्टीकरण— यदि कोई अध्ययन प्राथमिक तथ्यों पर आधारित अथवा अनुभवसिद्ध हो तो इससे सम्बन्धित प्रतिवेदन को लिखते समय इसके समग्र अध्ययन—क्षेत्र की विशेषताओं को स्पष्ट करना आवश्यक होता है जिसमें वह अध्ययन आयोजित किया गया हो। इस कार्य के लिए समग्र की भौगोलिक स्थिति, सांस्कृतिक विशेषताओं, सामाजिक संगठन एवं जनसंख्यात्मक विशेषताओं का संक्षेप में वर्णन करना आवश्यक होता है। रिपोर्ट में यह भी लिखा जाता है कि सम्पूर्ण समग्र में से अध्ययन किस विशेष भाग को आधार मानकर किया गया है, समग्र में से कुछ विशेष इकाइयों के चयन का आधार क्या रखा गया? अध्ययन के लिए जिन इकाइयों का चयन किया गया हो उनकी आधारभूत विशेषताओं का उल्लेख भी प्रतिवेदन की विषय—वस्तु होती है।

5— प्रयुक्त अध्ययन पद्धतियों का उल्लेख— प्रत्येक सामाजिक शोध के लिए एकाधिक अध्ययन पद्धतियों एवं प्रविधियों का उपयोग करने की आवश्यकता होती है। इन पद्धतियों एवं

प्रविधियों का उल्लेख शोध प्रतिवेदन की विषय–वस्तु का एक प्रमुख अंग है। इसका तात्पर्य यह है कि प्रतिवेदन लिखते समय इस बात का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए कि तथ्यों के संकलन एवं विवेचन में किस पद्धति का उपयोग किया गया तथा अन्य पद्धतियों की तुलना पर वह किस आधार पर अधिक उपयोगी समझी गई? किसी विशेष पद्धति के उपयोग में यदि कुछ कठिनाइयाँ हो तो उनका भी उल्लेख करना आवश्यक समझा जाता है। तथ्यों का संकलन यदि प्रश्नावली अथवा अनुसूची के द्वारा किया गया हो तो प्रतिवेदन के साथ उसकी एक प्रति भी संलग्न कर दी जाती है। शोध कार्य में अनेक द्वैतीयक तथ्यों का भी उपयोग किया जाता है, अतः प्रतिवेदन में ऐसे तथ्यों के स्त्रोतों को भी सन्दर्भ के रूप में दिया जाना चाहिए।

6– निदर्शन का स्वरूप– प्रतिवेदन की विषय–वस्तु में निदर्शन की प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है। इस दृष्टिकोण से प्रतिवेदन में यह स्पष्ट करना आवश्यक होता है कि सर्वेक्षण अथवा शोध से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करने के लिए निदर्शन पद्धति का उपयोग किया गया अथवा जनगणना पद्धति का। तथ्यों का संकलन यदि निदर्शन पद्धति के आधार पर किया गया हो तो यह स्पष्ट करना भी आवश्यक होता है कि निदर्शन किस विशेष विधि के द्वारा प्राप्त किया गया? निदर्शन के लिए जितनी इकाइयाँ निर्धारित की गई वे सम्पूर्ण समग्र का प्रतिनिधित्व करने के लिए किस आधार पर पर्याप्त हैं तथा निदर्शन से सम्बन्धित इकाइयों से सम्पर्क स्थापित करने में क्या प्रक्रिया अपनायी गई?

7– सर्वेक्षण का संगठन– अध्ययन से सम्बन्धित संगठन का उल्लेख भी प्रतिवेदन की विषय–वस्तु का एक प्रमुख भाग होता है। इस आधार पर प्रतिवेदन प्रस्तुत करते समय सर्वेक्षण के संगठन से सम्बन्धित अध्ययन के लिए कार्यकर्ताओं का अध्ययन किस प्रकार किया गया, उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था क्या थी?, कार्य विभाजन का स्वरूप क्या था?, कार्यकर्ताओं द्वारा प्रश्नावली अथवा अनुसूची के द्वारा तथ्यों का संकलन एवं उनकी परिशुद्धता की जाँच किस प्रकार की गई, तथ्यों के सम्पादन व संकेतीकरण की व्यवस्था किस प्रकार की गई तथा सम्पूर्ण अध्ययन के लिए निर्धारित समय क्या रखा गया आदि पक्ष, शोध–प्रतिवेदन की विषय–वस्तु से सम्बन्धित हैं। किसी भी प्रतिवेदन के अन्तर्गत इन सब पक्षों का उल्लेख होना इसलिए आवश्यक होता है कि अन्य लोग इन्हीं के सन्दर्भ में आँकड़ों की वैधता का मूल्यांकन करते हैं।

8– तथ्यों का विश्लेषण– शोध प्रतिवेदन का यह अंक सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इसके अन्तर्गत सबसे पहले महत्वपूर्ण तथ्यों को इनके वास्तविक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। तथ्यों को विभिन्न वर्गों अथवा सारणियों में प्रस्तुत करने के लिए संकेतन की जिस प्रणाली को उपयोग में लाया गया है, इसका भी उल्लेख कर दिया जाता है। इसके पश्चात् तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने के लिए जिन विधियों को प्रयोग में लाया गया हो, उनका स्पष्टीकरण करने के लिए ही साख्यिकीय निष्कर्षों को चित्रों के रूप में स्पष्ट कर दिया जाता है। प्रतिवेदन के इस स्तर पर ही अव्यस्थित और नीरस आँकड़ों को व्यवस्थित और आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। एक शोधकर्ता विभिन्न तथ्यों के बीच पाये जाने वाले कार्य–कारणों के सम्बन्धों की ही व्याख्या नहीं करता बल्कि उनके आधार पर प्रमुख प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डालता है। तथ्यों को सरस बनाने के लिए अनेक फोटो एवं विशिष्ट प्रसंगों का भी उपयोग किया जाता है जिससे प्रतिवेदन को पढ़ने में पाठकों की रूचि बनी रहे।

9– सुझाव– सामाजिक शोध का उद्देश्य केवल सैद्धान्तिक ज्ञान में वृद्धि करना ही नहीं होता बल्कि सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों को व्यावहारिक ज्ञान भी प्रदान करना होता है। इस दृष्टिकोण से शोधकर्ता अपने अध्ययन के आधार पर कुछ ऐसे सुझाव भी प्रस्तुत करता है जिनकी सहायता से किसी विशेष समस्या का समाधान किया जा सके अथवा विषय को अधिक व्यावहारिक रूप से समझा जा सकें। सरकारी अथवा गैर–सरकारी संगठनों द्वारा किये जाने वाले सर्वेक्षणों का अन्तिम उद्देश्य ही विषय से सम्बन्धित कुछ व्यावहारिक सुझाव प्राप्त करना होता है। प्रतिवेदन में जो भी सुझाव दिये जाते हैं वे मुख्यतः दो भागों में विभाजित होता है–प्रथम वे जो अध्ययन के दौरान सूचनादाओं द्वारा दिये गये हों तथा दूसरे वे जो अध्ययनकर्ता द्वारा समस्त दशाओं को ध्यान में रखते हुए दिये जाते हैं। सुझाव लिखते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि वे सुझाव व्यावहारिक होने के साथ ही तार्किक एवं पक्षपात रहित हों।

10– संलग्नक सूचनाएँ– साधारणतया सुझाव प्रस्तुत करने के साथ ही प्रतिवेदन का लेखन कार्य समाप्त हो जाता है परन्तु कुछ दस्तावेज एवं विवरण ऐसे होते हैं जिन्हें विभिन्न तथ्यों की प्रमाणिकता को सिद्ध करने के लिए अथवा एक विशेष प्रसंग को विस्तार में स्पष्ट करने के लिए प्रतिवेदन के साथ संलग्न करना आवश्यक होता है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ऐसे प्रलेखों को सम्बन्धित विषय का विवेचन करने के लिए साथ ही प्रस्तुत किया जा सकता है लेकिन ऐसा करने से प्रतिवेदन अधिक बोझिल और नीरस बन जाता है। इसलिए यह

आवश्यक समझा जाता है कि मुख्य विवेचन के समय बहुत अधिक महत्वपूर्ण तथ्यों का ही उल्लेख किया जाए जबकि सहायक तथ्यों, विभिन्न मानचित्रों, पत्रों, लम्बी तालिकाओं एवं पुस्तक सूचियों आदि को परिशिष्ट अथवा संलग्न सूचना के रूप में अन्त में प्रस्तुत किया जाए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि सामाजिक शोध अथवा सर्वेक्षण पर आधारित प्रतिवेदन की विषय–वस्तु में अनेक पक्षों का समावेश होता है तथा प्रत्येक पक्ष का लेखन एक व्यवस्थित क्रम में ही किया जाना चाहिए। यह सच है कि प्रतिवेदन तैयार करने के क्रम का कोई सर्वमान्य नियम नहीं है तथा अध्ययनकर्ता सुविधानुसार इसके क्रम में अल्प–परिवर्तन भी कर सकता है लेकिन प्रतिवेदन के प्रत्येक स्तर पर अध्ययनकर्ता को यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि प्रतिवेदन की विषय–वस्तु सम्बन्धित किसी भी प्रमुख पक्ष की विवेचना छूट न जाए। इस प्रकार रिपोर्ट को तैयार करने से जहाँ एक ओर शोधकर्ता को तथ्यों की प्रमाणिकता की जाँच कर लेने का अवसर मिलता है वहीं सामान्य व्यक्ति भी प्रतिवेदन की सहायता से निष्कर्षों की प्रामाणिकता को समझ सकते हैं।

प्रतिवेदन का महत्व – प्रतिवेदन लेखन के सन्दर्भ में की गई विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक अनुसंधान में प्रतिवेदन का अत्यधिक महत्व है। प्रतिवेदन के माध्यम से विषय समस्या से सम्बन्धित ज्ञान का विस्तार और प्रचार होता है। इसके द्वारा अनुसंधान द्वारा प्राप्त नये तथ्यों तथा निष्कर्षों से अन्य लोग अवगत होते हैं तथा तथ्यों के कार्य–कारण सम्बन्धों को प्रकट करके उनके मध्य सम्बन्धों से जनसामान्य के व्यावहारिक ज्ञान में वृद्धि होती है। प्रतिवेदन लेखन को पढ़कर नवीन अध्ययन करने वालों को एक दिशा एवं अध्ययन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण जानकारियों का ज्ञान होता है। साथ ही प्रतिवेदन के द्वारा परिकल्पनाओं का निर्माण करना सहज कार्य हो जाता है। प्रतिवेदन के अध्ययन से प्रयुक्त की गई अध्ययन पद्धतियों का न केवल ज्ञान ही होता है, बल्कि अध्ययन पद्धतियों का परीक्षण सुधार एवं नवीन अध्ययन पद्धतियों की खोज में सहायक होता है। प्रतिवेदन के अध्ययन द्वारा भावी अध्ययनकर्ता को अपने अध्ययन के लिए श्रेष्ठ से श्रेष्ठ अध्ययन पद्धति का चयन करने का ज्ञान मिल जाता है और अध्ययनकर्ता अपने विषय की प्रकृति के अनुसार श्रेष्ठ अध्ययन पद्धति का अपने अध्ययन में उपयोग कर सकता है। प्रतिवेदन के आधार पर विषय समस्या से सम्बन्धित विभिन्न विद्वान, समाज सुधारक, बुद्धिजीवियों तथा संस्थाओं द्वारा दिये गये विचारों का ज्ञान सुगमता से हो जाता है। साथ ही

प्रतिवेदन समाज सुधार की नवीन योजनाएँ समस्याओं के निराकरणों में भी सहयोगी साबित हो सकते हैं। इस प्रकार प्रतिवेदन लेखन मात्र अनुसंधान प्रक्रिया का अन्तिम चरण नहीं समझा जाना चाहिए बल्कि प्रतिवेदन का अपना सामाजिक महत्व एवं उपयोगिता होती है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. शोध प्रबंध की विषय वस्तु से आप क्या समझते हैं?

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. प्रस्तावना या भूमिका के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

25.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में शोध प्रबन्ध के विषय वस्तु के बारे में प्रकाश डाला गया है। वास्तव में शोध प्रतिवेदन की विषय वस्तु में विभिन्न इकाइयों, पारिभाषिक शब्दों, तथ्यों तथा निष्कर्षो को इस प्रकार प्रस्तुत करना आवश्यक होता है कि उनकी प्रासंगिकता एवं अभिप्राय को सभी के द्वारा समझा जा सके। इसका तत्पर्य यह है कि शोध प्रतिवेदन सम्पूर्ण शोधकार्य का एक व्यवस्थित सार होता है। इसी निष्कर्ष को सामान्यीकरण के नाम से जाना जाता है जब सामान्यीकरण को विज्ञान की सहायता से लिख दिया जाता है तो यही प्रतिवेदन कहलाता है।

प्रस्तुत इकाई में शोध प्रबन्ध की विषय वस्तु के बारे में वर्णन करते हुए लिखा गया है जिसमें प्रस्तावना, समस्या का विवरण, अध्ययन का उद्देश्य, समग्र का स्पष्टीकरण, प्रयुक्त अध्ययन पद्धतियों का उल्लेख, निदर्शन का स्वरूप, सर्वेक्षण का संगठन, तथ्यों का विश्लेषण, सुझाब एवं संलग्न सूचनाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में वृद्धि करायेगी तथा आप लोग शोध प्रबन्ध की विषय वस्तु के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

25.5 पारिभाषिक शब्दावली

शोध प्रतिवेदन– इसका तात्पर्य शोध के आरम्भ से अन्त तक अध्ययन–विषय की विभिन्न इकाइयों, पारिभाषिक शब्दों, तथ्यों तथा निष्कर्षों को इस प्रकार प्रस्तुत करना आवश्यक होता है कि उनकी प्रासंगिकता एवं अभिप्राय को सभी के द्वारा समझा जा सके। इसका तात्पर्य यह है कि शोध–प्रतिवेदन सम्पूर्ण शोध कार्य का एक व्यवस्थित सार होता है। इसी निष्कर्ष को सामान्यीकरण के नाम से जाना जाता है जब सामान्यीकरण को विज्ञान की सहायता से लिख दिया जाता है तो यही प्रतिवेदन कहलाता है।

अभ्यास प्रश्न

लघु

1– प्रतिवेदन से आप क्या समझते हैं?

2– शोध प्रतिवेदन की विषय वस्तु पर प्रकाश डालिये।

3— पी.वी. यंग द्वारा उल्लेखित शोध प्रतिवेदन की विषय वस्तु के बारे में चर्चा कीजिए।

4— प्रस्तावना से आप क्या समझते हैं?

5— अध्ययन के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिये।

विस्तृत—

1— शोध प्रबन्ध की विषय वस्तु पर एक निबन्ध लिखिए।

25.6 संदर्भ—ग्रन्थ सूची

1— अमेरिकन मार्केटिंग सोसाइटी, ''टेक्निक्स ऑफ मार्केटिंग रिसर्च'' बाई गुडे एण्ड हॉट इन देयर मेथड्स इन सोशल रिसर्च, वर्ष — 1952, पेज — 359

2— यंग पी0 वी0, साइंटिफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च, प्रेंटिस हाल, न्यूयार्क, वर्ष — 1951, पेज — 489—490

3— गोयल, सुनील एवं गोयल, संगीता, उच्चतर सामाजिक अनुसंधान, (शोध), आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष — 2005, पेज — 201, 205—210

खण्ड–पंचम
शोध प्रतिवेदन

इकाई : 26 संदर्भ ग्रंथों का प्रयोग एवं प्रस्तुतिकरण

26.0 इकाई का उद्देश्य

26.1 परिचय

26.2 संदर्भ ग्रंथों का प्रयोग एवं प्रस्तुतिकरण

26.3 प्रतिवेदन को टंकित करना

26.4 सार–संक्षेप

26.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न, लघु, विस्तृत

26.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

26.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय गवेषणार्थियों प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य संदर्भ ग्रंथों का प्रयोग एवं प्रस्तुतीकरण किस प्रकार किया जाता है तथा उनको लिखने का तरीका क्या है? के बारे में आप लोगों को जानकारी प्रदान करना है।

वास्तव में इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1– पुस्तकों, लेखकों तथा जर्नल्स को किस प्रकार संदर्भ ग्रंथ सूची में रखा जाता है, के बारे जान सकेंगे।

2– पाद टिप्पणियों को कैसे लिखा जाता है, के बारे प्रकाश डाल सकेंगे।

3– संदर्भ ग्रंथों का प्रयोग एवं उनका प्रस्तुतिकरण कैसे किया जाता है, के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

26.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों अनुसंधान प्रतिवेदन में अनुसंधानकर्ता को अनेक संदर्भों का उपयोग करना पड़ता है तथा अन्य अध्यताओं द्वारा किये गये विचारों को उद्धरित करना पड़ता है। अनुसंधान

आचार संहिता का एक नियम यह है कि किसी भी संदर्भ को काम में लेने पर उसका स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए। यदि संदर्भ साहित्य से केवल एक या दो वाक्य लिए जाएँ तो उन्हें मूल कलेवर के साथ ही उर्ध्व अर्ध विराम में लिख देना चाहिये। किन्तु उद्धरण लम्बा हो तो उसे मूल कलेवर के साथ न मिलाकर अलग से लिखना चाहिए । मूल सामग्री का टंकण यदि डबल स्पेसिंग में किया गया हो तो उद्धरण को सिंगल स्पेसिंग से टंकित करना चाहिए।

जहाँ उद्धरण समाप्त हो वहाँ क्रमांक लगाकर पृष्ठ के नीचे भाग में उसी क्रमांक को लिखते हुए उद्धरण के संदर्भ का पूरा ब्यौरा देना चाहिए। संदर्भ साहित्य को लिखने की विधि का उल्लेख हम इसी इकाई में कर रहे हैं।

प्रस्तुत इकाई में सन्दर्भ ग्रन्थों के प्रयोग एवं प्रस्तुतिकरण के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि जहाँ से उद्धरण लिये गये हो अथवा जिनकी सहायता ली गयी हो उन ग्रन्थों की सन्दर्भ ग्रंथ सूची प्रतिवेदन के अन्त में अवश्य दी जानी चाहिए। पाद टिप्पणियों के बारे में लिखते हुए बताया गया है कि केवल नाम स्पष्ट रूप से लिखा जाता है बाकी के उद्धरण उसी पृष्ठ की संख्या को स्पष्टतः लिख लिया जाता है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों को सन्दर्भ ग्रंन्थों के प्रयोग एवं प्रस्तुतिकरण के बारे में वृहद ज्ञान प्रदान करेगी।

26.2 संदर्भ ग्रंथों का प्रयोग एवं प्रस्तुतिकरण

अनुसंधान प्रतिवेदन में जिन संदर्भ–ग्रंथों से उद्धरण लिये गये हों अथवा जिनकी सहायता ली गई हो उन ग्रन्थों की संदर्भ–ग्रन्थ सूची प्रतिवेदन के अन्त में अवश्य दी जानी चाहिये। संदर्भ ग्रंन्थों को वर्णाक्षर क्रमानुसार सन्दर्भ–ग्रंन्थ सूची में सूचीबद्ध किया जाता है। उद्धरण जिन ग्रंन्थों से लिये गये हों उनका उल्लेख उसी पृष्ठ पर पाद टिप्पणियों के रूप में होना चाहिए। संदर्भ–ग्रंन्थ सूची एवं पाद टिप्पणियाँ लिखने की भी एक सर्वमान्य विधि है जिसका उल्लेख करना यहाँ परमोपयोगी सिद्ध होगा–

1– पुस्तकें– सन्दर्भ–ग्रंथ सूची में पुस्तकों का उल्लेख करते समय जो क्रम अपनाया जाता है वह निम्नलिखित है–

लेखक का नाम, पुस्तक का नाम, प्रकाशन का स्थान, प्रकाशक का नाम तथा प्रकाशन तिथि एवं वर्ष।

2– लेखक का नाम – लेखक का नाम लिखने का भी एक विशेष क्रम रहता है। सर्वप्रथम अन्तिम नाम, फिर प्रथम नाम तथा अन्त में मध्य नाम दिया जाता है। अन्तिम नाम के बाद अर्ध विराम, तत्पश्चात् प्रथम नाम तथा मध्य नाम दिया जाता है तथा पुनः उसके बाद में अर्ध विराम दिया जाता है।

3– लेखकों के नाम– यदि एक से अधिक लेखक हों तो सर्वप्रथम लेखक का नाम (अन्तिम नाम पहले), इसके बाद आगामी लेखक अथवा लेखकों के नाम, अंतिम नाम से पहले प्रथम तथा मध्य नाम, विभिन्न लेखकों के नाम के बीच अर्ध विराम लगाया जाता है तथा अन्त में भी अर्ध विराम लगाया जाता है।

4– पुस्तक का शीर्षक –लेखक के नाम के पश्चात् का शीर्षक (टेढ़े अक्षरों में) लिखा जाता है, इसके बाद पूर्ण विराम का चिन्ह देना चाहिए।

5– प्रकाशन का स्थान –लेखक का नाम, पुस्तक का शीर्षक तथा प्रकाशन का स्थान अंकित करने के पश्चात् प्रकाशक का नाम लिखना चाहिए, तत्पश्चात् अर्धविराम का चिन्ह देना चाहिए।

6– प्रकाशक का नाम– लेखक का नाम, पुस्तक का शीर्षक तथा प्रकाशन का स्थान अंकित करने के पश्चात् प्रकाशक का नाम लिखना चाहिए, तत्पश्चात् अर्धविराम का चिन्ह देना चाहिए।

7– प्रकाशन तिथि एवं वर्ष– लेखक का नाम, पुस्तक का शीर्षक, प्रकाशन का स्थान तथा प्रकाशक का नाम लिखने के पश्चात् प्रकाशन तिथि एवं वर्ष लिखना चाहिये, तत्पश्चात् पूर्ण विराम देना चाहिए।

कुछ अनुसंधानों में यह स्पष्ट करने के लिए कि संदर्भ–ग्रन्थ एक सम्पूर्ण पुस्तक है अथवा छोटी–सी विवरणिका, अन्त में पृष्ठ संख्या भी लिख दी जाती है। उपर्युक्त बातें अग्रलिखित उदाहरण से और भी स्पष्ट हो जायेंगी–मेज, जोन, दि ओरिजिंस ऑफ साइंटिफिक सोशियालॉजी। न्यूयार्कः हाल्ट, दि फ्री प्रेस ऑफ स्लेनकों, इंक 1962।

सेलटिज, क्लेयर, मेरी जहोदा, मार्टन डिउक, एण्ड एस, डब्ल्यू, कूक, रिसर्च मेथड्स इन सोशल रिलेशन्स। न्यूयार्कः हाल्ट, रिनेहार्ट तथा बिन्स्टन, इंक, 1959

स्टाउफर, एस.ए., मेजरमेंट एण्ड प्रिडिक्शन। प्रिंसटनः प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1950। चेप्टर–XII "टु केस स्टडिज इन प्रिडिक्शन", पृष्ठ 473–483

8– पाद टिप्पणियों में पुस्तक लिखने का शेष तरीका वही रहता है। केवल लेखक का नाम सामान्य रूप से लिखा जाता है तथा अन्त में पुस्तक के जिस पृष्ठ से उद्धरण लिया जाता है उस पृष्ठ की संख्या लिख दी जाती है। जैसे, उपर्युक्त प्रथम उदाहरण में दी गई पुस्तक के 41 वे पृष्ठ से हमने कोई उद्धरण लिया हो तथा उसका पाद–टिप्पणी में उल्लेख करना हो तो हम निम्नलिखित प्रकार से करेंगे–

जॉन मेज, दि ओरिजिंस ऑफ साइंटिफिक सोशियालॉजी। न्यूयार्क : दि फ्री प्रेस ऑफ ग्लेनकों, इंक, 1962, पृष्ठ 41।

पुस्तक यदि किसी संस्था एवं संगठन द्वारा लिखी गई हो तो उसको निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है–

एन.एस.एस.ई. रीडिंग इन एलिमेन्टरी स्कूल इयर बुक, द्वितीय भाग शिकागों, दि यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागों प्रेस, 1949।

यदि पुस्तक किसी विशेष लेखक के नाम से प्रकाशित न होकर सम्पादक के नाम से प्रकाशित हुई हों तो लेखक के नाम के स्थान पर सम्पादक का नाम लिखना चाहिए। शेष प्रारूप पूर्ववत् ही रहेगा। यदि विश्वकोषों में से उद्धरण देना हो, तो उसे निम्नलिखित प्रकार से लिखा जा सकता है–

हिन्दी विश्वकोष, खण्ड 4, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 1964, पृ. 7, एनसाइक्लोपेडिया ब्रिटानिका, वाल्यूम 2, एनसाइक्लोपडिया ब्रिटनिका, इंक, शिकागों, लंदन, टोरेंट, 1955, पृ. 102।

9– पत्रिकाएँ या जर्नल्स –प्रतिवेदन में पत्रिकाओं की चर्चा करते समय निम्नलिखित क्रम अपनाया जा सकता है। लेखक का नाम (संदर्भ–ग्रंथ सूची में उल्टा तथा पाद–टिप्पणियों में सामान्य रूप से), लेख का शीर्षक, पत्रिका का नाम, ग्रंथ संख्या, प्रकाशन तिथि, पृष्ठ संख्या। निम्नलिखित उदाहरण से यह स्पष्ट किया जा सकता है– लेजार्स फिल्ड, पॉल, 'दि सोशियालॉजी ऑफ इम्पीरिकल सोशल रिसर्च' अमेरिकन सोशियालॉजिकल रिब्यू, XXVII, 1962, पृष्ठ 757–767 ।

10– पाद–टिप्पणियों में काम आने वाले कुछ महत्वपूर्ण संकेत –प्रतिवदेन में पाद–टिप्पणियों को लघु आकार प्रदान करने के लिए अनेक बार कुछ महत्वपूर्ण संकेतों का प्रयोग किया जाता है। विवेचनागत अध्ययन की सुगमता हेतु इन संकेतों के अंग्रेजी तथा हिन्दी दोनों रूप यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

(1) यदि प्रतिवेदन में एक विशेष संदर्भ–ग्रंथ का यदि एक बार उल्लेख किया जा चुका है तथा पुनः उसी ग्रन्थ का

उल्लेख करना हो तो Ibid अथवा तत्रैव का प्रयोग किया जाता है। तत्रैव लिखने के उपरान्त उस ग्रन्थ का पूरा विवरण देने की आवश्यकता नहीं रहती है। इसे निम्नलिखित रूप से लिखा जा सकता है–

तत्रैव, पृष्ठ संख्या 150, (Ibid, p. 150)

इसका तात्पर्य यह है कि इस सन्दर्भ के पूर्व उल्लिखित संदर्भ की पृष्ठ संख्या 150 से यह उद्धरण लिया गया हो।

(2) प्रतिवेदन में यदि पहले किसी उल्लिखित पुस्तक के अन्य पृष्ठ से उद्धरण प्रस्तुत किया गया है तो op.cit अथवा पूर्वोक्त संकेत का प्रयोग कर लेखक का नाम अंकित करना चाहिए। निम्नलिखित उदाहरणों से इसका स्पष्टीकरण किया जा सकता है–

पी.वी. यंग, पूर्वोक्त, पृ. 215 इसका अभिप्राय यह है कि पी. वी. यंग द्वारा लिखी गई पुस्तक, जिसकी चर्चा पहले की जा चुकी है, की पृष्ठ संख्या 215 से यह उद्धरण प्रस्तुत किया गया है। वाचकों की सुविधा हेतु यदि पुस्तक का उल्लेख किसी दूसरे अध्याय में किया गया हो तो इस संकेत का प्रयोग नहीं करना चाहिए। उस स्थिति में भी इस संकेत का प्रयोग नहीं करना चाहिए जब तक लेखक द्वारा लिखी गयी एक से अधिक पुस्तकों का उल्लेख किया गया हो।

(3) प्रतिवेदन में यदि पूर्व उल्लिखित पुस्तक के उसी पृष्ठ के सन्दर्भ से उद्धरण प्रस्तुत किया गया हो तब भी Ibid अथवा तत्रैव संकेत का प्रयोग किया जा सकता है। परन्तु पृष्ठ संख्या का उल्लेख नहीं करना चाहिए। Ibid अर्थात् तत्रैव संकेत के स्थान Locit अर्थात् तत्स्थान संदर्भित शब्द का प्रयोग भी किया जा सकता है। परन्तु इस संकेत का प्रयोग अपेक्षाकृत कम मात्र में किया जाता है। इसका स्पष्टीकरण निम्नलिखित उदाहरण के आधार पर किया जा सकता है।

पी.वी. यंग, तत्रैव या तत्स्थान संदर्भित, इसका तात्पर्य यह है कि पी.वी. यंग की पुस्तक के उसी पृष्ठ से उद्धरण को प्रस्तुत किया गया है जिस पृष्ठ से पूर्व संदर्भित उद्धरण प्रस्तुत किया गया था।

(4) प्रतिवेदन में उद्धरण यदि पुस्तक के एक पृष्ठ से लिया गया हो तो p. अथवा पृष्ठ तथा यदि दो अथवा अधिक पृष्ठों से लिया गया हो तो pp अथवा पृष्ठ संकेत का प्रयोग किया जाता है। इसे निम्नलिखित प्रकार से लिखा जा सकता है।

पृष्ठ 220 (p.220)

पृष्ठ 323–324 (pp.323-324)

26.3 प्रतिवेदन को टंकित करना

व्यावहारिक रूप में अनुसंधान व सर्वेक्षण का प्रतिवेदन टंकित करके ही प्रस्तुत किया जाता है, यद्यपि बाद में मुद्रित कराया जा सकता है। अतः यह तथ्य विचारणीय है कि कौन–सी ऐसी बातें हैं जिन्हें प्रतिवेदन को यथा सम्भव विशुद्ध एवं सही रूप में टंकित करने हेतु ध्यान में रखना चाहिए। सामाजिक अनुसंधानों के अन्तर्गत प्रस्तुत किये जाने वाले प्रतिवेदनों के विरूद्ध प्रायः यह शिकायत की जाती है कि इनका टंकण प्रायः परिशुद्ध नहीं होता है अथवा टंकित सामग्री को पढ़ा जाना कभी–कभी कठिन हो जाता है, क्योंकि अक्सर घिसे–पिटे ढंग से टंकित किया जाता है। वास्तव में, परिशुद्ध रूप से टंकित प्रतिवेदन उसको रूप, स्पष्टता तथा अर्थ प्रदान करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है, तथा वाचक अनुसंधान की सामग्री को सरलता एवं स्पष्टता से समझ लेता है। उत्कृष्ठ अनुसंधान भी यदि अवैज्ञानिक रूप से टंकित करके प्रस्तुत किया जाय तो उनके परिणामों की ओर वाचक एक शंका भरी दृष्टि से देखता है। अतः अनुसंधान सामग्री को सुन्दर ढंग से टंकित करना चाहिए। इस प्रकार एक सुसंगठित सामाजिक अनुसंधान प्रतिवेदन आरम्भिक परिचय से अंतिम संक्षिप्त तक इस प्रवाहित ढंग से प्रस्तुत करना है जिसमें एक–दूसरे से संम्बन्धित तथ्य–सामग्री स्वाभाविक रूप से निकाले गये निष्कर्ष, सामान्यीकरण, महत्वूर्ण प्रश्नों में रुचि एवं सम्बद्ध प्रतिवेदन के विषय से तर्कपूर्ण ढंग से एकीकृत हैं जिससे सम्पूर्ण प्रतिवेदन एक पूर्ण अवयव प्रतीत होता है। इस प्रकार का प्रतिवेदन, तैयार करने एवं प्रस्तुत करने के लिए समाज विज्ञानवेता में सामाजिक अनुसंधान पद्धतियों के व्यवहार का प्राविधिक कौशल, विषय–सम्बन्धी गहरे ज्ञान, पूर्णता एवं धैर्य, सत्यता, दूरदर्शिता तथा सामान्य सामाजिक अनुसंधान में विवेचित विशिष्ट परिस्थितियों में व्यवहार करने की योग्यता तथा अन्तिम, निष्पक्षता तथा व्यक्तिगत विश्वास एवं भावनाओं की अपेक्षा करके सत्य को संचारित करने की इच्छा के गुण अपेक्षित होते हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. संदर्भ ग्रंथ सूची लिखने के तरीकों के बारे में बताइये।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. पाद टिप्पणियों के आप क्या समझते हैं।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

26.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में सन्दर्भ ग्रन्थों के प्रस्तुतिकरण एवं प्रयोग के बारे में चर्चा की गयी है जिसमें बताया गया है कि अनुसंधान प्रतिवेदन में जिन सन्दर्भ ग्रंथों से उद्धरण लिये गये हैं अथवा जिनकी सहायता ली गयी है, के बारे में सूचना सन्दर्भ ग्रन्थ सूची के माध्यम से प्रदान करना चाहिए। सन्दर्भ ग्रन्थ सूची में पुस्तकों का उल्लेख करते समय सर्वप्रथम लेखक का नाम, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का स्थान, प्रकाशक का नाम तथा प्रकाशन तिथि एवं वर्ष का उल्लेख करना चाहिए। इसी इकाई में लेखक का नाम, पुस्तक का शीर्षक, प्रकाशन का स्थान, प्रकाशक का नाम एवं प्रकाशन तिथि एवं वर्ष को किस प्रकार लिखा जाये, के बारे में वृहद चर्चा प्रस्तुत की गयी है।

इसी इकाई में पाद टिप्पणियों को किस प्रकार लिखा जाता है, के बारे में ब्यौरा दिया गया है। इकाई के अन्त में प्रतिवेदन को किस प्रकार टंकित करना चाहिए, के बारे में चर्चा की गयी है।

आशा ही नही बल्कि पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई सन्दर्भ ग्रन्थों एवं प्रस्तुतिकरण के बारे में आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी।

26.5 पारिभाषिक शब्दावली

संदर्भ ग्रन्थों का प्रयोग– संदर्भ ग्रंथों के प्रयोग से तात्पर्य अभिलेखन के समय जिस किसी भी पुस्तक से उद्धरण अथवा सामग्री ली जाती है, के बारे में लेखक, पुस्तक का शीर्षक, प्रकाशन का स्थान, प्रकाशक का नाम, प्रकाशन तिथि एंव वर्ष के बारे में जानकारी प्रदान करने से है।

पाद टिप्पणियां– पाद टिप्पणियों से आशय है कि सन्दर्भ ग्रन्थों को जिस पृष्ठ पर उद्धरण लिया जाता है। उसी पृष्ठ पर नीचे के तरफ अंकित कर दिया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

लघु

1– सन्दर्भ ग्रंथों के प्रयोग से आप क्या समझते हैं।

2– पाद टिप्पणियों को किस प्रकार लिखा जाता है।

3– किसी एक उदाहरण के द्वारा सन्दर्भ ग्रन्थों के प्रयोग के बारे में बताइये।

विस्तृत–

1– सन्दर्भ ग्रन्थों के प्रयोग एवं प्रस्तुतीकरण पर एक निबन्ध लिखिए।

26.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सिंह, एस.डी., वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण, वर्ष 1995, पृष्ठ –458–461

2– अमेरिकन मार्केटिंग सोसाईटी टैकनीक ऑफ मार्केटिंग रिसर्च, मैक्ग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, वर्ष–1939, पेज 299

3– गुडे एण्ड हॉट, मैथड्स इन सोशल रिसर्च, मैक्ग्राहिल कम्पनी न्यूयार्क वर्ष–1952, पेज 360

4– यंग, पी0वी0सांइंटिफिक सोशल सर्वे एवं रिसर्च,प्रेटिंस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली वर्ष 1975, पेज 489–490।

MASW-06

समाजिक शोध एवं सांख्यिकी

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

खण्ड–षष्ठ

शोध प्रबन्ध का प्रकाशन

इकाई–27 383–392
शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन की उपयोगिता एवं महत्ता

इकाई–28 393–402
शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन एवं संबंधित समस्यायें

इकाई–29 403–412
शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के प्रकार

इकाई–30 413–420
शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश प्रयागराज

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति – प्रो० प्रो० के०एन० सिंह

विशेषज्ञ समिति

(1) प्रो० एस० त्रिपाठी, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु वि०वि० वाराणसी भूतपूर्व निदेशक, सुलभ इण्टरलेशनल, नई दिल्ली।

(2) प्रो० अमरनाथ सिंह विभागाध्यक्ष समाजकार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

(3) प्रो० अरविन्द जोशी, प्रोफेसर समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(4) डॉ० एम० एन० सिंह पूर्व निदेशक, समाजवि, वि उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

(5) डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता सामजकार्य विभाग वि० उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

परिमापक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष सामजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

सम्पादक

प्रो० ए०एन० सिंह, विभागाध्यक्ष समाजकार्य विभाग, लखनऊ।

समन्वयक

डॉ० अल्का वर्मा, शैक्षणिक परामर्शदाता, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

लेखक

(1) डॉ० राजेश कुशवाहा, समाजकार्य विभाग, डॉ० भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

(2) डॉ० अलका वर्मा, समाजकार्य विभाग, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

सितम्बर, 2020 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2020

ISBN-

सर्वाधिक सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक – कुलसचिव, डॉ. अरूण कुमार गुप्ता उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 20019

मुद्रक – चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज (इलाहाबाद)

खण्ड–षष्ठ
शोध प्रबन्ध का प्रकाशन

इकाई : 27 शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन की उपयोगिता एवं महत्ता

27-0 bdkbl dk mís';

27-1 ifjp;

27-2 vuqdwyrk

27.3 A New Framework for Dynamic Adaptations and Action

27.4 Submission Deadlines

27.5 Camera-Ready Paper Deadline

27.6 Impact Factor

27-7 lkj&la{ksi

27-8 ikfjHkkf"kd 'kCnkoyh

vH;kl iz'u& y?kq] foLr`r

27-9 lanHkZ&xzUFk lwph

2-0 bdkbl dk mís';

प्रिय ज्ञानार्थियों प्रस्तुत इकाई षोध प्रतिवेदन के प्रकाषन की उपयोगिता एवं महत्ता से संबंधित है। इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर पायेंगे–

1– अनुकूलता **के बारे में** जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2& A New Framework for Dynamic Adaptations and Action पर प्रकाश डाल सकेंगे।

3& A New Framework for Dynamic Adaptations and Action से अवगत हो सकेंगे।

4& Submission Deadlines के बारे में जान सकेंगे।

5& Camera-Ready Paper Deadline पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

27.1 परिचय

षोध प्रतिवेदन के परिणामों का प्रकाषन षोधकर्ता के व्यावसायिक जीवन का एक अनिवार्य अंग है। हालांकि, लेखन सभी षोधकर्त्ताओं का पसंदीदा क्रियाकलाप नहीं है, और साथ ही षोध प्रतिवेदन का प्रकाषन एक बहुत ही थका देने वाली तथा समय की बर्बादी करने वाली प्रक्रिया हो सकती है। लेकिन सौभाग्यवष, षोध प्रतिवेदन के लेखन व प्रकाषन की बहुत सारी बाधायें मात्र कुछ मार्गदर्षन व अभ्यास से दूर की जा सकती हैं।

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि षोध और प्रकाषन गतियों का अपना महत्व होता है और अलग–अलग प्रकाषन की अलग–अलग महत्ता होती है।

विष्वविद्यालयों में अकादमिक उपाधि प्राप्त करने के लिये षोध और प्रकाषन क्रियाओं को महत्व दिया जाता है और सभी विष्वविद्यालयों का अकादमिक उपाधि प्रदान करने का अपना एक पैमाना होता है। यह पैमाना Research & Development Council }kjk fn;k x;k methodology पर आधारित होता है। इनका पैमाना इस बात के लिये महत्व रखता है कि षोधार्थी का षोध और दूसरी रचनात्मक योग्यतायें और षिक्षण के लिये जरुरी गुणवत्तायें षोधार्थी को षिक्षक नियुक्त करने के लिये विष्वविद्यालयों के द्वारा मांगी जाती हैं। सभी विष्वविद्यालय षोधार्थी के षोध प्रकाषनों के आधार पर उन्हें व्यक्तिगत अंक प्रदान करते हैं जो कि उन्हें नौकरी प्राप्त करने में सहायक होते हैं। इसके साथ ही दूसरा महत्वपूर्ण कारक संकाय द्वारा वृत्तांत के विवरण को भी एक पैमाना माना जाता है। जो कि षोध और विकास के परिणामों का मूल्यांकन करता है। Research and Development Council dh भारत सरकार की एक सलाहकार अंग है।

27-2 vudyrk

षोधार्थी की जिन्दगी में प्रकाषक, संपादक, समीक्षक, समालोचक और मार्गदर्षकों से निर्वाह करना, षोध प्रतिवेदन के प्रकाषन के रास्ते में आने वाली दूसरी चुनौतियों से षायद सबसे ज्यादा थका देने वाली चुनौती होती है।

यह अध्याय षोध प्रतिवेदन के प्रकाषन की प्रेरणा और उसे करने के रास्ते को बताता है। इस अध्याय का मुख्य उद्देष्य प्रारंभिक षोधार्थियों को वैज्ञानिक पत्रों के संरचनात्मक तत्वों और प्रकाषन की विभिन्न विधियों का परिचय कराता है। यह अध्याय केवल अनुषासन संबंधी दृष्टिकोण के स्टाफ उद्देष्यों को कल्पित नहीं करता है। यह अध्याय प्रतिवेदन व प्रकाषन के लिये साहित्य से मदद लेता है और

सामाजिक, प्राकृतिक और तकनीकी विज्ञान से उदाहरण देता है। समाज कार्य में यह भी संभव है कि आप अपना भविश्य मात्र अधिवेषनों में षोध प्रकाषन करके भी बना सकते हैं, जब कि यह और किसी क्षेत्र में संभव नहीं है। षोध प्रतिवेदन के लेखन का एक उद्देष्य तो यह हो सकता है कि षोधकर्त्ता क्या कर रहा है, वह अभी किस विशय पर कार्य कर रहा है, वह यह सब लिखता रहे अन्यथा वह यह सब भूल भी सकता है। समझने के लिये किसी विशय को लेख की तरह लिखना केवल विशय को संरचनात्मक तरीके से पध्दति बना कर ही प्राप्त किया जा सकता है।

यह अपने आप में षोध प्रतिवेदन को लिखने एवं प्रकाषित करने की समझ के आधार को प्राप्त करता है और उस दृश्टिकोण को प्राप्त करके लेख किसी भी चीज को विभिन्न तरीकों से देखना सम्मिलित होता है।

तब भी प्रष्न बना रहता है कि षोधकर्त्ता अपने लेखक को औपचारिक पेपर पर क्यों लिखते हैं। स्वयं के कार्य को लिखने से ज्यादा लेखन दूसरे के बारे में लिखने की मांग करता है लेकिन यह अपने विचारों और परिणामों को समझने में योगदान देता है।

जैसा कि प्रकाषकों का अपने संबंधित क्षेत्र में सिस्टम मेनटेनिंग की भूमिका होती है। षोधकर्ता के लिये अपने षोध कार्य को लिखने और प्रकाषन के अन्य कार्य निम्न हैं –

- प्रज्ञात्मक सम्पत्ति की आदर्ष सुरक्षा।
- सम्मान प्राप्त करना।
- अर्थषास्त्रीय पैमाने पर सोचना एवं उच्च्य दामों पर बेचना।
- कई सम्मानों को प्राप्त करना व उन्हें प्रकाषित कराना (विज्ञान का अर्थषास्त्रीय सिध्दांत)।

षोध प्रतिवेदन के परिणामों को प्रकाषित कराने के तरीकों की व्यावहारिक कारणों की एक सूची प्रदान करना। उनमें कल यह कि यह एक विषेश मूल्य है, वैज्ञानिक विचारों की प्रगति चाहना, ज्यादा श्रोताओं तक पहुंचने की चाह होना, तरक्की के मौकों को सुधारना और यह अनैतिक है कि किसी अध्ययन को आचरित करना और उसके निश्कर्शों को प्रतिवेदित न करना। बहुत से अकादमिकों के लिये पेपर को प्रकाषित करने की आवष्यकता या तो अर्न्तर्निहित है।

उदाहरण के लिये, पी–एच.डी. षोधकर्ता का केस है जो कि संस्थाओं और सुपरवाइजर से प्रकाषक के निष्चित रिकार्ड की मांग करते हैं। peer-reviewed papers या षोधकर्ता के लिये उनके अनुबंध और

वेतन प्रकाषक रिकार्ड पर निर्भर करता है। षोध प्रतिवेदन की संरचना 3 बातों को सम्मिलित करता है–

- परिचय
- अंग
- चर्चा

यह परिचय पाठक के सामान्य अभिप्रेरणा और पत्र से स्पश्ट की गयी विषेश षोध प्रष्न में मुख्य भूमिका निभाता है। षोध पत्र का मुख्य भाग thematic scope ;विशयक क्षेत्रद्ध से षोध के तरीकों और परिणामों को विस्तार से वर्णित करती है। आखिरकार चर्चा के भाग के लक्ष्य सामान्य निश्कर्श और वर्तमान निहितार्थ को बताना होता है। यह thematic progression दावा करता है कि षोध प्रतिवेदन को बहस के बीच में बांटना चाहिये। निश्कर्श प्रारंभ में ही आना चाहिये और षोध जो कि प्रस्तुत किया गया है, उसको वास्तविक उद्देष्य का परीक्षण करना चाहिये। षोध पत्र के आंषिक भाग की भी समान महत्ता है, जो कि जपजसम (षीशर्क) ंइेजतंबज ;संक्षिप्तकाद्धए reference ;संदर्भद्ध हैं।

Declarative title जो कि षोध में प्रस्तुत किये गये परिणाम के बारे में धारणा बनाते हैं ;उदाहरण अकादमिक अधिवेषन लघु षोध की कार्यसूची बनाती हैद्धए Interrogative Titles जो कि एक प्रष्न उठाती हैं। लेखकों ने विभिन्न प्रकार के षोध पत्रों को डाउनलोड और उध्दरण के प्रभाव का अनुसंधान किया है। लेखक जब कुछ प्रकाषित पत्र की जांच करते हैं और तब देखते हैं कि षिक्षित तकनीकी और संस्कृति की कौन से प्रकार और लक्षणों को उजागर करते हैं।

लर्नर का Ethnic (A group sharing common values, Religion, Culture and Professional culture) ds izHkko A compound mostly descriptive title जो कि 15 षब्दों से अधिक लम्बा है। इसकी लम्बाई के अलावा यह अध्ययन के निश्कर्श को प्रकट नहीं करता है। वर्णित title का एक रोचक पहलू स्वयं–विचारमग्न है। इसके असमान्य तरीके के कारण सम्भवतः पाठको को आकर्शित करेगा।

27.3 A New Framework for Dynamic Adaptations and Action

वर्णित उपाधि जो कि मात्र पेपर के विशय सूची के बारे में थोड़ा ही प्रकट करता है। इसके अलावा यह साफतौर पर Adaptations और Actions के प्रकार को स्पश्ट न करके अविषिश्ट है। जब तक यह

समुदाय में निषाने पर है, उपाधि को कुछ वर्णित टुकड़े सम्मिलित करने चाहिये, ऐसे वाक्यों पर जायें जो नुकसानदायक माने गये हैं। एक छोटी उपाधि जो कि ज्यादा अर्थहीन होगा। सामान्य अभ्यास से सम्बन्धित हुआ पदक जो कि नुकसानदायक माना गया है, को कई दूसरे पत्रों के लिये adopt किया गया है। प्रकाषीय विधियों में कुछ अंतर होता है जो कि इस भाग में वर्णित किये गये हैं। सामान्यतः अधिवेषन कार्यवाहियों में प्रकाषित षोध पत्रों की पत्रिकाओं में प्रकाषित पत्रों की तरह प्रसिध्दि नहीं होती है। यह विषेशकर समाज कार्य के लिये सत्य है। वैसे समाज कार्य में बहुत से समान अधिवेषन व जर्नल हैं जबकि बडी majority अधिवेषन की वार्शिक स्थान लेने वाली सीरीज का भाग है, कुछ अधिवेषन व्दिवार्शिक आयोजित होती है। अधिवेषन की तारीख के पहले के कुछ महीने लेखकों को पेपर जमा करने एवं अधिवेषन कार्यवाहियों में प्रकाषित होने एवं अधिवेषन स्थान में उपस्थित होने के लिये बवदमितमदबम बींप बंसस करके आमंत्रित करते हैं। अधिवेषन पत्र (CFP)] जो कि अधिवेषन कराने वाली संस्था की वेबसाइट से डाउनलोड की जा सकती है, यह निम्न जानकारी सम्मिलित कर सकता है–

1. पदक
2. संक्षिप्त
3. स्थान
4. सामान्य जानकारी

इस भाग में CFP के क्षेत्र और विषेश विशय वस्तु को पाया जा सकता है। वर्तमान विकास में रोषनी डालते हुए मुख्य विशय को रखता है। respective conference’s के विशय की विषेश रुचि के विशय की सूची बनाना। अधिवेषन के प्रबंधकीय व्यवस्था में प्रस्तुति विधियों के दौरान षोधकर्ता को प्रस्तुति में सबसे अच्छे से उपयुक्त होने वाले उप–प्रवृत्ति को चुनना होता है। यह चुनाव साथी–समीक्षक को नियुक्त करने से संबंधित होता है।

ज्यादातर CFP एक ऐसे भाग को सम्मिलित करते हैं जहॉ लेखकों से सामान्य मार्गदर्षन पर वार्तालाप करते हैं और अधिवेषन कार्यवाहियों को एक अच्छे से व्यवस्थित प्रकाषक द्वारा प्रकाषित करते हैं।

27.4 Submission Deadlines

यह पूर्ण षोध प्रपत्र को जमा करने की तारीख होती है। कुछ अधिवेषन ऐसी भी होती हैं, जिन्हें प्रारंभ में बहुत से कारणों की वजह से बढ़ती हुई abstract की जरुरत होती है। ज्यादातर अधिवेषन वार्शिक

समारोह में होती हैं, इसलिये षोधकर्त्ता पहले से ही अच्छे से जानते हैं कि पत्र को कब तक जमा करना है। षोध प्रतिवेदन को लिखने व प्रकाषित कराने के आधार पर दवजपपिबंजपवद दिया जाता है। यह वह तारीख होती है जब लेखक को स्वीकार या अस्वीकार करने के लिये notify किया जाता है। छवजपपिबंजपवद की तारीख बहुत ज्यादा सत्य नहीं होती है क्योंकि कार्यक्रम की समिति प्रस्तुतियों के बारे में पहले से पूर्वानुमान नहीं कर सकती है। किसी एक कारण को बताने के लिये साथी–समीक्षक समय पर अपनी समीक्षा प्रस्तुत करने में विफल होते हैं। इसलिये समीक्षा की विधियां उम्मीद से ज्यादा लम्बित हो सकती हैं। अधिवेषन जो कि साथी–समीक्षकों को यह निर्णय करने देती है कि प्रस्तुति को स्वीकार करना है या नहीं।

1. **स्वीकार करना–** षोध पत्र को स्वीकार कर लिया गया है और अधिवेषन कार्यवाहियों में प्रकाषित किया जायेगा। कैसे भी समीक्षक minor notification को प्रकाषित पेपर में सम्मिलित करेगा। सामान्यतः आयोजक स्वीकार पत्र को अधिवेषन में प्रस्तुति के लिये मौखिक आमंत्रण देते हैं। प्रस्तुतिकरण के तुरंत बाद साथियों के साथ मंत्रणा करके फीडबैक मिलने का यह एक बहुत अच्छा मौका होता है।

2. **अस्वीकार करना–** अगर षोध पत्र को अस्वीकार किया गया है तो वह अधिवेषन कार्यवाहियों में प्रकाषित नहीं किया जायेगा। ज्यादातर समीक्षक, लेखकों को अस्वीकार किये गये पत्रों में सुधार करने के बहुत से महत्वपूर्ण तरीके बताते हैं। न कि पत्रिकाओं की तरह जो कि पुनः अवलोकन करने का विकल्प भी नहीं देते हैं। पेपरों को या तो स्वीकार किया जाता है या तो अस्वीकार, लेकिन कुछ अधिवेषन खण्डन विधि अपनाते हैं, जिसमें लेखकों को अपने सर्वेक्षण का उत्तर देना होता है। तब समीक्षक लेखक खण्डन समय के दौरान बहस के आधार पर अपने सर्वेक्षण को बदलने का चुनाव कर सकते हैं। यह या तो निचले स्तर के फल पर जा सकता है या तो उच्च स्तर के फल पर जा सकता है। सभी भिन्न अधिवेषन में स्वीकार करने की दर अधिवेषन की ख्याति और पेपर के लिये की गई कॉल की प्रतिक्रिया पर निर्भर करता है। ज्यादातर गंभीर अधिवेषन कार्यवाहियों के पहले चरण में स्वीकार दर को अपनी वेबसाइट पर बता देते हैं।

27.5 Camera-Ready Paper Deadline

स्वीकृति की दषा में camera-ready papers के प्रस्तुति की अंतिम तिथि होती है। आखिरी संस्करण को अधिवेषन कार्यवाहियों में अस्वीकार करने के फल से दो चार होना पडता है। जर्नल्स के साथ सभी अंतिम तिथियों से मिलना और सभी मार्गदर्षक से स्वीकार कराना बहुत आवष्यक होता है। जैसे कि पेपर सेटिंग से संबंधित दिषा–निर्देष।

पेपर के अंतिम निश्कर्शों पर टिप्पणी का उद्देष्य जर्नल या अधिवेषन कार्यवाहियों में षोध पत्रों को प्रकाषित करने के तरीकों के साथ ही वैज्ञानिक पेपर को लिखने व व्यवस्थित करने के आधारभूत तत्वों का परिचय कराना होता है। हम पाते हैं कि कुछ ऐसी धारणायें होती हैं जोकि व्यक्तिगत रुप से चिंतित करते हैं और यह बहुत बडी जनता को चिंतित करते हैं।

हमने उपाधि, ंइेजतंबजए मुख्य भाग, चर्चा और सन्दर्भ वाले वैज्ञानिक पेपर्स के बारे में विस्तार से चर्चा की। इस बात पर जोर दिया कि संरचना को प्राप्त करना और सही लिखना एक अच्छा आधार हो सकता है। हमने ऐसे पहलुओं को प्रस्तुत किया जो कि प्रकाषक के लिये लिखने और दूसरों के लिये लिखना जैसे कि चेण्क्ण जीमेपे में अंतर बताना। इसके साथ ही हमने जर्नल्स और अधिवेषनों की प्रकाषकीय विधियों के बारे में चर्चा की तथा उनकी भूमिका व चरण की चर्चा की।

27.6 Impact Factor

प्रकाषक की वैज्ञानिक गुणवत्ता का एक सबसे महत्वपूर्ण सूचक इसका impact factor है। impact factor की गणना करना बहुत सरल है। यह तीन साल से ज्यादा के उध्दरण की संख्या पर आधारित है। प्उचंबज बिजवत को ंतजपबसम के प्रकाषित होने की संख्या और ंतजपबसम के जर्नल में प्रकाषित होने के समान काल के अनुपात में व्यक्त करते हैं। Impact factor का वास्तविक लक्ष्य जर्नल के गुण को मापना होता है न कि ंतजपबसम की गुणवत्ता को जैसा कि आजकल समझा जाता है। इसको साधारणतः ऐसे समझा जा सकता है कि अगर कोई लेखक जर्नल में उच्च पउचंबज बिजवत के साथ प्रकाषित करता है, तो उसे वह अपने षोध की महत्वता और प्रकाषित विधियों के लिये ज्यादा अंक प्राप्त होंगे। एक तरफ षोध क्रियाओं की महत्वता को व्यावसायिक संप्रेशण की उद्देष्य विधि माना जाता है। तो दूसरी तरफ इसके नकारात्मक उध्दरण के संबंध के लिये प्रतिश्ठा के पक्ष में आलोचना की जाती है।

Cotation Index

Article का citation जर्नल में प्रकाषित होने वाली कार्यों की एक सूची होती है जो कि article से उध्दृत होती है। इस प्रकार citation index जर्नल्स का impact factor की गणना करने के लिये जानकारी का प्राथमिक स्त्रोत है।

Immediacy Index

Immediacy index यह सूचित करता है कि प्रकाषित होने वाले कितना articles का उल्लेख किया गया है। दूसरे षब्दों में article को कितनी तेज प्रक्रिया मिली।

Publication, Grants and Conference

षोध और प्रकाषक क्रियाऐं षैक्षिक दायित्व के अलावा PhD, भी कार्यक्रम का एक बहुत जरुरी भाग होता है। षोध को बहुत सारी योजनाओं से अनुदान दिलाया जा सकता है, जिसमें कि UGC प्रमुख है। षोध कार्यक्रम के दूसरे विकल्पों में सरकार के विभिन्न मंत्रालय भी हैं। मंत्रालयों से लाये गये प्रोजेक्टों को बड़ी एजेन्सियों से भी सहयोग मिलता है। इसके साथ पर्यावरण व वित मंत्रालय से भी सहयोग मिलता है। षोध प्रोजेक्ट के अलावा ऐसे pedagogical प्रोजेक्ट भी होते हैं, जिनका उद्देष्य भारत में षिक्षा का विकास करना होता है। षोध प्रोजेक्ट्स का फल वैज्ञानिक और व्यावसायिक जर्नल में प्रकाषित होने वाले पेपर को सम्मिलित करना और भरतीय संस्थाओं में होने वाले अधिवेषनों के अलावा, विदेषों में होने वाली कुछ अधिवेषनें भी होती हैं जो कि सक्रिय सहयोग का स्वागत करती हैं।

भारत की University of Information System से अधिवेषनों की जानकारी भी प्राप्त की जा सकती है। इस अप्लीकेषन को कई लोगों के द्वारा उपयोग नहीं किया जाता है परंतु Administration and Conference announcements के लिंक पर होने वाले अधिवेषनों की जानकारी अपलोड करके आप अपने साथियों को महत्वपूर्ण जानकारी दे सकते हैं। विभिन्न विभागों के षोध के क्षेत्रः

Department of Law and Social Sciences

इसमें ग्राहकों की सुरक्षा, सार्वजनिक उपलब्धियों की विधिक रुपरेखा, विषेश संस्कृति, व्यक्तिगत क्षेत्रों की सामाजिक समस्यायें, सांस्कृतिक और सामाजिक दूरियों का प्रभाव आदि पर केन्द्रित होता है।

Department of Business Economics

ठसमें षोध मुख्यतः भारत में कृशि की स्थिति, क्षेत्रीय विकास और खाद्य उद्योगों से संबंधित है। षोध के मुख्य क्षेत्र कृशि का प्रतिस्पर्धात्मक अवलोकन, मांग का अवलोकन, आर्थिक दषा का अवलोकन करना सम्मिलित करता है।

Department of Statistics and Operation

यह मुख्यतः जनसांख्यिकीय परिवर्तन और विकास, ग्रामीण विकास, आर्थिक विकास, सर्वे तैयार करना, सर्वे कराना, उसके प्रष्नों का मूल्यांकन करना और क्षमता मिलान पर फोकस करता है।

Department of Marketing and Trade

इसमें ग्राहकों के व्यवहार, खाद्य बाजारों की नई दिषा, वितरण, बिक्री संस्थाओं आदि के षोधों पर फोकस करता है।

Research Centre

षोध केन्द्र, षोध और प्रकाषन की अकादमिक स्टॉफ के लिये ज्यादा से ज्यादा स्थितियां बनाने की कोषिष करता है। षोध केन्द्र का एजेण्डा बहुत से उद्देष्यों को सम्मिलित करता है। यह विभिन्न लेखकों और कार्य समूहों की वैज्ञानिक योजनाओं के स्त्रोतों को भी प्राप्त करने की कोषिष करता है। षोध क्रियाओं के दौरान उनकी प्रगति में प्रोजेक्ट को ढूंढता है व उन्हें सहयोग करता है। इसके साथ–साथ भारत और विदेषों में षोध के परिणाम को प्रकाषित करता है, जानकारी की सेवा प्रदान करता है तथा सहयोगी विष्वविद्यालयों के साथ लम्बे काल तक संबंध स्थापित करता है।

27.7 सार–संक्षेप

'ाोध परिणामों और निश्कर्शों का फैलाव षोध प्रक्रिया का अनिवार्य भाग है। षोधकर्त्ता अपने कार्यों का अभिलेख स्वयं अपने लिये रखते हैं लेकिन इससे भी ज्यादा वे यह रिकॉर्ड अपने पाठकों व सहयोगियों के लिये रखते हैं जो कि उनसे एक प्रामाणिक विधि की आषा रखते हैं। वैज्ञानिक षैली से लिखना प्रारंभ में कठिन होता है परंतु स्पश्ट सम्प्रेशणों व लगातार लिखते रहने से आप इसमें पारंगत हो जाते हैं।

षोध पत्रों को प्रकाषित कराने के लिये इनमें कुछ उच्च मापदण्डों का पालन करना पड़ता है, जैसे कि पेपर कैसे लिखा गया है और इसके लिखने का तरीका कैसा है। इस प्रक्रिया में प्रकाषक के साथ–साथ विशय वस्तु, षैली और प्रकाषन करने वाली संस्था का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसके अनुसार षोध पत्र एक वैध प्रकाषन में ही प्रकाषित होना चाहिये। इसके साथ–साथ कई सम्मानित अधिवेषनों में पेपर प्रकाषित होना भी समान महत्वपूर्ण होता है।

प्रकाषन केन्द्र की परवाह किये बिना, एक वैध षोध पत्र में निम्न विशय–वस्तुओं का होना बहुत जरुरी होता है–

1. कथन का मूल्यांकन
2. परीक्षण की पुनरावृत्ति

   और

3. बौध्दिक प्रक्रियाओं का मूल्यांकन

संपादक और प्रकाषक षोधकर्त्ता से एक प्रामाणिक और संरचित षोध पत्र की आषा करते हैं। पेपरों के कुछ भाग अनुक्रमणिका सेवाओं के लिये भी उपयुक्त होते हैं, जो कि उपाधि, लेखक, सहबध्दता, संक्षिप्तका और सामान्य विचारों की आषा रखते हैं।

अभ्यास प्रश्न

लघु,

- इस अध्याय का मुख्य उद्देष्य क्या है?
- CFP से आप क्या समझते हैं?

foLrʾr

- Impact factor की गणना करने के लिये जानकारी का प्राथमिक स्त्रोत क्या है?
- विधि और सामाजिक विज्ञान विभाग किन षोधों पर फोकस करता है?
- षोध केन्द्र से आप क्या समझते हैं?

27-8 ikfjHkkf"kd 'kCnkoyh

conference chai call & अधिवेषन की तारीख के पहले के कुछ महीने लेखकों को पेपर जमा करने एवं अधिवेषन कार्यवाहियों में प्रकाषित होने एवं अधिवेषन स्थान में उपस्थित होने के लिय conference chai call करके आमंत्रित करते हैं।

27.9 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

www.google.co.in

खण्ड–षष्ठ
शोध प्रबन्ध का प्रकाशन

इकाई : 28 शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन एवं संबंधित समस्यायें

28.0 इकाई का उद्देश्य

28.1 परिचय

28.2 षोध प्रतिवेदन का प्रकाषन

28.3 प्रक्रिया

28.4 where to publish i:dk’ku की जगह

28.5 Related problems सम्बन्धित समस्यायें

28.6 Considering/issues in data reporting and publishing
आंकड़ों के प्रस्तुतीकरण एवं प्रकाषन सम्बन्धी मुद्दे

28.7 परिषुध्द और निश्कपट प्रतिवेदन का महत्व

28.8 सार–संक्षेप

28.9 पारिभाषिक शब्दावली
अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

28.10 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

28-0 bdkbl dk mís';

प्रस्तुत इकाई का उद्देष्य आप लोगों को षोध प्रतिवेदन के प्रकाषन एवं संबंधित समस्याओं के बारे में अवगत कराना है। इस इकाई को पढने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1. षोध प्रतिवेदन के प्रकाषन के बारे में जान सकेंगे।
2. षोध प्रतिवेदन की प्रक्रिया के बारे में लिख सकेंगे।
3. षोध प्रतिवेदन कहां प्रकाषित होना चाहिए के बारे में जान सकेंगे।
4. षोध प्रतिवेदन से संबंधित समस्याओं से अवगत हो सकेंगे।

5. परिषुध्द और निश्कपट प्रतिवेदन के महत्व पर प्रकाष डाल सकेंगे।

28.1 परिचय

षोध प्रतिवेदन के परिणामों का प्रकाषन षोधकर्त्ता के व्यावसायिक जीवन का एक अनिवार्य भाग है। हालांकि, लेखन सभी षोधकर्त्ताओं का पसंदीदा क्रियाकलाप नहीं है, और साथ ही षोध प्रतिवेदन का प्रकाषन एक बहुत ही थका देने वाली तथा समय की बर्बादी करने वाली प्रक्रिया हो सकती है लेकिन सौभाग्यवष, षोध प्रतिवेदन के लेखन व प्रकाषन की बहुत सारी बाधायें मात्र कुछ मार्गदर्षन व अभ्यास से दूर की जा सकती हैं। यह अध्याय साहित्य में पाये जाने वाले दिषा–निर्देषों व वैज्ञानिक पत्र संरचना का एक सम्मिश्रण है। इसके साथ ही अध्याय का लक्ष्य पत्र–पत्रिकाओं व सम्मेलनों की कार्यवाहियों में प्रकाषित षोध पत्र की प्रक्रिया की रूपरेखा और साथ ही षोधकर्त्ताओं को आवष्यक मुद्दों के लिये एक आसान षुरुआत के साथ प्रारंभिक अवस्था उपलब्ध कराता है। यह अध्याय प्रौद्योगिकी की मदद से अनुसंधान सीखने और साहित्य, सामाजिक, प्राकृतिक एवं कम्प्यूटिंग विज्ञान से आभार लेकर उदाहरण देकर एक अंतःविशय रुख लेता है।

28-2 ‘kks/k izfrosnu dk izdk’ku

षोध को प्रकाषित करने के लिये रुचि क्षेत्र निर्धारित करना पहली क्रिया होती है। सबसे पहले यह सुनिष्चित कर लें कि जिस विशय पर प्रकाषन हो रहा है, उस विशय पर हम पर्याप्त अध्ययन कर लें। उसके बाद हमें खुद को वद going techniques ls update करते रहना चाहिये और यह सब हम इनकी मदद से भी कर सकते हैं –

1. बहुत से तकनीकि पत्र पढ़ के या गूगल में ढूंढ़ सकते हैं। इन्टरनेट पर बहुत से पेपर और जर्नल हमें आसानी से मिल सकते हैं।
2. किसी अधिवेषन में जायें, वहां पर हो रही चर्चाओं को ध्यानपूर्वक सुनें और यह जानने कि कोषिष करें कि लोगों की सोच क्या है।

जब आप उपरिलिखित बातों को अच्छे से कर लेते हैं, तो अब आप पेपर लिखने के लिये तैयार हैं।

विशय से संबंधित सभी कुछ अध्ययन करने से हमें उस विशय के बारे में समझने का एक नया नज़रिया मिलता है। लेकिन इसमें यह ध्यान देना चाहिये कि इसमें हमें थोड़ा चुनावषील होना चाहिये और इस बात का ध्यान रखें कि हम विशय से भटक न जायें।

A Jump Start:

जब आप सर्वप्रथम किसी नये क्षेत्र पर अध्ययन प्रारंभ करते हैं तो अपने साथी षोधकर्त्ता से यह ज़रुर पूछें कि इस क्षेत्र से संबंधित पेपर और जर्नल कौन से हैं और यह भी ज़रुर कहें कि वह आपकी मदद कुछ महत्वपूर्ण पेपर की तालिका बनवाने में कर दे जो कि पढ़ने के लिये अति महत्वपूर्ण हों। यह प्रक्रिया निष्चित रुप से आपको एक jump start देगी।

Crack the jargons and terms:

दूसरों के प्रकाषित षोधों को पढ़ना और समझना भी एक बहुत ही जटिल काम है। इसका सबसे आसान तरीका इन्हें बार–बार पढ़ना ही है। आप इन्हें जितना ज़्यादा पढ़ेंगे, आप उतना ही इन्हें समझेंगे और कठिन षब्दावलियों को समझने के लिये आप इन्टरनेट का इस्तेमाल कर सकते हैं।

Write down your studies:

अपने विचार, रुचिकर समस्यायें, संभावित हल, कमहीन विचार, विचारणीय संदर्भ, पढ़े हुये षोधों की टिप्पणियां और रुचिकर अवह्रत लिख लेने चाहिये और समय–समय पर इन्हें पढ़ते रहना चाहिये। अपने षोध से संबंधित जर्नल और विचार पास में रखना बहुत ही लाभकारी होता है।

Bits and pieces together:

जब आप षोधों के महत्वपूर्ण भागों व क्रियाकलापों को जान जाते हैं, और अब तक आपको यह भी पता हो जाता है कि क्या करना है और आप क्या कर रहे हैं। इसमें आप जितना आगे जायेंगे उतना आपको पता चलेगा कि कमहीन और छोटे–छोटे विचार एक साथ आते हैं और एक पैटर्न बनता जाता है, जो कि षोध प्रकाषन के लिये पर्याप्त हैं।

Simulation software easies:

किसी भी षोधकर्ता को बहुत महत्वाकांक्षी विशय के स्थान पर वास्तविक विशय को तरजीह देनी चाहिये और इन्टरनेट पर अपने विशय से संबंधित फाइल ही खोजनी चाहिये। हमें कभी भी प्रकाषित षोधों पर पूर्णतयः निर्भर नहीं होना चाहिये परंतु हॉ आप उनको सुव्यवस्थित और उनमें कुछ नया अवष्य जोड़ सकते हैं। आप इस पर विष्वास करें कि

एक बार जब आपको अपने षोध का हल मिल जायेगा तो आप उसमें और भी आगे निकल सकेंगे।

Essence of your Work:

आपके काम के पहचाान का गुण इन बिंदुओं से विष्लेशण कर सकते हैं –

(A) Significance –

यह काम क्यों हुआ था? क्या आपने वर्तमानकालिक महत्वपूर्ण समस्या को हल किया? या ये एक समझने में कठिन या अप्रचलित समस्या है?

(B) Originality/Novelty –

क्या आपका दृश्टिकोण नया और सच है? या आपको नये औज़ार बनाने का जरुरत, चाहे विष्लेशणात्मक या भौकित।

(C) Completeness –

क्या आपने बड़े परिदृष्य का परीक्षण किया है? या यह एक आसान/सामान्य परिदृष्य को सिध्द करने की अवधारणा है?

(D) Correct –

क्या आपका हल तकनीकि की दृश्टि से गहरा है या उसमें कोई गलती है?

(E) Anatomy of Paper –

साधारणतयः पत्र के 7 भाग होते हैं और ये ज्यादा से ज्यादा 4 पेज के होते हैं। ये हैं –

(i) Abstract

(ii) Introduction

(iii) Existing Techniques

(iv) Your Contribution

(v) Result and

(vi) Conclusion

28.3 प्रक्रिया

आपके षोध–पत्र को प्रकाषित करने के लिये जो तकनीक चल रही है, उसे बेकार जर्नल से प्रलेखन करना चाहिये। आप को किसी भी तकनीकि की समस्या उसके लाभ और हानि का निश्कर्श निकालना चाहिये। अगला आलेख जो कि परिचय है उसमें विशय के बारे में पहले लिखना चाहिये और इसे छोटा रखना चाहिए।

(i) Describe the Problem

(ii) State your Contribution

Abstract षोध का वह भाग है, जिसमें आप अन्तः तक काम कर सकते हैं जैसा कि इसमें सारे भाग संक्षिप्त में आते हैं। कृपया यह लिख लें कि ·इेजतंबज यह निर्णय/निष्चय करता है कि कमेटी सदस्य को आपका पेपर पढ़ना चाहिये। सामान्यतः यह चार लाइन होना चाहिए।

(i) समस्या क्या है?

(ii) सोचो यह एक रुचिकर समस्या क्यों है?

(iii) सोचो आपके हल से क्या प्राप्त हुआ है?

(iv) आपके हल को क्या अनुसरण करना है?

Section by Section:

Divide-and-Conquer रणनीति दिनों–दिन भी काम करती है। पूरा षोध पत्र लिखने के स्थान पर हमें षोध पत्र के उद्देष्य या उसकी रुपरेखा पर ज़्यादा ध्यान देना चाहिए। यहां पर यह ध्यान देने वाली बात है कि हर कार्य जो आप पूरा करते जाते हैं वह आपको षोध–पत्र पूरा करने की ओर ले जाता है।

Get a pre-review:

अब आपका पत्र तैयार है। आप अपने साथियों या प्रोफेसर से अपने षोध पत्र की समीक्षा करने के लिये कह सकते हैं। आपका अगला काम षोध के प्रकाषन के लिये एक सही स्थान का चयन है। आप इसकी षुरुआत किसी राश्ट्रीय स्तर के अधिवेषन से कर सकते हैं, जो अक्सर किसी न किसी विष्वविद्यालय में होते ही रहते हैं और एक बार जब आप में आत्मविष्वास आ जायेगा तब आप अंतर्राश्ट्रीय स्तर के अधिवेषन व पत्र–पत्रिकाओं में भी अपने षोध को दे सकते हैं।

Read the Review Carefully

यह वास्तविक रुप से बहुत कठिन कार्य है। कभी–कभी पहली बार में केवल एक छोटा सा अनुपात 5 से 10 : ही स्वीकार हो पाता है।

परंतु इससे हमें घबराने की जरुरत नहीं है और हमें अपने काम पर ध्यान केंद्रित करते हुये आगे बढ़ते रहना है। साधारणतः अस्वीकार के आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता है यह एक सकारात्मक निरीक्षण है।

यह सम्मिलित करता है –

- स्वीकारना– 'जिसे कोई नहीं समझाता हो।'
- सुधार के साथ स्वीकार करना– 'जो कि थोड़ा सा परिवर्तन करता है।'
- दोहराना और पुनः जमा करना– 'वे अभी भी आपमें रुचि रखते हैं।'
- अस्वीकार करना और पुनः जमा करना– 'विचार उतना भी अच्छा नहीं है जैसे कि दोहराना और पुनः जमा करना।

सभी आलोचनाओं को सकारात्मक सुझाव के साथ पढ़ें ताकि आप उसे सही तरीके से समझा सकें।

Don't Panic:

प्रथम बार समीक्षा के बाद इसे एक तरफ रख दें, इसे बाद में पढ़ें। षोध पत्र को बारीकी से पढ़ें जिससे कि निर्णय लें कि आलोचना प्रभावषाली थी और आप इसे कैसे संबोधित कर सकते हैं। आपने प्रायः देखा होगा कि समीक्षक आलोचना बनाते हैं कि वह र्वाि.जिंतहमज है, क्योंकि वह आपके षोध पत्र के कुछ पहलुओं को गलत करते हैं। यदि ऐसा है तो अपने साथ ऐसा मत होने दीजिये......बस अपने षोध पत्र के उस भाग को दोबारा और अच्छी तरीके से लिखें, जिससे कि समान गलतफहमियां दोबारा न हो सके। गलतफहमियों की वजह से निरस्त षोध पत्र निराषयुक्त होता है परंतु आप इसे अवष्य कुछ ठीक कर सकते हैं।

Rejected?? Be Positive:

अगर आपका षोध पत्र खारिज कर दिया जाये, फिर भी आप कोषिष करते रहें। दिल से निरीक्षण करें और षोध पत्र को पुनः लिखने की कोषिष करें। याद रखें–

''ढेर सारा प्रकाषन पाने के लिये, आपको ढेर सारी अस्वीकृति भी सहनी होगी।'' –एडवर्ड डाइनर

Common Mistakes:

- चित्रों और तालिकाओं के क्रम लिखने में गलत अनुक्रम

- पंक्तियों का गलत संरेखण
- दूसरों के षोध पत्रों के चित्रों व डाटा का बिना स्वीकृति के उपयोग करना।

28.4 where to publish

सधारणतयः तीन मुख्य विकल्प होते हैं–

1. राश्ट्रीय अधिवेषन– ये अधिवेषन नये षोधकर्त्ताओं के लिये सही जगह होते हैं क्योंकि वहां सूक्ष्म परीक्षण का स्तर अल्पमत में होता है।
2. अंतर्राश्ट्रीय अधिवेषन– ये अधिवेषन माध्यमिक षोधकर्त्ताओं के लिये अच्छी पृश्ठभूमि उपलब्ध कराता है। यह अधिवेषन भी राश्ट्रीय अधिवेषन की तरह ही होता है लेकिन इसमें राश्ट्रीय अधिवेषन की अपेक्षा प्रतिभूतिकरण ज्यादा होता है।
3. जर्नल– पत्र–पत्रिकायें भी षोध पत्र के प्रकाषन का एक बहुत ही अच्छा माध्यम होती हैं।

28.5 Related problems

प्रकाषन और प्रतिवेदन वैज्ञानिक समुदाय को ढूंढकर बताने और फैले हुये अनुसंधान की प्रक्रिया है। अध्ययनषील अनुषासन केवल फैलाव के द्वारा बढ़ सकता है और अनुसंधान की पुनरावलोकन, अनुषासन से संबंधित पत्र–पत्रिकाओं में अनुभवी बैठक और प्रकाषक अनुसंधान को ढूंढता है। प्रकाषक में मौन विष्वास करना लेखक और पाठक का किसी भी पेषे के अनुसार सत्यता और सच्चाई के बीच का विष्वास है।

अनुसंधान एकीकरण का अभ्यास प्रायः वैचारिक, योजनाबध्द परिपालन से सारे अनुसंधान के चरण उपयुक्त हैं। यह अभ्यास दस्तावेज के कार्यक्षेत्र और परिणाम बनाने की कार्य को प्रकाषन के लिये भी बढ़ा सकता है। इस प्रक्रिया से षोधार्थी और ज्यादा अनुभवी होते हैं, जो कि सुरक्षित अनुसंधान एकीकरण को ज्यादा चुनौती देते हैं।

28.6 Considering/issues in data reporting and publishing

प्राय : अनुसंधान विन्यास में घटक होते हैं जो कि आंकड़ों की अखण्डता के समझौते का परिणाम होता है। ये घटक समस्या को सुगम कर सकता है, जहॉ की अनुसंधान का लक्ष्य निर्धारित किया जाता है जो कि एक समान/उद्देष्य आचरण में है जैसे कि कुछ भी चुनौती संभव हो सकता है, इन्हें हम आंतरिक व बाह्य घटक में बांट सकते हैं –

Publishing Related External Factors:

- प्रकाषक दबाव
- व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा
- काम की सुरक्षा
- औपचारिक परामर्षदाता की कमी
- अस्पश्ट मार्गदर्षन
- दण्ड का अभाव
- पकड़े जाने का अभाव
- परामर्षदाता द्वारा गलत उदाहरण

Publishing Related Internal Factors:

- व्यक्तिगत अहम या घमण्ड
- व्यक्तिगत वित्तीय लालसा
- मनोविकृति संबंधी बीमारी
- अक्षमता
- लापरवाह लेखन

28-7 ifj'k/n vkj fu"diV ifronu dk egRo

अपने प्रतिवेदन में गलत डाटा या सूचना आपकी सत्यनिश्ठा पर प्रष्नचिन्ह लगा सकता है। इसके साथ ही भविश्य में आपके द्वारा किये गये अनुसंधान प्रयासों को प्रकाषक द्वारा छापने से मना भी किया जा सकता है। अनुसंधान प्रतिवेदन व प्रकाषन की सत्यनिश्ठा से संबंधित कुछ बिंदु इस प्रकार हैं–

1. मिथ्याप्रस्तुति
2. साहित्यिक चोरी
3. प्रासंगिक सूचना देने में चूक
4. हितों के टकराव का खुलासा करने में विफलता
5. प्रकाषन पूर्वाग्रह / नकारात्मक परिणामों की उपेक्षा
6. कई तरीकों से डेटा के विश्लेशण से एक ही परिणाम को खोजना

7. पूर्व अनुसंधान का अपर्याप्त मूल्यांकन
8. टिप्पणियों का भ्रामक चर्चा
9. सटीक परिभाशा के बिना षब्दावली का प्रयोग
10. मीडिया के लिये षोध परिणामों की मुद्रास्फीति

28.8 सार–संक्षेप

प्रकाशन पूर्वाग्रह से होता है जब षोध के परिणामों के प्रकाषन मात्र अनुसंधान की गुणवत्ता पर ही निर्भर न करके इसकी प्रकृति और दिषा पर भी निर्भर हो जाता है।

सकारात्मक परिणाम पूर्वाग्रह, एक प्रकार का प्रकाषन पूर्वाग्रह होता है जब या तो लेखक प्रस्तुत करना चाहे या संपादक, नकारात्मक अथवा अनिर्णायक परिणाम की जगह सकारात्मक परिणाम स्वीकार करे।

परिणाम प्रतिवेदन पूर्वाग्रह तब होता है जब एक परीक्षण के भीतर कई परिणाम मापे जाते हैं लेकिन उन परिणामों की षक्ति और दिषा पर निर्भर चुनिंदा परिणाम ही लिये जायें।

28.9 पारिभाषिक शब्दावली

A Jump Start :-

जब आप सर्वप्रथम किसी नये क्षेत्र पर अध्ययन प्रारंभ करते हैं तो अपने साथी षोधकर्त्ता से यह ज़रुर पूछें कि इस क्षेत्र से संबंधित पेपर और जर्नल कौन से हैं और यह भी ज़रुर कहें कि वह आपकी मदद कुछ महत्वपूर्ण पेपर की तालिका बनवाने में कर दे जो कि पढ़ने के लिये अति महत्वपूर्ण हों। यह प्रक्रिया निष्चित रुप से आपको एक jump start देगी।

Simulation software easies:-

किसी भी षोधकर्ता को बहुत महत्वाकांक्षी विशय के स्थान पर वास्तविक विशय को तरजीह देनी चाहिये और इन्टरनेट पर अपने विशय से संबंधित फाइल ही खोजनी चाहिये।

Significance –:

यह काम क्यों हुआ था? क्या आपने वर्तमानकालिक महत्वपूर्ण समस्या को हल किया? या ये एक समझने में कठिन या अप्रचलित समस्या है?

Originality/Novelty – क्या आपका दृश्टिकोण नया और सच है? या आपको नये औज़ार बनाने का जरुरत, चाहे विष्लेशणात्मक या भौकित।

Completeness – D;k vkius cM+ ifjn’; dk ijh{k.k fd;k g\ ;k ;g ,d vklku@lkekU; ifjn’; dk fl/n djus dh vo/kkj.kk g\

Correct – D;k vkidk gy rduhfd dh nf”V ls xgjk g ;k mlesa dksbZ xyrh g\

vH;kl iz'u

y?kq]

1. षोध प्रतिवेदन के प्रकाषन से आप क्या समझते हैं?
2. प्रक्रिया को परिभाशित कीजिए।
3. षोध प्रतिवेदन कहां प्रकाषित किया जाता है?
4. षोध प्रतिवेदन से संबंधित समस्या से आप क्या समझते हैं?

foLr`r

1- considering/issues in data reporting and publishing पर टिप्पणी लिखिए।

2- परिषुध्द और निश्कपट प्रतिवेदन का महत्व लिखिए।

28-10 lanHkZ&xzUFk lwph

1- www.google.co.in

खण्ड–षष्ठ
शोध प्रबन्ध का प्रकाशन

इकाई : 29 शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के प्रकार

इकाई की रूप रेखा

29.0 उद्देश्य

29.1 प्रस्तावना

29.2 शोध प्रतिवेदन की अवधारणा एवं अर्थ

29.3 शोध प्रतिवेदन का उद्देश्य

29.4 शोध प्रतिवेदन की संरचना

29.5 शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के प्रकार

29.6 संदर्भ सूची

29.0 उद्देश्य

आज के इस भौतिकवादी युग में शोध की तीव्र होती प्रवृत्ति समस्त सामाजिक विज्ञानों की एक अनिवार्य आवश्यकता होती जा रही है। मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है वह अज्ञात तथ्यों की खोज करने में निरंतर आगे बढ़ता जा रहा है। सर्वप्रथम उसने प्राकृतिक घटनाओं को और बाद में सामाजिक घटनाओं को समझने का भरसक प्रयत्न किया है। वर्तमान समय में मनुष्य सामाजिक शोध का प्रयोग करते हुए अनेक नवीन तथ्यों की खोज में लगा है। आज समाज में अनेक प्रकार की समस्याओं के कारणों का पता लगाने के लिए शोध के विभिन्न प्रकारों का उपयोग किया जा रहा है।

इस इकाई का उद्देश्य है शोध प्रतिवेदन की अवधारणा तथा अर्थ की व्याख्या करना साथ ही साथ शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन पर प्रकाश डालना एवं शोध प्रतिवेदन प्रकाशन के प्रकार का उल्लेख करना। शोध प्रतिवेदन संपूर्ण शोध का लिखित विवरण होता है। शोध प्रतिवेदन एक प्रकार से शोध निष्कर्ष का लिखित रूप होता है।

इस इकाई के अध्ययन से छात्र एवं छात्राओं तथा शोधकर्ताओं को शोध प्रतिवेदन के बारे में तथा शोध प्रकाशन के

प्रकार के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त होगा जिससे उन्हें शोध प्रतिवेदन प्रकाशन के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होगी।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः—

- शोध प्रतिवेदन की अवधारणा एवं अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे।
- शोध प्रतिवेदन प्रकाशन के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- शोध प्रतिवेदन के गुणों की व्याख्या कर सकेंगे।
- शोध प्रतिवेदन प्रकाशन के प्रकार का उल्लेख कर सकेंगे।
- शोध प्रतिवेदन प्रकाशन के विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेगे।

29.1 प्रस्तावना :

सामाजिक शोध का उद्देश्य वैज्ञानिक विधियों की सहायता से तथ्यों का संकलन करना होता है। बाद में यही तथ्य सिद्धान्त का रूप धारणा कर लेते है। वैज्ञानिक विधियों की सहायका से जो तथ्य प्राप्त किये जाते हैं, जब वे ही वैज्ञानिक तरीकों से लिपिबद्ध कर दिये जाते हैं तो सिद्धान्त बन जाते है। संचार माध्यमों के विस्तार के कारण आज के प्रगतिशील युग में सामाजिक शोध हमारे दैनिक जीवन का एक अंग बन चुका है। समाचार पत्रों में प्रकाशित चुनावों के एक्सिट पोल, टी0वी0 पर प्रसारित विभिन्न संगीत प्रतियोगिताओं के बारे में दर्शकों की राय सामाजिक समस्याओं के विभिन्न पहलुओं पर विशेषज्ञों द्वारा प्रकाश डालना, ऐसे तमाम कार्यों के लिए सामाजिक शोध का प्रयोग व्यापक रूप से ही रहा है। नीति निर्धारक चाहे वे सरकारी क्षेत्र के हो या गैर सरकारी, राजनीतिज्ञ हों या अफसर, समाज वैज्ञानिक हो या समाज सुधारक सभी सामाजिक शोध का उपयोग कर रहे है।

इस इकाई में छात्र एवं छात्राओं को शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के प्रकार के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होगी। सामाजिक शोध कार्य का अंतिम चरण शोध प्रतिवेदन होता है। शोध द्वारा प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण एवं निर्वचन करने के पश्चात् प्राप्त निष्कर्षों की प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रतिवेदन सम्पूर्ण शोध का लिखित विवरण होता है। प्रतिवेदन के अन्तर्गत समस्या या विषय के चयन से लेकर तथ्यों के

विश्लेषण एवं निर्वचन, निष्कर्ष एवं सुझाव तक की समस्त प्रक्रियाओं का उल्लेख किया जाता है। प्रतिवेदन को प्रकाशित या अप्रकाशित प्रलेख के रूप में शोधकर्ताओं द्वारा प्रयोग किया जाता है।

29.2 शोध प्रतिवेदन की अवधारणा एवं अर्थ

- कोई भी अध्ययन चाहे सामाजिक हो अथवा प्राकृतिक उससे सम्बन्धित तथ्यों एवं निष्कर्षों को प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत करना ही शोध प्रतिवेदन कहलाता है।

- प्रतिवेदन किसी भी शोध कार्य को अमलीजामा देने का अंतिम चरण होात है।

- प्रतिवेदन में शोध कार्य के अन्तर्गत उन सभी बातों का उल्लेख किया जाता है जिनके माध्यम से शोधकर्ता द्वारा तथ्यों एवं सूचनाओं की जानकारी प्राप्त की गयी है।

- शोध प्रतिवेदन में शोधकर्ता किसी शोध विषय से संबंधित जितने भी तथ्यों का संकलन करता है उनका सारिणीयन एवं विवेचन कर लेने के पश्चात् उन पर आधारित निष्कर्षों को एक व्यवस्थित प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

- शोध प्रतिवेदन संपूर्ण शोध कार्य का एक व्यवस्थित सार होता है।

- प्रतिवेदन अथवा रिपोर्ट एक प्रकार से संपूर्ण शोध कार्य का लिखित विवरण होता है जिसके अभाव में शोध कार्य को पूरा नहीं माना जा सकता है।

- प्रतिवेदन को तैयार करना शोध का अंतिम चरण है एवं इसका उद्देश्य रूचि वाले लोगों के अध्ययन के समस्त परिणामों को पर्याप्त विस्तार से बताना है।

- प्रतिवेदन को इस तरह से व्यवस्थित करना है, जिससे प्रत्येक पाठक को तथ्यों को समझने एवं स्वयं के लिए निष्कर्ष की प्रमाणिकता का निश्चय करने के योग्य बनाये।

- सामाजिक शोध के द्वारा जो ज्ञान प्राप्त होता है, उसे समाज को देना प्रतिवेदन का उद्देश्य होता है, अर्थात् प्रतिवेदन का उद्देश्य उपयोगितावादी होता है।

29.3 शोध प्रतिवेदन का उद्‌देश्य :

शोध प्रतिवेदन के प्रमुख उद्‌देश्य निम्नलिखित है।

1. जन सामान्य को समस्या के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित तथ्यों की जानकारी प्रदान करना।
2. समस्या में रूचि रखने वाले लोगों को विभिन्न प्रकार की जानकारियां प्रदान करना।
3. सिद्धान्तों का परस्पर निर्माण करना।
4. समस्या या विषय से संबंधित नवीन ज्ञान की प्राप्ति करना।
5. वर्तमान ज्ञान में समुचित बुद्धि करना।
6. शोध परिणामों को दूसरे लोगों तक पहुंचाना।
7. प्रतिवेदन के आधार पर योजनाओं का मूल्यांकन करना।
8. भविष्य के शोध हेतु आधार तैयार करना।

29.4 शोध प्रतिवेदन की संरचना

किसी भी शोध प्रतिवेदन में कुछ प्रमुख अंतः वस्तु व स्वरूप पाये जाते है। जिसका विवरण निम्नलिखित है :–

अंतः वस्तु :

1. प्रस्तावना
2. समस्या का विवरण
3. अध्ययन का महत्व
4. अध्ययन की आवश्यकता
5. अध्ययन क्षेत्र का विवरण
6. अध्ययन पद्धति का विवरण
7. तथ्यों का वर्गीकरण
8. निष्कर्षों की प्रस्तुतिकरण
9. समस्या व सुझाव
10. संदर्भ ग्रन्थ सूची

स्वरूप :

1. शीर्षक
2. अनुक्रमणिका

3. अध्यायीकरण
4. ग्राक रेखा चित्र
5. तालिकायें
6. संलग्न प्रपत्र
7. परिशिष्ट

प्रस्तावना :– प्रतिवेदन का प्रथम आलेखन प्रस्तावना है। यह किये गये अनुसंधान का परिचय है। प्रस्तावना प्रतिवेदन का मुख्य भाग होना है। इसको पढ़कर प्रतिवेदन में समाविष्ट होने वाली बातों का परिचय मिल जाता है।

समस्या का विवरण :– प्रस्तावना के बाद समस्या का विवरण दिया जाता है इससे यह जानकारी प्राप्त होती है कि जिस समस्या पर अनुसंधान किया गया है उनमें कौन–कौन सी बातें शामिल है। समस्या का विवरण इसमें संक्षिप्त में प्रस्तुत होता है।

महत्व का वर्णन :– तीसरे चरण में महत्व का वर्णन किया जाता है। साथ ही अनुसंधान के उद्देश्य का वर्णन भी होता है।

अध्ययन क्षेत्र का वर्णन :– अध्ययन क्षेत्र की भौगोलिक सीमा के अतिरिक्त प्राकृतिक सामाजिक आर्थिक, औद्योगिक विशेषताओं का वर्णन किया जाता है।

अपनाई गयी अध्ययन पद्धति का विवरण :– कितनी अध्ययन इकाइयां सम्मिलित की गयी है तथा सामग्री का संग्रहण स्वयं अनुसंधानकर्ता ने किया है या किसी अध्ययन दल ने या मित्रों के सहयोग से।

तथ्यों का वर्गीकरण–

निष्कर्षों की प्रस्तुति–

समस्या का सुझाव व उपाय– यदि अनुसंधान के दौरान उस समस्या के निराकरण के लिए कोई उपाय या सुझाव प्राप्त हो तो उनका भी उल्लेख प्रतिवेदन में किया जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

- प्रतिवेदन के साथ संलग्न प्रश्नावली, अनुसूची, दस्तावेज, लेख विवरण तालिका आदि का वर्णन भी किया जाना चाहिए।
- अंत में अनुसंधान कार्य में सहयोग देने वाले सभी व्यक्तियों एजेंसियों, समूहों, टंकणकर्ता आदि के प्रति धन्यवाद व आभार प्रकट करना चाहिये।

29.5 शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के प्रकार

शोध प्रतिवेदन तैयार करना अत्यंत ही कठिन कार्य है। किसी भी शोध प्रतिवेदन में सामाजिक समस्या की अत्यंत ही गहन, विस्तृत तथा वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत की जाती है। ऐसी स्थिति में यह कार्य और भी कठिन हो जाता है। प्रतिवेदन से जहां एक ओर आवश्यक बातों को छोड़ना पड़ता है, वहीं दूसरी ओर तथ्य–सम्मत बातों की विस्तृत चर्चा करनी पड़ती है। शोध प्रतिवेदन प्रस्तुत करने वाले को अनेक श्रोतों से सूचनाओं को एकत्रित करना पड़ता है।

शोध प्रतिवेदन प्रकाशन के प्रमुख प्रकार :

1. **जर्नल (Journal) :–** जर्नल शब्द प्राचीन भाषा लातिनी, द्विर्नालिस, अर्थात् प्रतिदिन और फ्रेंच शब्द जूना से मिलकर बना है। जिसका व्यापक अर्थ दैनिकी होता है। जर्नल शब्द का प्राचीन और वर्तमान प्रचलित अर्थ दैनिक लेख होता है। जर्नल डायरी की तरह दैनिक लेखा नहीं होता है वरन् यह मासिक, त्रैमासिक, छमाही तथा वार्षिक होता है। जर्नल एक प्रकार से शोध लेख होता है। इसमें किसी समस्या या किसी विषय पर प्रकाश डाला जाता है। जर्नल किसी संस्थान द्वारा प्रकाशित किया जाता है। जिसमें ISBN (आई0एस0बी0एन0) एवं ISSN (आई0एस0एस0एन0) संख्या होती है जो जर्नल के वास्विकता को दर्शाती है। जर्नल अंर्तराष्ट्रीय, राष्ट्रीय, प्रादेशिक तथा स्थानीय स्तर पर प्रकाशित होते है। शैक्षणिक तथा शोध क्षेत्र से जुड़े लोगों का जर्नल में लेख प्रकाशित होता है। इस लेख के माध्यम से किसी विषय या समस्या पर प्रकाश डाला जाता है तथा कभी–कभी इस लेख में आंकड़ों को भी दर्शाया जाता है। जर्नल में लेखक द्वारा समस्या या विषय पर शोध करके उचित निष्कर्ष निकाला जाता है तथा फिर उसमें उचित सुझाव भी दिया जाता है।

2. **सेमिनार पेपर एब्सेस्ट्रेक्ट (Seminar Paper Abstract) :–** सेमिनार पेपर एब्सस्ट्रेक्ट किसी राष्ट्रीय, अंर्तराष्ट्रीय प्रादेशिक तथा लोकल स्तर पर आयोजित सेमिनार हेतु तैयार किया जाता है। सेमिनार को जो भी विषय हो या जो भी उन विषय के ैनइ जीमउम हो उससे संबंधित एब्सस्ट्रेक्ट आयोजन समिति को तैयार करके भेज जाता है। आमतौर पर सेमिनार अथवा कांफ्रेंस के आयोजक प्रतिभागियों से प्रस्तुत किये जाने वाले शोध पत्र का संक्षेप संगोष्ठी या सम्मेलन की तिथि से सामान्यतया एक माह पूर्व भेजने का

आग्रह करते हैं ताकि उनका संकलन सेमिनार या कांफ्रेस की प्रीपोसीडिंग (Preproceding) के रूप में अन्य कागजात के साथ सेमिनार या क्रांफ्रेंस किट में उन्हे दिया जा सके, उन्हें सहुलियत हो। संगोष्ठी या सम्मेलन समाप्त होने के पश्चात् उसमे की गयी अनुशंसाओं को सम्मिलित करते हुए उनकी प्रोसीडिंग आयोजकों द्वारा सभी प्रतिभागियों एवं अन्य इच्छुक व्यक्तियों को भेजी जाती है।

3. **रिसर्च आर्टिकिल एब्सट्रेक्ट (Research Article Abstract) :-** इस प्रकार का शोध संक्षेप शोध प्रत्रिकाओं में प्रकाशित होता है। शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध लेख का संक्षेप (रिसर्च आर्टिकिल एब्सट्रेक्ट) दरअसल कई शोध पत्रिकाएं बिना शोध संक्षेप के शोध लेख को प्रकाशित नहीं करती। इसलिए लेखकों से वे अपने शोध आलेख के साथ उसका संक्षेप भी आवश्यक रूप से भेजने की अपेक्षा करती है। शोध संक्षेप में सामान्यतया आलेख में विवेचित विषय की संक्षिप्त पृष्ठभूमि के साथ उससे संबंधित अध्ययन में क्या जानने का प्रयास किया गया है और क्या पाया गया है का संक्षिप्त उल्लेख होता है। शोधकर्ता से यह आपेक्षा की जाती है कि अपने शोध संक्षेप में लेखक इन सब बातों को अधिकतम 150 शब्दों में व्यक्त करें। इसके उपरांत ही शोध संक्षेप का प्रकाशन किया जाता है।

4. **शोध संक्षेपिका (Synopsis) :-** इस प्रकार की शोध संक्षेपिका पी0एच0डी0 तथा एम0ए0/एम0एस0सी0 के छात्र तैयार करते है। इसे एक शोध छात्र द्वारा अपना शोध प्रबन्ध जमा करने के तीन माह पूर्व विश्वविद्यालय में जमा करना होता है। दरअसल अधिकांश विश्वविद्यालय शोध छात्रों से शोध प्रबंध जमा करने के पूर्व अपने शोध प्रबंध का संक्षेप जमा कराते हैं, जिसे वे परीक्षकों के पास शोध प्रबंध भेजने से पूर्व भेजते हैं, ताकि वे उसका अवलोकन कर शोध प्रबंध के मूल्यांकन के संबंध में विश्वविद्यालय को अपेक्षित सहमति भेजने के पूर्व अपनी राय कायम कर सकें। इसमें शोधकर्ता अपने शोध अध्ययन से संबंधित सभी महत्वपूर्ण बिन्दुओं का उल्लेख सामान्यतया 5 से 15 टंकित पृष्ठों में करता है।

5. **शोध परियोजना संक्षेप (Research Project Abstract)** :- शोध परियोजना संक्षेप का स्वरूप भी लगभग शोध संक्षेपिका जैसा ही होता है, जिसमें सामान्यतया शोध अध्ययन से संबंधित सभी महत्वपूर्ण तथ्यों जैसे अनुसंधान समस्या चयन, उपरापेक्षित प्रश्न, परीक्षणाधीन उपकल्पनाएं,

अनुसंधान प्रारूप, अध्ययन की इकाई, प्रतिदर्श का चयन, सामग्री का संकलन एवं विश्लेषण तथा प्रमुख निष्कर्ष आदि का संक्षिप्त एवं व्यवस्थित उल्लेख होता है। इसका आकार मुख्यतया इस बात पर निर्भर करता है कि यह किस संदर्भ में और किसके लिए लिखा जा रहा है, जो 150 शब्दों से लेकर 400 शब्दों और किन्ही प्रकरणों में 1000 शब्दों या इससे कुछ अधिक भी हो सकता है।

शोध से प्राप्त ज्ञान के प्रचार–प्रसार में रिसर्च प्रोजेक्ट रिपोर्ट हो अथवा एम0फिल या पी0एच0डी0, या डी0लिट, डिजर्टेशन हो का अधिक लोगों तक या शोध प्रबंध संक्षेप संकलन के एक भाग के रूप में उसके शोध संक्षेप को अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाना सार निकालने में समय लगता है जबकि संक्षेप को पढ़कर उसकी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है।

6. **ई जर्नल (E. Journals) :-** वर्तमान समय कम्प्यूटर का दौर है। आज कल सभी विभागों, विश्वविद्यालयों, मंत्रालयों, विद्यालयों में कम्प्यूटर द्वारा कार्य किया जा रहा है। कम्प्यूटर के उपयोग से हमें कई प्रकार के फायदे देखने को मिलते है। कम्प्यूटर में इण्टरनेट के साथ हम कई प्रकार के कार्यों को बडी आसानी से कर सकते है तथा कई महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते है। आज के दौर मे ई0जर्नल का चलन काफी बढ़ गया है। इसका पहला फायदा यह है कि इससे कागज की बचत होती है तथा दूसरा यह है कि यह दूर बैठे लोगों तक आसानी से पहुंच जाता है। वर्तमान समय में ई0जर्नल अंर्तराष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर कई प्रकाशित हो रहे है। कम्प्यूटर तथा इण्टरनेट के संयुक्त मिलन ई0जर्नल का प्रकाशन आसानी से संभव हो रहा है।

29.7 संदर्भ सूची

1. मुखर्जी, रविन्द्र नाथ, सामाजिक सर्वेक्षण व शोध 1969, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
2. सिंह ए0एन0, सामाजिक अनुसंधान, 2007 रैपिड बुक सर्विस, लखनऊ।
3. मुखर्जी, रविन्द्र नाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी 2014, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।

4. शर्मा, डॉ0 आर0 ए0, शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया 2012, आर0लाल0 बुक डिपों, बेगम ब्रिज रोड़, मेरठ–2500 01।

5. गुप्ता, प्रो0 एस0पी0, अनुसंधान संदर्शिका सम्प्रत्यय, कार्यविधि एवं प्रविधि 2011, शारदा पुस्तक भवन, पब्लिसर्श एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, यूनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद–2110 02।

खण्ड–सप्तम
शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप

इकाई : 30 शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप

इकाई की रूप रेखा

30.0 उद्देश्य

30.1 प्रस्तावना

30.2 प्रकाशन का अर्थ

30.3 शोध प्रतिवेदन का उद्देश्य

30.4 प्रकाशन का इतिहास

30.5 शोध प्रकाशन का अर्थ एवं अवधारणा

30.6 शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप

30.7 संदर्भ सूची

30.0 उद्देश्य

वर्तमान समय में भारत वर्ष में शोध कार्य तथा शोध प्रकाशन पर विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है तथा इस ओर कार्य करने के लिए नित नये–नये प्रयास किये जा रहे हैं। शोध कार्य करने के उपरान्त उसके जो आंकड़े, निष्कर्ष तथा सुझाव प्राप्त होते है उसका सही तरीके से प्रकाशन होना भी अत्यंत आवश्यक है ताकि शोध कार्य तक ज्यादा से ज्यादा लोगों की पहुंच बन सके। शोध कार्य करने के उपरान्त ही उसकी एक रिपोर्ट भी तैयार की जाती है जिसमें सभी प्रकार की बातों की विस्तृत एवं संक्षेप जानकारी दी जाती है। शोध कार्य की रिपोर्ट तैयार करना भी एक महत्वपूर्ण कार्य है तथा रिपोर्ट तैयार करना भी एक कला है। वर्तमान समय में शोध कार्य को बहुत महत्व दिया जा रहा है तथा वर्तमान समय में शोध प्रकाश का स्वरूप बदलता जा रहा है। आज के वर्तमान युग में व्यक्तियों को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इन समस्याओं के विषय में खोज करना तथा आवश्यक तत्वों का पता लगाना शोध का कार्य है।

इस इकाई को पड़ने से छात्रों को शोध प्रकाशन के आधुनिक स्वरूप के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होगी तथा जिसका उपयोग छात्र अपने शोध कार्य में कर सकेगे। इस इकाई का मुख्य उद्देश्य यह कि वर्तमान समय में शोध का क्षेत्र काफी बढ़ गया है तथा इस शोध कार्य को लोगों तक पहुंचाने में प्रतिवेदन तैयार कर उसका प्रकाशन कर लोगों को नई–नई जानकारी प्रदान करना है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :–

- शोध प्रकाशन का अर्थ तथा अवधारणा की व्याख्या करना।
- शोध प्रकाशन के महत्व की विवेचना कर सकेंगे।
- शोध प्रकाशन के गुण की व्याख्या कर सकेंगे।
- शोध प्रकाशन के आधुनिक स्वरूप की विवेचना कर सकेंगे।
- प्रकाशन के अर्थ की व्याख्या कर सकेगे।

30.1 प्रस्तावना

शोध का आधार वैज्ञानिक पद्धति व प्रविधियों द्वारा संकलित तथ्य है। पर तथ्यो का ढ़ेर स्वयं कुछ नहीं सकता जब तक कि उनका सही वर्गीकरण व सारिणीयन न कर उस शोध का उचित प्रकाशन न किया जाए। शोध कार्य करके तथ्यों का विश्लेषण व व्याख्या करके वैज्ञानिक निष्कर्षों को निकाला जाता है। इसके उपरांत प्राप्त निष्कर्षों को सुझाव के साथ एक लिखित रूप दिया जाता है जिसे शोध प्रतिवेदन कहा जाता है इस प्रतिवेदन के तैयार होने के उपरांत उसका प्रकाशन किया जाता है जिससे ज्यादा से ज्यादा लोगों तक इसकी पहुच सभव हो सके। शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के आधार पर सामाजिक योजना व सुधार की रूपरेखा तैयार की जाती है

शोध के दौरान प्राप्त सामग्री एवं नवीन तथ्य इतने रूचिकर होते हैं कि शोधकर्ता उसके परिणामों को अन्य लोगो तक पहुंचाने के लिए स्वय उत्सुक रहता है। इसके लिए शोध का प्रकाशन उचित माध्यम है जिससे ज्यादा से ज्यादा लोगो तक इसकी पहुंच संभव हो सके। शोध का सही रूप से प्रकाशन कराना भी शोधकर्ता का एक महत्वपूर्ण कार्य है। जिसमें समस्त तथ्यों, निष्कर्षों तथा सुझावों का समुचित समावेश रहता है।

इस इकाई के अध्ययन से छात्रो को शोध प्रकाशन के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो सकती है तथा साथ ही छात्रो को शोध प्रकाशन की महत्वपूर्ण विषय वस्तु के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकती है।

30.2 प्रकाशन का अर्थ एवं इतिहास

प्रकाशन निर्माण की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा साहित्य या सूचना को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है अनेक बार लेखक स्वय ही पुस्तक का प्रकाशक भी होता है।

प्रकाशन का शाब्दिक अर्थ है प्रकाशन में लाना। यह संस्कृत की ''प्रकाश धातु से बना है, जिसका अर्थ है फैलाना या विकसित करना।। इस प्रकार 'प्रकाशन' का शाब्दिक अर्थ है फैलाने या विकसित करने की क्रिया। वर्तमान समय मे इसे लिखित विषय का चुनाव, मुद्रण और वितरण के रूप में जाना जाता है आज के युग में प्रकाशन का कार्य मुद्रण और कागज पर पूर्णतः निर्भर है।

30.3 प्रकाशन का इतिहास

लकड़ी के ब्लाकों से छपाई करने का अविष्कार नवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में चीन में हुआ था। टाइप से छपाई का आरंभ भी इसी शताब्दी के मध्य मे हुआ था। लेकिन इसे अधिक महत्व नही दिया गया। यही सोचा गया कि पाडुलिपियो की नकल करते समय अच्छे किताबो से जो गलतियां होती जाती है, वे मुद्रण में नही होंगी। यूरोप में टाइप से छपाई के काम का आंरभ 15वीं शताब्दी के मध्य मे आंरभ हुआ। किन्तु चीन की तरह वहा भी मुद्रण का प्रयोग केवल धार्मिक ग्रन्थों और शासकीय कागजों को शुद्ध छापने में किया गया एशिया या यूरोप, कही भी सोचा तक नहीं गया कि मुद्रण की सहायता से राजनीतिक बौद्धिक या धार्मिक साहित्य का विस्तृत प्रसार किया जा सकता है पूर्व और पश्चिम दोनों मे सदियों तक धार्मिक सस्थाए, सरकार, विश्वविद्यालय तथा अन्य शक्तिशालिनी सस्थाए अपने ही विचारों और सूचनाओं के प्रसार में मुद्रण का उपयोग करती रही और उन्होने ज्ञान के प्रसार मे उसके उपयोग का निरंतर विरोध किया। बाद में आखिरकार आत्मिक एव बौद्धिक विकास संबंधी अथवा धार्मिक एवं वैज्ञानिक साहित्य के प्रकाशन में मुद्रण का शत प्रतिशत सहयोग मिलने ही लगा।

सबसे पहली पुस्तकें :

मुद्रण के आविष्कार से पहले प्रकाशन का कार्य कातिब या प्रशिक्षित गुलाम किया करते थे। वे चर्मपत्र पर किसी पांडुलिपि की अनेक प्रतिलिपियां लिखते रहते थे। टालेमी वंश के शासनकाल में मिस्त्र में, तथा यूनान और गणतांत्रिक रोम के प्रमुख नगरों में चर्मपत्र तैयार करने वाली अनेक उपयोगशालाएं खुल गयी थी और चर्मपत्र पर प्राचीन साहित्य, धर्म और कानून संबंधी श्रेष्ठ कृतियों की प्रतिलिपियां तैयार की जाती थी। रोमी साम्राज्य में तथा पश्चिमी देशों के राजा, राजकुमार, पादरी आदि अक्सर प्रकाशन पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लेते थे या करने की कोशिश करते थे और लंबे समय के लिये प्रकाशनकार्य बंद हो जाता था। फिर भी ये पुराने प्रयास आज की प्रकाशन संस्थाओं के ही आदि रूप थे। उनका काम था बड़े पैमाने पर छापने के लिये पांडुलिपियो का चुनाव करना, उनके लिए लेखको को पुस्तको की बिक्री से पहले अग्रिम पारिश्रमिक देना, अलग अलग पाडुलिपियो के सस्करण का आकार प्रकार तथा मूल्य निर्धारित करना और बाजार तैयार करना जहां, अनेक प्रयत्न करके पुस्तको को लाभ सहित बेचा जा सके। वे अत्याधुनिक अर्थों में भी प्रकाशक ही थे, यद्यपि उनके उत्पादन पुस्तकें नहीं थी।

आज पुस्तकों का परिचित रूप है कुछ छपे हुए पृष्ठ जो एक ओर सिले होते है। यह रूप कैसे प्रचलित हुआ, इसका भी एक पुराना और लंबा इतिहास है। चौथी शताब्दी तक कम से कम उत्तर रोमी साम्राज्य के जूरियों को जिल्द से बंधी पुस्तकों का पूरा ज्ञान था। फिर भी पुस्तकों का सार्वजनिक प्रचलन तो इसके दो तीन शताब्दियों बाद आयरलैंड में हुआ।

यहां बौद्धिक एवं धार्मिक विचारधारा बढ़ी और इसका उत्कर्ष हुआ बुक ऑफ केल्स के रूप में जो एक विद्वान के अनुसार संसार की सुंदरता पुस्तक है। सबसे पहले जिल्दबंधी किताबों को कोडेक्स कहा जाता था। मध्य युग में कोडेक्स ही पुस्तकें मानी जाने लगी और विभिन्न ईसाई मतों के मठो द्वारा, जो प्रकाशन का कार्य करते थे, धर्मशास्त्र पर पुस्तकें प्रकाशित की जाने लगी। कानून, औषधिविज्ञान, काव्यशास्त्र तथा अन्य विषयों की पुस्तकों का प्रकाशन उदीयमान विश्वविद्यालयों द्वारा किया जाने लगा। जिन जिन नगरों में विश्वविद्यालय थे, वहां पुरानी किताबों की दुकाने खूब फैल गयी, जैसा कि आज के युग में भी है। अंतर केवल इतना था कि विश्वविद्यालयों ने प्रकाशन का काम तो अपने हाथ में लिया, किन्तु फायदा उठाना उनका उद्‌देश्य न था और उनका प्रयत्न सदा यही रहता था कि पुस्तकों की कीमत

कम से कम रखी जाए जिससे विद्यार्थियों को ज्यादा से ज्यादा लाभ मिल सके।

बर्जेस के अनुसार :— शोध प्रकाशन वह है जो किसी शोधकर्ता द्वारा अपने किये गये शोध कार्य को किसी पब्लिकेशन्स द्वारा प्रकाशित करवाता है।

प्रोफेसर बैगले के अनुसार :— शोध प्रकाशन के अंन्तर्गत शोध से संबंधित महत्वपूर्ण विषय को प्रकाशित किया जाता है।

बी0डी0 पाल के अनुसार :— शोध कार्य का मूल अर्थ तभी सार्थक होगा जब उसे किसी प्रकाशक द्वारा प्रकाशित किया जायेगा, जो शोध प्रकाशन के तहत संभव है।

शोध प्रकाशन की अवधारणा :

शोध प्रकाशन के तहत शोध कार्य को बड़ी सुगमता और सरलता के साथ प्रकाशित किया जाता है कि जो भी इस प्रकाशित शोध को पढ़े उन्हें आसानी से सारी बाते समझ में आ जाये तथा वो इसका उचित लाभ प्राप्त कर सकें। शोध प्रकाशन के द्वारा समस्याओं का भी उचित निदान किया जाता है क्योंकि किसी भी समस्या के विषय शोध प्रकाशन में उचित निष्कर्ष एवं सुभाव को लिखा जाता है ताकि उसे भी पाठक इस शोध प्रकाशन को पढ़े वो इससे संबंधित उचित निदान प्राप्त कर सके।

शोध प्रकाशन (आई0एस0एस0एन0) एवं (आई0एस0एस0बी0एन0) नंबर होता है जो कि शोध कार्य की प्रमाणिकता को दर्शाता है। शोध प्रकाशन के लिए किसी अच्छे और प्रसिद्ध प्रकाशक का होना अत्यन्त जरूरी है जिससे शोध कार्य का उचित प्रकाशन हो सके और तथा शोध कार्य मानक के अनुसार हो।

30.4 शोध प्रकाशन का अर्थ एवं अवधारणा

इस रहस्यमय जगत में न जाने कितने रहस्य छिपे हुए है। अपनी जिज्ञासा प्रवृत्ति के कारण मानव उन रहस्यों का उद्घाटन करने के लिए या अज्ञात वस्तुओं के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए सदा तत्पर रहता है। यह तत्परता इसकी सभ्यता, ज्ञान और प्रगतिशील प्रकृति की परिचायिका है। उसमें जानने की, नवीनता को ढूंढ निकालने की और अज्ञात को खोज निकालने की प्रवृत्ति स्वाभाविक है। इस प्रवृत्ति के कारण ही कुछ वस्तुओं या घटनाओं के विषय में वह 'सब कुछ' जानता है।

शोध का अर्थ है कि किसी सामाजिक समस्या को सुलझाने या किसी परिकल्पना की परीक्षा करने, नवीन घटनाओं को खोजने

या कतिपय घटनाओं के बीच नवीन संबंधों को ढूढने के उद्देश्य से किसी यथार्थ विधि का उपयोग है। यह यथार्थ विधि इस प्रकार की होनी चाहिए जो कि वैज्ञानिक शर्तों को पूरी करती हो तथा जिसकी सहायता से शोध किए गए विषय का सत्यापन हो।

शोध प्रकाशन का अर्थ :

शोध वह वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा सामाजिक घटनाओं व समस्याओं के कारणों, अन्तः संबंधों तथा उनमें अंतः निहित प्रक्रियाओं का अध्ययन, विश्लेषण व निरूपण किया जाता है।

शोध कार्य से संबंधित आकड़े प्राप्त हो जाने के बाद उसका एक रिपोर्ट तैयार किया जाता है जिसमें शोध से संबंधित आकड़ो, निष्कर्ष तथा आवश्यक सुझाव को लिखा जाता है शोध कार्य को ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुंचाने के लिए उसका प्रकाशन किया जाता है जिससे ज्यादा से ज्यादा लोग उस शोध कार्य को पढ़ सके तथा उसका उचित लाभ उनको मिल सके। शोध के प्रकाशन के लिए भारत में कई पब्लिकेशनस है जो शोध का प्रकाशन करते है। ये पब्लिकेशन्स शोध कार्य का प्रकाशन कर शोध कार्य को लोगों तक पहुचाते है।

30.5 शोध प्रतिवेदन के प्रकाशन के प्रकार

शोध प्रकाशन के द्वारा पाठको को ज्यादा से ज्यादा महत्वपूर्ण बातों से अवगत कराया जाता है। इसलिए वर्तमान समय में शोध प्रकाशन का महत्व बढ़ गया है। शोध प्रकाशन के महत्वपूर्ण महत्व निम्न है।

1. पाठकों को आवश्यक जानकारी देना।
2. शोध कार्य को सार्वजनिक करना।
3. शोध कार्य की पारदर्शिका को दर्शाना।
4. पाठकों में पढ़ने की रूचि पैदा करना।
5. शोध कार्य का प्रचार–प्रसार करना।
6. शोध प्रकाशन के द्वारा नई योजना का निर्माण करना।
7. शोध प्रकाशन के द्वारा सामाजिक प्रगति व समाज सुधार की योजना बनाना।
8. पाठकों को उचित सुझाव प्राप्त होना।
9. शोध प्रकाशन द्वारा लोगों में ज्ञान का प्रसार करना।

10. पाठकों के लिए नये नये सुझाव उपलब्ध कराना।

30.6 शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप

वर्तमान समय में शोध प्रकाशन का स्वरूप बदल रहा है क्योंकि वर्तमान समय परिवर्तन का समय है जिससे शोध प्रकाशन के स्वरूप में भी व्यापक बदलाव आ रहा है। आधुनिक काल में कम्प्यूटर का महत्व बढ़ गया है जिससे प्रकाशन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण बदलाव हमें देखने को मिलता है। कम्प्यूटर के कारण प्रकाशन का कार्य सरल हो गया है।

शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप निरतर बदल रहा है जिससे पाठको को भी सरलता से शोध कार्य का निष्कर्ष मिल जा रहा है।

शोध प्रकाशन का आधुनिक स्वरूप निम्नलिखित है।

कम्प्यूटर द्वारा प्रकाशन :— वर्तमान समय में शोध कार्य का लेखन कम्प्यूटर द्वारा हो रहा है जिससे उसकी छपाई साफ होती है जिससे पाठकों को पढ़ने में आसानी होती है। साथ ही साथ लेखन कार्य को विभिन्न रंगों में भी प्रकाशित करना आसान हो गया है। कम्प्यूटर द्वारा ग्राफ का निर्माण भी आसान हो गया है।

ऑनलाइन प्रकाशन :— आधुनिक युग में इण्टरनेट ने महत्वपूर्ण क्रान्ति ला दी है। वर्तमान समय में शोध प्रकाशन को प्रकाशक इण्टरनेट के माध्यम से ऑनलाइन कर दे रहे है जिससे शोध कार्य को विश्व के हर कोने में बैठे पाठक कम्प्यूटर के माध्यम पढ़ सकते हैं तथा शोध कार्य का उचित लाभ प्राप्त कर सकते है। ऑनलाइन प्रकाशन से पाठकों को सरलता से शोध कार्य से संबंधित जानकारी घर बैठे मिल जाती है।

जर्नल का प्रकाशन :— आधुनिक युग में जर्नल का प्रचलन बढ़ गया है। शोधकर्ता अपने शोध कार्य को जर्नल के माध्यम से प्रकाशित करवाते है, जिसका मूल्य पुस्तक की अपेक्षा थोड़ा कम होता है जिससे पाठकों को उसका क्रय करने मे आसानी होती है। जर्नल का प्रकाशन शोध के महत्व को भी बढ़ा रहा है साथ ही साथ पाठकों को शोध कार्य के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो रही है।

30.7 संदर्भ सूची

1. मुखर्जी, रविन्द्र नाथ, सामाजिक सर्वेक्षण व शोध 1969, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।

2. सिंह ए0एन0, सामाजिक अनुसंधान, 2007 रैपिड बुक सर्विस, लखनऊ।

3. मुखर्जी, रविन्द्र नाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी 2014, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।

4. शर्मा, डॉ0 आर0 ए0, शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया 2012, आर0लाल0 बुक डिपों, बेगम ब्रिज रोड़, मेरठ—2500 01।

5. गुप्ता, प्रो0 एस0पी0, अनुसंधान संदर्शिका सम्प्रत्यय, कार्यविधि एवं प्रविधि 2011, शारदा पुस्तक भवन, पब्लिसर्श एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, यूनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद—2110 02।